





**COLLECTION OF VARIOUS**  
→ HINDUISM SCRIPTURES  
→ HINDU COMICS  
→ AYURVEDA  
→ MAGZINES

FIND ALL AT [HTTPS://DSC.GG/DHARMA](https://dsc.gg/dharma)

Made with  
  
Arvindh/Shashi

Creator of  
hinduism  
server



COLLECTION OF VARIOUS  
→ HINDUISM SCRIPTURES  
→ HINDU COMICS  
→ AYURVEDA  
→ MAGZINES

FIND ALL AT [HTTPS://DSC.GG/DHARMA](https://dsc.gg/dharma)

Made with  
  
Arvindh/Shashi

Creator of  
hinduism  
server

पारीक जाति का इतिहास भाग-३

# हमारी कुलदेवियाँ

लेखक  
रघुनाथ प्रसाद तिवाडी 'उमड़'

प्रकाशक

तिवाडी मुद्रनालय पारीक जोख संस्थान, जयपुर  
Hinduism Discord Server <https://dsc.g>

प्रथम संस्करण २०००

•  
© लेखक के अधीन

•  
पुस्तक प्राप्ति स्थान

१ एफ-३७ ए धीया मार्ग  
बनीपार्क जयपुर

२ बनविहारी भवन  
नाहरगढ़ रोड नुकड़  
चादपोल बाजार जयपुर

•  
प्रकाशक

तिवाड़ी मदनलाल पारीक शोध संस्थान  
एफ-३७-ए धीया मार्ग बनीपार्क जयपुर

•  
कम्प्यूटर कम्पोजिंग

एक्सीलेन्स कम्प्यूटर्स  
१५९-ए नाहरगढ़ नुकड़  
चादपोल बाजार जयपुर

•  
मूल्य ३०१ रु मात्र

मुद्रक

राजस्थान प्रिन्टिंग वर्क्स  
जयपुर

HAMARI KULDEVIYAN by Raghunath Prasad Tiwari Umang

# विषय-सूची

<b>●</b>	<b>भूमिका</b>	<b>१</b>
<b>●</b>	<b>प्रावक्तव्य</b>	<b>२८</b>
<b>●</b>	<b>आमुख</b>	<b>३३</b>

## माताएँ

१	माताओं के चित्र	
२	अम्बा अम्बिका बूढण वृद्धेश्वरी माता	८५
३	असनोत्तरी (अष्टोत्तरी) माता	१०१
४	आदिकुमारिका कुमारिका माता	१०५
५	आद्याशक्ति आद सगत माता	११७
६	करणी माता	१२३
७	काली भद्रकाली कालिका (वरदायिनी) माता	१५७
८	कूञ्जल माता	१६९
९	केसरी माता	१७९
१०	खीबज क्षेमजा माता	१८५
११	चामुण्डा माता	१९३
१२	चतुर्मुखी चित्रमुखी माता	२०३
१३	जाखण यक्षिणी माता	२२१
१४	जीण जयन्ती माता	२३३
१५	तारा माता	२५३
१६	त्रिपुरसुन्दरी तिपराय माता	२६१
१७	नारायणी नानण लाहना माता	२७५
१८	परा पराख्या पडाय पाडला पाढा माता	२९१
१९	पाण्डोख्या पाण्डुक्या माता	३११
२०	बीजल विद्युधृपा माता	३१९
२१	ललिता माता	३२५
२२	सच्चियाय सुच्चाय माता	३४३
२३	समराय सकराय शाकम्भरी माता	३७३
●	सुदर्शना सुद्रासना माता	३८३
●	सुरसा सुरसाय माता	३९५
	<b>परिशिष्ट- १ आरती</b>	
	<b>२ सदर्भ ग्रन्थ-सूची</b>	<b>३९७</b>







सारी कल्पिता/ ३



आदिकुमारिका  
कुमारिका

५४ १०५

॥८/ द्वारी कुतदेवियाँ



असनोतरी (सिद्धिदात्री) पृष्ठ १०१



किंतारिणा - माताजी

पृष्ठ १०१(101)

हमारी कुलदेवियाँ।



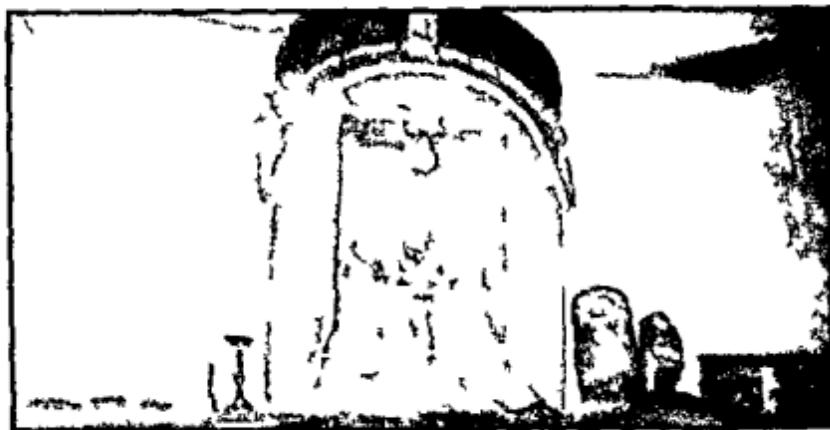
आद्याशक्ति भग्नस्त्री देवी

Hinduism Discord Server <https://dsc.g9.in>





कुजल माता (डेह - नागीर)



भद्रकाली (भवरी - गांगोर)

पृष्ठ १५७(१६१)



भद्रकाली (त्योद काजीपुरा - साँगर) पृष्ठ १५७(१६४)



भद्रकाली (भवाल मेडता)

पृष्ठ १५७(१६०)



केसरी माता

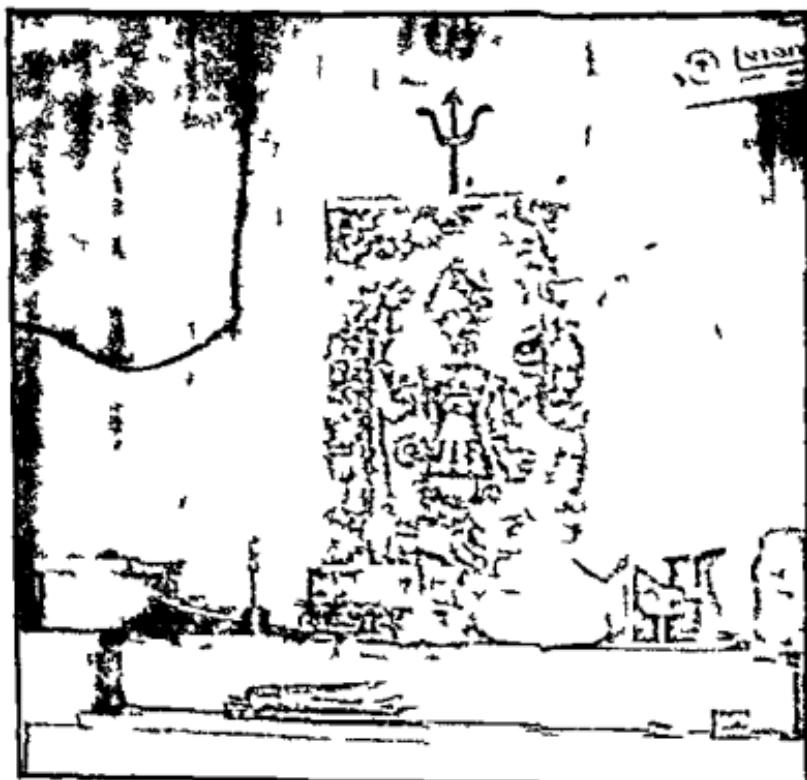
पृष्ठ-१७९

Hinduism Discord Server <https://discord.com/invite/hinduism>

४ / हमारी कुलदेवियाँ



चामुण्डा माता    खण्डेला    पृष्ठ १९३ (२००)

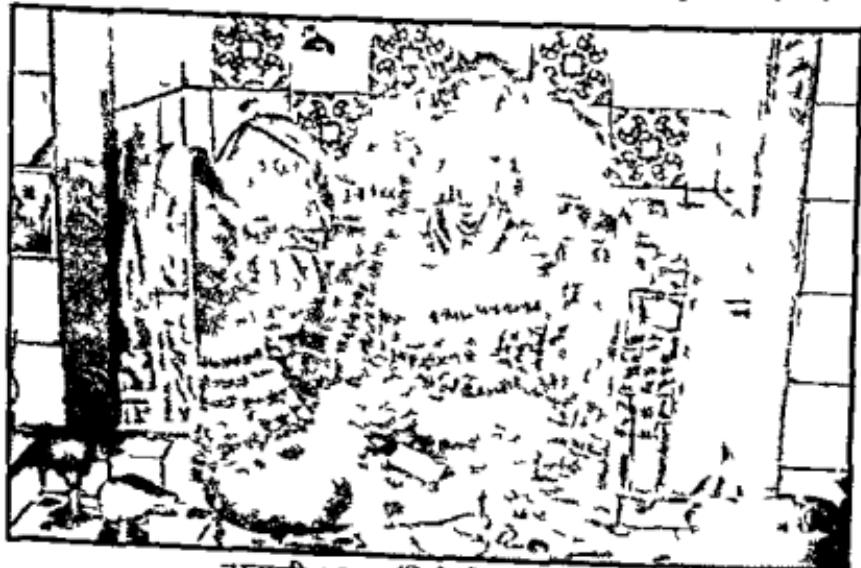


खीवज क्षेमजा माता    कठीति (नागौर)    पृष्ठ १८५





ब्रह्मणी (चतुर्मुखी) माता – पल्लू (सरदारशहर) पृष्ठ-२०३(२१६)



ब्रह्मणी माता (त्रिवेणी – शाहपुरा)

पृष्ठ-२०३



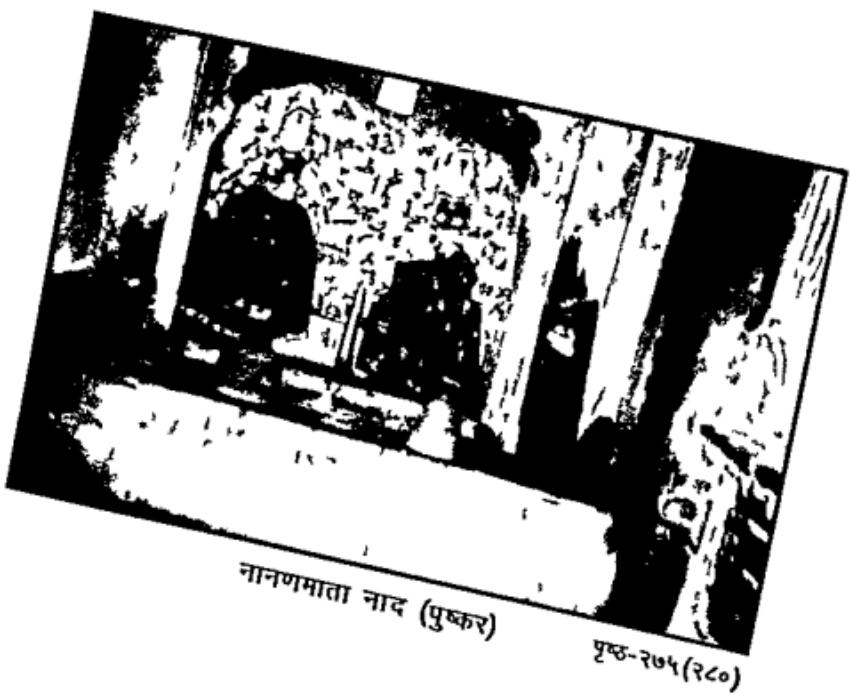
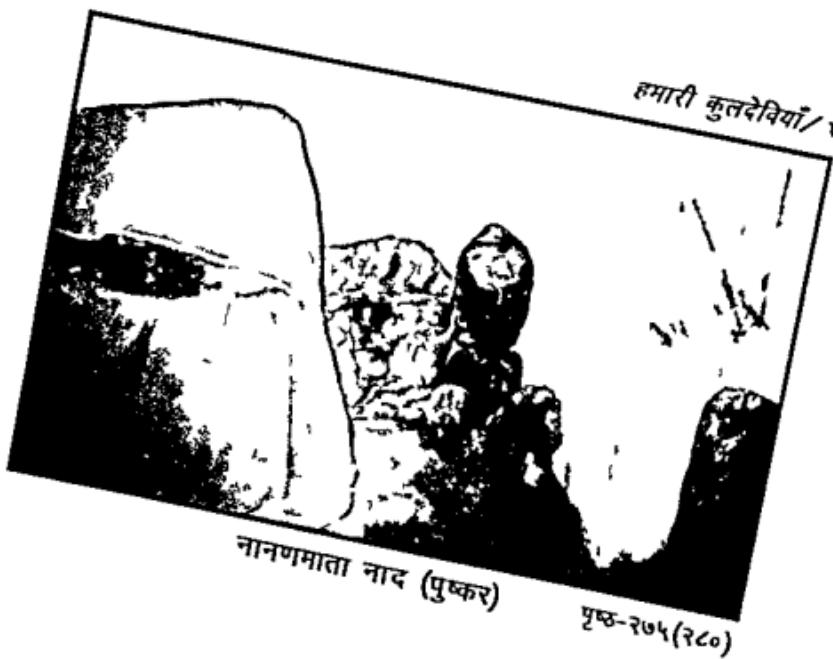


तारामाता पृष्ठ-२५३



माता त्रिपुरसुन्दरी — बांसवाडा पृष्ठ-२६१(२७०)

हमारी कुलदेवियाँ / ८८





पाण्डुक्यामाता — मेडता

पृष्ठ २९१(३०८)



परापाढाय माता — डीडवाजा

पृष्ठ २९१(३०२)



परा कन्याकुमारी

२५४ २११(२१८)



विजल विद्युदुपा माता

हमारी कुलदेवियाँ / ११



कुण्डलिनी शक्ति स्वरूपा भगवती ललिता

पृष्ठ-३१९



सच्चिवयाय माता

पृष्ठ ३२५



साकम्भरी  
माता  
सिकराय  
(खण्डेला)

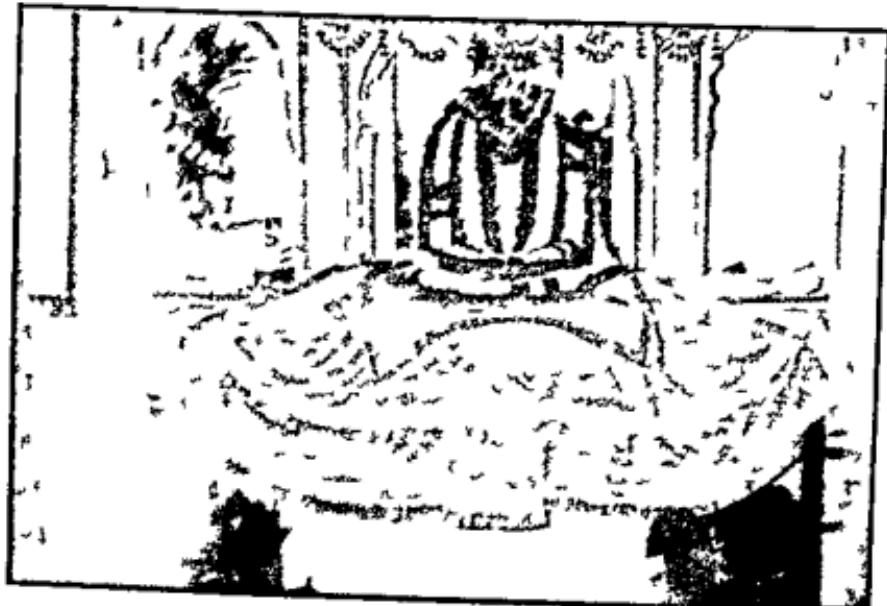
पृष्ठ ३४३(३५३)



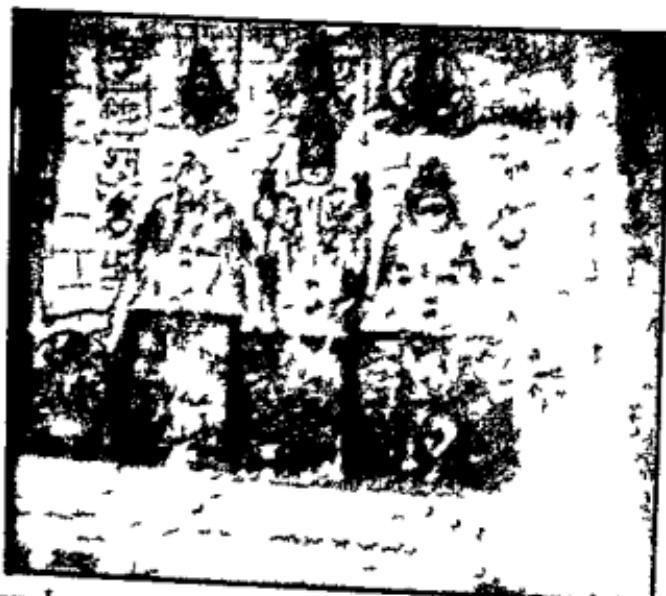
साकम्भरी माता – सामर

पृष्ठ ३४३(३५६)

१८८ / हमारी कुत्तदेवियाँ



सुरसा सुरसाय मशा माता - आगेर पृष्ठ ३८३(३१)



खुदरा नगाता - खुदरा अपुरा (कायगरार) पृष्ठ ३७३(३७५)

ल्पारी कलदेविया / १११

परमश्रद्धेय पिताश्री मदनलालजी तिवाड़ी (खण्डेला वाले)  
की पुण्य-सृति मे सादर समर्पित श्रद्धा-रुमन



श्री मदनलालजी तिवाड़ी

जन्म पौष शुक्ला १ बुद्धवार विस १९६२ (२७ दिसम्बर १९०५ ई.)  
निवासि चैत्र शुक्ला ८ (दुग्धांटी) रविवार विस २०३१ (३१ मार्च १९७४ ई.)  
जिनके स्नेहपूर्ण शुभाशीर्वाद के फलस्वरूप  
प्रस्तुत ग्रन्थ का प्रणयन समव हुआ



रघुनाथ प्रसाद तिवाडी उमड़  
लेखक

## भूमिका

जो कुछ हम अपने चारों ओर देखते हैं, सुनते हैं, जिसका अनुमान करते हैं अथवा परिकल्पनाएँ करते हैं, वह सब आखिर है क्या? उसका मूल कारण क्या है, विकास और स्थिति का क्या रहस्य है और अन्त में इसका विलय कैसे, कहाँ हो जाता है? यह एक अत्यन्त प्राचीन अथवा शाश्वत प्रश्न है—

कि कारण ब्रह्म कुत् स्म जाता  
जीवायम् केन क्वच च सम्प्रतिष्ठा ।  
अधिष्ठिता केन सुखेतरेषु  
वर्तमहे ब्रह्मविदो व्यवस्थाम्॥  
(श्वेताश्वतरोपनिषद् १-३)

जगत् का कारण क्या है, हम लोगों के जन्म का कारण क्या है, हम कैसे जी रहे हैं, अन्ततोगत्वा हमारी स्थिति कहाँ है, विपरीत परिस्थितियों में भी हम किस कारण से टिके हुए हैं? इत्यादि—

वेद से इसका उत्तर मिलता है—

‘पुरुष एवेद सर्वं यद्भूतं यच्च भाव्यम्’ यह जी कुछ है, हो चुका है और होने जा रहा है वह सब पुरुष ही है। यह पुरुष कौन? क्या वह अकेला यह सब कुछ कर रहा है? पुरुष प्रजापति है, वही इस महती सृष्टि-प्रक्रिया में छन्द, स्पन्दन या फड़कन के रूप में अभिव्यक्त होता है।

प्रजापतिरेव छन्दोऽभवत्  
(शतपथ द्वाह्यण ७ २ ३ १०)

यह प्रजापति और छन्द क्या है? कल्पना कीजिए, अतीत के अतीत काल में एक ऐसा युग था जब कुछ भी नहीं था— सर्वत्र अन्धकार था, तम ही तम छाया हुआ था, कोई लक्षण प्रायः पहीं था, न कोई जन्म न हुआ।

## २/हमारी कुलदेवियाँ

था, न कुछ ज्ञात था।<sup>१</sup> उस प्रशात अवस्था मे, जो एक तराहीन, क्षोभविहीन परमप्रशात अधकार के सामर के समान थी, न जाने कैसे, कब, कहा से और क्यों एक प्रकार का स्पन्दन या फड़कन पैदा हुई, बुद्धुदे से उठे और तरो उत्पन्न हुई। ये बुद्धुदे या के द्रविन्दु व्यक्त हुए अथवा हिरण्यगर्भ मे से हिरण्यरूप मे प्रकट हुए। हिरण्य का अर्थ व्यक्त, प्रकाशमान या तेजो-युक्त है और अव्यक्त, अप्रकाशित एवं अधमारपूर्ण स्थिति का नाम हिरण्यगर्भ है। वह परम प्रशान्त, अस्पन्द, अज्ञात जो कुछ भी है वही परब्रह्म है। उसमें स्वगुण से युक्त देवात्मशक्ति निर्गूढ रहती है। देव अर्थात् द्युतिमान् स्वप्रकाश, आत्म अर्थात् चित्-शक्ति और स्वगुण अर्थात् सत्त्व, रज और तम नामक गुणों का सम्मिलित रूप अचित्तशक्ति है। जब तक वह परब्रह्म परम प्रशान्त रहता है उसमे वह शक्ति समान रूप से व्याप रहती है परन्तु स्पन्द के कारण वैष्णवस्था उत्पन्न होते ही उस शक्ति-समुद्र मे असख्य विन्दु अथवा केन्द्र व्यक्त होगए। यही शक्ति का उद्भव या प्रादुर्भाव कहा जाता है। यही महाशक्ति का उमेष है जिससे जगत् का उदय होता है और इसी के निमेष से प्रलय हो जाता है।<sup>२</sup> इसी महाशक्ति को आद्या शक्ति कहते हैं— इसी से ससार का आदि अथवा आरम्भ होता है।

<sup>१</sup> तादि नवी नकौ जदि तावड आभ न उन्नाण अरस न अनड।

क्रम्म न ध्रम्म नकौ जदि काळी घृहमड रूप नमौ विगताळी ॥१०॥

माताजी री वचनिका

<sup>२</sup> निमयान्मयाभ्या प्रलयपुरुष याति जगती

तवत्याहु सन्ता धरणिधरराजन्यतनये।

तदुन्मयाज्जात जगतित्प्रशेष प्रलयत

परियातु शङ्क परिहतनिमेषास्तव दृश ॥

(शङ्कराधार्यकृत-आनन्दललही)

हे पर्वतराज हिमालय की पुरी! सन्ता का मत है कि आपके पलक मारत ही जगत् का प्रलय हा जाता है और पलक उघाड़त ही उसका उदय हा जाता है। अब की बार दृश्या का उम्मर हान से जा यह ससार बन का खड़ा हा गया है वह कहीं पुन प्रलय कर्भ मे न समा जाय इसीलिए शायद आपने पलक भाग्ना छाड लिया है।

— दवताओं की आयें नहीं झपझती हैं ऐसी मान्यता है।

अइयो सगति अन्त प्रगत किया सारी प्रथी।

मुराली मेषत रातड़ी तृही ज रिधू॥२१॥

— माताजी री वचनिका

परात्पर विभु अपनी ही शक्ति से आवृत (ढके हुए) है। वह कहीं से आवृत और कहीं अनावृत है, इन दोनों ही स्थितियों को साक्षी रूप में देखते रहते हैं।

य स्वात्मनीद निजमाययाऽवृत् क्व च तत्तिरोहितम्,  
अविद्वदग् साक्ष्युभ्य तदीक्षते सोऽवतु माम् परात्पर ॥

अनावृत भाग और आवृत भाग दोनों ही परमात्मा के अविच्छिन्न भाग हैं। आवृत भाग ही ससार है। यह परमात्मा की अपनी ही मायाशक्ति से आच्छन्न है। यह माया ही आद्याशक्ति कहीं गयी है। इसके विविध भेद हैं। ज्ञान, बल और क्रिया इसके स्वाभाविक रूप हैं। ज्ञान से पदार्थ (वस्तु) का बोध होता है, बल से उसका परीक्षण किया जा सकता है और क्रिया से उसका उपयोग होता है। इस तिकड़ी से ही जगत् की समस्त वस्तुएँ नियमित हैं।

यत्क्लिच्छजगति त्रिधा नियमित वस्तु त्रिवर्गादिक  
तत्सर्वं त्रिपुरेति नाम भगवत्यन्वेति ते तत्त्वत ॥  
— लघुस्तव, १६

ससार में जितनी भी प्रिवग से युक्त वस्तुएँ हैं वे सब प्रिपुर नाम्नी शक्ति के ही रूप हैं।

यही नहीं, ससार की सभी वस्तुओं में शक्ति का निवास है। स्वयं ईश्वर भी शक्ति के बिना कुछ नहीं कर सकते। जब शक्ति विश्वजननव्यापार म प्रवृत्त होती है तभी ससार की रचना और विस्तार होता है। अकेला ईश्वर कुछ नहीं करता।

शिव शक्त्या युक्तो यदि भवति शक्त प्रभवितु  
न चेदेव देवो भवति शक्त स्पन्दितुमपि ॥

अकेला शिव तो शक्ति के बिना हिल-डुल भी नहीं सकता। शिव शब्द ही (इ) मात्रा के बिना 'शब्द' होकर रह जाता है।

इस प्रकार शक्ति ही जगत् के अणु-अणु म व्याप्त है। जितनी विद्याय है वे सब शक्ति के ही भेद हैं तथा ससार म जितने स्त्री पदार्थ हैं वे सब शक्ति के ही रूप हैं।

विद्या समस्तास्तव देवि भेदा , स्त्रिय समस्ता सकला जगत्सु ।  
त्वर्यैकया पूरितमप्यवयेतत्, का ते स्तुति स्तव्यपरा परोक्ति ॥६॥

— श्री दुर्गासंसशती, ११-६

देवी ! सम्पूर्ण विद्याए तुम्हारे ही भिन्न-भिन्न स्वरूप हे। जगत् में जितनी स्थिया हे, वे सब तुम्हारी ही मूर्तिया हे। जगदम्ब ! एकमात्र तुमने ही इस विश्व को व्याप कर रखा हे। तुम्हारी स्तुति क्या हो सकती है ? तुम तो स्तवन करने योग्य पदार्थों स परे एक परा वाणी हो।

**नवदुर्गा** आद्या महाशक्ति को दुर्गा कहा गया है क्याकि इसका रहस्य दुर्गाम है। आदि म दुर्गा के नव स्वरूप माने गये हैं यथा—

प्रथम शैलपुत्री च द्वितीय ब्रह्मचारिणी ।  
तृतीय घन्नधण्डेति कूष्माण्डेति चतुर्थकम् ॥  
पचम स्कन्दमातेति पष्ठ कात्यायिनीति च ।  
सप्तम कालरात्रीति महागोरीति चाष्टमम् ॥  
नवम सिद्धिदात्री च नवदुर्गा प्रकीर्तिं ।  
उक्तान्येतानि नामानि ब्रह्मणीव महात्मना ॥

इन नामों स दुर्गा के प्राकट्य ओर विकास का त्रम ज्ञात होता है, यथा प्रथम शैलपुत्री अर्थात् यह हिमालय की पुत्री हे। फिर त्रमश इनका विकास हुआ।

माता के प्रथम स्वरूप का नाम शैलपुत्री है। पर्वतराज हिमालय के घर पुत्री के रूप म उत्पन्न हान के कारण इनका नाम शैलपुत्री, पार्वती आदि पडे।

नव दुर्गाआ म प्रथम शैलपुत्री दुर्गा का महत्व और शक्तिया अनन्त है। नवरात्रि पूजन में प्रथम दिवस इन्ही की पूजा ओर उपासना की जाती है।

शक्ति क दूसरे स्वरूप का नाम ब्रह्मचारिणी है। ब्रह्म शब्द इस अर्थ तपस्या है। इहाने नारद के उपदेश से भगवान शक्ति का पति रूप म प्राप्त करने के लिए अत्यन्त ऊँठार तपस्या की थी। इसी दुष्वर तपस्या के कारण इन्ह तपश्चारिणी अर्थात् ब्रह्मचारिणी नाम स कहा गया। तपस्या के त्रम में इन्हनि पता का भी खाना बन्द कर दिया इसलिए इनका नाम अपर्णा भी हुआ।

इसी आदि प्रकृति ने रुद्र, ब्रह्मा और विष्णु की उत्पत्ति है- वही सर्वत्र देदीप्यमान है।<sup>१</sup>

सम्पूर्ण सृष्टि का अन्तर्भाव प्रतिष्ठा, ज्योति और यज्ञनामक शक्तियों के अन्तर्गत हो जाता है। सृष्टि का मूल कारण अक्षर-पुरुष सब से पहले इन्हीं तीन रूपा में विकसित होता है। प्रत्येक पदार्थ में स्थितितत्व अथवा शक्ति होती है जिससे उसमें ठहराव या अस्तित्व आता है। इस शक्ति का नाम ब्रह्मा है। 'ब्रह्मा वै सर्वस्य प्रतिष्ठा' वही सृष्टि की मूलाधार शक्ति है। उत्पन्न होने वाली समस्त वस्तुओं में पहले प्रतिष्ठा का जन्म होता है। गतिसमुच्चय का नाम ही प्रतिष्ठा है। गति दो प्रकार की है, एक सब आर जाने वाली गति, जो सर्वतो दिग्नाति कहलाती है और दूसरी दो विपरीत दिशाओं में जाने वाली गति। इन दोनों के समन्वय से स्थिति उत्पन्न होती है। यही प्रथम सृष्टि है। स्थिति के अनन्तर क्रिया उत्पन्न होती है। बीज जब पृथ्वी में ठहर जाता है तदन्तर अकुरित होने की क्रिया होती है। प्रतिष्ठा के बाद नाम, रूप और कर्म के सम्बन्ध से वस्तु को स्वरूप प्राप्त होता है अर्थात् नाम, रूप और कर्म ही उस वस्तु का भान करते हैं। यह भान अथवा ज्योतिशक्ति ही इन्द्र के नाम से अभिहित है। स्वरूप प्राप्त होने के अनन्तर वस्तु में अन्न का आदान और विसर्ग होने लगता है। अन्न से तात्पर्य उस तत्त्व से

२ द्वी ती दीवाण त्रिहू लाक में ताहरी।

विसन सद ब्रह्माण्ड आद हि सिरज्या ईंसुरी ॥२०॥

— माताजी री बचनिका

शब्दाना जननी त्वमत्र भुवन याप्यादनीत्युद्यम  
त्वत् कश्चिवासप्रभृतयोऽप्याविर्भवन्ति धृपम्।  
लीपन खलु यत्र कल्पवितौ द्राह्मान्यस्त यमी  
सा त्वं काविर्द्यन्त्यर्थपर्महिमा शक्ति परा गीयसे ॥१५॥

—८५४—

ह माता आप ही शब्दों (शब्दग्रहा) की जननी हैं इसीलिए आप वाखानिंदी नाम से समस्त भुवना म विद्यात है विष्णु ग्रहा और इन्द्रांदिक सभी शक्तियों आप ही स आविर्भूत

है जिसके आदान और विसर्ग से प्रतिष्ठा की स्थिति बनी रहती है। जड और चतन सभी अन्न का आदान और विसर्ग करते हैं। जो शक्ति तत्त्वपदार्थ की स्थिति कायम रखने के लिए अन्न का खीचती है उसी का नाम विष्णु है। अन्न की सज्जा साम है। अन्न को खीचकर जिसमें आहूति दी जाती है वह अग्नि है। साम की आहूति से अग्नि की प्रतिष्ठा बनी रहती है, वह घार, उग्र अथवा रुद्र नहीं होता। इस प्रकार विष्णु, सोम और अग्नि नामक शक्तियों के द्वारा यज्ञसृष्टि होती रहती है। यह सृष्टि की तीसरी सीढ़ी है। यही यज्ञ है, विष्णु है—‘यज्ञो वै विष्णु ।’ इसमें विष्णु, सोम और अग्नि शक्तियों का अन्तर्भाव रहता है। ब्रह्मा, इन्द्र, विष्णु, अग्नि और सोम ये पाँचों ही अक्षरब्रह्म की शक्तियाँ हैं और इनसे पचाक्षरसृष्टि सभव होती है।

साम अन्न है और अग्नि अन्नाद अर्थात् अन्न को खाने वाला। जब तक अन्नाद को अन्न मिलता रहता है, वह शान्त रहता है— उसकी शक्ति बनी रहती है। अग्नि ही रुद्र है। सोम-तत्त्व अथवा शक्ति के संयोग से वह शान्त होकर शिव बन जाता है। जब तक अग्नि की आहूति नहीं दी जाती वह अग्नि रुदन करता है इमीलिए रुद्र कहलाता है। अनाहूति ही वह शक्ति है जो रुद्र को शिव अर्थात् कल्याणकारक बनाती है। सूर्य साक्षात् अग्नि है, रुद्र है। औपधि, वनस्पति आदि रस-गर्भित पदार्थों से वह अन्न का आहरण करता है तभी तक ‘कल्याणा का निधान’ बना रहता है। अनाहूति बन्द होने पर रुद्ररूप बनमर सहारक बन जाता है। तात्पर्य यह है कि शिव का शिवत्व शक्ति के समन्वय पर निर्भर है। अव्यय-पुरुष की चिदधनशक्ति का ही नाम साम है। वह विशाल अन्तरिक्ष में सर्वत्र व्याप्त रहती है, वही इन्द्र, रुद्र, विष्णु ब्रह्मादि-शक्तियों को स्व-स्वरूप में कायम रखती है। इसी का नाम महामाया है, यही हिरण्मय सोर-रुद्र को शिव बनाने वाली हैमवती (हिमभाव-सम्पन्ना) उमा है, शक्ति है। इस महाशक्ति का आलम्बन प्राप्त किये बिना ब्रह्म का ज्ञान नहीं हो सकता।

ऊपर इन चुकें हैं कि चिदधन अव्ययपुरुष की चित्-शक्ति ही जगत् का कागण है। पचाक्षर-सृष्टि में इन्द्र, अग्नि और सोम इन तीन दयताओं की समृष्टि को शिव-नाम से अभिहित किया जाता है। अग्नि और सोम के योग से ही जगत् बनता है—‘अग्नीपामात्मज जगत्’— इन्द्र उसका भा, ज्योति

अथवा रूप प्रदान करता है। शिव से शक्ति का समन्वय होने पर वह परिणामी हो जाता है। शिव अधिष्ठान है और शक्ति उसकी अधिष्ठात्री, दोनों में अभिन्नता है। शक्ति और शक्तिमान के मिले हुए विलास का ही परिणाम जगत् है। अकेला ब्रह्म अथवा शिव जगत् का कारण नहीं हो सकता क्योंकि वह निर्विकार है।

शक्तिजात हि ससार तस्मिन् सति जगत्वयम् ।  
तस्मिन् क्षीणे जगत् क्षीण तच्चिकित्स्य प्रयत्नत ॥

यह ससार शक्ति का ही कार्य है। शक्ति के आविभाव से तीनों ही जगत् उत्पन्न होते हैं और शक्ति का तिरोभाव होने पर उनका अभाव हो जाता है अतः उसी शक्ति का चिन्तन करना चाहिए।

शिव की यह शक्ति दृश्यमात्र जगत् में, प्रत्येक शरीर में और जड़-चेतन-पदाथ में विद्यमान है। चेतन की चेतनता और जड़ की जडता यही है। यह अव्यक्तरूप से दृश्य-अदृश्य जगत् में व्याप्त है और विश्व में अनेक रूपों में अभिव्यक्त होती है<sup>१</sup>, यथा— विष्णुमाया, चेतना, बुद्धि, निद्रा, क्षुधा, छाया, तृष्णा, क्षान्ति, जाति, लज्जा, शांति, श्रद्धा, कान्ति, लक्ष्मी, वृत्ति, दया, दीपि, तुष्टि, पुष्टि, भ्रान्ति आदि।<sup>२</sup> भक्त भी अपनी-अपनी भावनानुसार दुर्गा, महाकाली, महासरस्वती, अन्नपूर्णा, राधा, सीता, श्री-नामा से इसी महाशक्ति की आराधना करते हैं, अथवा—

देशकालपदार्थात्मा यद्वस्तु यथा यथा ।  
तत्तदरूपेण या भाति ता श्रय सविद कलाम् ॥  
(यागिनीहृदयतन्त्र)

<sup>१</sup> अन्त स्थिताप्यखिलजन्तुपु तनुरूपा  
विद्यातस बहिरहिखिलविश्वरूपा ।  
का भूरि शब्दरचना वदनातिगासि  
दीन जन जननि । मामय निष्प्रपञ्चम् ॥

<sup>२</sup> प्रथमा विष्णुमाया च द्वितीया चतना तथा  
बुद्धिनिद्रा क्षुधा छाया शक्तितृष्णावथाष्टमी ॥  
क्षान्तिजातिस्तथा लज्जा शान्ति श्रद्धा च कान्तिका ।  
लक्ष्मीवृत्ति स्मृतिश्चैव दया दीपिस्तथैव च ॥  
तुष्टि पुष्टिस्तथा माता भ्रान्ति सर्वात्मिका तथा ॥

जो देश, काल, पदार्थ और आत्मा भेद से वस्तुओं के पृथक् पृथक् रूपों में व्यक्त होता है— ब्रह्म की उसी सवित्कला<sup>१</sup> का आश्रय ग्रहण करता है।

सवित्कला के सोपाधिक विविध रूप मायाशक्ति के परिणाम है। माया अपरिच्छिन्न ब्रह्म को परिच्छिन्न या मापने योग्य-सा बना देती है। जिससे मापा जा सके वह माया अथवा वह परमचैतन्य की नैसर्गिकपूर्णता को आवत करके जीव को भूलभूलैया म डाल देती है और वह उस स्व-स्वरूप की पूर्णता को न पहचानता हुआ मा या (यह वह नहीं है, इस भाव) के चक्कर में पड़ जाता है।

पहले कह चुके हैं कि यह सब कुछ 'पुरुष' है। पुरुष से सामान्यरूप म जीव वा मनुष्य का ही अर्थ नहीं लेना है अपितु सृष्टि का प्रत्येक कण, सूक्ष्मातिसूक्ष्म अणु भी चैतन्यरूप पुरुष है जिसका प्रकृतिरूपा शक्ति से एकीभाव है। ब्रह्माद का एक-एक रजकण या अणु-परमाणु अपनी परिच्छिन्नता या आणवी चेतना को अभिव्यक्त करता है।

लोक में हम पदार्थों की शक्ति उनकी गति से मापते हैं। गति ही शक्ति है। किसी में घलने-फिरने, कार्य करने, भार उठाने, सोचने-समझने आदि की जो सामर्थ्य या गति होती है उसको शक्ति कहते हैं। इसी प्रकार जिनको हम जड़ अथवा अचेतन पदार्थ कहते हैं उनमें भी किसी स्थान पर टिके रहने, भार को रोकने स्वयं भारशील होने की शक्ति का माप हम करते हैं। शक्ति तन्तु रूप से सभी पदार्थों में अनुसूत है। शक्तिगति पदार्थ का कोई भौतिक अस्तित्व नहीं रहता। उसका अन्तर्भाव वहाँ, कैसे होता है, यह लम्बा विषय है। हम जिस पृथ्वी पर रहते हैं और जिसको अचला कहते हैं वह स्वयं गतिमयी है। उसमें गति भी एक तरह की नहीं, कई प्रकार की है। पहले वह अपनी धूरी पर धूमती है और इधर-उधर मड़लाती भी रहती है। धूरी पर धूमने के परिणामस्वरूप दिन-रात का लक्ष्य हम करते हैं परन्तु मण्डलाने की गति बहुत

<sup>१</sup> सवन्नन या पूर्व अवस्था म परमज्ञान की रजा परा सवित होती है। सवन्नन अथवा स्पन्दन क अनन्तर प्राप्तिरूप ज्ञान क आपार पर वही सवित विविध कलाओं के रूप म व्यक्त होती है। सत्यगीव ईश्वर रु० विष्णु ब्रह्मा अग्नि साम अथवा चन्द्रमा वी सब मिलानेर ९४ कलाओं मानी गई हैं। इनका विवरण सौभाग्यरत्नाकर आदि ग्रन्थों म दखना नहिए।

नवदुर्गाओं में तीसरी शक्ति का नाम चन्द्रघण्टा है। इनका यह स्वरूप पराशान्तिदायक और कल्याणकारी है। इनके मस्तक पर घण्टे के आकार का अर्धचन्द्र है इसी कारण इन्हें चन्द्रघण्टा देवी कहा जाता है।

देवी के चौथे स्वरूप का नाम कूधाण्डा है। अपनी मद (हत्की) हँसी द्वारा अण्ड अर्थात् ब्रह्माण्ड को उत्पन्न करने के कारण इन्हें कूधाण्डा देवी के नाम से कहा गया। कूधाण्ड कुम्हड़े (कदू-कोळा) को कहते हैं जिसकी बलि इनको सर्वाधिक प्रिय है।

भगवती का पाचवा स्वरूप स्कन्दमाता का है। स्कन्द शिव के पुत्र का नाम है, यह कात्तिक्य के नाम से भी जाने जाते हैं। इनकी माता होने के कारण ही इनका नाम स्कन्दमाता हुआ। कमल इनका आसन है इसलिए इनको पद्मासना (कमलासना) कहते हैं। सूर्यमण्डल की अधिष्ठात्री देवी होने के कारण इनका उपासक अलौकिक तेज कान्ति से सम्पन्न हो जाता है।

दुर्गा के छठे स्वरूप का नाम कात्यायिनी है। कत नामक ऋषि के पुत्र कात्य के गोप्र म प्रसिद्ध कात्यायन उत्पन्न हुए। इनकी पुत्री के रूप म उत्पन्न होने के कारण इनका नाम कात्यायिनी हुआ। महर्षि कात्यायन ने ही सर्वप्रथम इनकी पूजा की इसलिए इनका नाम कात्यायिनी हुआ।

भगवती दुर्गा का सातवा स्वरूप कालरात्रि का है। यह दिखने में अत्यन्त भयानक ओर काली होने पर भी सदैव शुभ फल ही देने वाली है इसी कारण इनका एक नाम ‘शुभझरी’ भी है।

शक्ति का आठवा स्वरूप महागौरी है। इनको आठ वर्ष की बालिका के रूप मे पूजा जाता है, ‘अष्ट वर्षा भवेद गौरी’। शिवजी को वर के रूप मे प्राप्त करने के लिए इन्होंने धोर तपस्या की। इसी के क्रम म इनके शरीर का ए काला पड़ गया परन्तु भगवान शिव ने गगा जल से मल-मल कर स्नान कराया तब यह विद्युत-प्रभा के समान कातिमती-गौर हो गई, तभी से इनका नाम महागौरी पड़ा।

इन्ही देवियों के विभिन्न रूप देश-काल और मान्यता के आधार पर सर्वत्र प्रचलित हुए यहा तक कि देश-काल-कुल और व्यक्तियों के आधार पर इनके नाम बनते चले गये।

माता दार्गा स्वयं शक्तिस्वरूपिणी जगन्माता है। उन्हाने ही अपनी मानव सन्तति को शक्ति पदान की है। केवल यही नहीं, उन्हाने विविध लीलाओं के उदाहरण से यह भी सिद्ध कर दिया कि हम अपनी शक्ति को कहा और किस प्रकार काम में लाना चाहिए।

अद्भुत लीलामयी महाशक्ति की ही सत्ता सम्पूर्ण पदार्थों में चेतना रूप में सर्वत्र विद्यमान है। यही नहीं जड़ पदार्थ भी शक्ति से विहीन नहीं है। यदि शक्ति न हा तो पत्थर पर पत्थर कैसे टिका रहे? जल में गति कहा से आये?

किसी न किसी कार्य का सम्बन्ध भी किसी विशेष देवता या देवी से स्थापित होने लगा— यहा तक कि विभिन्न शारीरिक अवस्थाओं को भी देवी का रूप माना गया यथा दुग्ध सप्तशती में आया है कि—

जो देवी सब प्राणियों में क्षुधारूप में स्थित है, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारम्बार नमस्कार है। जो देवी सब प्राणियों में छायारूप में स्थित है, जो देवी सब प्राणियों में शक्तिरूप में स्थित है, जो देवी सब प्राणियों में स्थित है, जो देवी सब प्राणियों में क्षान्ति (क्षमा) रूप में स्थित है, जो देवी सब प्राणियों में जातिरूप से स्थित है, जो देवी सब प्राणियों में लज्जारूप में स्थित है, जो देवी सब प्राणियों में शातिरूप में स्थित है, जो देवी सब प्राणियों में श्रद्धारूप में स्थित है जो देवी सब प्राणियों में कान्तिरूप में स्थित है, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारम्बार नमस्कार है।  
(८/२३-५५)

परमात्मका का विष्णुस्वरूप अणु-अणु में व्याप्त है। इसी प्रकार उसकी महाशक्ति भी प्रत्येक अणु में अनुप्रविष्ट है। इस प्रकार जगत् का प्रत्येक अणु देवस्वरूप एव देवीस्वरूप है। इसीलिए प्रत्येक पत्थर को देवता रूप मान लिया जाता है। उसी में देवी भी है। ब्रणाक्षित पत्थर को शीतला माता के रूप में पूजा जाता है, यह सब जानते हैं। देवी का यह व्यापक रूप सर्वत्र पूजित

हुआ। अपनी-अपनी श्रद्धानुसार लोगों ने देवी का नाम और रूप निर्मित कर लिया, इसीलिए देवी को विश्वव्यापिनी कहा गया है। विभिन्न समुदायों, क्षेत्रों और स्थानों में वहाँ के रहने वाले लोगों की मान्यतानुसार देवी का स्वरूप निर्धारित हुआ। इस प्रकार लोकदेवी, ग्राम देवी और कुल देवी आदि के रूप में देवी पूजी जाने लगी।

आद्याशक्ति को ज्योतिस्वरूपा कहा गया है। सभवत इसीलिए नवरात्र में अष्टमी के दिन गृहणिया जलते कोयले पर धृत की आहूति देकर ज्योति प्रज्ज्वलित करती है और पूरा परिवार उसका दर्शन करता है। मातेश्वरी का प्रकाश विद्युत्-प्रकाश के समान कहा गया है इसीलिए देवी का एक नाम विद्युदुज्ज्वला भी है जो समयान्तर में ‘बीजल’ बन गया।

जब ब्रह्म में शक्ति अथवा बल उद्बुद्ध हो जाता है तब सृष्टिक्रम चालू होता है। ब्रह्म की सज्जा रस है और बल की सज्जा माया। यह बल रस से कभी पथकूँ नहीं होता किन्तु कभी सुप्त, कभी उद्बुद्ध और कभी कुर्वद्रूप (कार्य करता हुआ) रहता है। जब बल सुप्त रहता है तो वह रस निर्विशेष ब्रह्म कहलाता है। इसका वाणी वर्णन नहीं कर सकती, मन उस तक पहुँच नहीं पाता।

### ‘येतो वाचो निवर्तन्ते अप्राप्य प्रनसा सह’

उद्बुद्ध बलवाला ब्रह्म परात्पर कहलाता है, वह नि सीम होता है। उद्बुद्ध बल जब नि सीम ब्रह्म को ससीम बना देता है, उसे परिच्छिन्न कर देता है तो उसकी सज्जा पुरुष हो जाती है। इसी पुरुष से जगत् की उत्पत्ति होती है तब वह सत्य अथवा प्रकृति नाम से भी जाना जाता है।

अव्यय पुरुष दिव्य, अमूर्त, अज, अप्राण, अमान, शुभ्र, अक्षर और पर से भी परे होता है। उसमें क्रिया नहीं होती, वह लिप्त नहीं होता, न वह कार्य है, न कारण है, उसमें घटा-बढ़ी भी नहीं होती, परन्तु रस और बल के सघर्ष के परिणामभूत पुरुष में अनन्त शक्तियाँ उद्भूत होती हैं। ज्ञान, बल और क्रिया उसकी स्वाभाविक शक्तियाँ हैं— अन्य सभी शक्तियाँ का इन्हीं में अन्तर्भाव हो जाता है। यही शक्तियाँ संसृति-प्रपञ्च की सर्जिका हैं—

न तस्य कार्यं करणं च विद्यत  
 न तत् सप्तश्चाभ्यधिकश्च दृश्यते ।  
 परास्य शक्तिविविधैव श्रूयते  
 स्वाभाविकी ज्ञानबलक्रिया च ॥  
 (श्वेताश्वतरोपनिषद् ६-८)

अक्षर पुरुष को ही अव्यक्त, पराप्रकृति और परब्रह्म आदि नामों से सम्बोधित करते हैं। इसी प्रकृति के साथ जब पुरुषसङ्गक ब्रह्म का समन्वय होता है तब विश्व रचना होती है। तत् तु समन्वयात्' अथवा, जैसा गीता में कहा गया है—

मयाध्यक्षेण प्रकृति सूयते च चराचरम् ।' (९-१०)

मुझ अधिष्ठाता के समन्वय से यह प्रकृति चराचर जगत् को पैदा करती है।

सृष्टि में जो कुछ प्रकृष्ट है और जो कुछ सृष्ट हुआ है वह सब प्रकृति ही है—

प्रकृष्टवाचक प्रश्च कृतिश्च सृष्टिवाचक ।  
 सृष्टौ प्रकृष्टा या देवी प्रकृति सा प्रकीर्तिता ॥

इच्छा, ज्ञान और क्रिया इन तीनों महाशक्तियों के प्रतीक रूप में ही पराशक्ति के पाश, अकुश और धनुष, बाण नामक आयुधों की कल्पना की गई है—

इच्छाशक्तिमय पाश अकुश ज्ञानरूपिणम् ।  
 क्रियाशक्तिमये बाणधनुषी दधुज्ज्वलैम् ॥

पाश इच्छाशक्ति का प्रतीक है। जैसे, मनुष्य पाश में उलझ कर फँसता ही चला जाता है वेसे ही इच्छाशक्ति के फन्दे में पड़ कर वह उलझता जाता है और उसका ससार बढ़ता है, ज्ञान का प्रतीक अकुश है जो अविद्या अथवा भ्रम की ओर बढ़ते हुए मन-मताग को सबेत बरता है, धनुष और बाण क्रियाशक्ति के नमूने हैं।

मद होती है। पृथ्वी की तीसरी गति सूर्य की परिमांग करने की है जिससे हम वर्ष और मास का हिसाब लगाते हैं। अब सूर्य भी अपने इर्द-गिर्द घूमने वाले ग्रहों और उपग्रहों के साथ कृतिकामण्डल का चक्कर लगाता है और अभिजित् नक्षत्र की ओर बढ़ता है। सूर्य के चक्कर लगाने वाले ग्रह के रूप में पृथ्वी की यह चौथी गति है। फिर कृतिकामण्डल भी सौर-मण्डल के समान किसी वृहद्ब्रह्माण्ड की परिमांग कर रहा है। वह पृथ्वी माता की पञ्चम गति मानी जा सकती है— परन्तु इससे आगे शक्ति का स्वरूप अज्ञात और अपरिमेय है। वह 'महतो महीयान्' है। इसी प्रकार वृहद्ब्रह्माण्ड से लकर हमारे पशु, पक्षी, कृमि, कीट, पतगादि सभी चर पदार्थों के शरीरों का सघटन करने वाले अणु-परमाणुओं में भी गति रूप से वही शक्ति व्याप्त है। यही नहीं पेड़ों में, पत्तियों में, वनस्पति में भी उसी गति-शक्ति का रूप विद्यमान है। बीज से अकुर का विस्फोट गति का ही स्पष्ट रूप है, पत्तियाँ निरूलना, शाखाओं में रस-सचार होना आदि ऊर्ध्वगति वनस्पति में स्पष्ट रूप से परिलक्षित है। मिट्ठी, ढेला, पत्थर, लोहपिण्ड आदि को हम निर्जीव और जड़ पदार्थ कहते हैं परन्तु कण-सहति और अधोगामिनी गति-शक्ति उनमें भी होती है। अन्यथा एक से एक कण कैसे जुड़ा रहता है? ऊपर उछालते ही वह पदार्थ नीचे आ पड़ता है— यदि पृथ्वी न रोक ले तो और भी नीचे चला जाय। यह उसमें गति-शक्ति नहीं है तो क्या है?

हमारे शरीर सूक्ष्म-जीवकणों से बने हैं जिनको 'सैल' या कोप कहते हैं। प्रत्येक जीव कण में भी गति होती है। ये व्यवस्थित रूप से एक दूसरे के प्रति आकृष्ट और विमृष्ट होते रहते हैं— इन कणों के अवयव अणु भी सजीव परमाणुओं से बने हैं। इसी प्रकार जिनको हम जड़ पदार्थ कहते हैं उनका भी विशक्लन करने पर ज्ञात होता है कि प्रत्येक कण अणु और परमाणु भी अनेक विद्युत-ऋणा से बनता है। विद्युदणु दो प्रकार के होते हैं— 'पॉजिटिव' और 'निगेटिव' इनको धन-अणु और ऋण-अणु कहते हैं। प्रत्येक धनाणु के चारों ओर ऋणाणु चक्कर लगाता है। वैज्ञानिकों ने इस ऋणाणु की प्रदक्षिणा करने की गति का हिसाब लगाकर बताया है कि वह एक सैकिण्ड में एक लाख अस्सी हजार मील की रफ्तार से गतिमान है। इसी प्रकार प्रत्येक ऋणाणु की

प्रदक्षिणा परमाणु करता रहता है जो अणुओं से घिरा हुआ है। जैसे सामण्डल है वैसे ही प्रत्येक पिण्ड में वह परमाणु मण्डल क्रियाशील रहता है। इसीलिए कहा गया है कि अण्ड सो पिण्ड' अथात् जो कुछ ब्रह्माण्ड में हो रहा है वही सब प्रत्येक पिण्ड में हो रहा है। जिस प्रकार नक्षत्रा और ग्रहों में से कुछ हिस्से टूट-टूट कर नए उपग्रहादि बन जाते हैं और सौरमण्डल में अपनी स्थिति और गति बनाए रहते हैं उसी प्रकार से क्रणाणु भी छिटक-छिटक कर एक परमाणुमण्डल से दूसरे परमाणुमण्डल में अटकते हैं— परन्तु अपनी गति पकड़े रहते हैं। यह विसहति ही विविध पदार्थ रचना का कारण होती है। वैज्ञानिकों का वीक्षण और हिसाब यहाँ ही समाप्त नहीं हो जाता। प्रत्येक क्रणाणु भी अनेक सूक्ष्म सूक्ष्मतम अणु से निर्मित होता है जिसे प्रभाणु कहते हैं। प्रभाणु की गति का हिसाब एक लाख छियासी हजार तीन सौ मील प्रति सेकंड के बग से लगाया है। यही प्रभाणु जब छिटक-छिटक कर एक क्रणाणुमण्डल से अपर में सङ्ग्रान्त होते हैं तभी हमारी आँखों परावित होती है अर्थात् उन पर रोशनी का प्रभाव पड़ता है। फिर, प्रभाणुओं के भी मण्डल होते हैं। प्रत्येक प्रभाणु अनेक कर्पणुओं से बनता है और फिर प्रत्येक कर्पणु की स्थिति सर्गण पर निर्भर है। इन सर्गणुओं की गति का अनुमान लगाना इनका माप करना या इनके स्वरूप की कल्पना करना असभव है। इन्हीं से सर्ग अथवा सृष्टि का आरम्भ मान कर वैज्ञानिकों न सास ले ली है। परन्तु, यदि हम कल्पना करते चल जाये तो सगाणु की स्थिति भी उससे कहीं सूक्ष्म-सूक्ष्मतर अणु से बनती होगी। या प्रकृति की किसी अवधि तक पहुँच कर वाणी भी लौट जाती है मन भी हाथ फैलाकर झर रह जाता है। वही उसका अणारणीयान्' रूप है। अन्ततोगत्वा यह सब अणु-प्रपञ्च एक ऐसे अणु के इर्द-गिर्द होता है जिसमें स्थाणु' कहते हैं। वह स्वयं किसी भी गति विभार से प्रभावित नहीं है— इसीलिए स्थ-अणु है। इसी के चारों ओर विश्ववल्ती का प्रसार होता है। जैसे एक निष्प्र नीरस स्थाणु (सूखे रूठ) से लिपटकर फूल पत्ता से सम्पन्न सुशांभित वल्तरी उसके मूलम्यरूप का ढार लती है और एक सुखद सुपासित एवं माहक वातावरण बना दती है उसी प्रकार स्थाणु के चारों ओर विविध अणुमण्डल का पसार होता है ओर वह मूलतत्त्व उसमें अन्तर्भिरहित

रहता है।<sup>१</sup> शक्ति और शक्तिमान का एकीभाव होकर भी शक्ति का स्वरूप ऊपर उभर आता है।

ऊपर शास्त्रीय एवं भौतिक विज्ञान के आधार पर जो यत्किञ्चित् विवेचन हुआ है उससे समझना चाहिए कि इस विचित्रताओं से भे अनन्त विश्व मे हमे जो नाना प्रकार के अनुभव होते हैं वे सब वस्तुतः शक्ति के आत्म-प्रकाश के ही परिणाम हैं। विश्व के मूल मे शक्ति पारमार्थिक रूप से परम तत्त्व-स्वरूप मे विराजमान है। यह आद्याशक्ति समस्त तत्त्वों से पे भी है और सर्वतत्त्वमयी एवं प्रपञ्चस्वरूपा भी है। इसी मे जगत् का बीज निहिन है। शक्ति का अवलम्बन (ग्रहण) किये बिना आत्मप्रकाश अथवा आत्मज्ञान की सभावना नहीं है। जिस प्रकार आइने के सामने खड़ा होकर पुरुष प्रतिविम्बरूप मे अपने को पहचानता है<sup>२</sup> और कहता है ‘मैं यह हूँ’, उसी प्रकार परमात्मा भी अपनी प्रकृति अथवा

१ इसी भाव का भगवत्पात् शक्तराचार्य न आनन्दलहरी म या व्यक्त किया है—

सपर्णामाकीर्णं कतिपयगुणं सादरमिह

श्रयन्त्यन्ये वल्लीं मम तु मतिरथ विलसति ।

अपर्णका सेव्या जगति सकलैर्यत् परिवृत्

पुराणाऽपि स्थाणु फलांति किल कैवल्यपदवीम्॥

बहुत स लाग कितन ही गुण के कारण सपर्णा या पत्राकीर्ण वल्ली का आश्रय ग्रहण करत है परन्तु मरा ता मत है कि इस जगत् म एकमात्र अपर्णशक्ति (पत्र रहित वल्ली या पार्वती) की ही सवा कस्ता समुचित है कि जिसस आशिलाष्ट स्थाणु (दृठ अथवा शिव) भी (माक्षरूपी) फल दन क यात्रा बन जाता है।

२ मुखाभासका दर्पण द्रश्यमाना

मुखत्वात् पृथक्त्वन् नैवास्ति वस्तु ।

विदाभासका धीरु जीवा...पि तद्वत्

म नित्यापलविष्वरूपाय...मात्मा ॥

(हस्तामलकम्)

तर्पण म जा मुख का प्रतिविम्ब निखाई दता है वह मुख ही है और कुछ नहीं इसी प्रकार प्रकृति के मुद्दिरूप स्वच्छ स्वरूप मे जा चिदरूप ब्रह्म (Ultimate consciousness) का प्रतिविम्ब पड़ता है वह तदरूप (उसी का स्वरूप) है।

यह प्रतिविम्ब ही जीव है। मुद्दिरात उपर्यि भ्र क करण अन्त करण दर्पण क भी अनन्त भ्र हा जात है इसलिए अनन्त प्रतिविम्ब भ्र स अनन्त जीवात्मा की सृष्टि है।

शक्तिरूपा आत्मशक्ति मे निज का दर्शन करता है। जब आत्मा अपनी प्रकृति को पहचान लेता है तो वह कहता है 'मैं यह हूँ, पूर्ण हूँ'। यही 'पूर्ण अहता' सत् चित् और आनन्दमय परमेश्वर की धनीभूत अभिव्यक्ति है। इस 'पूर्णाहता' की उपलब्धि के लिए पुरुष और प्रकृति अथवा शिव और शक्ति का योग परमावश्यक है। न अकेला शिव, न अकेली शक्ति जगत् का निर्माण करने मे समर्थ है। जैस प्रतिबिम्ब के अस्तित्व के लिए वस्तु और दपण दोना आवश्यक है उसी प्रकार सच्चिदानन्दघन की प्रतिबिम्बरूपा मूर्ति को प्रकट करने के लिए शक्ति-दर्पण भी परमावश्यक है।

विशुद्ध प्रकृति-दर्पण म प्रतिबिम्बित परमचित् के अनन्तभेद ही अनन्तजीव है। प्रत्यक्ष जीव प्राकृत-शक्ति (माया) के दीर्घकालीन सम्पर्क के कारण चिदानन्दमय स्व-स्वरूप को भूल कर उसकी प्राप्ति के लिए भटकता फिरता है। परन्तु, जब तक प्रकृतिमाता प्रसन्न होकर अपना पर्दा नहीं हटा लेती तब तक उसका परम आनन्दस्वरूप का ज्ञान नहीं होता। इसीलिए प्राणिया के समस्त व्यापाग में प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से शक्ति माता को प्रसन्न करने का ही प्रयत्न चलता रहता है। विविध प्रकार के शुभाशुभ कर्मों और कार्यों के द्वारा सापेक्षरूप से जीव आनन्द का अनुभव करता है। कर्मों की शुभता और अशुभता के फलस्वरूप विविध योनियों में जन्म ग्रहण करता हुआ, अनमय, प्राणमय, मनोमय और विज्ञानमय कोपों में प्रकृति के वश मे रहता हुआ जब कभी वह आनन्दमय कोप मे प्रवेश पा जाता है तो उसके प्राकृत बन्धनों मे कुछ ढिलाई आ जाती है अथवा प्रतिमाता प्रसन्न होकर अपनी पकड़ को शिथिल कर दती है तो वह जीव स्वातन्त्र्य का अनुभव करता हुआ अपने चिदानन्दमय स्वरूप को पहचान कर परमानन्द की अनुभूति करता है। अत शक्तिस्वरूप प्रकृति माता की कृपाप्राप्ति के लिए ही अपनी-अपनी प्रवृत्ति के अनुसार कर्म करते हुए समस्त भूत उसका अर्चन करते रहते हैं और उसी के द्वारा मानव को स्व-स्वरूपापलब्धिरूप सिद्धि पास होती है।<sup>१</sup>

१ यत् प्रवृत्तिभूताना यन सरमिद तदूम।

स्वर्पंगा तमध्यच्चै मिदि विन्निति मानवा ॥

(भगवतगीता)

इस प्रकार ज्ञात हुआ कि स्व-स्वरूप को पहचानने को छटपटाते हुए मानव के लिए शक्ति-साधना की प्रबुत्ति स्वाभाविक और अनिवार्य है। बिना शक्ति (बल) के आत्मा की उपलब्धि नहीं हो सकती—

‘नायमात्मा बलहीनेन लभ्य ।’

(भगवद्गीता)

इस रहस्य को ऋषियों ने ध्यान और योग के द्वारा ज्ञात किया।<sup>१</sup> देश और काल भेद से उसके प्रकार और नामादिकों में अन्तर अवश्य दिखाई देता है परन्तु मूल में समस्त ससार एकमात्र शक्ति के अधीन है और उसी के साधनाराधन में लगा हुआ है। वेदोपनिषदादिक अत्यन्त प्राचीन साहित्य में तो अजा आद्याशक्ति आदि रूपों में शक्ति-सर्वर्द मिलता ही है, बाद के बौद्ध साहित्य में भी प्रज्ञापारमिता, बज्रबाराही, तारा<sup>२</sup>, मणिमेघला<sup>३</sup>, करुणा, शून्यता आदि शक्तिरूपिणी देवियों की आराधना के विस्तृत और विशुद्ध विवरण प्राप्त है। जैन-शासन में भी प्रत्येक तीर्थङ्कर की शासन-सत्ता तप्रशक्ति और सारस्वतकल्प को इष्ट माना गया है। बाइबिल और कुरान में भी ईश्वर की श्वसनशक्ति को सृष्टि का कारण माना गया है तथा कहा गया है ‘आदि सृष्टि में शक्ति का स्थान प्रमुख’ है।<sup>४</sup> इस प्रकार शक्ति की सर्वव्यापकता ओर सर्वमान्यता स्वयसिद्ध है।

लौकिक अर्थों में शक्ति की परिभाषा और मान्यता अन्तरग में एक होते हुए भी बाह्यरूप में बदलती रही है। वैदिक कर्मकाण्ड युग में अधिकाधिक यज्ञों का अनुष्ठान करने वाला ही शक्तिशाली समझा जाता था। ‘शतक्रतुं’ ‘सहस्रयज्वा’ आदि शब्द इसके प्रमाण हैं। उपनिषदा में ब्रह्मनिष्ठ ओर आत्मदर्शी

<sup>१</sup> त ध्यानयागानुगता अपश्यन्

दवात्मशक्ति स्वगुणैर्निर्गुद्धाम्।

य काणानि निखिलानि तानि

कालात्मयुतान्यधितिष्ठत्यक् ॥

(श्वताश्वतरापनिषद्)

<sup>२</sup> बौद्ध अङ्कार अथवा पण्व का तार कहते हैं उसकी पली तारा कहलाती है।

<sup>३</sup> समुद्र के तूफानों में रुका करने वाली दबी।

<sup>४</sup> खल्कनामिन् बुल्ल शयीन जैजैन्।

(बुरामशीम)

का ही बल सर्वश्रेष्ठ माना जाता था। बाद मे 'यस्य बुद्धिर्बलं तस्य' की उक्ति प्रयोग मे आई और अन्ततागत्वा 'लाठी जिसकी भेस' भी चरितार्थ होती रही और होती भी हे। वर्तमान मे वेजानिक आविष्कारों की होड लगी हुई है। अणु शक्ति की वेगवत्ता और प्रभ्रशिनी क्रिया का दर्शन करके कुछ लोग फूले नहीं समा रहे हैं और विश्व मे सर्वश्रेष्ठता का दावा कर रहे हैं। वस्तुत यह अनात्मभाव अथवा जड भाव के ही आधिक्य के कारण है। परन्तु, प्रकृति, आद्याशक्ति, माया, जो भी हम कह, जगत् का अथवा अपनी सृष्टि का समत्व नष्ट नहीं होने देती क्योंकि उसकी मूल स्थिति, अमान, अस्पन्द, अनादि ब्रह्म मे निहित है। यह दृश्य, कल्पनीय और कल्पनातीत भी है। विश्व, ब्रह्माण्ड आदि नाम से कहा जाने वाला प्रपञ्च केवल उस ब्रह्म मे किञ्चित् स्पन्दमात्र से उद्बुद्ध चित्-शक्ति का विलास है— परन्तु, वह स्वयं और उसमे अन्तर्निहित एकीभूता अनुदबुद्ध अक्षुब्ध शक्ति उस उद्बुद्ध अश से कितनी बड़ी है यह सहज ही में साचा जा सकता है। ससार के सभी तथाकथित सृष्टिकर्ता, रक्षक और विनाशक तत्त्व अपना क्षणिक चमत्कार-सा दिखावगे और भुग्नों के समान अस्थायी चमक दिखाकर विलुप्त हो जावगे,<sup>१</sup> शप रह जावेगा वह अशेष जिसम न निमेष है, न उन्मेष।

भगवती शक्ति विश्वजननी है। वह विश्व के हित मे समय समय पर जब भी अविद्याजन्य स्लेश बढ़ जाते हैं तो, अपनी श्रेयस्करी एव क्लेशहारिणी कलाओं को विकसित करती है और विश्व व्यापार मे अनिष्ट की बाधा को दूर करती है—

\* श्रीमच्छिरापार्य न कहा है—

विरिज्ज्व पञ्चत्व ब्रजति हरिराजाति विरिति  
विनाश कीनशा भजति धन्दा धाति निघम्।  
पितन्द्रा माहन्त्री विततिरपि सम्पीलिनदृशा  
महासहारस्मिन् विहरति सति त्वत्पतिरसौ॥

(सौन्दर्यलहरी)

सृष्टि का विरहन वाला ब्रह्म पञ्चत्व (मृत्यु) का प्राप्त हो जाता है हरि (विष्णु) अपन कार्य से विरह हो जात हैं। (क्रियाहीन हानि समाप्त हो जात है) यमराज का विनाश हो जाता है कुबर की मृत्यु हो जाती है महान् का समस्त प्रसार और व्यापार जीै फूलता है (समाप्त हो जाता है) परन्तु ह सति (सत् शक्ति!) इस महासहार म भी तुम्हार पति विहार करता रहता है।

इत्थं यदा यदा वाधा दानवोत्था भविष्यति ।  
तदा तदावतीर्याह करिष्याम्यरिसक्षयम् ॥  
(सप्तशती)

‘जब जब दानवों द्वारा वाधा उपस्थित की जायेगी तो मेरे अवतीर्ण होकर दुष्टों का क्षय करूँगी।’ जगज्जननी के इसी कारण्य में आस्था रखता हुआ मानव भगवती शक्ति की विविध प्रकार से उपासना करता है क्याकि विश्व में स्थिति अथवा सहार के देव-तत्त्वों की हीनता यदि किसी मेरे आ भी जाय तो उसे इतना हीन नहीं माना जाता जितना कि शक्तिहीन होने पर। कोई अपनी स्थिति बनाए रखने में अथवा शत्रुओं का सहार करने में आशानुकूल सफल नहीं होता है तो कोई बात नहीं, परन्तु यदि वह हिमात अथवा शक्ति ही खो दें तो तिरस्करणीय हो जाता है। किसी को विष्णुहीन या रुद्रहीन कह कर तिरस्कृत नहीं किया जाता, किन्तु यदि वह शक्तिहीन हो गया है तो निकम्मा ही माना जाता है। इसीलिए शक्ति की साधना सतत चलती रहती है।

ससार में, मुख्यतः प्राणियों में, अस्तित्व के लिए सधर्ष ही प्रधान है। परस्पर विरोधी तत्त्व एक दूसरे को हटा कर या नष्ट करके अपनी स्थिति को दृढ़ एवं कायम रखने के लिए सधर्ष में शक्ति का प्रयोग करते हैं और इसी के लिए शक्ति-सचय के प्रयत्न करते रहते हैं। देवासुर-सग्राम से लेकर आज तक के महायुद्धादिक इसी तथ्य पर आधारित है। मानवों के अन्तर्बाह्य सधर्ष भी इसी के परिणाम है। इन सधर्षों में जहाँ बल-प्रयोग के द्वारा अनिष्ट तत्त्वों का अपसारण अथवा विनाश आवश्यक है वहाँ समान एवं हितकर तत्त्वों की सहति अथवा उनका सघटन भी परमावश्यक है। इसीलिए सघ का शक्ति कहा गया है। सघ-शक्ति अस्तित्व के लिए एक महान् आवश्यक एवं अपरिहार्य गुण है। राज्य, महाराज्य, साम्राज्य, भौज्य आदि की परिकल्पना, वर्ण-व्यवस्थानुसार जातिसंघटना एवं सामाजिक निर्माण आदि भी इसी सघशक्ति की साधना के परिणाम हैं। इसी प्रकार राष्ट्रशक्ति भी उसी चित्रशक्ति का बाह्य रूप है जो जगत् के मूल में निवास करती है। देश-विशेष में उत्पन्न हुए जन-समूहों की सामाजिक इच्छा-शक्ति के पिण्ड का ही नाम राष्ट्र है। गतिशील सार्वभौम शक्ति की त्रियाशीलता से ही इसकी उत्पत्ति होती है। इसी में रहकर मानव अपने समाज के माध्यम से अपनी आकाश्वाओं की पूति करता है। आदर्शों

की क्रियान्विति के साथन दूढ़ता है, श्रेयस् सप्राप्ति की ओर अग्रसर होता है। अपना हित राष्ट्र हित म मानता है। राष्ट्र की कीर्ति बढ़ाने मे अपना योग आवश्यक समझता है।<sup>१</sup>

जिस प्रकार अणु-सहति से अणुमण्डल और फिर उसके सतत गुणन-विस्तार से असर्य सर्गाणुमण्डल, कर्णाणुमण्डल, प्रभाणुमण्डल, नक्षत्र-मण्डल, सौर-मण्डल, कक्षिकामण्डल और विश्व-मण्डल आदि बनते हैं वैसे ही प्रत्येक जन के शक्ति-ब्रह्म से जाति, समाज, देश और राष्ट्र का निर्माण होता है। फलत राष्ट्रों की सहति से विश्व-राष्ट्र-मण्डल का निर्माण होता है। राष्ट्र के जन-जन की विकसित इच्छाशक्ति हा समष्टि रूप म प्रबुद्ध राष्ट्र-शक्ति के नाम से अभिहित होती है। व्यक्ति का विकास ही राष्ट्र का विकास है। जिस प्रकार व्यक्ति के विकास का चरम लक्ष्य अपने सत्, चित् और आनन्दमय स्व स्वरूप की उपलब्धि मे है उसी प्रकार राष्ट्र के चरम विकास का लक्ष्य भी सत्य, शिव और सुन्दर की प्राप्ति मे निहित है। जिस प्रकार जीव की परिच्छिन्न-शक्ति अव्यक्त, अव्यय ब्रह्म की आदि-महाशक्ति का ही अश है उसी प्रकार प्रत्येक जन और तदनु राष्ट्र विश्व-राष्ट्र का अश है। राष्ट्र को ही शक्ति कहा जाता है। अधिकाधिक शक्ति-सम्पन्न राष्ट्रों की प्रतीक रूप म विश्व-शक्ति (World Power) कहने का उदाहरण सामने है। जैसे-जैस व्यक्ति का विकास होता है, वह पूर्व-पूर्व सकीर्ण वृत्त से आगे बढ़ता हुआ उत्तरोत्तर वहदवत्त मे प्रसार करता है। माता की काख, गोद, घर के प्राण, गाव, नगर, प्रदेश, देश, राष्ट्र, राष्ट्रमण्डल और विश्व के दायरो को तोड कर वह विकसित होने की इच्छा करता है। पूर्ण-प्रबुद्ध व्यक्ति की मातृ-भावना अपनी माता, भौगोलिक-परिधि म आए हुए मातृ-भूमि या अमुख राष्ट्र नाम से अभिहित भूखण्ड तक ही सीमित नही रहती। वह अखिल विश्व की जन्मदात्री अनन्त

<sup>१</sup> उपेतु पा देवसत्त्व कीर्तिश्च मणिना सह।

प्रादुर्भूतांमि राष्ट्रमिन् कीर्तिमृद्धि दनतु मै।

(श्रीमूल)

१ दवताओं क मित्र अभि। मुझ कीर्ति और धन प्राप्त हा। मै इस राष्ट्र म उत्पन्न हुआ हू, जत मुझ य दमों सुलभ हा।

शक्ति से सम्बद्ध है। परन्तु, इन अन्तर्वृत्तों का कोई महत्व ही न हो, यह बात नहीं है। ये सब सीढ़ियाँ हैं जिनके द्वारा उत्तरोत्तर उच्च स्थिति में पहुँचा जाता है। अत इमारी शक्ति-उपासना का आध्यात्मिक स्वरूप जहाँ परम चित्-शक्ति के साक्षात्कार के प्रति प्रयत्नशील होने में है वहाँ लौकिक रूप में अपने व्यक्तित्व-विकास द्वारा ब्रह्मश विश्व राष्ट्र में अपनी स्थिति को समझते हुए उसे सुसमृद्ध और समुन्नत बनाने के प्रयत्नों में योगदान के रूप में निहित हैं।

जब हम किसी पदार्थ अथवा आदर्श को प्राप्त करने की इच्छा करते हैं तो वह हमारा इष्ट हो जाता है। उसकी प्राप्ति के लिए जिन उपायों, क्रियाओं अथवा साधनों को हम गम्भीरतापूर्वक अपनाते हैं वे ही हमारी उपासना के उपकरण बन जाते हैं। वे हमें हमारे इष्ट के पास ले जाकर बैठा देते हैं। अत उपासना का अर्थ वह साधन है जो हमें हमारे इष्ट को प्राप्त कराता है। इष्ट-प्राप्ति के लिए शक्ति का उपयोग आवश्यक होता है, इसलिए जब हम अभीष्ट वस्तु की उपलब्धि के लिए अपने में अन्तर्निहित शक्ति को उद्बुद्ध करने के जो उपाय अथवा साधन अपनाते हैं वही हमारी शक्ति-साधना है, उपासना है। शारीरिक शक्ति के लिए विविध प्रकार की शारीरिक क्रियाओं और योगासनादि की नियमित साधना की जाती है। इसी प्रकार मानसिक एवं आध्यात्मिक शक्ति की सम्प्राप्ति के लिए मत्र-जाप और शब्द-साधन आदि आवश्यक होते हैं। वस्तुत मत्र-साधन भी योग के ही अन्तर्गत माना जाता है। अत योग-साधन को ही शक्ति-उपासना का मुख्य रूप बता जाता है। योग के द्वारा हम माया-शक्ति को प्रसन्न करके उसे अपना आवरण हटाने के लिए कृपावती बनाते हैं और इस साधन के द्वारा जीव का ब्रह्म से योग होना सभव होता है अथवा लौकिक अर्थ में हमारे इष्ट से हमारा योग होता है, इसी कारण इसे योगमाया कहते हैं। यही हमारी समस्त उपलब्धियों के लिए आधार शक्ति है।

इष्ट-प्राप्ति के लिए अनिष्ट तत्त्वों का निवारण भी आवश्यक होता है और उसमें भी शक्ति का प्रयोग अनिवार्य है। परस्पर विरोधी शक्तियों के सघर्ष का ही नाम युद्ध है। सृष्टि का प्रत्येक क्षण और जीव अस्तित्व के लिए सघर्षरत रहता है। राग, द्वेष, मोह, अस्मिता और अभिनिवेश, ये अविद्या रूपी पञ्च-क्लेश कहलाते हैं, जो वैराग्य, ज्ञान, ऐश्वर्य और धर्म-स्वरूप विद्या-बुद्धि को आवृत करते रहते हैं। इन्हीं के सघर्ष रूप में आदि से अब तक युद्धादिक होते रहे हैं। 'सुप्तशती' का चण्डी-अमूर युद्ध वर्णन इसी का प्रतीक है। महिपासुर पञ्चभाव

और ब्रोध का द्योतक है, इसी प्रकार धूप्रत्लोचन और मधु-कैटभ मोह के, चण्ड-मुण्ड अहकार के, रक्तबीज काम का और शुभ-निशुभ लोभ के मूर्तिमान् नमूने हैं। ये सब अविद्या-विकार जब-जब प्रबल होते हैं, तभी देवता या दिव्यभाव आदिशक्ति की शरण में जाकर इनके उत्पात को शान्त करने के लिए प्रार्थना करते हैं, अविद्या बल के आवरण को हटाकर विद्या बल को प्रबुद्ध करने को सचेष्ट होते हैं। अविद्याजन्य विकार आसुरी-सम्पत् कहलाते हैं, इनका हनन करके इनको पराविद्या की दैवी-सम्पत् में परिणत करना ही शक्ति की उपासना है। इन विकारों के हनन का नाम ही बलि है, वही यज्ञ है।

योग, यज्ञ और बलि आदि तात्रिक क्रियाओं के साथ ही शक्ति-उपासना में भ्राता का भी बड़ा महत्त्व है। मन्त्र के द्वारा मूल साधन-शक्ति अधिक शक्तिशालिनी होकर व्यक्त होती है। वस्तुत परा चित्तशक्ति मन्त्र में ही व्यक्त होती है और जाप के द्वारा साधक मन्त्र को जागृत करता है। वायु की लहरियों से जिस प्रकार अग्नि प्रज्वलित होती है उसी प्रकार मन जाप से जीव-शक्ति उद्दीप होती है। मन्त्र अक्षरों से बनते हैं, अक्षर ब्रह्म का स्वरूप है। मन्त्र से विश्व-विज्ञान की सप्राप्ति और ससार-बन्धन से मुक्ति-लाभ होता है।<sup>१</sup>

भूत मात्र में शक्ति का निवास है।<sup>२</sup> नाम, रूप गुणादि भेदा के कारण विविधता प्रकट होती है। इसी कारण उपासना के भेद उत्पन्न होते हैं। परन्तु सब का लक्ष्य एक ही है और वह है आत्मानुभव। दुगा, चण्डी, महाविद्या आदि भेद और विविध उपासना के प्रकार एक ही महाशक्ति की कृपाप्राप्ति के साधन हैं। यही क्या, हमारी प्रत्येक हरकत उसी महामाया की उपासना का रूप है।

साधु-परिदान, दुष्कृत-विनाश और प्राकृत धर्म-संस्थापन के लिए शक्ति के विविध रूप अवतरित होते रहते हैं और लोक में प्रकृति विभेद से उपासना के विभिन्न प्रकारों का आविष्कार होता रहा है।<sup>३</sup> सृष्टि - शक्ति, ब्राह्मी शक्ति

<sup>१</sup> इस विषय पर विशाल सूचना के लिए भूमिका लाउक नारा सम्पादित भुवनश्वरी महासाम्र का प्रास्तात्विक परिदेश पढ़ना चाहिए।

<sup>२</sup> जट धड़ छार जीव जगि साग मझ सागति।

ता विण ग्रह ब्रह्म न घिये भगवति न ह भगवति॥ १७ ॥

— माताजी री वर्णनिका पु २१

<sup>३</sup> वर्णनिका में भी शक्ति के विविध रूपों का नाम निनाए गये हैं अग्निका पु ३८ ३९

के नाम से पूजित होती है, इसी प्रकार लय-शक्ति को माहेश्वरी शक्ति कहते हैं, इसके एक ही इशारे में समस्त विश्व-प्रपञ्च का लय हो जाता है। ब्रह्मा, विष्णु और शिव अपने अपने व्यापार बन्द कर देते हैं। आसुरी वृत्तियों के पुज्ज का दमन करने वाली और दैवी शक्ति-समूह का विकास करने वाली शक्ति 'कौमारी' कहलाती है। नव दुग्धओं में यह ब्रह्मचारिणी नाम से प्रसिद्ध है। यह शक्ति अपने आविर्भाव के लिए लोक में कुमारिका शरीर को ही आलम्बन बनाती है। नवरात्र में कन्याओं का पूजन, समय-समय पर दुष्टों और असुरों का विनाश करने हेतु इसी शक्ति के पूजन का प्रतीक है। राजस्थान और गुजरात में आबड़, आछी (इच्छा), चर्चिका, खोड़ियार, कणी आदि शक्तियों का अवतार कन्या रूप में ही हुआ ओर वे इसी रूप में पूजी जाती हैं। वैष्णवी-शक्ति सप्तरी की रक्षिका है। जगत् की सृष्टि, स्थिति और सहार में इसका श्रेयस्कर रूप रहता है।<sup>१</sup> सर्वप्रथम आत्मा को परिच्छिन्न एव आवृत करने वाली काल शक्ति है। इसीलिए परमात्मा अथवा महान् आत्मा को आवृत करने वाली शक्ति महाकाली कहलाती है। सब कुछ इसी के गर्भ में विलीन हो जाता है। महाकाल से इसका ऐक्यभाव है। यही शक्ति अवान्तर भेद से वराही भी कहलाती है। लोक में वराही या वाराही माता का पूजन इसका प्रतीक है। मनुष्य जब तक अपने स्वरूप को नहीं जान लेता तब तक वह श्रेष्ठत्व की ओर उन्मुख नहीं होता। यह स्व-स्वरूप-परिचायिका शक्ति नारसिंही नाम से कही जाती है क्योंकि यह नर को नरों में सिह अर्थात् श्रेष्ठ आत्मज्ञानवान् होने को उन्मुख करती है। चेतन्य-वर्ग में गति ओर प्रकाश-दायिनी शक्ति ऐन्द्री नाम से पूजित है। इसी प्रकार प्रवृत्तिरूपा चण्डा-प्रकृति और निवृत्तिरूपा मुण्डा-प्रकृति का हनन करके उनका महाप्रलय में लय करने वाली शक्ति का चामुण्डा नाम से पूजन होता है। शक्ति के इन्हीं प्रधान रूपों की अनन्त नामों से अनन्त प्रकार से उपासना की जाती है।

पुण्यों में कथा आई है कि दक्ष का यज्ञ विध्वस्त करने के बाद शिवजी सती के शव को लेकर कन्धे पर धरे हुए इधर-उधर उद्भट रूप से घूमने

<sup>१</sup> गास्वामी तुलसीनासजी न सीताजी का शक्ति का यही रूप माना है—

सृष्टिस्थितिसहाकारिणीं कलशहारिणीं।

सर्वश्रेयस्करीं सीता नता—ह रामवल्लभाम् ॥

लगे। सभी देवता इससे चित्तित हुए। तब विष्णु ने अपने चरङ्ग से उस सती के मृतदेह के टुकड़े-टुकड़े कर दिए, वे टुकड़े इम्यावन स्थान पर विखर गए और तुरन्त पापाण-रूप में परिणत हो गए। ऐस प्रत्येक स्थान पर एक शक्ति का रूप और एक भैरव पूजित होने लगा। यही सब स्थान शक्तिपीठों के नाम से प्रसिद्ध हुए।<sup>१</sup>

जिस प्रकार ससार में प्रबल होते हुए आसुरी भाव का सहार करने के लिए समय-समय पर पुरुष के स्वप्न में यावदपेक्षित वैष्णवी शक्ति के अवतार हुए हैं और होते रहते हैं उसी प्रकार स्त्री-देहों में भी लोक में शक्ति के अनेक रूप प्रवर्ट हुए हैं।<sup>२</sup> धर्मरक्षा, अनिष्टनिवारण और दुष्टसहार की विशिष्ट शक्तियों का जिन स्त्री-शरीरों में उद्भव और प्राकृद्य हुआ वे ही शक्ति का अवतार

<sup>१</sup> विष्णुर्देवं सचिन्नास्तद्दावयवं पृथक् ।

विष्णु पृथ्वीपृष्ठ स्थान स्थान महामुन ॥

महातीर्थानि ताप्यव मुकिदोग्नि भूता ।

सिद्धपीठा हि त दशा द्वानामपि दुर्बधा ॥

भूमि पतितास्तु त छायाकावयव क्षणाद् ।

जम्मु पापाणता सर्वलाक्षणा हितहतव ॥

इन शक्तिपीठों का तन्त्रबूङ्गमणि ग्रन्थ में विस्तार से वर्णन किया गया है। इनके आधार पर दशा के क्रित्तन ही भौगोलिक स्थानों का भी ज्ञान हाता है। साथ ही दक्षियों के नामों और शक्तियों के रहस्य भी विवित हात हैं। यथा—सिन्धुदर्श महिला नामक स्थान पर शक्ति के ब्रह्मरस्य का पात हुआ था। वहाँ शक्ति का हिंगुला नाम से ही पूजन हाता है। बाट में चारणों में अवतार लेने वाली एक देवी हिंगलाज नाम से प्रसिद्ध हुई और वह आद्यशक्ति का रूप मानी गई। इम अथवा साम भाव का प्राप्त हान वाली शक्ति का हिंगुला कहा है।

### हिम गच्छतीति दिंगु

इसी प्रकार अर्द्धुनारण्य क्षेत्र में आरासण स्थान पर शक्ति का बामकुच (हृदय) भाग गिरा था। वहाँ इसी भाग की पूजा होती है।

ददी भागवत में एसे एक सौ आठ शक्तिपीठों का वर्णन है। ददीगीता में ७२ पीठ शिनाए हैं। इसी प्रकार विभिन्न ग्रन्थों में विभिन्न वर्णन मिलता है।

<sup>२</sup> सुर सानिप कम्ज ब्रह्माणी रूप अनेक विघ करिय।

मानी गई। राजस्थान और गुजरात के चारण में तो 'नौलख लोवडियाळ'<sup>१</sup> प्रसिद्ध है। इनमें शक्ति के काली, दुर्गा, चण्डी और ब्रह्मचारिणी रूपों के अश उद्भूत हुए हैं। हिंगुलाज, आवड, हुली, गुली, छाढ़ी (चर्चिका), करणी, लालबाई, फूलबाई आदि नामों से स्थान-स्थान पर ये देवियाँ पूजी जाती हैं और इनकी महिमा का बखान करने के लिए अनेक काव्यों का निर्माण हुआ है, जो प्राचीन राजस्थानी साहित्य की समृद्धि के अभिन्न अंग है।

भारतीय जन-जीवन का आधारस्तम्भ धर्म ही रहा है। भारतीय मानव ने धर्म की परिभाषा उस सतत प्रयत्न को माना है जिसके द्वारा प्रकृति-परिच्छिन्न जीव-स्वरूप अवयव समस्त आवरण को हटाकर सत्-चित्-आनन्द धनरूप, अपरिच्छिन्न, ब्रह्मस्वरूप, अवयवी से ऐक्यभाव के लिए उन्मुख हो सके। इसके लिए वह निरन्तर प्रकृति या माया अथवा शक्ति को प्रसन्न करने के लिए कार्यरत रहता है। व्यक्तिगत, कौटुम्बिक, सामाजिक, प्रदेशीय, देशीय एवं राष्ट्रीय आदि समस्त व्यापारों में भारतीय मानव जीवन-शक्ति की उपासना से ओत-प्रोत है। दैनिक जीवन का आचार, कौटुम्बिक विधान, सामाजिक गठन-देश व्यवस्था और राष्ट्रीय भावना आदि समस्त व्यापारों में शक्ति सम्प्राप्ति का विधान है। यम, नियम, प्राणायामादि, व्यक्ति के लिए शारीरिक और आध्यात्मिक-शक्ति प्राप्त करने के साधन है, प्रत्येक कुटुम्ब, कुल, ग्राम ओर राष्ट्र की देवियों नामांकित है, पारिवारिक, सामाजिक और राष्ट्रीय-शक्तिपर्व नियत है तथा हमारा समस्त वाह्यमय, शब्दशक्तिमय तो है ही, वह शक्ति-महिमा से भरा पड़ा है। उदाहरणार्थ, वर्ष में दो बार नवरात्र पर्व पर विशेष रूप से शक्ति-समाराधन का विधान हमारे जन-जन में शक्ति-सप्राप्ति की भावना का सचार करता है। यह पर्व राष्ट्र की सघ-शक्ति को उद्बुद्ध करता है। घर-घर में चण्डी-चरित्र (दुर्गा-सप्तशती) का पारायण होता है जिससे हमे अध्यात्म एवं सघशक्ति का सदेश मिलता है। नवरात्र पर्व में नाद और बिदु से समुद्भूत सप्तार का रहस्य ज्ञात करने वाले ब्राह्मण और साधक शरीरस्थ पट्टचक्र के स्नायुजाल में गूजने वाले अविनश्वर अक्षरसघात के द्वारा अनन्त शक्ति के स्रोत से सम्पर्क स्थापित करत है। सप्तशती के अनेक श्लोक बीजाक्षणर्भित हैं और सम्पुट सहित पारायण

करने से मुख्यशलोक वी १४००० आवृत्तियाँ सहज ही में हो जाती है। जब देव-राष्ट्र पर असुरों का आतंक छाया और अकेले देवराज की शक्ति पर्याप्त न हुई तो समस्त देवों ने समर्पित होकर समवेत-शक्ति का आहान किया और उसी शक्ति ने असुरों का सहार कर देवों का श्रेयस्-सम्पादन किया। इस आत्यान से हमारे राष्ट्र में वर्ण-व्यवस्थानुसार जिस वर्ग को देश-रक्षा का भार सौंपा गया है उसका उद्दोधन होता है। सध-शक्ति का माहात्म्य इससे समझा जा सकता है। नवरात्र में क्षत्रियों द्वारा शस्त्रास्त्र-पूजन, अश्वपूजन और विविध वाहनों का पूजन तथा एकत्रित होकर वधु-वान्धवा सहित उत्सव मनाने की प्रथा शक्ति-सचयन एवं सध-सगठन की द्योतक है।

शक्ति के विविध स्तरों की कल्पना करके शक्ति-ग्रन्थ में भगवती के विविध आयुध, वाहना और मुद्राओं के विवरण दिए गए हैं। इनके रहस्यों का अध्ययन जहाँ ज्ञान-पट खोलने में सक्षम है वहाँ लोक में समाज के दैनिक जीवन, व्यवहार, व्यापार, आक्राक्षाआ और विविध मनोभावनाओं के अन्तर्गत तात्पर्यों और सास्कृतिक विकास को समझ लने का भी मधुर माध्यम है। इसी प्रकार विविध स्थानों में निर्मित मंदिरों की वास्तु-विशेषता और प्रतिमा-विधान के अध्ययन का विषय भी मानव-मन और मस्तिष्क के चरम विकसित स्वरूप का दर्शन तो करता ही है— साथ ही, हमारे अतीत के अतीव समुज्ज्वल समय का भी स्मरण करता है और हमारी सुपुत्र सी शक्तियों का उद्दोधन करता है।

इस प्रकार सकल चराचरमयी, सर्वभूतमयी और समस्त विद्यामयी महाशक्ति के स्वरूप का चिन्तन, तत्सम्बन्धी साहित्यादि उपकरणों का अध्ययन एवं मनन तथा राष्ट्रशक्ति में उसका दर्शन करना, अनिष्टतत्त्वों का अपसारण कर इष्ट और सोभाग्यकारक तत्त्वों का विकसित करना आदि सभी सत्रक्रियायत भगवती शक्ति की सदुपासना के अन्तर्गत है।

सर्वव्यापिनी देवी की आराधना सभी समाजों में होने लगी। अपनी-अपनी भावना के अनुसार लागो ने देवी के स्वरूप और प्रतिमाएँ निर्मित की।

पारीक समाज अपना उद्भव ब्रह्मा पुत्र महर्षि वसिष्ठ से मानता है। महर्षि वसिष्ठ मन-द्रष्टा एवं गात्र-प्रवर्तक थे। वैदिक सर्दर्भ के अनुसार उनके आठ

पुगा और तीन पौत्रों ने ऋग्वेद के अनेक मण्डलों की ऊचाओं के दर्शन किये, विशेषतः सप्तम मण्डल में।

इन्हीं पुत्र-पौत्रों के वश का विस्तार और प्रसार हुआ। विभिन्न गोत्रों और अवटका का इन्हीं से उद्भव हुआ। आगे चलकर जिन-जिन समुदायों में उनकी मान्यताओं के अनुसार देवी की आराधना हुई वही परम्परा रूप में अब तक चली आती है। यह भी स्मरणीय है कि जिस वश अथवा कुल में किसी महिला में दैवीय चमत्कार की अवतारणा हुई तो वही देवी के रूप में पूजित होने लगी। ऐसे चमत्कार चारण जाति में अधिक पाय जाते हैं। इस प्रकार देवी के अनेक ही नहीं अनन्त रूपों की अवधारणा बनती चली गई।

इन परम्परागत देवियों के उद्भव, पूजा-स्थल और पूजा प्रकारों के विषय में बधुवर श्री रघुनाथ प्रसाद जी तिवाड़ी ने अनेक स्थलों की यात्रा करके तथा सम्बद्ध ग्रन्थों का अवलोकन करके तथ्यों को लूढ़ निकाला है। यह तो नहीं कहा जा सकता कि यह अध्ययन सम्पूर्ण और निरवद्य है परन्तु सामान्य जिज्ञासुओं की आकांक्षा की पूर्ति अवश्य कर सकता है। कोई भी पारीक-बन्धु अपनी कुल-देवी के विषय में इस सदर्भ ग्रन्थ को टटोलकर अपनी पिपासा को शात कर सकता है।

मैं साशीर्वाद श्री तिवाड़ी जी को बधाई देता हूँ और इस पुस्तक का पारीकों के घर-घर में प्रचार चाहता हूँ।

दुर्गाष्टमी, २०५६ वि

१८ १० १९९९

बहुराजी का बाग, टाक फाटक,

जयपुर-३०२०१८

- गोपाल नारायण बहुरा

## प्राक्कथन

हमारे परिवारो में आज जिन देवियों की पूजा-उपासना की जाती है, उनका मूल वेद और वैदिक साहित्य में निहित है। ऋग्वेद में अग्नि को सर्वोत्कृष्ट देवता घोषित करते हुए उसकी घृत-सिंचन द्वारा पूजा, बहिर्स्थापित कर अग्नि को उस पर प्रतिष्ठापित कराने वाले तीन हजार तीन सौ उन्तालीस देवताओं का उल्लेख मिलता है। यथा—

त्रीणि शतात्री सहस्राण्यमि प्रिशच्च देवा नव चासपर्व्यन् ।  
औक्षन् घृतैरस्तृणन बर्हिरस्मा आदिद्वोतार न्यसादयन्त ॥  
(ऋ ३/१९/१)

ब्राह्मण ग्रन्थो में देवो मे आठ वसु, श्यारह रुद्र और बारह आदित्यों के योग से देयो की सट्या निर्धारित की गई है। महर्षि दयानन्द सरस्वती ने इनमें इन्द्र और प्रजापति को और सम्मिलित करके ऋक्, यजु , अथर्ववेद और शतपथादि ब्राह्मण ग्रन्थो के वचनों को उद्भृत करते हुए देवताओं की सख्या ३३ निश्चित की है। इनमें प्रजापति उपास्य है और अन्य व्यवहार सिद्धि के हेतु से है। गुणों के कारण देवताओं की सट्या असख्य हो सकती है। यजुर्वेद अध्याय १४ मन्त्र २० ‘अग्निर्देवता वातो देवता, सूर्यो देवता, चन्द्रमा देवता, वसवो देवता रुद्रा देवताऽऽदित्या देवता, मरुतो देवता विश्वदेवता, वृहस्पतिर्देवता, वरुणो देवता’ में अनेक देवताओं का वर्णन है। इन सभी देवताओं की चार श्रेणियाँ हैं— १ अमूर्तिमान् चेतन (वेवल परमेश्वर), २ मूर्तिमान् (प्रत्यक्ष) चेतन- (माता-पिता, अतिथि, आचार्यादि), ३ अमूर्तिमान् अचेतन (वायु रुद्रादि), ४ मूर्तिमान् अचेतन (अग्नि, सूर्यादि)।

इनमें अमूर्तिमान वा मूर्तिमान् चेतन देवता उपास्य और गुण ग्रहणत्व और अमूर्तिमान् वा मूर्तिमान् अचेतन देवताओं के उपकार ग्रहण करना उचित है।

लोक में देव या देवता शब्द का प्रयोग मनुष्यतर दिव्य गुण सम्पन्न आत्माओं, सूर्यचन्द्रादि ग्रह-नक्षत्रों और जगत् के कर्ता, धर्ता, हर्ता परमेश्वर के अर्थ में ही प्रयुक्त हुआ करता है, पर वेदों में अन्य भी अनेक अर्थों में देव या देवता

शब्द का प्रयोग होता है। वेदों की वर्णनशैली एक परात्पर ब्रह्म से लेकर औपधि वनस्पति पर्यन्त नाना वस्तुओं को देव या देवता नाम से सम्बोधित करती है। चारों वेदों में देव शब्द कही एक वचन में प्रयुक्त हुआ है, कही द्विवचन में और कहीं बहुवचन में भी— अत सिद्ध है कि देव एक भी है और अनेक भी। मनुष्य देहधारी होते हुए भी सदाचारी, उत्तम प्रकृति वाले विद्वान् परोपकारी जनों को भी वैदिक सर्वभू में देव कहा जाता है। देव और देवता शब्दों में स्वरूप और प्रत्यय में भेद होते हुए भी अर्थ में कोई विशेष अन्तर नहीं है। दोनों शब्दों की निष्पत्ति में दिव् धातु निहित है।

इस ससार में जो अच्छे गुण वाले पदार्थ हैं, वे दिव्य गुण, कर्म और स्वभाव वाले होने से देव या देवता कहे जाते हैं। देवताओं का देवता होने से महादेव सबका धारक, रक्षक, पालक और प्रलय करने वाला, सबका अधिष्ठाता है। वह परमात्मा है। इस उपास्यदेव परमात्मा का सर्वश्रेष्ठ नाम ओ३म् कहा गया है। वैदिक ग्रन्थों में परमात्मा के शताधिक नामों में अनेक नाम स्त्रीवाची भी मिलते हैं। अग्नि, कालाग्नि, पृथिवी, माता, देवी, शक्ति, श्री, लक्ष्मी, सरस्वती आदि ऐसे ही नाम हैं। ऋग्वेद २/६/१७ के अनुसार परमेश्वर का मातृरूप ही शक्ति है। उसे अदिति कहा गया है। वही विश्व का अटल, शाश्वत आधार और समस्त देव देवताओं की जननी है, वही माता, वही पिता, वही रक्षिका है। मृष्णा और सृष्टि भी वही है। वही सब कुछ है। (१०/१०/१२५) में उसे ब्रह्माण्ड की अधीश्वरी, जगदम्बा कहा गया है। वह सर्वज्ञ, सर्वतन्त्र स्वतत्र और ऐश्वर्य की प्रदात्री है। समस्त विश्व की वही विभूति है।

ऋग्वेद में श्रद्धा, इडा, शची, इन्द्राणी, वरुणानी, आग्रेयी, सूर्या, वर्षाकर्णी, यमी, रोदसी, अश्विनी, अदिति, रात्रि, उषा, मति, प्रमति, धी, मही, भारती, आप , सरस्वती आदि नाम मिलते हैं। चारों वेदों में और वैदिक साहित्य में ही इन विशिष्ट देवियों की सख्त्या चालीस से ऊपर पहुँच जाती है।

शक्ति, शैव, वैष्णवादि सम्प्रदाय के साहित्य में भी प्राय वे ही नाम मिलते हैं। इनमें वृहती, इन्द्राणी, शची, माया, स्वाहा, उषा, अदिति, स्वधा, रात्रि, प्रमति, अनुमति, मनीषा, श्रद्धा, इडा, यमी, सरस्वती, भारती, दक्षिणा, दीक्षा, गौरी, वाक्, सार्पराजी, ब्रह्मजाया, वरुणानी, अश्विनी, विराज, आप , नदी आदि अनेक प्रसिद्ध देवियों के साथ-साथ इपु, निर्क्रिति, तविषी, सीता, स्वधा जैसी अप्रसिद्ध और अरण्यानि और औपधि जैसी देवियों की भी चर्चा

पुराणा ओर विभिन्न सम्प्रदायों के साहित्य में मिलने वाले देवियों के नाम पाय उनमी वैदिक शक्तियों के बदले हुए नाम है। ब्राह्मण कुलों में पूजित कुल देविया के कतिपय नाम वैदिक है, कुछेक पोराणिक और कुछ अन्य स्थानवाची या उनमें निहित गुणों के आधार पर निश्चित किये मिलते हैं। पारीक ब्राह्मण समाज की कुलदेविया में चतुर्मुखी, सुरसा, अम्बा और गौरी नाम वैदिक ही प्रतीत होते हैं। चतुर्मुखी सभवत ब्रह्मा की शक्ति ब्राह्मी का ही नाम है—जिसका चारों वेदों पर पूर्ण अधिकार हो। सुरसा सरस्वती का अपर नाम है। वाणी ही सरस्वती है। वाञ्छे सरस्वती, वाचा एव एनमेतद् अभिषिञ्चति । इसी का एक नाम मनीषा (मनसा) है। शक्ति का ही अपनाम आदच्या—शक्ति है, जिस पुराणा में दुर्गा, कुमारिका आदि नामों से उल्लिखित किया गया है—इसी के यथाप्रसग सौम्य और ब्रूर रूप देकर लोक में अपनी श्रद्धानुसार मूर्ति आकार देकर पूजा की जाती रही है।

लोक में पूजित नव दुर्गा या नव गौरी का आरत्यान (नामोल्लेख) ऋग्वेद १/१६४/४१ में प्राप्त होता है—

गौरीर्मिमाय सलिलानि तक्षत्येकपदी द्विपदी सा'चतुर्पदी ।  
अष्टापदी नवपदी व्यभूवधी सहस्राक्षरा परमे व्योमन् ॥

पुराणों में ओर लोक में गौरी स्त्रीरूपधारिणी शक्ति है, जो पार्वती (शक्ति की पत्नी) के रूप में चर्चित है और उन्हीं का १ मुख निर्मालिका गौरी, २ ज्येष्ठा, ३ सौभाग्यगौरी, ४ शृगार गौरी, ५ विशालाक्षी, ललिता, भवानी, मणिला, महालक्ष्मी और नवगौरी के नाम से दर्शन-पूजन नवरात्रि के अवसर पर होता है।

गौरी शब्द गौर शब्द का स्त्रीलिंग है। व्याकरणिक निष्ठति के आधार पर 'गायति शब्द करोति गवते व्यक्त अव्यक्त शब्दयतीति वा गौर' अर्थात् जो व्यक्त अथवा अव्यक्त शब्द करे उसे गौर कहना चाहिए। व्यक्त शब्द करने वाला मनुष्य ही हा सम्मता है। वैदिक शन्दसोप निधण्टु १/११ तथा ५/५ में गौरी शब्द वाहनाम तथा पदनाम में पढ़ा गया है। श्री देवराज यज्ञा ने अपने भाव्य में गौरी शब्द की कई प्रकार से व्युत्पत्ति दर्शायी है—यथा 'गुरी उद्यमने धातु से गुरति उदचच्छति स्वमभिधेयम् इति गौरी। उद्यमने घार प्रकाशनम्।' अथात् जो अपने वाच्यार्थ को भलीभाति पक्षाशित कर सके। इस व्युत्पत्ति से उद्यमशील नारी को गौरी कहा जा सम्मता है। महर्यि यास्क

ने निरुक्त ११/२८ में स्त्री देवताओं की चर्चा करते हुए लिखा है— ‘गौरी रोचते ज्वलति कर्मण अयभपीतरो गौरीवर्ण एतस्मदेव प्रशस्त्यो भवति।’ निरुक्त टीकाकार आचार्य स्कन्द और दुर्गसिंह ने टीकाओं में लिखा है— ‘गौरी मध्यमस्थाना स्तनयित्नुलक्षणा वाग् विद्युदवा। सा पुन दीसिमन्तौ।’ अर्थात् अन्तरिक्ष स्थानीयो विद्युदरूपा गर्जित लक्षणा जो वाणी है वही गौरी शब्द से अभिप्रेत है— क्योंकि वह दीसिमन्ती, चमकीली होती है। इस प्रकार जो वर्षा के समय चमकती हुई गरजती हुई विद्युत भी गौरी कही जायगी।

महर्षि दयानन्द ने गौर पद का अर्थ क्र ४/८८/२ के भाष्य में लिखा है— ‘योगवि सुशिक्षिताया वाचि रमते स गौर्’ और यजुर्वेद १७/१० में ‘यो वेद विद्या वाचि रमते स गौर्’ अर्थात् जो सुशिक्षिता वाणी में, वेदवाणी में रमण करता है, आनन्दित होता है वह पुरुष गौर पद वाची है। इसी प्रकार जो वेद विद्या में, वाणी में रमण करने वाली स्त्री हो— वह गौरी कही जायगी।

उपर्युक्त ऋग्वेद के नवपदा गौरी सूचक मत्र की व्याख्या महर्षि दयानन्द ने स्त्रीपरक की है। उनके अनुसार एक पदी से नवपदी पर्यन्त सभी शब्द गौरी=विदुषी स्त्री के विशेषण है। उनके शब्दों में मत्र का अर्थ इस प्रकार है— ‘एक पदी= एक वेदाभ्यासिनी= एक वेद का अध्ययन करने वाली, द्विपदी= अभ्यस्त द्विवेदा (दो वेदों का अभ्यास करने वाली), घटुष्पदी= चतुर्वेदाध्यापिका (चार वेदों को पढ़ाने वाली), अष्टापदी= चतुर्वेदोपवेदविद्यायुक्ता= चार वेद और चार उपवेदों की विद्या से युक्त, नवपदी= चतुर्वेदोपवेद व्याकरणादि शिक्षायुक्ता= चार वेद, चार उपवेद और पठगों में प्रधान व्याकरणादि शिक्षायुक्त (बभूत्वपी) अतिशयेन विद्यासु भवन्ति) अतिशय करके विद्याआ मे प्रसिद्ध होती सहस्राक्षरा (सहस्राणि असख्यातान्यक्षराणि यस्या सा) असख्यात अक्षरैं= (अविनाशी शक्तियों) वाली होती हुई, परमे व्योमन्= सबसे उत्तम आकाश मे समान व्यास निश्चल- परमात्मा के निर्मित प्रयत्न करती है और (सलिलानि तक्षती)= जलानी व निर्मलानि वचनानि (जल के समान निर्मल वचनों को छाटती (छानती) अर्थात् अविद्यादि दोषों से अलग करती हुई है वह नारी गौरी (मिमाय) प्रसिद्ध होती है।

वे अन्य अर्थ निम्न प्रकार करते हैं— द्वितीय विभक्त्यन्त मानकर)— स्वयं तो चार वेद, चार उपवेद, व्याकरणादि शिक्षा से युक्त हो ही और साथ में अन्य गौरी= वेद ज्ञान की आभा से= गौरवर्णयुक्त विदुषी स्त्रियों को भी शब्द कराती हो— ऐसी नारी ही विश्वकल्याणकारिणी होती है।

यही गौरी पुराणों में और लोक में गौरी पार्वती आदि नामों से पूजि है। अम्बा, चामुण्डा, कुमारिका, काली, भद्रकाली, परा, त्रिपुरा जैसे नाम भ पुराणों से ग्रहण किये गये हैं। शाकम्भरी नाम शाक (फल-फूल वनस्पति आदि द्वारा पूजित देवी का नाम है, तो अशनायितोदरी ऐसी देवी का ना है जिसका उदर सदैव बुभुक्षित रहता है। अशनोत्तरी नाम इसी का विकृत रू प्रतीत होता है। कृशोदरी नाम की देवी इसी का अपर नाम है जिसकी प्रतिमा मिलती है। सकराय नाम शकराणक गाव में स्थापित होने से पड़ा प्रतीत होत है। समराय शाकम्भरी का ही विकृत नाम है, जिसका मंदिर शाकम्भरी य साभर म है। त्रिपुराय, समराय, सकराय, सुरसाय, पराय, सुच्चाय, अमराय आदि देवियों के अत में प्राप्त 'आय' शब्द राय का बिंगड़ा रूप है। यह शब्द राज्ञी (या रानी) का वाचक है। धनोप की माता जैसी कृतिपय मातृकाओं के नामों म आज भी राय शब्द जुड़ा प्राप्त होता है, यथा— धनोपराय माता।

'पारीक जाति का इतिहास' और 'पारीक महापुरुष' जैसी महत्वपूर्ण पुस्तकों का प्रणयन कर श्री रघुनाथ प्रसाद तिवाड़ी जी 'उमग' ने अपने समाज के जो सेवा की है— उसकी सर्वत्र प्रशसा की जा रही है। प्रस्तुत पुस्तक उस माला मे पिरोया गया तीसरा पुष्ट है। श्री तिवाड़ी जी ने इसमें सम्पूर्ण शात परम्परा के विवरण के साथ देश मे पूजित मातृकाओं और पारीक द्रातुण जाति के अवटकों म मान्य कुलदेवियों का परिचय प्रस्तुत करने का पूर्ण प्रयास किय है। उन्होंने राजस्थान मे विभिन्न स्थानों की यात्राएँ करके इन कुलदेवियों वे पूजा-स्थलों की खोज करने म अधक परिश्रम किया है। इसके लिये वे प्रशस के पात्र है। इन देवियों के उपासक गृहस्थों म से अधिकाश को इन स्थान के विषय म जानकारी नहीं है। आशा है— यह पुस्तक उनके लिए अत्यन उपयोगी सिद्ध हांगी। श्री तिवाड़ीजी ने मुझको पुस्तक का प्राक्कथन लिखने का अवसर दिया, तर्दह मे उनमा आभारी हूँ।

ऐत्याह्य. श्री. हकेती.

माम

२००१ (राज )

## आमुख

[— शक्ति क्या है? — शक्ति का आशय एव स्वरूप— शक्ति की उपासना— मानव मात्र के उद्धार हेतु शक्ति का प्राकट्य— महादेवी से विश्व की उत्पत्ति— ब्रह्मरूपा भगवती की सर्वव्यापकता— पुराणो एव ऋग्वेद की देविया— देवी-शब्द का अर्थ— देवी पूजा की प्राचीनता और प्रमुख देविया— शक्ति पूजा की व्यापकता— देवी पूजा की व्यापकता के कुछ प्रमाण— विश्व मे देवी की व्यापकता— शक्तिपीठ जहा शक्ति के अग गिरे— नव दुर्गा— दस महाविद्याएँ— षोडश मातृकाओं का स्मरण एव कुल देवी— ६४ योगिनियों के नाम— भारत मे नारी पूजा— कुल देवी— आदिशक्ति ही पारीको की कुल देवी— पारीको की कुल देवियों की सल्ल्या— अवटकानुसार पारीको की कुल देविया— कुल देवी— नाम एव मान्यता— पारीक समाज की कुल देवियों के स्थान— अनेक माताओं की एक-सी कथा— लोक देविया— लोकमाताओं/देवियों का वर्गीकरण— राजस्थान की कतिपय लोक देवियाँ— मा के श्री चरणो मे प्रणाम— देवियों के दर्शनार्थ एव अध्ययनार्थ लेखक की यात्रा— आभार।]

मानव ने आदि काल से ही उपासना या पूजा का कोई न कोई विषय निश्चित कर रखा है। उसकी उपासना का केन्द्र-बिन्दु शक्ति भी रहा है। जो शक्ति है वही परमात्मा है और जो परमात्मा है वही शक्ति है। शक्ति का आदिस्वरूप देवी है। वह जगत् की समिकर्त्ता है। सम्पूर्ण प्राणियों को आश्रय देने के लिए देवी एकमात्र अवलम्ब है, आश्रय है। पुराणो मे यह मत व्यक्त किया गया है कि ब्रह्मा मे जो सृजन शक्ति है, विष्णु मे जो पालन शक्ति है तथा शिव मे जो सहार शक्ति है एव सूर्य मे जो प्रकाश शक्ति है तथा शेष और कच्छप में जो पृथ्वी को धारण करने की शक्ति है, अग्नि में जलाने की, वायु मे हिलाने-डुलाने की शक्ति है, इस प्रकार सबमे जो शक्ति विद्यमान है, वही आद्याशक्ति है। वही सनातन शक्ति प्रकृति है। सारे जगत् की उत्पत्ति इसी से हुई है। वह विश्व की जननी है।

## शक्ति क्या है ?<sup>१</sup>

शक्ति की कल्पना तथा आग्रहना भारतीय धर्म की अत्यन्त पुरानी और स्थायी परम्परा है। अनेक रूपों में शक्ति की कल्पना हुई है, प्रधानत मातृरूप में। इसका विशेष पत्तलवन पुराणा और तन्त्रों में हुआ। हरिवश और मार्कण्डेय पुराण के देवीमाहात्म्य में देवी अथवा शक्ति का विशेष वर्णन और विवेचन किया गया है। देवी को उपनिषदों का ब्रह्म तथा एकमात्र सत्ता बतलाया गया है। दूसरे देव इसी की विभिन्न अभिव्यक्तिया है। देवी शक्ति का यह सिद्धान्त भारत में सर्वप्रथम व्यक्त हुआ है। इस प्रकार वह (शक्ति) विशेष पूजा तथा आग्रहना के योग्य है। मनुष्य जब अपने मनोरथ की पूर्ति कराना चाहता है तो उसी से अनुनय-विनय करता है। शिव और शक्ति अभिन हैं।

शक्ति साहित्य में शक्तिरहित शिव को शब्दतुल्य अशक्त बताया गया है। शक्ति ही शिव या ब्रह्म की विशुद्ध कार्यक्षमता है। अर्थात् वही सृष्टिकर्त्ता एव प्रलयकर्त्ता है तथा सब देवी कृपा तथा मोक्ष प्रदान उसी के कार्य है। इम प्रमार शिव में भी शक्ति का पाठान्य अधिक माना जाता है। शक्ति से ही विशेषण 'शक्ति' बनता है जो शक्ति-उपासक सम्प्रदाय का नाम है। शक्ति ब्रह्मतुल्य है। शक्ति ब्रह्म का क्रियाशील भाग है तथा ब्रह्म को सभी उत्पर वस्तुओं तथा जावों के रूप में वह व्यक्त या द्योतित करती है जबकि ब्रह्म अव्यक्त एव निष्फ्रल्य है। शक्ति मूल प्रकृति है तथा सारा विश्व उसी (शक्ति) का प्रकट रूप है।

## शक्ति का आशय एव स्वरूप<sup>२</sup>

ॐ सर्वचैतन्यस्वरूपा तामाद्या विद्या च धीमहि।

बुद्धियान

प्रचोदयात्॥

(देवीभागवत १-१-१)

जा सर्वचैतन्यस्वरूपा, विश्व की आदि-भूता, मूल प्रकृति एव ब्रह्मविद्यास्वरूपिणी भगवती जगदम्बिका है हम उनका ध्यान करते हैं, वे हमारी बुद्धि का तीव्र बनाने की कृपा कर।' ऐसी प्रार्थना सभी देवी-भक्त करते हैं।

<sup>१</sup> हिन्दू धर्मसारा ल डॉ राजवति पाण्डिय पृ ६१३

<sup>२</sup> बन्धुवा भागवततत्त्वात् वर्ष ५५ अक ९ (१९८१) पृ ८०४

उसी मा की 'गायत्री', 'मूलप्रकृति', 'महाशक्ति', 'भगवती', 'अदिति' इत्यादि नामो से आराधना की जाती है।

शास्त्रो मे शक्ति शब्द के अनेक अथ मिलते ह। यथा— 'सामर्थ्य', 'बल' और 'पराक्रम' इत्यादि। इसका अभिप्राय 'मार्य सम्पन्न करने की सामर्थ्य से है। मीमांसको के अनुसार वह वस्तु, जो कारण के साथ अपृथक् सिद्ध रहकर कार्योत्पादन मे उपयोगी हो— 'शक्ति' कहलाती है। विष्णुपुराण मे निम्नाकृति तीन प्रकार की शक्तियों का वर्णन है— पग (विष्णुशक्ति), अपरा (क्षेत्रज्ञशक्ति) और अविद्या (कर्मशक्ति)।

विष्णुशक्ति परा प्रोक्ता क्षेत्रज्ञाख्या तथापरा ।

अविद्या कर्मसज्जाना तृतीया शक्तिरिप्यते ॥

(विष्णु पुराण ६- ७- ६१)

जीवात्मा को क्षेत्रज्ञ कहत है ओर तीसरी शक्ति अविद्या ही कर्म-नाम से प्रसिद्ध है।

ऋग्वेद के अनुसार परमेश्वर का मातृरूप ही शक्ति है। उसे ही 'अदिति' कहा गया है। वही विश्व का अटल, शाश्वत आधार और समस्त देवताओं की जननी है। वही सबकी माता-पिता एवं रक्षिका है। वही स्रष्टा एवं सृष्टि दोनों है, वही सब कुछ है (ऋग्वेद २-६-१७)। जगदम्बा ही ब्रह्माण्ड की अधीश्वरी है, वे ही ऐश्वर्य प्रदान करती है। वे सर्वज्ञ हैं। उन पर किसी का भी प्रभुत्व नहीं है। यह अखिल विश्व उनकी ही विभूति है (ऋग्वेद १०-१०-१२५)।

### शक्ति की उपासना<sup>१</sup>

पुराणों के परिशीलन से पता चलता है कि प्रत्येक सम्प्रदाय के उपास्य देव की एक शक्ति है। गीता मे भगवान् वृष्ण अपनी द्विधा प्रकृति, माया की बारम्बार चर्चा करते हैं। पुराणों मे तो नारायण और विष्णु के साथ लक्ष्मी के, शिव के साथ शिवा के सूर्य के साथ सावित्री क, गणेश के साथ अम्बिका

<sup>१</sup> हिन्दू धर्मग्रन्थ ले राजनीति पाण्ड्य पु ६१३ १४

के चरित और माहात्म्य वर्णित है। (इनके पीछे जब सम्प्रदायों का अलग-अलग विकास होता है तो प्रत्येक सम्प्रदाय अपने उपास्य की, शक्ति की उपासना करता है।) इनके पीछे जब सम्प्रदायों का अलग अलग विकास होता है तो प्रत्येक सम्प्रदाय अपने उपास्य की शक्ति की उपासना करता है। इस तरह शक्ति उपासना की एक समय ऐसी प्रबल धारा वही कि सभी सम्प्रदायों के अनुयायी मुख्य रूप से नहीं हो, गौण रूप से शाक्त बन गये। अपने उपास्य के नाम से पहले शक्ति के स्मरण वरने की प्रथा चल पड़ी। सीताराम, राधाकृष्ण, लक्ष्मीनारायण, उमापर्वत, गारीगणेश इत्यादि नाम इसी प्रभाव के सूचक हैं। सचमुच सारी आर्य जनता किसी समय शाक्त थी और इसके दो दल थे, एक दल में शैव, वैष्णव और गाणपत्य आदि वैदिक सम्प्रदायों के दक्षिणाचारी थे और दूसरी ओर वौद्ध, जैन और अवैदिक तात्रिक सम्प्रदायों के शाक्त वामाचारी थे। इतना व्यापक प्रचार होने के कारण ही शायद शास्त्रों का कोई मठ या गढ़ी नहीं बनी। इनके पच महापीठ या इक्ष्यावन पीठ ही इनके मठ समझे जाने चाहिए।

### मानव मात्र के उद्धार हेतु शक्ति का प्राकट्य

इस प्रमार हम देखते हैं कि प्रकृति की जितनी भी शक्तियाँ हैं वे सब ईश्वरीय शक्ति की ही अभिव्यक्तियाँ हैं। इसी से उस मूल शक्ति को सर्वसामर्थ्ययुक्त कहा गया है। विश्व में जहा कही शक्ति का स्फुरण दिखता है वहा सनातन प्रकृति अथवा जगदम्बा की ही सत्ता मानी जाती है।

वह ब्रह्मा, विष्णु, महेश की जननी है। वह समस्त क्रिया की मूल है। इसीलिए हिन्दू धर्मशास्त्र सृष्टिकर्ता ब्रह्मा, सृष्टिपातक विष्णु एव सृष्टि सहारक रुद्र को जगज्जननी से उत्पन्न हुए मानते हैं।

समय समय पर शक्ति की अभिव्यक्ति होती रहती है। वही देवी का स्वरूप होता है। भगवती देवी ने अपने अवतार लेने का प्रयोजन बताते हुए स्वयं कहा है—

साधूना रक्षण कार्य हन्तव्या येऽप्यसाध्य ।

वेदसरक्षण कार्यमतारैरनेकश ॥

युगे युगे तानेवाहमवतारान् विभर्मि च ।

(दे भा ५-१५-२२-२३)

अर्थात् श्रेष्ठ पुरुषों की रक्षा करना, वेदों को सुरक्षित रखना और जो दुष्ट है, उन्हे मारना— ये मेरे कार्य हैं, जो अनेक अवतार लेकर मेरे द्वारा किये जाते हैं। प्रत्येक युग में मे ही उन-उन अवतारों को धारणा करती हूँ।

गीता में भी भगवान् कृष्ण ने प्राय ऐसा ही कहा है—

परित्राणाय साधूना विनाशाय च दुष्कृताम् ।  
धर्मस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे ॥  
(४।८)

‘श्रेष्ठ पुरुषों का उद्धार करने के लिए, पाप कर्म करने वालों का विनाश करने के लिए और धर्म की भली-भाति स्थापना करने के लिए मैं युग-युग में प्रगट हुआ करता हूँ।’

### महादेवी से विश्व की उत्पत्ति

एकमात्र देवी की शक्ति सहित से पूर्व थी, उन्होंने ही ब्रह्माण्ड की सृष्टि की, वे कामेश्वरी के नाम से विख्यात हैं। वे ही शृंगार की कला कहलाती हैं। उन्हीं से ब्रह्मा उत्पन्न हुए, विष्णु प्रगट हुए, रुद्र प्रादुर्भूत हुए। समस्त मरुदग्ण उत्पन्न हुए, गाने वाले गधर्व, नाचने वाली अप्सराय और वाद्य बजाने वाले किन्नर सब ओर उत्पन्न हुए। योग सामग्री उत्पन्न हुई, सब कुछ उत्पन्न हुआ, समस्त शक्ति सम्बन्धी पदार्थ उत्पन्न हुए, अण्डज, स्वेदज, उद्दिज तथा जरायुज, सभी स्थावर-जगम प्राणी-मनुष्य उत्पन्न हुए। वे ही अपरा शक्ति हैं। वे ही शाम्भवी विद्या, कादि विद्या अथवा हादि विद्या या सादि विद्या अथवा रहस्य रूपा हैं। वे ॐ अर्थात् सच्चिदानन्द स्वरूप से वाणी मात्र में प्रतिष्ठित हैं। वे ही जागृत, स्वप्न और सुषुप्ति इन तीनों पुरों तथा स्थूल, सूक्ष्म और कारण इन तीनों प्रकार के शरीरों को व्याप कर बाहर और भीतर प्रकाश फैलाती हुई देश, काल और वस्तु के भीतर असग रहकर महात्रिपुरसुन्दरी प्रत्येक चेतना हैं।<sup>१</sup>

### ब्रह्मरूपा भगवती की सर्वव्यापकता

वे ही आत्मा हैं, उनके अतिरिक्त सभी असत्य और अनात्मा हैं। अत वे ब्रह्मविद्यास्वरूपा, भावाभाव की कला से विनिर्मुक्त, चिन्मयी विद्याशक्ति,

अद्वितीय ब्रह्म का बाध कराने वाली तथा सत् चित् आनन्दरूप लहरी वाली श्री महाप्रिपुरसुन्दरी बाहर और भीतर प्रविष्ट होकर स्वयं अकेली ही सुशोभित हो रही है। उनके अस्ति, भाति और प्रिय— इन तीनों रूपा में जो अस्ति है, वह सन्मात्र का बोधक है। जो भाति है, वह चिन्मात्र है ओर जो प्रिय है, वह आनन्द है। इस प्रकार श्री महाप्रिपुर-सुन्दरी सभी रूपों में विद्यमान है। तुम और मे, सागा विश्व और सारे देवता तथा अन्य सब कुछ महाप्रिपुर-सुन्दरी ही है। ललिता नामक वस्तु ही एक मात्र सत्य है, वही अद्वितीय, अखण्ड परब्रह्म तत्त्व है।<sup>१</sup>

जो भक्तिपूर्वक देवी का स्मरण करते हैं उनका निश्चय ही अभ्युदय होता है। वे नि सदेह भक्त की रक्षा करती है। सभी माताएं सभी प्रकार की योग-शक्तियों से सम्पन्न हैं। चामुण्डा वाराही, वैष्णवी, कौमारी, लक्ष्मी, द्वाही के अतिरिक्त देवी के ओर भी अनेक नाम हैं और उसके स्वरूप का वर्णन अनेक प्रकार के आभूषणों से तथा नाना प्रकार के रत्ना से विभृषित रूप में किया गया है। ये सम्पूर्ण देविया अपने भक्तों की रक्षार्थ द्रोध में भरी हुई हैं तथा भक्तों की रक्षार्थ शाख, चक्र गदा, शक्ति, हल, मूसल, खेटक, तोमर, परशु, पाश कुन्त और त्रिशूल तथा उत्तम शाङ्खधनुष आदि अस्त्र-शस्त्र अपने हाथों में धारण करती हैं। दैत्या के शरीर का नाश करना भक्तों का अभयदान देना और देवताओं वा कल्याण करना यही उनके शास्त्र धारण का उद्देश्य है।

### पुराणों एवं ऋग्वेद की देवियाँ<sup>२</sup>

दुर्गासप्तशती में देवी को एक ओर तो शेषशायी विष्णु को जगान के लिए प्रजापति की प्रार्थना पर उनके नेत्र, मुख तासिका, बाहु, हृदय और वक्ष-स्थल से निकलने वाली कहा गया है और दूसरी ओर देवी की प्रार्थना पर कुद्द होने पर विष्णु सहित ब्रह्मा, शक्ति, इन्द्र आदि सभी देवों के सम्मिलित तेज से निर्मित होने वाली कहा गया है। जिस देवता का जेसा रूप, जैसी वश-भूषा और जैसा वाहन था ठीक वैसे ही साधनों से सम्पन्न होकर उसकी शक्ति असुरा से युद्ध करने के लिए प्रगट हुई। ऋग्वेद में श्रद्धा, इडा, शची

<sup>१</sup> कल्याण-शक्ति उपासना अक वर्ष ६१ (१९८७) पृ २

<sup>२</sup> कल्याण-भागवततन्त्रान् वर्ष ५५ (१९८९) पृ ४८८ ८९

इन्द्राणी, वरुणानी, आग्नेयी, सूर्या, वर्षाकर्णी, यमी, रोदसी, अश्विनी, अदिति, रात्रि, उपा, मति, धी, मही, भारती, आप, सरस्वती आदि अनेक देवियों का उल्लेख है। आम्भृणीवाक् का सूक्त (१०-१२५) तो सभी देवीभक्तों में देवीसूक्त के रूप में ही समादृत होता है। ऋग्वेद में ही नहीं, अपितु चारों वेदों में तथा वैदिक साहित्य में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण चालीस देविया वर्णित हैं।

वैदिक देवियों की स्वरूप परीक्षा से ऋग्वेदगत अनेक रहस्यों पर प्रकाश पड़ता हुआ प्रतीत होता है। अत वैदिक कर्मकाण्ड, दर्शन तथा पुराण के क्षेत्र में यह विषय बहुत कुछ लाभप्रद सिद्ध हो सकता है। देवी की कल्पना शक्ति, वैष्णव तथा शोव सम्प्रदायों में है और देवियों के प्राय बहुत से नाम भी वही है। अत वृहती, इन्द्राणी, शची, माया, स्वाहा, उपा, अदिति, स्वधा, रात्रि, प्रमति, अनुमति, मनीषा, श्रद्धा, इडा, यमी, सरस्वती, भारती, दक्षिणा, दीक्षा, गोरी, राष्ट्री, वाक्, सार्पराज्ञी, ब्रह्मजाया, वरुणानी, अश्विनी, विराज, आग्नेयी, आप, नदी आदि अनेक प्रसिद्ध देवियों के साथ-साथ कृपा, इषु, निर्क्रिति, तविपी, सुति, सीता, पदुर्वा, स्वधिपति कृपा जैसी अप्रसिद्ध तथा अरण्यानी एवं औषधि जैसी विचित्र देवियों की भी चर्चा हुई है।

ऋग्वेद के दशम् मण्डल के १२५ वें सूक्त में आदिशक्ति जगदम्बा कहती है—

‘मै ब्रह्माण्ड की अधीश्वरी हू। मै ही सारे कर्मों का फल भुगताने वाली और ऐश्वर्य देने वाली हू। मै चेतन एव सर्वज्ञ हू। मै एक होते हुए भी अपनी शक्ति के नाना रूपों में भासती हू। मै मानव जाति की रक्षा के लिए युद्ध बनती हू और शत्रु का सहारकर पृथ्वी पर शाति की स्थापना करती हू। मै ही भूलोक और स्वर्ग लोक का विस्तार करती हू। मै जनक की जननी हू। जैसे वायु अपने आप चलती है वैसे ही मै भी अपनी इच्छा से समस्त विश्व की स्वयं रचना करती हू। मै सर्वथा स्वतत्र हू। मुझ पर किसी का प्रभुत्व नहीं है। मै आकाश और पृथ्वी से पेर हू। अद्विल विश्व मेरी विभूति है। मै अपनी शक्ति से यह सब कुछ हू।’

देवी हिन्दू धर्मकोष<sup>१</sup> के अनुसार देवी का अर्थ निम्न प्रकार है—

‘देव’ शब्द का स्त्रीलिंग ‘देवी’ है। देवताओं की तरह अनेक देवियों

की भी सत्ता मानी गयी है। शक्ति मत का प्रचार होने पर शक्ति के अनेक रूपों की अभिव्यक्ति देवियों के रूपों में प्रचलित होती चली गयी।

महाभारत और पुराणों में देवी के विविध नामों और रूपों का वर्णन पाया जाता है। देवी, महादेवी, पार्वती, हेमवती आदि इसके साधारण नाम हैं। शिव की शक्ति के रूप में देवी के दो रूप हैं— (१) कोमल और (२) भयकर। प्राय दूसरे रूप में ही इसकी अधिक पूजा होती है। कोमल अथवा सौम्य रूप में वह उमा, गौरी, पार्वती, हैमवती, जगन्माता, भवानी आदि नामों से सम्बोधित होती है। भयकर रूप में इसके नाम हैं— दुर्गा, काली, श्यामा, चण्डी, चण्डिका, भैरवी आदि। उग्र रूप की पूजा में ही दुर्गा और भैरवी की उपासना होती है, जिसमें पशुबलि तथा अनेक वामाचार की क्रियाओं का विधान है। दुर्गा के दस हाथ हैं, जिनमें वह शस्त्राख धारण करती है। वह परम सुन्दरी, स्वर्णवर्ण और सिहवाहिनी है। वह महामाया रूप से सम्पूर्ण विश्व को मोहित रखती है। चण्डीमाहात्म्य के अनुसार इसके निम्नाकित नाम हैं—  
 १ दुर्गा, २ दशभुजा, ३ सिहवाहिनी, ४ महिषमर्दिनी, ५ जगद्धात्री, ६ काली, ७ मुक्तकेशी, ८ तारा, ९ छिन्नमस्तका, १० जगद्गौरी। अपने पति शिव से देवी को अनेक नाम मिले हैं, जैसे बाघवी, भगवती, ईशानी, ईश्वरी, कालझरी, कपालिनी, कौशिकी, महेश्वरी, मृडा, मृडानी, रुद्राणी, शर्वाणी, शिवा, श्याम्बकी आदि। अपने उत्पत्ति स्थानों से भी देवी को नाम मिले हैं यथा कुजा (पृथ्वी से उत्पन्न), दक्षजा (दक्ष से उत्पन्न), अन्य भी अनेक नाम हैं— कन्या, कुमारी, अम्बिका, अवरा, अनन्ता, नित्या, आर्या, विजया, क्रष्णि, सती, दक्षिणा, पिगा, कर्वुरी, भासरी, कोटरी, कर्णमुक्ता, पद्मलाञ्छना, सर्वमगला, शाकभारी, शिवदूती। तपस्या करने के कारण इसका नाम अपर्णा तथा कात्यायनी है। उसे भूतनायकी, गणनायकी तथा कामाक्षी या कामाख्या भी कहते हैं। उसके भयकर रूप के और भी अनेक नाम हैं— भद्रकाली, भीमादेवी, चामुण्डा, महामाली, महामारी, महासुरी, मातगी, राजसी, रक्तदन्ती आदि।

### देवी-पूजा की प्राचीनता और प्रमुख देवियाँ<sup>१</sup>

भारतीय जीवन में देवी-पूजा की जड़ बहुत गहरी है। इसा से एक शताब्दी पूर्व का एक यूनानी लेखक बताता है कि बहुत प्राचीन काल से भारत के दक्षिणी अन्तरीप पर कन्याकुमारीदेवी की पूजा होती आ रही थी। जैन और

<sup>१</sup> कन्याण— भागवततत्त्वाक वर्ण ५५ (१९८१) पृ ४८८ ८९

बौद्ध मतावलम्बियों ने शिव-विष्णु तक को छोड़ दिया, परन्तु देवी की कल्पना वहा भी प्रवेश कर गयी और बौद्धों की 'तारा' तथा जैनों की 'श्यामा' के बहुत से उल्लेख मिलते हैं। हरिवशपुराण, काश्मीरी एवं महाभारत दक्षिणी शैवागम, वैष्णवागम तथा शाक्तागम में देवी की उपासना सागोपाग रूप में मिलती है। हडप्पा आदि की खुदाई में बहुत सी स्त्री-मूर्तियां मिली हैं, जो विद्वानों के मतानुसार महामातृदेवी की मूर्तियां हैं और उन मूर्तियों से मिलती-जुलती हैं जो विलोचिस्तान, पश्चिम एशिया, भूमध्यसागर के इजियन टट, मैसोपोटामिया, कैस्पियन समुद्र टट, एशिया माइनर, सीरिया, फिलीस्तीन, साइप्रस, यूनान के कुछ द्वीपों तथा मिस्र में बहुत सख्त्या में मिलती हैं। हडप्पा से प्राप्त एक लम्बी मुहर पर एक ऐसी देवी की मूर्ति है जिसके योनि भाग से एक अकुर निकल रहा है। यह सम्भवतः पृथ्वीदेवी का चित्र है।

प्रमुख देवियों में दुर्गा, काली, लक्ष्मी और सरस्वती के अनेक रूप प्राप्त होते हैं। इनमें से अष्टभुजा या दशभुजा दुर्गा, सिद्धवाहिनी, महिपमर्दिनी आदि नाम से और चतुर्भुजा, काली, कपालिनी आदि नाम से देवी के भीषण रूप को प्रगट करती है। वीणा-पुस्तक-धारिणी हसारूढ़ा सर्वशुक्ला सरस्वती देवी के मदु तथा मधुर रूप की द्योतक है। लक्ष्मी और सरस्वती की क्रमशः धन तथा विद्या के लिए ही उपासना की जाती है। चेचक के निवारण के लिए उत्तर भारत में शीतला और दक्षिण भारत में ज्येष्ठा की पूजा बहुत प्रचलित रही है। इसके अतिरिक्त कालीघाट (बगाल) की काली, आसाम की कामाल्या, उडीसा की विरजा, मिर्जापुर (उ प्र.) की विन्ध्यवासिनी, हरिद्वार की चण्डी, पजाब की तथा दक्षिण की कन्याकुमारी देवी का विशेष महत्त्व है। शाक्तों के अनुसार सारे भारत में देवी के इक्ष्यावन स्थान पवित्र हैं, क्योंकि इन स्थानों पर विष्णुचक्र से खण्डित होकर सती के शरीरखण्ड इतस्तत जा गिरे थे। तत्र साहित्य में काली, तारा, मातगी, घोड़शी, भुवनेश्वरी, भैरवी, छिन्नमस्ता, धूमावती, बगला और कमलात्मिका ये दस महाविद्याएँ कही गयी हैं।

### शक्ति पूजा की व्यापकता

नेपाल में प्रचलित एक लाख श्लोकों में निबद्ध शक्ति-सगम-तन्त्र में शाक्त सम्प्रदाय का विस्तार से वर्णन है। इसके उत्तर भाग के प्रथम खण्ड के अध्यायों में श्लोक संख्या ३४८ के अन्त में शक्ति भैरवी का विवरण दिया गया है।

‘सहि की सुविधा के लिए यह प्रपञ्च रचा गया है। शाक्त, सौर, शेव, गाणपत्य, वैष्णव, बौद्ध आदि यद्यपि भिन्न नाम वाले सम्प्रदाय हैं, परन्तु वास्तव में ये एक ही वस्तु है। विधि भेद से भिन्न दिखाई देते हैं। इनमें परस्पर निन्दा, परस्पर द्वेष एवं प्रपच के ही लिए हैं। वस्तुतः मत एक ही है। निन्दक की सिद्धि नहीं होती। जो ऐक्य मानते हैं उन्हीं को उन्हीं के सम्प्रदाय से सिद्धि मिलती है। काली और तारा की उपासना इसी ऐक्य सिद्धि के लिए प्रचलित हुई। यह महाशक्ति, भला, बुरा, सुन्दर और द्रूर दोनों को धारण करती है। यही मत प्रकट करने के लिए शाक्त तत्त्व ने शास्त्र-कीर्तन किया है। चौदहा विद्याओं को एकत्व प्रतिपादन के लिए ही प्रकट किया है। प्रकृत विषय इस प्रकार है— जगत्तारिणी देवी चतुर्वेदमयी, कालिका देवी, अथर्ववेदाधिष्ठात्री, काली और ताग के बिना अथर्ववेदविहित कोई क्रिया नहीं हो सकती। केरल में कालिका, कश्मीर में प्रिपुरा और गोड देश में तारा तथा य ही पीछे काली रूप में उपास्या होती है।’

इससे पता चलता है कि पूर्व में साम्प्रदायिका में, जिनमें शाक्त भी सम्मिलित हैं— वे अवश्य ही वैदिक शाक्त हैं। तान्त्रिक शाक्त धर्म या वामाचार का प्रचलन बाद में हुआ।

पुराणों के परिशीलन से ज्ञात होता है कि प्रत्येक सम्प्रदाय के उपास्यदेव की एक शक्ति अवश्य है। गीता में भगवान् कृष्ण अपनी द्विधा प्रकृति की, अपनी माया की, बारम्बार चर्चा करते हैं और पुराणों में तो नारायण और विष्णु के साथ लक्ष्मी का, शिव के साथ शिवा का, सूर्य के साथ सावित्री का गणेश के साथ अस्त्रिका का चरित्र और महात्म्य वर्णित है। इनके बाद में जब सम्प्रदायों का अलग-अलग विभास होता है तो प्रत्येक सम्प्रदाय अपने उपास्य की शक्ति की भी उपासना करता है। इस प्रकार शक्ति उपासना की एक समय ऐसी प्रबल धारा वही कि सभी सम्प्रदाय वाल, मुख्य रूप से नहीं तो गोण रूप से ही सही, शाक्त बन गये। शक्ति को अपने उपास्य के नाम के पहले स्मरण करने की प्रथा चल पड़ी। सीताराम, राधाकृष्ण, लक्ष्मीनारायण, उमामहेश्वर, गौरीगणेश इत्यादि नाम इसी प्रभाव के सूचक हैं। उसी समय की यह उक्ति है कि द्विजमात्र, जो वंदमाता गायत्री की सन्ध्योपासना करते हैं, शाक्त हैं और सचमुच ही सारी आर्य जनता किसी समय शाक्त थी। इन

शाकों के दो दल थे, एक दल में शेव, वैष्णव, सौर, गाणपत्य आदि वैदिक सम्प्रदायों के शाक दक्षिणाचारी थे और दूसरी आर बोद्ध, जेन आदि अवैदिक तान्त्रिक सम्प्रदायों में शाक वामाचारी थे। इतना व्यापक प्रचार होने के कारण ही शायद शाकों का कोई मठ या गढ़ी नहीं बनी। इनके पांच पीठ या इक्यावन पीठ ही इनके मठ समझे जाने चाहिए।<sup>१</sup>

### देवीपूजा की व्यापकता के कुछ प्रमाण<sup>२</sup>

देवी-पूजा की व्यापकता का सबसे बड़ा प्रमाण यही है कि हिंगलाज से लेकर कामारुया तक और कन्याकुमारी से काश्मीर तक ऐसा कोई स्थान नहीं, जहा देवी-पूजा के कोई न कोई प्रमाण अब भी न मिलते हो। राजस्थान म तो गाव-गाव में देवी के छोटे-छोटे मंदिर हैं। उत्तरप्रदेश, मध्यभारत तथा अन्य स्थानों में जहा मंदिर कम है, वहा ऐसी जातिया पाई जाती है जो डोलियों में लिए देवी-प्रतिमा के दर्शन करती है और देवी के भजन गाकर सुनाती है। हिमाचल प्रदेश में ज्वालाजी, चामुण्डा, मातश्वरी, ब्रजेश्वरी तथा चित्तपूर्णी आदि देवियों की उपासना सर्वप्रचलित है। ऐसा कौन-सा गाव होगा जहाँ कि हिन्दू लोग नवरात्र के दिन म (जो व्रत नहीं रखते वे भी) मन्याओं को देवी मानकर भाजन न करते हों। पुराणों में<sup>३</sup> सभी स्त्रियों का देवी का ही रूप बतलाया गया है। पुराणों का जिन लागा ने नाम भी नहीं सुना होगा वे भी प्राय स्त्रियों का देवी कहते सुने जाते हैं। कुउ लोग तो कुमारी कन्या के रूप में धूप-दीप, नैवेद्य आदि से विधिवत् देवी-पूजा करते हैं। वेदों में जिन द्वार देवियों का वर्णन आता है, उनके प्रसाग को देखते हुए इन देवियों को दरवाजे की अधिष्ठात्री देवी तो नहीं माना जा सकता, परन्तु आजकल विवाह के अवसर पर जो द्वारपूजा की रस्म कही-कही होती है, उसमें स्वयं दरवाजे की पूजा न होकर दरवाजे पर आये हुए वर की पूजा होती है। अत वेदों की द्वार-देविया सभवत ऐसी देविया है जो या तो विश्वरहस्य की द्वारस्वरूपा समझी जाती हो या मनुष्य देह की द्वा नामक विद्वति से सम्बद्धित शक्तिया हो।<sup>४</sup>

<sup>१</sup> हिन्दुत्व- समाज सोड प ७२० २१

<sup>२</sup> कल्याण- भावगततत्त्वार्थ वर्ष ५५ (१९८१) पृ ४८९

<sup>३</sup> तुलना कीजिए- विद्या समस्ता तव दवि भग स्त्रिय समस्ता सकता जगस्तु।

<sup>४</sup> इय विद्वतिवैदा (एतत्य उपनिषद्)।

इस प्रकार हम देखते हैं कि जनमानस में देवी-पूजा की व्यापकता सर्वत्र उपलब्ध होती है। हिमाचल-प्रदेश में घर-घर होने वाली कुलदेवी या अन्य देवीरूपों की पूजा भी देवी शक्ति के एकमेव शक्ति तत्व की उपासना का ही पूर्ण परिवर्तित रूप है। इसके मूल में एक ऐसा देवीतत्व है जो पुराणों तथा आगमों की देवी-उपासना या शक्ति पूजा का आधार है अथवा परमश्वर के मातृरूप को सामने प्रस्तुत करता है।

### देवी की विश्व व्यापकता<sup>१</sup>

मानव ने आदि काल से कोई-न-कोई उपासना या पूजा का विषय अपना रखा है। आर्थर एव्लन (Avlon) के अनुसार देवी वस्तुत ईश्वर का ही मातृरूप है। उत्तरी यूरोप के प्राचीन धर्म में प्रमुख १२ देवों और आठ देवियों के अतिरिक्त अनेक अन्य देविया भी मानी जाती थी। ग्रीस में अकेले ज्योस (द्यो ) की ही अनेक पत्निया थी, जिनमें अन्य नामों के अतिरिक्त मेतिस (मति) थेमिस (ऋत) जैसी देवियों की भी गणना हो जाती है। इनके अतिरिक्त ऐटे, प्रोफेसिस, चारिस, अर्थेनी, पर्सेफोन आदि अनेक देविया ग्रीस में पूजी जाती थी। हिटराइट की देरकेटो, सीरिया की एस्तोरेय तथा फ्रिजिया की साइबेले देवी ग्रीस की एफोडाइट के रूप में देखी जा सकती है। विद्वानों का मत है कि देवी की पूजा किसी-न-किसी रूप में यहूदी धर्म के पूर्व अरब देशों में भी की जाती थी। बेबीलोन की इश्तर, सीरिया की आर्तमिस तथा नार्वे की दूदून का नाम भी विश्व की प्रसिद्ध देवियों में गिना जा सकता है।

सातवीं शताब्दी ईस्वी (मुहम्मद द्वारा इस्लाम के प्रचार और अरब के मदिग का नष्ट भर दिय जाने तक) अरब में तीन मातृका (शक्ति देवी) मंदिर विद्यमान थे। एक मक्का से साठ मील ताइफ (नगर) में काबा और लात में, दूसरा मक्का में और तीसरा मक्का से ढाई सौ मील दूर मदीने के पास मनात में। इन मंदिरों में प्रतिष्ठित देवी प्रतिमाएँ बहुधा बनातुल्लाह अर्थात् अल्लाह की पुत्रियों के रूप में मानी जाती थी।<sup>२</sup>

<sup>१</sup> कस्त्यान-भागवततत्त्वाक वर्ष ५५ (१९८१) त छों विद्याधर शर्मा पृ ४८८

<sup>२</sup> इमान का उप और लघ्म-लघ्म ईर्तिजा हुसैन (अलीगढ़ मुस्लिम युनिवर्सिटी) प्रथम सम्बन्ध १९९०ई

शक्ति सागर तत्र (जिसमा प्रचलन मुख्य रूप से नपाल में हे) म विश्व मे स्थित शक्तिपीठो में से एक मस्ता मे बताया गया है।

## दस महाविद्याएँ

निगम जिस विराद् विद्या कहते हैं, आगम उसे ही महाविद्या कहते हैं। दक्षिण और वाम दोना मार्गो वाले दसा महाविद्याओं की उपासना करते हैं। ये है— महाकाली उग्रतारा, पोड़शी, भुवनेश्वरी, छिन्नमस्ता, भैरवी, धूमावती, वालामुखी, मातक्षी और कमला। दसा शक्तिमान क्रमशः महाकाल, अक्षोध्य पुरुष, पञ्चवर्तमन्द्र, त्र्यम्बक, कबन्ध, दक्षिणामूर्ति (शून्य), एकवर्त्र रुद्र, मता और सदाशिव विष्णु हैं। धूमावती विधवा कहलाती है। पुण्य-स्थान शून्य है। शाक्त-प्रमोद मे इन दर्सा महाविद्याओं के अलग-अलग तत्र हे जिनमे इनकी कथाएँ, ध्यान और उपासना विधि है। पोड़शी का दूसरा नाम 'त्रिपुर सुन्दरी' है।

प्रकारान्तर से क्रपिया ने इसी सृष्टिविद्या को तीन भागो मे बाटा है। वही तीन महाशक्तियाँ, महाकाली, महालक्ष्मी, महासरस्वती है। इनम भी क्रमशः प्रलय, पालन और सृष्टि के काम होते हैं। एक ही अज पुण्य की अजा नाम से प्रसिद्ध महाशक्ति तीन रूपों म परिणत होकर सृष्टि पालन ओर प्रलय की अधिष्ठात्री बन रही है। श्वेताश्वतरोपनिषद् (४-५) की इन पत्तियो मे—

अजामेका लोहितशुक्लकृष्णा वह्नि प्रजा सृजमाना सरूपा ।

अजाहोको जुषमाणोदनुशोते जहात्यना भुक्तभागामजोऽन्य ॥

उसी अजाशक्ति के तीनो रूपों की चर्चा है।

महाभागवत मे ऐसा कथानक आया है कि दक्ष प्रजापति ने जब यज्ञ किया तो उसमे शिव को नहीं बुलाया। सती ने शिव से यज्ञ मे जाने की अनुमति मार्गी, शिव न बिना निमग्न नहीं जाने का सती को परामर्श दिया किन्तु सती अपने निश्चय पर अटल रही तथा कहा मे यज्ञ मे अवश्य जाऊगी वहा या तो देवेश्वर शिव के लिए यज्ञ भाग प्राप्त करूगी या फिर यज्ञ को ही नष्ट कर दूरी। सती के प्रोध करने पर उसके नेत्र लाल हो गये अधर फड़कने लगे, उसका शरीर कृष्णवर्ण का हो गया। उसने काली का रूप धारण कर लिया। क्रोध से शरीर अमानक व उग्र दिखते लगा। शारीर से प्रचण्ड तेज निकल रहा था, कशराशि अस्त-व्यस्त बिखरी-सी था। उनको चार भुजाओं

से वे ऐसी प्रतीत हो रही थीं मानो पराक्रम की वर्षा हो रही हो। वे मुण्डमाला धारण किये हुए थीं तथा जिहा बाहर निकली हुई थीं, शीश पर अर्धचन्द्र शोभायमान था, वे विकट हुकार भर रही थीं। सती का यह रूप देख स्वयं शिव भाग चले। भागते हुए शिव को दसों दिशाओं में रोकने के लिए देवी ने अपनी आगभूता दस देवियों को प्रगट किया जिनके नाम— काली, तारा, छिन्नमस्ता, धूमावती, बगलामुखी, कमला, त्रिपुर-भैरवी, भुवनेश्वरी, त्रिपुर-सुन्दरी और मातगी हैं।

शिवजी को सती के योगाग्नि में जलने की जब सूचना मिली तो वे तत्काल यज्ञस्थल पर गये तथा सती का शव लेकर दसों दिशाओं में घूमने लगे। शिवजी का यह रूप एवं मरी के शव को रुद्र के कधे पर देखकर विष्णु ने अपने सुर्दर्शन चक्र से सती के अग काट दिये। सती के अग एवं आभूषण जहा-जहा गिर वे शक्तिपीठ बन गये जो निम्न प्रकार हैं—

स्थान	अग तथा आगभूषण	शक्ति	भैरव
१ हिन्दुला	ब्रह्मरघ्र	कोट्टवीशा	भीमलोचन
२ सकराय	तीन चक्षु	महिषमर्दिनी	ब्रोधीश
३ सुगाधा	नासिका	सुनन्दा	त्र्यम्बक
४ काश्मीर	कण्ठदेश	महामाया	त्रिसन्ध्येश्वर
५ ज्वलामुखी	महाजिह्वा	सिद्धिदा	उन्मत्त भैरव
६ जलधर	स्तन	त्रिपुरमालिनी	भीषण
७ वैद्यनाथ	हृदय	जयदुर्गा	वैद्यनाथ
८ नेपाल	जानु	महामाया	कपाली
९ मानस	दक्षिणहस्त	दाक्षायणी	अमर
१० उत्कल विरजाक्षेत्र	नाभिदेश	विमला	जगन्नाथ
११ गण्डकी	गण्डस्थल	गण्डकी	चक्रपाणि
१२ बहुला	वाम बाहु	बहुलादेवी	भीरक
१३ उज्जयिनी	कृपर	मगलतचण्डिका	कपिलाम्बर

१४ त्रिपुरा	दक्षिणपाद	प्रिपुरसुन्दरी	त्रिपुरेश
१५ चहल	दक्षिणबाहु	भवानी	चन्द्रशेखर
१६ प्रिस्रोता	वामपाद	भ्रामरी	भैरवेश्वर
१७ कामगिरि	योनिदेश	कामाख्या	उमानन्द
१८ प्रयाग	हस्ताङ्गुलि	ललिता	भव
१९ जयन्ती	वाम जह्ना	जयन्ती	क्रमदीश्वर
२० युगाद्या	दक्षिणाङ्गुष्ठ	भूतधात्री	क्षीरखण्डक
२१ कालीपीठ	दक्षिणापादाङ्गुलि	कालिका	नकुलीश
२२ किरीट	किरीट	विमला	सर्वत्त
२३ वाराणसी	कर्णकुण्डल	विशालाक्षी	कालभैरव
		मणिकर्णी	
२४ कन्याश्रम	पृष्ठ	सर्वाणी	निमिष
२५ कुरक्षेत्र	गुल्फ	सावित्री	स्थाणु
२६ मणिबन्ध	दो मणिबन्ध	गायत्री	सर्वानन्द
२७ श्रीशैल	ग्रीवा	महालक्ष्मी	शम्बरानन्द
२८ काञ्ची	अस्थि	देवगर्भा	रु
२९ कालमाधव	नितम्ब	काली	असिताङ्ग
३० शोणिदेश	नितम्बक	नमदा	भद्रसेन
३१ रामगिरि	अन्य स्तन	शिवानी	चण्डभैरव
३२ वृन्दावन	केशपाश	उमा	भूतेश
३३ शुचि	ऊर्ध्वदन्त	नारायणी	सहार
३४ पञ्चसागर	अधोदन्त	वाराही	महारुद्र
३५ करतोयातट	तत्प	अपर्णा	वामनभैरव
३६ श्रीपर्वत	दक्षिण गुल्फ	श्रीसुन्दरी	सुन्दरानन्दभैरव
३७ विभाष	वाम गुल्फ	कपालिनी	सर्वानन्द
३८ प्रभास	उदर	चन्द्रभाणा	वर्तुण्ड
३९ भैरवपवत	ऊर्ध्व ओष्ठ	अवन्ती	लाघवकर्ण
४० जनस्थल	दोना चिदुक	भ्रामरी	विमृताक्ष
४१ सर्वशैल	वाम गण्ड	राजिनी	वत्सनाभ

४२	गोदावरीतीर	गण्ड	विश्वेशी	दण्डपाणि
४३	रत्नावली	दक्षिण स्कन्ध	कुमारी	शिव
४४	मिथिला	बाम स्कन्ध	उमा	महोदर
४५	नलहाटी	नला	कालिकाद्वी	योगेश
४६	कर्णाट	कर्ण	जयदुर्गा	आमीर
४७	वक्रेश्वर	मन	महिपमर्दिनी	वक्रलाथ
४८	यशार	पाणिपद्म	यशोरेश्वरी	चण्ड
४९	अदृहास	ओष्ठ	फुल्लरा	विश्वेश
५०	नन्दिपुर	कण्ठहार	नन्दिनी	नन्दिकेश्वर
५१	लड्डा	नूपुर	इन्द्राक्षी	राक्षसेश्वर
५२	विराट	पादाङ्गुलि	अम्बिका	अमृत
५३	मगध	दक्षिणजघा	सर्वानन्दकरी	व्योमकेश

किसी-किसी ग्रन्थ मे शपोक्त दो पीठो का उल्लेख नही है। इक्यावन पीठ ही अनेक पुस्तको मे गृहीत हुए हैं।

देवीभागवत मे एक सौ आठ पीठस्थानो का उल्लेख देखने मे आता है। तन्त्रचूडामणि मे स्थान, अङ्ग, भैरव और शक्ति नामका जैसा विशेषरूप से उल्लेख किया गया है, दक्षी-भागवत मे वैसा नही है। इसमे महर्षि वेदव्यास ने जनमेजय के प्रश्नानुसार पीठस्थान और वहा के अधिदेवता का नाम उल्लेख किया है जो इस प्रकार है—

स्थान	देवता	स्थान	देवता
१ वाराणसी	विशालाक्षी	१० हस्तिनापुर	जयन्ती
२ नैमिपारण्य	लिंगधारिणी	११ कान्यकुञ्ज	गौरी
३ प्रयाग	ललिता	१२ मलय	रम्भा
४ गन्धमादन	कामुकी	१३ एकाग्र	कीर्तिमती
५ दक्षिणमानस	कुमुदा	१४ विश्व	विश्वेश्वरी
६ उत्तरमानस	विश्वकामा	१५ पुष्ट्र	पुष्टृहता
७ गोमन्त	गोमती	१६ केदार	सन्मार्गदायिनी
८ मन्दर	कामचारिणी	१७ हिमवतपण्ठ	मन्दा
९ चैत्ररथ	मदोत्कटा	१८ गोमर्ण	भद्रकर्णिका

स्थान	देवता	स्थान	देवता
१९ स्थानेश्वर	भवानी	४७ कोटिरीथ	कोटवी
२० वित्त्वक	वित्त्वपत्रिका	४८ मधुवन	सुगन्धा
२१ श्रीशैल	माधवी	४९ गोदावरी	प्रिसन्ध्या
२२ भद्रेश्वर	भद्रा	५० गङ्गाद्वार	रतिप्रिया
२३ वराहशैल	जया	५१ शिवकुण्ड	शुभानन्दा
२४ कमलालय	कमला	५२ देविकातट	नन्दिनी
२५ रुद्रकोटि	रुद्राणी	५३ द्वारावती	रुमिणी
२६ कालञ्जर	काली	५४ वृन्दावन	राधा
२७ शालग्राम	महादेवी	५५ मथुरा	देवकी
२८ शिवलिंग	जलप्रिया	५६ पाताल	परमेश्वरी
२९ महालिंग	कपिला	५७ वित्ररूट	सीता
३० माकोट	मुकुटेश्वरी	५८ विन्ध्य	विन्ध्यवासिनी
३१ मायापुरी	कुमारी	५९ करवीर	महालक्ष्मी
३२ सन्तान	ललिताम्बिका	६० विनायक	उमादेवी
३३ गया	मन्त्रला	६१ वैद्यनाथ	आरोग्या
३४ पुरुषोत्तम	विमला	६२ महाकाल	महेश्वरी
३५ सहस्राक्ष	उत्पलाक्षी	६३ उष्णतीर्थ	अभया
३६ हिरण्याक्ष	महोत्पला	६४ विस्त्यपर्वत	नितम्बा
३७ विपाशा	अमोघाक्षी	६५ माण्डव्य	माण्डवी
३८ पुण्ड्रवर्द्धन	पाटला	६६ माहेश्वरीपुर	स्वाहा
३९ सुपाश्वर	नारायणी	६७ छगलण्ड	प्रचण्डा
४० त्रिकटु	स्त्रसुन्दरी	६८ अमरकण्टक	चण्डिका
४१ विपुल	विपुला	६९ सोमेश्वर	वरारोहा
४२ मलयाचल	कल्याणी	७० प्रभास	पुष्करावती
४३ सहाद्रि	एकवीरा	७१ सरस्वती	देवमाता
४४ हरिचन्द्र	चंद्रिका	७२ तट	पारावारा
४५ रामतीर्थ	रमणी	७३ महालय	महाभागा
४६ यमुना	मृगवती	७४ पयोणी	पिहलेश्वरी

७५	कृतशौच	सिहिका	९२	बदरी	उर्वशी
७६	कार्तिक	अतिशाङ्करी	९३	उत्तरकुरु	औषधी
७७	उत्पलावर्तक	लीला (लाला)	९४	कुशद्वीप	कुशोदका
७८	शोणसङ्गम	सुभद्रा	९५	हेमकूट	मन्मथा
७९	सिद्धवन	लक्ष्मी	९६	कुमुद	सत्यवादिनी
८०	भरताश्रम	अनज्ञा	९७	अश्वत्थ	वन्दनीया
८१	जालन्धर	विश्वमुखी	९८	कुबेरालय	मिधि
८२	किष्किंधार्पर्वत	तारा	९९	वेदवदन	गायत्री
८३	देवदासवन	पुष्टि	१००	शिवसन्निधि	पार्वती
८४	काश्मीरमण्डल	मेघा	१०१	देवतोक	इन्द्राणी
८५	हिमाद्रि	भौमादेवी	१०२	ब्रह्मामुख	सरस्वती
८६	विश्वेश्वर	तुष्टि	१०३	सूर्यविम्ब	प्रभा
८७	शङ्खोद्धार	धरा	१०४	मातृमध्य	वैष्णवी
८८	पिण्डारक	धति	१०५	सतीमध्य	अरुन्धती
८९	चन्द्रभागा	कला	१०६	स्त्रीमध्य	तिलोत्तमा
९०	अच्छोद	शिवधारिणी	१०७	चित्रमध्य	ब्रह्मकला
९१	वणा	अमता	१०८	सर्वप्राणीवर्ग	शक्ति

देवीगीता में देवीपीठा की संख्या ७२ दी गयी है, कुछ अन्य ग्रन्थों में भी पीठा की संख्या भिन्न-भिन्न कर दी गयी है।

### नवदुर्गा

शक्ति साधना हेतु भक्त पूर्ण विधि-विधानपूर्वक दुर्गा की पूजा करते हैं। माता कृष्णामयी है। पूजा अर्चना के विधि-विधान से अनभिज्ञ श्रद्धालु भक्त भी चैत्र एव आसोज के नवरात्रा में जब देवी की पूजा करते हैं नवरात्रा का ग्रन्थ वरते हैं तथा देवी आराधना के बाद वे नव-स्मृति एव नवीन ऊर्जा प्राप्त होने का अनुभव करते हैं। आद्याशक्ति भगवती दुर्गा यद्यपि एक ही है तथापि काल-भेद से उनके नो रूप हुए। मार्कण्डेय पुराण के अनुसार—

प्रथम शीलपुत्री च द्वितीय ब्रह्मचारिणी।  
तृतीय चन्द्रघण्टेति कृष्णाण्डिति चतुर्थकम्॥

पचम स्कन्दमातेति पष्ठ कात्यायनीति च।  
सप्तम कालरात्रिश्च महागौरीति चाष्टमम्॥  
नवम सिद्धिदात्री च नवदुर्गा प्रकीर्तिता ।

नवरात्रो मे नो दिन तक माता के निम्न रूपों की प्रतिदिन ऋमानुसार पूजा की जाती है—

१ नवदुर्गाओं मे पहली शैलपुत्री है। पर्वतराज हिमालय के यहा जन्म लेने से यह शैलपुत्री कहलाई। वृूप इनका वाहन है। माता के दाहिने हाथ मे त्रिशूल तथा बाये हाथ मे कमल का फूल सुशोभित है। पूर्व जन्म में यह दक्षी दक्ष पुत्री सती थी। शैलपुत्री दुर्गा का महत्त्व और शक्तिया अनन्त है। इसके ध्यान का मत्र इस प्रकार है—

वन्दे वाञ्छितलाभाय चद्रार्घकृतशेखराम्।  
वृषारूढा शूलधरा शैलपुत्री यशस्विनीम्॥

२ दुर्गा माता का दूसरा रूप ब्रह्मचारिणी है। अर्थात् स्वभाव से ही जो ब्रह्म स्वरूप की प्राप्ति मे समर्थ हो। माता का स्वरूप पूर्ण ज्योतिर्मय एव भव्य है। माता के दाहिने हाथ मे माला एव बाये हाथ मे कमण्डलु रहता है। तपस्या के समय इन्होने पत्ते खाना भी छोड़ दिया था अत इनका एक नाम 'अपणी' भी पड़ गया। माता का यह स्वरूप भक्तो को अनन्त फल देने वाला है। माता की उपासना से त्याग, वैराग्य, सदाचार, सयम की वद्धि होती है। माता का ध्यान मत्र निम्न प्रकार है—

दधाना करपदाभ्यामक्षमालाकमण्डलू।  
देवि प्रसीदितु मयि, ब्रह्मचारिणीनुतमा॥

३ भगवती दुर्गा का तीसरा रूप चन्द्रघण्टा कहा गया है। माता का स्वरूप शान्तिदायक और कल्याणकारी है। यह सदृशति देती है। इनके मस्तिष्क पर घण्टे के आकार का अर्द्धचन्द्र होने से इसे चन्द्रघण्टा कहते है। माता के शरीर का वर्ण स्वर्ण की तरह चमकीला है। माता की दस भुजाओं में खड़ग एव बाण आदि अस्त्र-शस्त्र है। माता का वाहन सिंह है। माता का ध्यान मत्र इस प्रकार है—

पिण्डप्रवरारूढा चण्डकोपास्त्रकैर्युता।  
प्रसाद तनुये मध्य चन्द्रघटति विश्रुता॥

४ भगवती का चौथा स्वरूप कूप्माण्डा का है, जो अतुल तेजस्वी है। अपनी मुस्कान से अण्ड अर्थात् ब्रह्माण्ड की सृष्टि करने के कारण इसे कूप्माण्डा कहते हैं। माता के अष्टभुजा है जिसमें सात हाथों में कमण्डलु, धनुष, बाण, कमल-पुष्प, अमृतमय कलश, चक्र, गदा तथा एक हाथ में (वाया) जपमाला है। इनका वाहन सिंह है। सस्कृत में कूप्माण्ड कोले को कहते हैं जिसकी बलि माता को सर्वाधिक प्रिय है। इस कारण भी इसे कूप्माण्डा कहा गया है। माता का ध्यान मन्त्र इस प्रकार है—

सुरासम्पूर्णकलश            रुधिराप्लुतमेव        च।  
दधाना हस्तपद्माभ्या कूप्माण्डा शुभदास्तु मे॥

५ माता का पाचवा रूप स्कन्दमाता का कहा गया है। ये स्कन्द (कुमार कात्तिकिय) की माता होने से स्कन्दमाता कहलाती है। माता की आराधना से भक्त की समस्त इच्छाएं पूर्ण होती हैं। भगवान् स्कन्द बाल रूप में इनकी गोद में बैठे रहते हैं। माता चतुर्भुजी है। दाहिने हाथ से गोद में बैठे भगवान् स्कन्द को पङडे हुए हैं। दूसरे हाथ में कमल है। बाय हाथ में कमल पुष्प एवं दूसरा वरद मुद्रा के रूप में है। माता का वाहन सिंह है। माता के ध्यान का मन्त्र इस प्रकार है—

सिंहासनगता            नित्य            पद्माश्रितकरद्वया।  
शुभदास्तु सदा ददी स्कन्दमाता यशस्विनी॥

६ जगदम्बा दुर्गा का छठा रूप कात्यायनी का है। देवताओं की कार्य सिद्धि हेतु आप महर्षि कात्यायन के यहा प्रगट हुई थी अतः इनका नाम कात्यायनी पड़ा। यह माता अमित एवं विपुल फलदायिनी है। गोपियों ने भगवान् कृष्ण को पति रूप में पाने के लिए इनकी पूजा यमुना तट पर बी थी। अतः ये ब्रजमण्डल की अधिष्ठात्री के रूप में प्रतिष्ठित हैं। माता के आठ भुजाय हैं तथा सिंह की सवारी है। माता के ध्यान का मन्त्र निम्न प्रकार है—

चन्द्रहासोज्ज्वलकरा            शार्दूलवरवाहना।  
कात्यायनी शुभ दद्यादेवी दानवधातिनी॥

७ मा का सातवा रूप कालरात्रि का है। इनका स्वरूप गहरे काले रंग का है। सिर के बाल बिखरे हुए हैं। गले में विद्युत की तरह चमकने वाली

माता है। इनके तीन नेत्र हैं। माता का भयानक रूप होते हुए भी ये भक्तों को शुभ फल देन वाली है। इसलिए इनका नाम शुभकरी भी है। माता चतुर्मुखी है। दाहिनी तरफ के ऊपर वाला हाथ वर मुद्रा में तथा नीचे का हाथ अभय मुद्रा में हैं। बाये तरफ के ऊपर के हाथ में लोहे का काटा व नीचे वाले हाथ में खड़ग है। माता का वाहन गधा है। इनके ध्यान का मत्र निम्न प्रकार है—

एकवेणी जपाकर्णपूरा नग्ना शवस्थिता ।  
लम्बोष्ठी कर्णिकाकर्णी तैलाभ्यक्तशरीरिणी ॥  
वामपादोल्लसल्लोहलताकण्टकभूषण ।  
वर्धनमूर्धजा कृष्णा कालरात्रिर्भवकरी ॥

- ८ माता का आठवा रूप महागौरी का है। इनके वस्त्र व आभूषण श्वेत हैं। माता चतुर्भुजी है। दाहिना (ऊपर का) हाथ अभय मुद्रा में व नीचे के हाथ में ग्रिशूल है। ऊपर वाले बाये हाथ में डमरू व नीचे वाले हाथ वर मुद्रा के रूप में हैं। आपका वाहन वृषभ है। इन्होंने शकर भगवान् की प्राप्ति हेतु महान् तप किया था। माता की आयु आठ वर्ष की कल्या के समान है। माता का ध्यान मत्र निम्न प्रकार है—

श्वेते वृषे समासुद्धा श्वेताम्बरधरा शुचि ।  
महागौरी शुभ दद्यान्महादेवप्रमोददा ॥

- ९ माता की नव दिन सिद्धिदात्री माता के रूप में उपासना की जाती है। यह माता नवनिधि सोलह सिद्धि देने वाली है। भक्त को मोक्ष प्रदायिनी है। इसे सिद्धिदात्री माता कहते हैं। माता का ध्यान मत्र इस प्रकार है—

सिद्ध-गर्धर्व-यक्षाद्यैर् सुररमरेषि ।  
सेव्यमाना सदा भूयात् सिद्धिदा सिद्धिदायिनी ॥

**पोड़श मातृकाओं का स्मरण एव कुलदेवी**

हमारे यहाँ यह वैदिक परम्परा है कि हम कोई भी मागलिक कार्य करें, उसमें पोड़श मातृकाओं का पूजन अनिवार्य है। इन माताओं के स्मरण के बिना कोई भी कार्य शुरू ना से सम्पन्न नहीं होता। इन पोड़श मातृकाओं में

कुलदेवी भी एक है। अत कुलदेवी की अवधारणा उतनी ही पुणी है जितनी कर्मकाण्ड की वैदिक परम्परा। बिना कुलदेवी की पूजा-अर्चना एव उसके ध्यान के कोई भी मागलिक कार्य पूर्ण नहीं होता, अत उसकी पूजा अर्चना अनिवार्य है। घोड़श मातृकाओं के नाम निम्न प्रकार हैं—

गौरी पद्मा शची मेधा सावित्री विजया जया।  
देवसेना स्वधा स्वाहा मातरो लोकमातर ॥  
धृति पुष्टिस्तथा तुष्टिरात्मन कुलदेवता।  
गणेशेनाथिका होता वृद्धी पूज्याश्व घोड़श ॥

गौरी, पद्मा, शची, मेधा, सावित्री, विजया, जया, देवसेना, स्वधा, मातरो, लोकमातराएँ, धृति, पुष्टि, तुष्टि तथा अपनी कुलदेवता— इन सोलह मातृकाओं का गणपति के साथ मगल-कार्य में पूजन करना चाहिए।

### चौसठ योगिनियाँ

शक्ति के विभिन्न स्वरूपों में योगिनियाँ भी आती हैं जिनकी संख्या ६४ है, उनके नाम निम्न प्रकार हैं— १ दिव्ययोगा, २ महायोगा, ३ सिद्धयोगा, ४ महेश्वरी, ५ पिशाचिनी, ६ डाकिनी, ७ कालरात्रि, ८ निशाचरी, ९ ककाली, १० रोद्रवेताली, ११ हुकारी, १२ भुवनेश्वरी, १३ ऊर्ध्वकिशी, १४ विरुपाक्षी, १५ शुष्काक्षी, १६ नरभोजिनी, १७ फिटकारी, १८ वीरभद्रा, १९ धूम्राक्षी, २० कलहप्रिया, २१ रक्ताक्षी, २२ धोराक्षी, २३ विश्वरूपा, २४ भयकरी, २५ कामाक्षी, २६ उग्रचामुण्डा, २७ भीषणा, २८ त्रिपुरान्तका, २९ वीरकौमारिका, ३० चण्डी, ३१ वाराही, ३२ मुण्डधारिणी, ३३ भैरवी, ३४ हस्तिनी ३५ ब्रोधदुर्मुखी, ३६ प्रेतवाहिनी ३७ खट्टवागदीर्घ लम्बाई, ३८ मालती, ३९ मन्त्रयोगिनी, ४० अस्थिनी, ४१ चक्रिणी, ४२ ग्राहा, ४३ ककाली, ४४ भुवनेश्वरी ४५ कण्टकी ४६ काटकी, ४७ शुभ्रा, ४८ क्रियादूती, ४९ करालिनी, ५० शह्निनी, ५१ पद्मिनी, ५२ क्षीरा ५३ असधा ५४ प्रहारिणी, ५५ लक्ष्मी, ५६ कामुकी, ५७ लोला, ५८ काकदृष्टि, ५९ अधोमुखी, ६० धूर्जटी, ६१ मालिनी, ६२ धोरा, ६३ कपाली, ६४ विषभोजिनी। इस प्रश्नार्थ चौसठ उत्तम सिद्धि प्रदान करन वाली योगिनियाँ वर्तलायी गयी हैं।

## भारत में नारी पूजा

भगवान् मनु ने स्त्रियों के सम्बन्ध में मान, सत्कार आदि साधारण शब्दों का नहीं, अपितु 'पूजा' शब्द का ही प्रयोग करते हुए कहा है—

यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता ।

'जहा स्त्रिया पूजी जाती है, वहा देवता रमते हैं।' और जहा स्त्रियाँ दुखी रहती हैं, वहा महालक्ष्मी आदि देवता नहीं बसते। कई स्थानों में यहाँ तक भी कहा गया है—

यत्र नार्यो न पूज्यन्ते शमशान तत्र वै गृहम् ।'

जहा स्त्रियाँ नहीं पूजी जाती वह तो घर नहीं है, शमशान है।'

यही नहीं, माता को गुर का स्थान दिया गया है, प्रथम गुरु माता है, उसी की कृपादृष्टि से बालक का कल्याण है— कहा भी गया है—

१ मातृदेवो भव, पितृदेवो भव, आचार्यदेवो भव ॥

२ मातृमान् पितृमानाचार्यवान् पुरुषो वेद ॥

इत्यादि मत्रा में माता को ही सबसे पहला स्थान दिया गया है। इसका भी यही कारण है कि माता ही आदिगुरु है और उसकी दया तथा अनुग्रह के ऊपर बच्चों का ऐहिक, पारलौकिक एवं पारमार्थिक कल्याण निर्भर करता है।

## कुलदेवी

पूजा की लाक्षणियता की दृष्टि से आज हमारे देश में सर्वाधिक मान्यता दुर्गा, काली, लक्ष्मी और सरस्वती— इन चार देवियों की है— वैसे सम्पूर्ण भारतवर्ष में प्रचलित देवी आराधना के सदर्भ में असर्वत्यक देविया की मान्यता है। देवी दुर्गा, काली, ललिता आदि सहस्रनामों में देवी के कई हजार नाम गिनाये गये हैं। यद्यपि वहा वे एक ही देवी के नाम समझे जाते हैं, परन्तु जनसाधारण की मान्यता में उनमें से अधिकाश पृथक् रूप में देवियों हैं। सभी जातियों में प्रत्येक कुल की अलग-अलग देवी होती है, जिसे कुलदेवी कहा जाता है। आज भी भारत में शीतला, सकटा, गौरी, दुर्गा, लक्ष्मी, काली, चण्डी, सरस्वती आदि देवियाँ अलग-अलग नाम से पूजी जाती हैं। देवी के मंदिरों में आश्विन तथा चैत्र मासों में नवरात्र के दिनों में जिस देवी की पूजा की

## ५६/हमारी कुलदेवियाँ

जाती है, उसको केवल दुर्गा या मात्र देवी के नाम स ही सर्वसाधारण जानता है। अनेक देवियों की मान्यता के साथ-साथ यह भी मान्यता है कि ये सब एक ही देवी के अनेक रूप हैं। कुलदेवी दुखियों के दुख को देखकर द्रवित हो जाती है और उसके दुख का निवारण करती है।

इन माताओं की शक्तियों को हम नहीं समझ सकते भले ही हम कितने ही विद्वान् हाँ, जानी हों, पण्डित हाँ। माता की क्षणिक कृपा दृष्टि हमें निहाल कर देती है, शर्त केवल यह है कि भक्त माता को सच्चे हृदय से पुकारे, उसके सामने आत्म-समर्पण कर दे और आर्त स्वर से जगदम्बा से प्रार्थना करे— माँ, मैं तुम्हारी शरण मे हूँ, मेरी रक्षा करो, मेरी मनोकामना पूर्ण करो’। फिर देखो माता की अहैतुकी अक्षुण्य कृपा वह भक्त को आशातीत फल प्रदान करती है, उसके सब कष्टों का निवारण करती है।

## आदिशक्ति ही पारीकों की कुलदेवी

पारीका के आदि पुरुष ब्रह्मा जी के पुत्र ब्रह्मर्पि वशिष्ठ-शक्ति-पराशर है, अत उनकी कुलदेवियाँ भी शक्ति की आद्य अवतार शक्तियाँ ही हैं।

## पारीकों की कुलदेवियों की सख्या

हमारी कुल-देवियों की सख्या जहा विभिन्न विद्वानों ने अलग-अलग बताई है वहीं एक माता के एक से अधिक नाम भी बताये हैं। नामों में भिन्नता का जहाँ तक प्रसग है, ये अपभ्रंश रूप से, स्थानीय बोली के आधार पर बदलते गये हो, ऐसा सभव है जैसे— परामाता को पराख्या, पाङ्गोट्या, पराय, पाण्डाखा, पाण्डुक्या एव पाढा माता कहा जाने लगा। चतुर्मुखी को चत्रमुखी या चित्रमुखी तथा सुदर्शना को सुद्रासमा आदि।

विभिन्न विद्वानों द्वारा माताओं का जो स्वरूप बताया गया है, उसमें भी भिन्नता है, यथा—

- १ बूढ़ण माता को जहा स्वतंत्र रूप से दर्शाया गया है वही अन्य विद्वानों ने बूढ़ण माता के रूप मे अम्बा, ललिता को एक ही माता बताया है।
- २ अम्बा माता को जहा स्वतंत्र रूप से बताया गया है वही अन्य विद्वानों ने अम्बा माता के रूप मे बूढ़ण, ललिता को एक ही माता बताया है।

- ३ ललिता माता को जहाँ स्वतंत्र रूप से बताया गया है वही इसे बूढ़ण माता के रूप में भी बताया गया है।
- ४ भद्रकाली और कालिका माता को कुछ विद्वानों ने जहाँ अलग-अलग बताया है, वही कुछ विद्वानों ने इसे एक ही माता के रूप में बताया है।
- ५ लहण माता को जहाँ स्वतंत्र रूप से बताया गया है वही इस माता को नारायणी और नानण माता के रूप में भी कुछ विद्वानों ने बताया है।
- ६ नानण माता को जहाँ स्वतंत्र रूप से बताया गया है वही इसका नाम नारायणी भी बताया है। नानण नारायणी का ही अपभ्रंश हो सकता है। नानण व नारायणी के साथ इस रूप में लहण माता को भी बताया गया है।
- ७ कुमारिका और आदि कुमारिका को जहाँ अलग-अलग माताएँ बताया गया है वही इन्हे एक माता के रूप में भी बताया गया है।
- ८ केवल एक विद्वान् ने दुर्गा को स्वतंत्र रूप से बताया है तथा इस माता के साथ उन्होंने जीवण (जीण) बताई है तथा जीण माता स्वतंत्र रूप से भी बताई है।

इस प्रकार हमारे सामने जो विचारणीय प्रश्न आते हैं, वह यह है कि— क्या कालिका और भद्रकाली एक ही माता है या अलग अलग माताएँ हैं ? अम्बा, बूढ़ण और ललिता माता एक ही है, या अलग-अलग माताएँ हैं ? नारायणी, नानण और लहण एक ही माता है या अलग अलग माताएँ हैं ? कुमारिका और आदि कुमारिका एक ही माता है या अलग-अलग माताएँ हैं ?

पौराणिक आधार पर इनका स्वरूप एवं लोकमान्यता के आधार पर इनके सम्बन्ध में अध्ययन एवं अन्वेषण के पश्चात् सक्षेप में यह कहा जा सकता है कि—

अम्बा-अम्बिका और बूढ़ण वृद्धेश्वरी एक ही माता है।  
ललिता माता एक ही है।

नारायणी, नानण और लहण एक ही माता है।

भद्रकाली और कालिका (वरदायिनी) कुलदेवी के रूप में एक ही माता के रूप में पूजनीया है।

कुमारी और आदि कुमारिका कुलदेवी के रूप में एक ही माता के रूप में

जिस प्रकार कुल देवियों के नामों के सम्बन्ध में विद्वानों ने भिन्न भिन्न प्रतिपादित किये हैं, वहीं एक ही अवटक की अलग-अलग मातायें भी बताई गई हैं। जिसका विवरण सम्बन्धित अवटक की जो माता है उसमें दिया गया है। यहाँ पुनरावृत्ति करना आवश्यक नहीं है।

### आस्पदानुसार पारीकों की कुलदेवियाँ

पारीका के नी आस्पद है तथा १०३ अवटक या शाखाएँ है जो इस प्रकार है—

१ जोशी	इनकी ३७ शाखाएँ या अवटक हैं।
२ तिवाडी	इनकी २७ शाखाएँ या अवटक हैं।
३ उपाध्याय	इनमें १३ शाखाएँ या अवटक हैं।
४ मिश्र (बोहरा)	इनकी ९ शाखाएँ या अवटक हैं।
५ व्यास	इनकी ७ शाखाएँ या अवटक हैं।
६ पाण्डेय	इनकी ४ शाखाएँ या अवटक हैं।
७ पुरोहित	इनकी ४ शाखाएँ या अवटक हैं।
८ कौशिक भट्ट	इनकी १ शाखा या अवटक है।
९ द्विवेदी	इनकी १ शाखा या अवटक है।

### विभिन्न गोत्रों की माताएँ

माता	गोत्र	आस्पद
१ परा पराण्या पाडाखा	१ गोलवाल	व्यास
पाडाय पाडला पाड़ा	२ मडलवाल	तिवाडी
पाण्डुख्या	३ आजाया	व्यास
	४ ठकुरा (ठुकरो)	जोशी
	५ घुपाट (घुधाटक)	तिवाडी
	६ अगरोदा	तिवाडी
	७ अहला	व्यास
	८ बुलबुला	जोशी
	९ खटोड (खरवड)	व्यास

२ जनरसी जीा	१ पुनसाप्ता	जाशी
	२ दृंगल (दृंगल)	उपाध्याय
	३ उराट (उराट)	तिगडी
	४ आलसा	जाशी
	५ छसाना (छसान्ना)	जाशी
	६ लाइरा	जाशी
	७ समला (स्मला)	जाशी
	८ उराट (उराट)	उपाध्याय
	९ वभारचा (भभारचा)	जाशी
	१० भरडादा	उपाध्याय
	११ सुरगा	तिगडी
	१२ शाडिल्य (साढल) (साडिल)	उपाध्याय
	१३ सुरेडा	पुराहित
	१४ भास्ता (वास्ता)	जाशी
	१५ जाहादा	उपाध्याय
	१६ हुतारचा	जाशी
३ सूचीकरणी सूचाय	१ नगलाडा (नगलाण्या)	याहरा
	२ रसवाणा (रिराचान्या)	तिगडी
	३ वामणा'	जाशी
	४ वामण्या (जामणिया)	व्यास
	५ गलमा	जाशी
	६ गागडा	उपाध्याय
	७ पाईचाल	तिगडी
	८ गणहडा	जोशी
	९ पण्डिता (पिण्डिताणा)	जाशी
	१० भुरभुरा	जोशी
	११ भण्डारी	याहरा
	१२ सनोगी	तिगडी

## ६०/हमारी कुलगेवियाँ

४ यद्धिणी जाहेज	१ कोथल्या (कागलिया)	पाण्डय
	२ पाम	पाण्डेय
	३ हौडीला (हुण्डीला)	तिवाडी
	४ तामङ्गा (तावणिया)	बाहरा
	५ पचाली	तिवाडी
	६ सतमुण्डा (सतमुडा)	तिवाडी
	७ अग्निहोत्री (अग्न्योता)	तिवाडी
	८ कौशिक भट्ट	कौशिक
	९ खटवड/मुण्डवया	व्यास
५ क्षमजा र्हाविज	१ पुण्यपालक (पुनपालेसरा)	जोशी
	२ भोडा (भोण्डया) (भोट)	बाहरा
	३ कठात्या	द्विवेदी
	४ कापडादा	जोशी
	५ रत्नपुरा	तिवाडी
	६ अलून्या	पाण्डेय
	७ मुद्रल	बोहरा
६ कुञ्जला कुञ्जल	१ दुजारा (दुजरचा) (डौजारचा)	जोशी
	२ सकुराणा (सकुराणिया)	जाशी
	३ सूपडा	पुरोहित
	४ ढागी	पुरोहित
	५ लापस्या	जोशी
	६ मुडाणा	जोशी
७ समरश्वरी समराय	१ आडीटा	तिवाडी
सकुराय शास्त्रभरी	२ रजलाणा (रजलाणिया)	जाशी
	३ साती	उपाध्याय
	४ दहगात	बोहरा
	५ मुमनत्या	बाहरा
	६ लाछणाचा	जोशी

८ चामुण्डा	१ हलहला (हलहर्था)	तिवाड़ी
	२ जागलवा	जाशी
	३ भ्रामणा	तिवाड़ी
	४ डावड़ा	जाशी
	५ नायल (काहल) (कहाल)	पाण्डय
९ कालिका भद्रकाली बरदायिनी	१ वरणा	जाशी
	२ विङ्गजारा (विणजारा)	उपाध्याय
	३ दुर्घाट (दर्घाट)	तिवाड़ी
	४ पुरपाट	तिवाड़ी
	५ पाठक	व्यास
	६ भारगा	तिवाड़ी
१० चित्रमुखी चतुर्मुखी	१ मलगाठ (मलगाता)	बाहरा
	२ कासमूरीवाल	तिवाड़ी
	३ फीलणावा	उपाध्याय
११ कुमारिका आदि कुमारिका	१ अजमरा	जाशी
	२ कुलत्वा (कुलहता) (कुलहलो)	जाशी
	३ सोतडो*	जाशी
१२ सुरसा सुरसाय	१ जहला	जाशी
	२ जावल्या	उपाध्याय
	३ दुलीचा	उपाध्याय
१३ त्रिपुर-सुदरी तिपराय	१ जेरठा (जोरठा)	तिवाड़ी
	२ पापड (पापट)	तिवाड़ी
१४ मुदर्शना सुद्रासणा	१ मलवड	जोशी
	२ वागुडचा	जाशी
	३ मलवड	तिवाड़ी

## ६२/हमारी कुलदेवियाँ

१६ तारा ताराय	१ पूर्णाण्या	जाशी
१७ अम्बा अम्बिका बूढण	१ दिखत २ दवपुरा ३ राजड़ा	जाशी तिवाड़ी उपाध्याय
१८ नारायणी नानण लहण	१ कसार	पुराहित
१९ ललिता	१ गारा	बाहरा
२० अशनोत्तरी	१ दक्ष (दाख) २ रहटा	उपाध्याय तिवाड़ी
२१ कसरी	१ शाखा शुगार	जोशी
२२ आदिशक्ति	१ ग्रीणासरा (बीणसटा)	जाशी
२३ करणी	१ सातड़ा*	जाशी

पारीका की कुलदेवियों को एवं उम्मेदक अवटकों को श्री भवरतालंब पारीक (बल्याणपुरा, धाई, नि सीकर) ने पद्मा में वर्णित किया है जो दृष्टव्य है

जीण, कालिका, चतुर्मुखी अरु, लहण, पाण्डुक्या व सुरसाय।  
आदिशक्ति, जाखण, चामुण्डा, नानण करणी अरु समराय॥  
अशनोत्तरी बीजला तारा भद्रकाली अरु अप्ववाय।  
खींवज, कुमारिका, सुदर्शना आदि कुमारिका अरु पाडाय॥  
सूचकेश्वरी, बूढण व कुजल त्रिपुरा और कसरी नाम।  
य ही सब कुल मातायें हैं करो प्रेम से इहें प्रणाम॥

## कुलदेवी और उपासक

### १ कुजल

हिजारचा, सर्फराणा, छुडाणा, नाम चाषडचा आता है।  
डौंगी और लापस्या की, कुजल देवी माता है॥

### २ जाखण (यक्षिणी)

कोथल्या पोम मुण्डम्या अम् हुडीला तावणा पचोली।  
सतभुण्डा अगनाती भट्ठ सहित माँ जाखण की जय जय बाली॥

### ३ सूचकेश्वरी (सूच्याय)

पिण्डताण, गोगडा, भण्डारी, भुरभुरा बामणा नगलाण्या।  
पाईवाल, बामण्या, सजोगी, गलवा, गणहडा, कीवसाण्या॥  
इन धारह शाखाओं की, सूचकेश्वरी कुल माता है।  
दूसरा एक इस माता का, सूच्याय नाम आता है॥

### ४ पाडाय (परा)

ओजाया, तुकरो, गोलवाल, ओहोरा, धुधाट नाम भी आता है।  
अगरोटा, बुलबुला सातो की, पाडाय देवी कुल माता है॥

### ५ जीण

दुहीवाल, आलसरा, लाडणवा, पुलसाण्या बुराट भरडोदा।  
शाडिल्य, सुचगा, भम्बोरच्या, कमलो, कुसटा अरु जाङ्डोदा॥  
बाकला, डसाण्या, दुजारा, सौलहवा, सेरडा कहलाता है।  
इन सब ही शाखाओं की, जीण देवी कुल माता है॥

### ६ आदिशक्ति (आद सगत) ७ अम्बा (अम्बवाय)

आदि शक्ति का एक उपासक बीणसता नाम ही आता है।  
इसी तरह से दिक्खत की, अम्बाजी कुल माता है॥

### ८ खीवज (क्षेमजा)

मुदाल भाडा, पुनपालेसुरा, कठोत्या रतनपुरा भी आया है।  
कापडोदा, अलूणा की कुल माता का, खीवज नाम बताया है॥

### ९ तारा (ताराय) १० आदि कुमारिका

पदमाण्या की कुलदेवी का, तारा नाम बताया है।  
नाम अजमेरा वी माता का, आदि कुमारिका आया है॥

### ११ समरेश्वरी (समराय)

दहगोत, सुफत्या, लाल्हणवा, रजलाण्या, आडीटा सोती।  
समरेश्वरी इन शाखाओं की, पूजनीय कुलमाता होती॥

### १२ चामुण्डा (चावड)

हलहरच्या, भ्रमाणा, जागलवा, काहल, डावडा आते हैं।  
इन पाँचों की कुलदेवी को, चामुण्डा जी बतलाते हैं॥

### १३ बुढण १४ नानण

देवपुरा और रोजडा की, माता बुढण बतलाते हैं।

नानण देवी के भक्तों में, मात्र केसोट ही आते हैं॥

### १५ कालिका १६ बीजल

दुर्जाट, बीणजारा पुरपाट तीन की, कुल मात कालिका कहलाती।

बैया, बीणसरा, बाबर की, बीजल कुलमाता आती॥

### १७ सुदर्शना

बागुण्डचा मलवड जाशी अरु, मलवड त्रिपाठी आते हैं।

इन तीनों की कुलदेवी का, सुदर्शना नाम बताते हैं॥

### १८ चतुर्मुखी

मलगोत, साथम बीलणवा, कसूबी वाल भी आता है।

चतुर्मुखी इन तीनों की पूजनीय कुलमाता है॥

### १९ सुरसा (सुरसाय)

जावला, जहेला दुलीचा, तीन नाम ये आते हैं।

इन तीनों की कुल माता का, सुरसा नाम बताते हैं॥

### २० त्रिपुरा २१ भद्रकाली

जेरटा, पापट इन दोनों की, कुलदेवी त्रिपुरा कहलाती।

भारगो, पाठक, वर्णा की, भद्रकाली कुल माँ आती॥

### २२ अशनोतरी २३ लहण

रहटा और दाख की माता, अशनोतरी कहलाती है।

गारण की कुलदेवी तो, लहण मातृका आती है।

### २४ करणी २५ कुमारिका

एक सोतडो की कुलदेवी, करणी मा कहलाती है।

और कुलहता की कुलमाता, माँ कुमारिका आती है॥

### २६ पाण्डुक्ष्या

एक खटोड व्यास के सग, मेडतवाल भी आते हैं।

पाण्डुक्ष्या इन दोनों की, कुलदेवी सभी बताते हैं॥

## २७ केसरी

भगार नाम की शाखा की जो पूजनीय कुल माता है।

उस पूज्या मात मध्यानी का, नाम केसरी माता है॥

कतिपय अवटकों के प्रसंग में एक ही अवटक की भिन्न-भिन्न मातायें बताई गई हैं। जिनमें से कतिपय का विवरण निम्न प्रकार है—

१ आगरोटा की कुलदेवी पराण्या है किन्तु कहीं-कहीं इनकी कुलमाता चित्रमुखी बताई गई है।

२ भारणो (भार्गव) की कुलदेवी जाखण या यक्षिणी है किन्तु कहीं-कहीं इनकी कुलमाता कालिका बताई गई है।

३ देवपुरा की कुलदेवी अम्बा या बृद्धाणा है किन्तु कहीं-कहीं इनकी कुल माता वृद्धेश्वरी बताई गई है।

४ गारग की कुलमाता ललिता है किन्तु कहीं-कहीं इनकी कुल माता नारायणी लहण बताई गई है।

५ पदमान्या जोशियों की कुलदेवी तारा है, कुछ विद्वान पद्यानिया जोशियों की कुलदेवी त्रिपुर सुन्दरी भी बताते हैं।

६ रोजडा देवपुरा की कुलदेवी अम्बा बृद्धण है कहीं-कहीं ललिता इनकी कुलदेवी बताई गई है।

७ सोतडो अवटक की माता कुमारिका है, कुछ विद्वान सोतडो अवटक की कुलदेवी करणी माता को बताते हैं।

इस प्रकार अवटकों की माताओं के सम्बन्ध में विद्वानों में मतभेद है, किन्तु कुल-परम्परा के अनुसार माता की पूजन उसी रूप में करनी चाहिए, जो बुजुर्गों के अनुसार की जाती रही है।

## कुलदेवी का नाम एवं मान्यता

हमारी कुलदेवियां के नाम जहाँ पौराणिक आधार पर हैं वही अनेकानेक माताएँ ग्रामों के नाम से जानी जाती हैं, उदाहरणार्थ सुदर्शना माता-सुदर्शन ग्राम में स्थित है, अत माता के नाम पर गाव का नाम हो गया और कालान्तर

मेरा माता गौव के नाम से जानी जाने लगी। इसी प्रकार नॉद गाव में नानण माता का स्थान होने से नादन माता कहलान लगी। भवाल ग्राम में कालिका एवं ब्रह्माणी माता के मंदिर हैं किन्तु आसपास के अचल वाले इसे भवाल माता कहते हैं। भक्ती ग्राम में भी कालिका एवं ब्रह्माणी माता के मंदिर हैं किन्तु इस माता को भक्ती माता के नाम से जाना जाता है। पाण्डोराई क्षेत्र में पाडोट्या माता का मंदिर है अतः इसी नाम से माता जानी जाने लगी।

शक्ति के मानवीय अशावतार के आधार पर भी कुलदेवियों का नाम पड़ गये, जबकि उनकी उपास्य माताओं का स्वरूप पौराणिक ही है। उदाहरणार्थ जीण माता जनेश्वरी के रूप में पूजित है और करणी माता- सती के ब्रह्मरन्ध के रूप में [जिसका स्थान हिंगलाज (अफगानिस्तान) में है] तथा कुञ्जल माता दुर्गा के रूप में पूजित थी। अब कुञ्जल माता के रूप में पूजी जाती है।

कुलदेवी की मान्यता भक्त की आस्था पर भी निर्भर करती रहती है। आराधना का मूल स्रोत आस्था है। प्राय देखा गया है कि किसी अवटक की कुलदेवी जहाँ कही होती है, या तो उन्हे, उनके स्थान की जानकारी नहीं होती या फिर वह इतनी दूर होती थी कि वहा तक जाना सभव नहीं रहता, अतः पास का कोई शक्ति स्थान जो देवी के रूप में पूजित होता है, उसका आस्था का केन्द्र बन जाता है और वह स्थान कुलदेवी के रूप में पूजित हो जाता है। यही नहीं किसी क्षेत्र विशेष में जहा देवी ने अपनी शक्ति का प्रदर्शन किया वहा उस नाम से भी माता पूजी जाने लगी।

पारीको का सम्पर्क राजपूतों से रहा है। उनके पुराहित के रूप में, इनकी उनसे सम्बद्धता रही है अतः इनकी कई कुलदेवियाँ भी राजपूता की कुलदेवियों के अनुरूप ही रही हैं, उदाहरणार्थ समराय या समरेश्वरी (शारुम्भरी, समराय)। यह चौहान राजपूतों एवं पारीकों के कई अवटकों की कुलदेवी हैं।

अत यह कहना पर्याप्त होगा कि यह सब आद्याशक्ति की ही माया है जिसके भिन्न-भिन्न रूप है। यही एक शक्ति सब में है और सब शक्तियाँ एक में समाहित हैं।

एक देवी के मंदिर भक्तों द्वारा अनेकानेक स्थानों पर निर्मित कर दिये जाते हैं। किन्तु यदि माता के प्रथम निर्मित, स्थापित उत्पत्ति स्थान की जानकारी हो जावे तो वह स्थान माता का मुख्य स्थान माना जाता है तथा भक्तों द्वारा माता के विग्रह की अन्यत्र स्थापना करने पर वे भी आराध्य स्थान हो जाते हैं। राव-भाटों की पोथियों के अनुसार पारीकों की कुलदेवियों के निम्न स्थान हैं जिन्हे तारक चिह्न\* से चिह्नित किया गया है, शेष स्थानों का विवरण पारीक मासिक, बैगलोर से प्रकाशित विवरणिका से उद्धृत किया गया है।

### पारीक समाज की कुल देवियों के स्थान <sup>१</sup>

कुल माता	स्थान
१ चतुर्मुखी	खडवा (मध्यप्रदेश)
२ जीण माता*	जीण स्थान, गोरियाँ, सीकर के पास, (राज )
३ सुचाय माता सुच्याय*	ओसीयाँ (जोधपुर के पास) जि जोधपुर (राज )
४ सुरसाय	सुदर्शन माताजी, डीडवाणा (राज )
५ अश्नोत्तरी	किनसरीया (मकराणा के पास)
६ कालिका*	अहमदाबाद, कलकत्ता, चित्तौडगढ
७ बुढण माता	भवाल (मेडता सिटी के पास)
८ समराय*	साभर (मकराणा के पास)
९ आदिकुवारीका	ऋषिकेश (उ प्र )
१० क्षेमजा खीवज*	कठौती (जि नागौर)
११ चामुण्डा*	पलु (सरदारशहर के पास)
१२ पाढाय* (परा) (पाढाय)	डीडवाणा जि नागौर (राज )
१३ कुजल*	डेह (नागौर के पास)
१४ अम्बा	अम्बादेवी (चित्तौडगढ)
१५ तारा	गौहाटी (অসম)

<sup>१</sup> स्रात पारीक महापुरुष ल रघुनाथ प्रसाद तिवाड़ी उमा व पारीक मासिक बैगलोर वर्ष १ अक्टूबर १९९८ (१ अक्टूबर १९९८)

१६ भद्रकाली*	नापासर, टापरड़ा (भद्री के पास) जि नागौर (राज), अहमदाबाद (गुजरात)
१७ सुदर्शना*	सुदर्शन माताजी (डीडवाना जि नागौर) ग्राम सुदर्शन, जयपुर ऋषिकेश (उ प्र )
१८ आदिशक्ति	कुवाडिया ठाड़ा के माणा के पास, जि नागौर, (चादारूण-जगडवास के बीच)
१९ विजल*	साभर (मध्यराणा के पास)
२० समरेश्वरी*	देहनोक (बीकानेर के पास)
२१ वरणी	कश्मीर, रिया शेरसिंह की (बड़ी रीया), (मेडता के पास)
२२ केशरी	माडल (भीलवाड़ा के पास), उपस्थान रैन (मेडता के पास)
२३ जाघण-यक्षिणी*	अमरनाथ के पास (तिपुर सुदर्दी), बासवाड़ा के पास
२४ तिपराय (प्रिपुरा)	नाद (पुष्कर के पास), टोड़ा रायसिंह, जयपुर के पास
२५ नानण/नारायणी/लहण*	भवाल (मेडता के पास)
२६ लाहण	पाण्डोराई (मेडता सिटी के पास)
२७ पाडाट्या (पटूस्या)*	जैसाकि पूर्व म वर्णन किया गया है, विभिन्न विद्वानों ने पारीका की कुलदेविया की अलग-अलग सट्या बताई है मिन्तु इन माताओं का स्वरूप क्या है, इसका विवेचन किसी ने भी नहीं किया। लेखक अनेकानेक माताओं के स्थाना पर गया, माताओं के दर्शन किये, अध्ययन अन्वेषण किया, पुजारी एव अन्य लोगों से जानकारी प्राप्त की तथा माताओं के प्रत्यक्ष दर्शन के बाद इस निष्पर्य पर पहुंचा कि हमारी कुलदेवियों का स्वरूप पौराणिक देविया के अनुरूप ही है।

### अनेक माताओं की एक-सी कथा

बहुत-सी माताएँ ऐसी हैं जिनके सम्बन्ध में एक-से बढ़ानक उपलब्ध  
है एव घटनाओं में भी प्राय साम्य है। एक-सी मिलती-जुलती घटनाओं का

कई स्थानों पर होना कोई आश्चर्य की बात नहीं। भारतवर्ष धर्मप्राण देश है। प्रत्येक नर-नारी किसी न किसी रूप में देवी-देवताओं को मानता है, उनकी पूजा करता है। अतीत में हमारे महापुरुषों द्वारा स्थापित-आराधित हजारों देवी-देवताओं के विग्रह हैं जिनकी शक्ति अनन्त है। अत एक-सी घटनाये, घटना, समान से कथानक होना कोई आश्चर्य नहीं। यहाँ कुछ देवियों की समानता लिए घटनाओं का उल्लेख पाठकों की जिज्ञासा शाति हेतु किया जा रहा है जिनके कथानक प्रायः एक-से हैं तथा घटनाओं का समय भी लगभग एक-सा है, ये माताएँ हैं—

१ कुञ्जल माता— डेह (नागौर)

२ आवरा माता— ग्राम आसावरा (चित्तौडगढ़)

कुञ्जल देवी (ग्राम डेह-नागौर) के सम्बन्ध में ऐसा कथानक है कि उनको व्याहने के लिए दो बाराते आई थीं और दोनों बारातों ने यह निश्चय किया कि जिसमें भुजबल होगा, वही कुञ्जल को व्याह कर ले जायेगा। देवी ने भूमि माता से प्रार्थन की कि, मेरे कारण खून-खराबा न हो, कुञ्जल देवी की प्रार्थना पर धरती फटी और कुञ्जल देवी उसमें समा गई (विस्तृत कथानक कुञ्जल माता के चरित में पढ़े) यह घटना सम्बत् १०८९ के लगभग की है। इसी प्रकार की घटना आवरा माता के सम्बन्ध में है। इस माता का स्थान ग्राम आसावरा (चित्तौडगढ़) है तथा माता को व्याहने हेतु एक साथ सात बाराते आई थीं। नर-सहार को बचाने हेतु माता (केसर क्वर जो माता का वास्तविक नाम था) अपने माता-पिता से आज्ञा लेकर अपनी कुछ सहेलियों व दासियों के साथ निकटस्थ पहाड़ी उपवन में गई (जहा अब माता का मंदिर है) तथा पृथ्वी माता का ध्यान कर तीन तालियाँ बजाइ। ताली बजाते ही भूमि फट गई और ‘केशर क्वर’ जमीन में अन्तर्धान हो गई। यह घटना सम्बत् १११६ की बताई जाती है।

इसी प्रकार डाकुओं का माता के मंदिर में सरक्षण लेना, माता द्वारा उन्हे अभ्यदान देना, माता का पेड़ से पगट होना, गाय का नित्य प्रति एक स्थान विशेष पर अपने थना से दूध टपकाना एवं वहाँ से माता का प्रगट होना, एक निश्चित अवधि तक घोड़े पर बैठ कर दौड़ाना और उस अवधि में जितनी

मेरोडी माता पूजते समय प्रथम पुण्य पञ्चवी माता को ही समर्पित किया जाता है। धरती हमारी माँ है, राड़ी चाहे जितनी भी उपेक्षित हा, कूड़ा-करकट की ढेरी हो उपेक्षित हा, फिर भी वह मानव मात्र के लिए कल्याणकारिणी है। हमारे धन्य-धान्य की श्रीवृद्धि करती है— उससे निर्मित खाद, अन्नोत्पादन में वृद्धि करता है, अत उसे देवीस्वरूप मानकर ही विवाह के समय भले ही लड़की का विवाह हो अथवा लड़के का काकण-डारे बाधने के दिन, साकड़ी विनायक के दिन रोड़ी का पूजन कर रोड़ी माता को विवाह में आने हेतु निमन्त्रित किया जाता है। पूजन मे अलग-अलग स्थानों पर पूजन सामग्री भिन्न-भिन्न हो सकती है किन्तु रोली, मोली, मूण, चावल, पताशे, बाटी, घूघरी, तेल आदि से रोड़ी के बीच मे कील गाड़कर रोड़ी का पूजन करते हैं तथा विवाहोपरान्त वर-वधु को जोड़े सहित रोड़ी माता को पूजने हेतु ले जाया जाता है तथा इस अवसर पर जो मागलिक गीत गाये जाते हैं उनमे सुख-समृद्धि, वश वृद्धि आदि हेतु माता से प्रार्थना की जाती है तथा उपरोक्त सामग्री से ही रोड़ी माता की पूजन की जाती है तथा रोड़ी के मध्य में रोपी गई कील को घर लाकर गणेशजी के स्थान पर रख दिया जाता है। इसके पीछे यही उद्देश्य होता है कि कील जहा मर्यादा एव अनुशासन का प्रतीक है वही यह नजर निवारण का भी प्रतीक है।

नदियों का पूजन गगा, यमुना, सरस्वती, नर्मदा नदियाँ माता के रूप मे मानी जाती हैं। जल के अभाव मे मानव जीवन की कल्पना भी नहीं की जा सकती। लोक मानस मे ये सभी दुखों एव कष्ट के निवारण करने वाली हैं— यथा

ए गगा मैया करदे सब दुख दूर

यही नहीं बाझ स्त्री माता से पुत्र प्राप्ति हेतु प्रार्थना करती है—

राजे गङ्गा किनार एक तिरिया जु ठाड़ी अरज करै।

गगा एक लहर हमें देउ तौ जामे छवी जायें रे॥

राजे लौटि उपलटि घर जाउ ललन तिहारे होय।

एक पुत्र तो दे गगा माता।'

यही नहीं मृत्यु के समय गगा जल अस्थि विसर्जन का भी विधान है।

**पथवारी माता** यान्ना निर्विघ्न सम्पर हो। यात्री की सुरक्षा एवं कल्याण की मनोकामना हेतु पथवारी माता की पूजन की जाती है।

**गाज माता** सावन-भादरे के महीने में बादल गरजते हैं इन बादलों की गजना सुनकर गृहणियाँ गाज परमेश्वरी का व्रत करती हैं। गाज के डोरे (सात कच्चे सूतों से गाज बाधी जाती है)। गाज खोलते समय इसकी कहानी सुनी जाती है कि जिस प्रकार गाज की मान्यता करने से बिजली गिरने से राजा बच गया। उसी प्रकार गाज माता हमारी भी रक्षा करे।

**मेघासिन** मेघों की रानी की पूजा की जाती है कि हे! माता आवश्यकतानुसार वर्षा कर जिससे धन-धान्य पूर्ण हो एवं पशुधन की वृद्धि हो।

**तुलसी माता** के रूप में तुलसी प्रत्येक हिन्दू परिवार में न केवल पूजी जाती है अपितु अधिकाश घरों में उसका पौधा भी होता है। सायकाल दीप दान के बाद उसकी आरती की जाता है।

नमो नमो तुलसी महारानी, नमो नमो।  
हरि की पटरानी नमो नमो॥

कार्तिक माह में तुलसी का विवाह भी करते हैं जो पुण्य का दायक माना जाता है।

**सजा मैत्र्या**— सध्या समय माता को दीप दान का श्रद्धापूर्वक उसकी पूजन की जाती है।

**गामाता**— गाय के हर अग में किसी न किसी देवता का वास है। मानव मात्र की यह पालनहार है, बालक के जन्म पर जच्चा के मकान के बाहर सातिये, इसी के गोबर से लगाय जाते हैं। गोवर्धन पूजा के समय गोवर्धन का चित्र भा इसी के गोबर से बनाया जाता है। बगला चौथ, आघ द्वादशी, बछबारस (वत्सद्वादशी) आदि त्यौहारों पर एवं व्रत पर गाय बछड़े की पूजा होती है।

**नाग माता**— परिवार की रक्षार्थ नाग माता की पूजा की जाती है। गृहणिया द्वारा कही सुनी जाने वाली कहानियों में नाग माता की कृपा से सपदश से मात्र पुत्र पुन जीवित हो जाते हैं।

## तिथि मातृका

लोक जीवन में यो तो अनेकानेक तिथिया ऐसी हैं, जिनकी उपासना देवी-देवताओं से जुड़ी हुई है किन्तु कुछ विशेष तिथियाँ हैं जो लोक माताओं के रूप में मान्य हैं, उनमें से कतिपय के नाम इस प्रकार हैं— अक्षण तृतीया, गणादशमी, श्रावणी तीज, चान छठ (भाद्रवा माह), बछबारस, करवा चौथ, चौथ माता, गणगौर (चैत्र मास), दसामाता व छठ माता (पुत्र प्रसव के छठे दिन पूजी जाती है) आदि। इन सब तिथियों को स्त्रियाँ व्रत रखती हैं तथा अपने सुहाग, घर में सुख-समृद्धि हेतु कथा कहती-सुनती हैं।

## रोग निवारक मातृका

लोक देवियाँ मानव मात्र का कल्याण करती हैं। इनकी पूजा अर्चना सभी समाज वाले बिना किसी भेदभाव के करते हैं। रोग निवारण के लिए माताओं में शीतला माता चेचरु निवारण के लिए, मावलिया जिह महामाया और महामाई भी कहते हैं, निर्विघ्न प्रसव, बच्चों की नजर तथा बच्चों के सूखे रोग निवारण हेतु पूजी जाती है। दुर्घटन द्वारा मूठ चलाने पर भदाना माता (कोटा के पास ६-७ कि.मी. दूर) की मान्यता एवं उसके द्वार पर भोये द्वारा मूठ का निदान, हिचकी रोग निवारण हेतु सनवाड माता (फतहनगर), लकवा रोग निवारण हेतु चित्तौड़ जिले की आवरी माता तथा छीक रोग निवारण हेतु जयपुर में स्थित छीक माता का मंदिर आदि रोग निवारक देवियों के मंदिरों के रूप में जगमान्य हैं।

## मन शक्ति मातृका

इसमें आशा भैया की पूजन की जाती है जो (वैशाख मास) में होती है। इसमें जो विधान है उसका सारांश यह है कि आशा और विश्वास के आधार पर जीवन सुखमय रूप से जीया जा सकता है।

## नाग मातृका

नाग पचमी एवं गूणा नवमी को नाग मातृका के पूजन हेतु स्त्रियों नाग देवता का पूजन करती हैं तथा नाग देवता को शीतल दूध पिलाती है एवं प्रतीक स्वरूप घर की दीवार पर नाग देवता का चित्र चित्रित कर उसकी पूजा करती है।

## सौभाग्य मातृका

अपने अखण्ड सौभाग्य के लिए गणगौर की पूजा की जाती है।

## रक्षा मातृका

इन माताओं में चामड माता, पथवारी माता, ककाली माता, बराई माता, कैला माता, चौसठ यागिनी आदि प्रमुख हैं। पथवारी माता पथ की रक्षिका है इसके सम्बन्ध में कहा जाता है—

पथवारी मेरी पथ की रानी भूलेने राह बताइये।  
भूले ने राह वसेरे ने वासी मन धीतो फल पाइये।  
पथवारी चीं न पूजे सुहागिन जी साहिव घर पाइये।

## सस्कार मातृका

विवाह के अवसर पर घर की बहिन-बेटिया माँय (पोडश-मातृका) की स्थापना करती है।

## सती मातृका

राजस्थान का ऐसा कोई ही स्थान होगा जहा सती की मान्यता न हो। किसी परिवार में सती होने पर वह उस परिवार, उस ग्राम व आसपास के क्षेत्र में पूजी जाती है, उस परिवार की कुल देवी हो जाती है। राजस्थान में सती के अनेकानेक मंदिर हैं। दिवराला में सती होने के बाद सती का सती के रूप में महिमा-मण्डन विधि द्वारा निपिद्ध कर दिया गया।

## प्रेम मातृका

आसोज कार्तिक माह में सज्या (साझी) की पूजन की जाती है। पित पक्ष (कनागत) के बाद कुवारी कन्याए प्रतिदिन सायकाल घर में बाहर दीवार पर गोबर और फूलों की सज्या बनाकर उसकी आरती-पूजन करती है। यह कार्यक्रम १६ दिन तक चलता है।

धर्म प्रधान देश भारत में जहा वैदिक-पौराणिक शक्तियों की उपासना शास्त्रोक्त विधि से भक्त करते हैं, वही लोक मानस की आस्था केन्द्र लाक देवियों की पूजा-आराधना भावुक भक्त स्थानीय परम्पराओं एवं लोकिक

आचार-विचार के परिणेक्ष्य में अभीष्ट फल की पासि हेतु करते हैं। लोक देविया की मान्यता अनादि काल से जन-मन में समाई हुई है, फिर भी बदलती सास्कृतिक मान्यताएँ इनके प्रति जन-जन की श्रद्धा पर कोई विपरीत प्रभाव नहीं डाल सकी है।

हमारी जीवन पद्धति ही ऐसी है जहा यह माना ही नहीं जाता अपितु वास्तविकता है कि हम देवी-देवताओं का आह्वान कर तो वे कार्यक्रमानुसार अभीष्ट फल प्राप्ति का वर दे— प्रगति पर अग्रसर होने का मार्गदर्शन करावे।

पौराणिक देवियों के जीवन चरित में हम देखते हैं कि वे अपने-अपने देवों की शक्तियों के रूप में प्रगट होती हैं, उनके आयुध एवं वाहन भी अपने देवों के अनुरूप ही होते हैं, उनकी पूजा अर्चना का विधान, निर्धारित है किन्तु जगत्साधारण के हृदय में इसी श्रद्धा के केन्द्र लोकमाताएँ या लोकदेविया, औपचारिक शास्त्रीय बधानों से बहुत दूर हैं। जिस क्षेत्र में ये प्रगट होती है उसी के अनुरूप इनका भोग लगाया जाता है, ये बिना किसी भेदभाव के जाति, वर्ग आदि के भेद रहित होकर जन-जन का मगल करती है और यही कारण है कि क्षेत्र-विशेष का निवासी, प्रवासी होने के बाद भी इनकी मान्यता यथावत् रखता है अत ये देवियाँ स्थानीय न होकर सम्पूर्ण देश की मान्य देविया हो जाती हैं।

मानवीय रूप में किसी परिवार विशेष में जन्म लेकर अपनी अलौकिक देवीशक्ति के रूप में जहा वे शक्ति की अशावतार होती है वही अपने अलौकिक जनकल्याणकारी परमा से वे जन-जन की बिना किसी भेदभाव के आस्था केन्द्र बन जाती है। उदाहरणार्थ जीण माता कुञ्जल माता, भवरी माता, करणी माता आदि। मानवीय रूप में देवी का अशावतार होने के कारण मानवीय स्वभाव का अश इनमें रहता ही है, और यही कारण है कि भूल होने पर तत्काल नाराज होकर भक्त वो अपनी नाराजगी का एहसास तत्काल करा देती है भक्त द्वारा अनुनय-विनय करने पर तथा अपनी भूल स्वीकार कर, माफी मागने पर माता तत्काल प्रसन्न भी हो जाती है।

लेखक माता के दर्शन करने गया तो यह पाया कि माताएँ वस्ती से दूर जगल में निवास करती हैं, माताओं के दबरे, पेड़ के नीचे भी हैं उनके लिए आरण (जगल) रक्षित है, वहा के जगल में लकड़ी काटना तो दूर,

कोई टहनी भी नहीं तोड़ता, अतः उस क्षेत्र का वातावरण प्रदूषण रहित रहता है, शुद्ध जल, स्वच्छ वायु का सेवन माता के दरबार में कुछ दिन रहने पर ही भक्त को रोग मुक्त कर देता है। इनके ओरण को यथावत् रखने पर आज पर्यावरण की जो समस्या हमारे सामने दिन-प्रतिदिन भयाबह होती जा रही है, उसका किसी अश तक निस्तारण हो सकता है।

यो तो हमारे देश में हर प्रान्त में लोक देवियों की मान्यता अनन्त है, किन्तु राजस्थान में इन लोक देवियों के प्रति शाही क्षेत्र से लेकर सुदूर ग्रामीण क्षेत्र तक अबाध आस्था है। इन देवियों का हमारी सामाजिक व्यवस्था, लोक संस्कृति, सामाजिक जीवन पर गहरा प्रभाव पड़ा है। इन माताओं का अद्भुत एवं अनूठा संसार है ये एक और जहा देवी शक्ति का अशावतार है वही बिना किसी औपचारिकता के सिदूर चर्चित पैथी, अनगढ़ मूर्ति, मिठ्ठी की मूर्ति, वृक्ष आदि के रूप में पूजी जाती है तथा स्थानीय खानपान, वेषभूषा, बनाव शंगार से ही सतुष्ठ हो जाती है।

### राजस्थान की कतिपय लोकदेवियाँ

जयपुर क्षेत्र		४ तनेटिया	तणाट
१ शिला देवी	आमर	५ तमडाराय	जैसलमेर
२ जीतला देवी	चाकसू	६ देगराय	राजला
३ चौध माता	चौथ रा बरवाडा	७ जोगमाया	पालजी झी डरी
४ ज्वाला माता	जाबनर	८ काला द्वागरराम	कणाद
५ कैता देवी	करौली	९ स्वागिया	गजरूप
६ रणपुर माता	करौली	१० हिंगलाज	लोख्वा
७ छींक माता	जयपुर	११ साहणी देवी	सिरवा गाव
८ शारुभरी	साभर	१२ नभ द्वागर राय	धालिया
९ महामाई	रेनगल	१३ भादरियाराय	धालिया गाव
१० यारडी माता	रौली	जोधपुर क्षेत्र	
जैसलमर क्षेत्र		१ आदू माता	बिलाडा
१ आवड माता	जैसलमर	२ सती बालाजी	बिलाडा
२ मातण माता	जानरा	३ सुन्दियाय	आसिया
३ घटियाल देवी	घटियाला	४ आसिया	आसिया

५ पूनागर अम्बाजी	पाली	१६ भवर माता	छाटी सादडी
६ चामुण्डा माता	साजत सिटी	१७ सीता माता	बड़ी सादडी
७ मूढा देवी	भीनमाल	१८ लालबाई फूलबाई	चित्तौड़
८ लन्धियाल भवानी	फलौदी	१९ मरमी माता	राशमी
९ बरवासण माता	मडता भिटी	२० झातिला माता	पाण्डाली
१० इदर बाई	खुइड (नागौर)	२१ इडाणी माता	बम्बारा
११ ऊटा माता	जाथपुर	२२ घूणीमाता	ठबारु
१२ दधिमाता	जाम्पुर	२३ नारसिंगी माता	कूण
१३ पाडबराय माता	मडता राड	२४ बडली माता	आकोला
१४ दधिमतिमाता	गाठ मागलाद (जायल)	२५ झालका माता	चित्तौड़
१५ शाकम्भरी	साभर	२६ जागणिया माता	भीलवाडा
१६ भवाल माता	भवाल (मडता राड)	२७ अम्बा माता	बासवाडा
<b>उदयपुर क्षेत्र</b>			
१ अम्बा माता	उदयपुर	२८ झालका माता	लहारिया
२ बदला माता	उदयपुर	२९ साम माता	तलबाड़ा
३ नाराणी माता	उदयपुर	३० चिपुरा सुदरी	आसपुर
४ नीमर माता	उदयपुर	३१ आसावरी माता	आम्पुरा
५ सतापी माता	उदयपुर	३२ बीजण माता	आबू पर्वत
६ अन्नपूर्णा देवी	उदयपुर	३३ सरस्वती माता	पिडवाडा
७ चामुण्डा माता	गागुन्दा	३४ मातर माता	मिराही
८ धवर माता	राजममन्द	३५ आरसण अम्बाजी	बामणजाडा
९ इया माता	गामडी गाव	३६ नागणची माता	नेगडिया
	जयसमद	३७ जगत माता	दातेमर जगत
१० हिचनी माता	सनबाड	३८ साण माता	नामद्वारा गाव
११ ऊठाला माता	वत्तलभ नगर	४० पादरी माता	उदयपुर
१२ वरकुण माता	भीण्डर	४१ जला माता	खोडण
१३ दुल्ला माता	कानाड	४२ खडा देवी	घरनाला
१४ आपरी माता	निरुभ चित्तौड़	४३ हागर माता	समीजा (उदयपुर)
१५ एवरा माता	झाला	४४ खडा घूर माता	भीता का बेडला

४५ वूणी माता	महाराज की खेडी	३ चामुण्डा	डावरा (बूदी)
४६ पाण्डु माता	ब्रिधान्वेदा (उदयपुर)	४ करणी माता	बूदी
४७ बरथा देवी	ढीमली	५ चमावली माता	चमावली
४८ धारखुण माता	समतिया पाडिया	६ ब्रह्माणी	सारसन
४९ ढावश्वरी माता	बसडा	७ बसन्ती	कार
५० खडी माता	बसडा	८ शिव भवानी	काटा
५१ भेड माता	डाजा	९ लाल बाई	झाटा
५२ तरताई माता	उमराई (बासवाडा)	१० काली कुकाली	काटा
५३ मोहरा माता	गू गाव	११ सतापी माता	कैथून
५४ बाडिया माता	रायपुर	१२ दृध्या खेडी माता	कुनवास
५५ आमली माता	मदेसर	१३ नाना देवी माता	कोटा
५६ गढ गवला माता	पाराली	१४ अम्बा माता	काटा
५७ फूला माता	झरनी	१५ चौथ माता	बरखाडा
५८ झुवाई माता	उपली आडण	१६ भद्राण माता	झाटा
५९ बसन्ती माता	कनर	बीकानेर-शेखावाटी क्षेत्र	
६० झलवा माता	कलवा	१ झरणी माता	देशनाक
६१ आमज माता	तुभलगढ	२ नागणीची देवी	बीकानर
६२ बकराणी	आमसर (आसीन्द)	३ कालिकाजी	झालू
६३ विराट माता	बदनार	४ मनसा देवी	चूरू
६४ धनाप माता	धनाप -	५ काली देवी	चूरू
६५ घाटा राणी	जहाजपुर	६ भद्रमाती माता	हनुमानगढ़
६६ कालिका माता	बनडा	७ शिला माता	हनुमानगढ़
(छापरगाला देवता)		८ सरुराय माता	सरुराय
६७ बरंराणी की छाटी हमीरगढ		९ रय माता	गांगियासर
बहिन		१० जीण माता	सीमर
६८ रुपण माता	गांगुन्दा तहसील	११ राणी सती माता	झुन्झूनू
हाइती क्षेत्र		१२ मनसा माता	झुन्झूनू
१ बीजासण माता	सुमराज झडी	१३ परमाक्षरी माता	कालायत
	इन्द्रगढ		

## माताआ के दर्शनार्थ यात्रा

माताओं का पौराणिक इतिहास लिखने के पश्चात् आद्या शक्ति की यह प्रेरणा हुई कि माताआ के जो स्थान बताये गये हैं उनका दर्शन किया जावे तथा उनके सम्बन्ध में यह जानकारी प्राप्त की जावे कि माता के मंदिर निर्माण की क्या पृष्ठभूमि है? इसका निर्माण कब एवं किसने कर्गया? इसका पुरातात्त्विक महत्व क्या है? क्या माता के मंदिर में कोई शिलालेख है, माता की मूर्ति किस स्वरूप में है उसके हाथों में कौन-कोनसे आयुध है, माता भी सवारी क्या है? माता का मूल नाम क्या है? वतमान नाम किस आधार पर हुआ तथा उसके चमत्कारा का वर्णन, माता किन-किन की कुलदेवी है माता के पुजारी किस परम्परा के हैं, पुजारी के योगक्षेम की क्या व्यवस्था है और यात्रियों के विश्राम हेतु मंदिर परिसर में क्या व्यवस्था है?

जगदम्बा की यह कपा ही रही कि समय-समय पर लेखक माताओं के दर्शन करने गया। लेखक के साथ कई बार उनकी धर्मपत्नी सुशीला एवं पौत्र रोहित, अनेकानेक बार उसके पुत्र चि नरेन्द्र एवं खण्डन्द गये। पौत्र शाभित एवं मोहित तो प्राय लेखक के साथ सभी माताओं के दर्शनार्थ गये, उनकी जिज्ञासा ने अनेकानेक नये तथ्य, मंदिर रे पुजारी एवं स्थानीय लोगों से वार्तालाप में उद्घाटित किये। निम्न माताओं के लेखक ने समय-समय पर अनेकानेक बार दर्शन किये।

समयग्र माता (उदयपुरवाटी-झुन्झुनू) जाखण (यक्षिणी) माता माण्डल एवं ऐन जीण माता (गारियों जि सीकर), सुच्चयाय माता (आसियों-जाधपुर), सुदर्शना माता सुरजल माता (सुद्रासना-कायमसर), परा-पराट्या-पाढोखा-पाढाय-पाडला-पाडा माता (डीडवाना-नागौर), पाण्डुम्या माता (मेडता), धीवज-क्षेमजा माता (कठौती-नागौर), कुञ्जल (डह-नागौर), बूढण माता एवं लाहण माता (भवाल, मेडता सिटी के पास), बीजल माता (कुवाडिया धेड़ा की ढाणी-चादारूण-डगाना-नागौर), भद्रमाली (भजगी-नागौर, काजीपुरा-साभा), नादमाता-नानण (नाद-पुष्कर-अजमर) सुरसाय माता (सुदर्शन-कायमसर-नागौर), समराय-समरेश्वरी (साभा), चामुण्डा (छण्डेला), कर्णी (दशनाम-धीमानेर) आदि।

माताओं के दर्शनार्थ की गई यात्राओं के दौरान एक अलौकिक एवं सुप्रद अनुभव यह भी रहा कि जहां यात्रा निविज्ञ सम्प्रद हुई वहीं माता का

स्थान बताने में लोगों ने रचि प्रदशित की। अनेकानेक स्थानों पर माताओं के मंदिर मुख्य सड़क मार्ग से अलग थे, स्थानीय महानुभावों से माता का स्थान पूछा तथा उनसे यह आग्रह करने पर कि माता का स्थान दुर्गम है, क्या आप हमें बतायेगे, अनेकानेक स्थानों पर क्पालु महानुभाव हमार साथ हो लिए, जिनमें एक तो मुसलमान बधु था, इस प्रकार माता के दर्शना में कोई कठिनाई नहीं आई।

### माँ के श्री-चरणों में प्रणाम

कुपुत्रो जायेत कवचिदपि कुमाता न भवति ।

‘पुर कुपुर भले ही हो सकता है, पर माता कुमाता नहीं हो सकती।’

माँ करुणामयी है, वात्सल्य से परिपूर्ण, सदैव स्नेहाशीष का वरदहस्त लिए, अबोध, अज्ञानी, असहाय, कर्तव्य पथ से भटके, क्रिकर्तव्य-विमूढ़ यह बालक, हे माँ तेरी शरण मे है। मे अज्ञानी, तेरी पूजा-अचना फैसे की जाती है, तेरी आराधना केसे हो, मै नहीं जानता। जानता हूँ तो केवल यह जानता हूँ कि मे आपका अबोधपुर हूँ और आप मुझे सन्मार्ग पर चलने की राह बताने वाली हो, हे ददी माँ, तुम्ह वारम्बार प्रणाम।

मेरे जैसा मूढ़-अज्ञानी तेरी क्या स्तुति कर सकता है, तेरी अपरम्पार गाथा को शब्दा मे क्या पिरो सकता है, यह तेरी रूपा, आशीर्वाद ही है कि तेरी प्रेरणा हुई, ट्रैट-फूट शब्दा मे यह कथानक लिखा, तर कई द्वारों की चौखट पर प्रणाम किया, तेग आशीर्वाद लिया, जैसा जाना, जेमा बताया, तेरे श्री चरणों मे अर्पित कर दिया। माँ तेरी माया अनन्त है, मै अज्ञानी क्या जानूँ, किन्तु तेरी दीन-वत्सलता ने मुझ अयोग्य-पुर झो आशीर्वाद दिया, यह पुष्प तेरे श्री-चरणों मे भेट कर सका, माँ मेरा प्रणाम स्वीकार करो।

आज तेरे बालक भटक रहे हैं। भोतिक्वाद के इस वातावरण मे वे अपने को, स्वयं को भी नहीं पहचान रहे हैं। हे जगज्जननी, हे माता, तू अपने भटके पुत्रों को सही राह दिखा। अपने पुत्रों को काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह, ईर्ष्या आदि पद्धरिपुओं से बचा, वे इन दुर्युणों से दूर रहें, आधि-व्याधि, मानसिक तनाव से दूर रह, व स्वस्थ रहे, सुखी रह, धन-धान्यपूर्ण हो, ऐसा वरद हस्त अपने पुत्रों पर रख, तुझसे यही प्रार्थना हे माँ, तेरे श्रीचरणों मे, मेरी यही कामना है।

आपस में सभी प्रेम से रहें, वैग्ननस्य की दीवारे ढह जाव, आपके श्री चरणों में सदेव ध्यान रहे, यही कामना है तुम्हारी कृपा दृष्टि सदा बनी रह, तरी अद्भुत कृपा निरात बनी रहे यही तेरे श्रीचरणों में मेरी प्रार्थना है।

माँ इस कथानक में जो कुछ हे वह तेरी कृपा का फल है, इसमें जो कुछ कमी हे वह मेरी है, उसके लिए मुझे क्षमा करना।

तेरे श्रीचरणों में सदा मेरा ध्यान रहे तू मुझे कभी भी सही रास्ते से भटकने न दे, यही तेरे श्री चरणों में इस अबोध बालक की प्रार्थना है।

माताओं का आख्यान लिखते समय अनेकानक कठिनाइयाँ भी आईं— बहुत सक्षिप्त में, डतना ही लिखना पर्याप्त है कि आद्याशक्ति जगत्‌जननी ने उस कठिनाई का स्वयं निराकरण किया-मार्गदर्शन दिया-स्याम के माध्यम से। ऐसी कृपालु माता के श्री चरणों में शत्-शत् प्रणाम।

### आभार

पारीक जाति का 'इतिहास' पारीक महापुरुष' पुस्तक के लिखने के पश्चात् स्वजातीय बन्धु कुलदेविया के स्थान एव स्वरूप के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करने हेतु निरन्तर सम्पर्क करने लगे; जबकि कुलदेविया के सम्बन्ध में तथ्यात्मक कोई जानकारी उपलब्ध नहीं थी। चूंकि पारीक समाज के सम्बन्ध में उपरोक्त दो ग्रन्थ मेरे द्वारा लिखे जा चुके थे, अतः स्वजातीय बन्धुर्मा का यह मानना स्वाभाविक ही था कि मेरे पास कुलदेविया के सम्बन्ध में भी यथेष्ठ जानकारी है जबकि मर पास पर्याप्त जानकारी नहीं थी, तथापि यह उत्कृष्टा निरन्तर बनी रही कि हमारी कुलदेविया के सम्बन्ध में समाज को जानकारी प्राप्त जावे। समस्या यह रही कि कुलदेविया के जो प्रचलित नाम है, उनमें अधिकांश नाम पोराणिक देविया के अनुसार नहीं है जबकि सभी माताय पौराणिक हैं। यह मातेश्वरी की कृपा ही रही कि एक दिन जब मैं बहुरा साहब गोपालनारायणजी के पास चला कर रहा था उन्होंने अनायास ही कहा भायाजी आपणी उत्पत्ति ब्रह्मा पुर ब्रह्मपि यशिष्ठजी से लिया है, तो आपणी कुलदेवी भी इतरी ही पुराणी होणी चायजे।' और यह था सूर कुलदेविया भी तथ्यपरक खोज का। इसी सूर के आधार पर मैं आगे बढ़ा। इस प्रकार कुलदेविया की जानकारी

प्राप्त करने में मेरी प्रेरणा के मुख्य स्रोत रहे, परम आदरणीय बहुरा साहब। माताओं का आशीर्वाद गहा— माताओं के स्थानों पर जाफर दर्शन किये और पोराणिक कथानको एवं माताओं के दर्शन के समय प्राप्त जानकारी के आधार पर माताओं का कथानक लिखा।

बहुग साहब ने पाण्डुलिपि को तो आद्योपान्त पढ़ा ही, साथ ही कपापूर्वक पुस्तक पर विद्वतापूर्ण भूमिका लिखकर मुझे स्नेहित आशीर्वाद भी दिया। उन्हे मेरा शत्-शत् नमन।

माननीय ब्रह्मोहनजी जावलिया, उदयपुर ने मुझे शुभाशीप देकर उत्साहित किया, बहुमूल्य सुझाव दिये, उनका मे हृदय से आभारी हूँ।

मे उन सभी विद्वान लेखकों का क्रणी हूँ, जिनके लेखों के अश इस पुस्तक मे साभार उद्भूत किये गये। गीताप्रेस, गोरखपुर द्वारा प्रकाशित ‘कल्याण’ का हृदय से आभार व्यक्त करता हूँ, जहा से मैंने माताओं के सम्बन्ध मे पोराणिक कथानक एवं अन्य सामग्री साभार ली है।

मे सरस्वतीस्वरूपा मेरी मातुश्री श्रीमती नारायणीदेवी एवं धर्मपत्नी श्रीमती मुश्शीला का भी आभारी हूँ जिन्होन मुझे माताआ के सम्बन्ध मे लोकाचार-विषयक जानकारी कराई। पुगवधु श्रीमती इन्दू, श्रीमती मधुलिमा, श्रीमती ज्योत्सना एवं पुत्री श्रीमती विजेयता, सुपुत्र चि अनित व कु सा चि क्रष्णकान्तजी का सहयोग भी सराहनीय रहा। इस लेखन काय के दौगन वकालत के काय से यदि मुझे मेरे सुपुत्र चि नेन्द्र एवं खण्ड्र मुक्त नहीं ऊंगते तो यह लेखन-कार्य सम्पन्न नहीं हो पाता, इसके लिए वे भी प्रशंसा एवं आशीर्वाद के पात्र है। लेखन के समय सुपौत्री कु नेहा, प्रियका, राधिमा, पोप्र रोहित, दोहिते ऊपि व विनय का भी सहयोग उत्तेजनीय है जिन्हे समयाभाव के मारण अनेकानेक बार मेरे सानिध्य एवं स्नेह से वचित रहना पड़ा। यहा सुपोत्र चि शोभित एवं मोहित का सहयोग विशेष रूप से उत्तेजनीय है जो माताआ के दशनार्थ जब भी मे गया, मेरे साथ ही रहे तथा उनकी जिज्ञासाओं से कड़ अनछुए प्रश्नों का उत्तर प्राप्त करने मे सहायता मिली।

श्री कचमसिह चौधरी एवं रामलालजी चौधरी एवं चि विनाद कमार

८४/हमारी कुलदेवियाँ

किया। एक्सोलेन्स कम्प्यूटर्स' के श्री वीरेन्द्र पारीक का भी मेरा आभारी हूँ, जिन्हाने इस पुस्तक मेरे संग्रहीत सामग्री को यथाशीघ्र कम्प्यूटरीकृत रूप प्रदान किया। प्रिन्टर्स' का भी मेरा आभारी हूँ, जिन्हाने यथाशीघ्र पुस्तक को मुद्रित किया।

अन्त मेरे चिन्हनीतजी पारीक का भी आभार व्यक्त करना अपना धर्म समझता हूँ, जिन्हाने पुस्तक के प्रथम पृष्ठ का नवनाभिराम चित्र बनाकर मुझे उपलब्ध कराया।

मैं अल्पज्ञानी हूँ, प्रस्तुत विषय पर मेरा तनिक भी अधिकार नहीं। सम्बंधित ग्रन्थों को यथासम्भव टटोल, तथा माताआ के दर्शन कर जैसा मैंने पढ़ा, देखा और सुना, सुविज्ञ श्रद्धालु भक्तों की सेवा में यह कृति रूप मेरे प्रस्तुत है। पुस्तक मेरे जो कुछ है, वह आद्याशक्ति भगवती माता का ही प्रसाद है, यह प्रसाद समाज को सादर समर्पित है।

चैत्र शुक्ला अष्टमी स २०५७  
११ अप्रैल सन् २०००

- रघुनाथ प्रसाद तिवारी 'उमड़'  
एफ-३७ ए, धीशा मार्ग  
बमीपार्क, जयपुर

## अम्बा : अम्बिका : बूढण :\* बृद्धेश्वरी माता

‘अम्बा’ शब्द माता का वाचक हे। वे देवी सबके द्वारा पूजित और बदित हैं तथा तीनों लोकों की माता हैं, इसलिए अम्बिका कहलाई।<sup>१</sup>

‘बृद्धेश्वरी’ मा अम्बिका एवं बूढण का विशेषण है, जिसके अनुसार यह माता ऋद्धि-सिद्ध में बढोतरी करती है।

अम्बा माता भय और सशय का नाश करने वाली, भक्तों के सभी मनोरथ पूर्ण करने वाली है। श्रीमाता अम्बिका ही वह शक्ति है, जो मनुष्यों की प्रार्थना सुनकर इच्छाएं पूरी करती है।<sup>२</sup>

### माता अम्बिका का प्राकटन्य

ब्रह्माजी द्वारा नारद को अम्बिका देवी के प्रगट होने का आख्यान<sup>३</sup> सुनाया जिसके अनुसार—

ब्रह्माजी ने कहा— ब्रह्मन्! देवशिरोमणे! तुम सदा समस्त जगत् के उपकार में लगे रहते हो। शिवतत्त्व का स्वरूप बड़ा ही उत्कृष्ट और अद्भुत है। जिस समय समस्त चराचर जगत् नष्ट हो गया था, सर्वत्र केवल अन्धकार ही अन्धकार था। न सूर्य दिखाई देते थे न चन्द्रमा। अन्यान्य ग्रहों ओर नक्षत्रों का भी पता नहीं था। न दिन होता था न रात, अग्नि, पृथ्वी, वायु और जल की भी सत्ता नहीं थी। प्रधान तत्त्व (अव्याकृत प्रकृति) से रहित सूना आकाशमात्र शेष था, दूसरे किसी तेज की उपलब्धि नहीं होती थी। अद्वृष्ट आदि का भी

\* स्कन्दपुराण म अम्बा और बृद्धा का एक कथानक आया है जिसके अनुमार ये दानों बहिन धीं। प्रतापी नरय चमत्कार न उनके लिए कैलाश शिखर के समान ऊचा मंदिर बनवाया।

तबस लकर उस महान् अम्बुजशाली क्षत्र में वे दानों अम्बा बृद्धा के नाम से प्रसिद्ध हुईं।

(प ८६)

१ कल्प्याण— सक्षिप्त ब्रह्मवैवर्त पुराणाक— वर्ष ३३ (१९६३) पृ २३४-३५

२ परिचयी भारत की यात्रा ल कर्नल जम्स टौड, अनु गापाल नारायण बहुरा, पृ ५४१

३ सक्षिप्त शिवपुराण गीताप्रस गारखपुर पृ ८६

अस्तित्व नहीं था। शब्द और स्पर्श भी साथ छोड़ चुके थे। गन्ध और रूप की भी अभिव्यक्ति नहीं होती थी। इस का भी अभाव हो गया था। दिशाओं का भी भान नहीं होता था। इस प्रकार सब आर निरन्तर सूचीभेद घोर अन्धकार फेला हुआ था। उस समय 'तत्सद्ब्रह्म' इस श्रुति में जो 'सत्' सुना जाता है, एकमात्र वही शेष था। जब 'यह', 'वह', 'ऐसा', 'जो' इत्यादि रूप से निर्दिष्ट होने वाला भावाभावात्मक जगत् नहीं था, जिसे योगीजन अपने हृदयाकाश के भीतर निरन्तर देखते हैं। वह सत्तत्व मन का विषय नहीं है। वाणी की भी वहा तक कभी पहुंच नहीं होती। वह नाम तथा रूप-रण से भी शून्य है। वह न स्थूल है न कृश, न हस्त है न दीर्घ तथा न लघु है न गुरु। उसमें न कभी वृद्धि होती है, न हास। श्रुति भी उसके विषय में 'चक्रित भाव से है' इतना ही कहती है, अर्थात् उसकी सत्तामात्र का ही निरूपण कर पाती है, उसका कोई विशेष विवरण देने में असमर्थ हो जाती है। वह सत्य, ज्ञानस्वरूप, अनन्त, परमानन्दमय, परम ज्योति स्वरूप अप्रमेय, आधाररहित, निर्विकार, निराकार निर्गुण योगगम्य, सर्वव्यापी सबका एकमात्र कारण, निर्विकल्प, निरारम्भ, मायाशून्य, उपद्रवरहित अद्वितीय, अनादि अनन्त, सकोच-विकास से शून्य तथा चिन्मय है।

जिस परब्रह्म के विषय में ज्ञान और अज्ञान से पूर्ण उक्तियों द्वारा इस प्रभार (ऊपर बताये अनुसार) विकल्प किय जाते हैं, उसने कुछ काल के बाद (सृष्टि का समय आने पर) द्वितीय की इच्छा प्रकट की— उसके भीतर एक से अनेक होने का सकल्प उदित हुआ। तब उस निराकार परमात्मा ने अपनी लीला-शक्ति से अपने लिए मूर्ति (आकार) की कल्पना की। वह मूर्ति सम्पूर्ण ऐश्वर्य-गुणों से सम्पन्न, सर्वज्ञानमयी, शुभस्वरूपा, सर्वव्यापिनी, सर्वरूपा, सर्वदर्शिनी, सर्वमारिणी, सबकी एकमात्र वन्दनीया सर्वाद्या, सब कुछ देने वाली और सम्पूर्ण संस्कृतियों का केन्द्र थी। उस शुद्धरूपिणी ईश्वर-मूर्ति की कल्पना करके वह अद्वितीय, अनादि, अनन्त, सर्वप्रकाशक, चिन्मय, सर्वव्यापी और अविनाशी परब्रह्म अन्तर्हित हो गया। जो मूर्तिरहित परम ब्रह्म है, उसी की मूर्ति (चिन्मय आकार) भगवान् सदाशिव है। अर्वाचीन और प्राचीन विद्वान् उहीं का ईश्वर कहते हैं। उस समय एकान्ती रहकर स्वेच्छानुसार विहार करने वाले उन सदाशिव ने अपने विग्रह से स्वयं ही एक स्वरूपभूता शक्ति की

सृष्टि की, जो उनके अपने श्रीआग से कभी अलग होने वाली नहीं थी। उस पराशक्ति को प्रधान प्रकृति, गुणवती, माया, बुद्धितत्त्व की जननी तथा विकार रहित बताया गया है। वह शक्ति अम्बिका नहीं गयी है। उसी को प्रकृति, सर्वेश्वरी, प्रिदेवजननी, नित्या और मूलमारण भी कहते हैं। सदाशिव द्वारा प्रकट की गई उस शक्ति की आठ भुजाएँ हैं। उस शुभलक्षणा देवी के मुख की शाभा विचित्र है। वह अकेली ही अपने मुखमण्डल में सदा एक सहस्र चन्द्रमाओं की काति धारण करती है। नाना प्रकार के आभूषण उसके श्रीआगों की शोभा बढ़ाते हैं। वह देवी नाना प्रकार की गतियों से सम्पन्न है और अनेक प्रकार के अस्त्र-शस्त्र धारण करती है। उसके खुले हुए नेत्र खिले हुए कमल के समान जान पड़ते हैं। वह अचिन्त्य तेज से जगमगाती है। वह सबकी योनि है और सदा उद्यमशील रहती है। एकाकिनी होने पर भी वह माया स्योगवशात् अनेक हो जाती है।

### अम्बा-बृद्धा (बूढ़ण)– पीराणिक आख्यान <sup>१</sup>

अम्बा-बृद्धा दो बहिने हैं। स्कन्द पुराण के नागर खण्ड में ऐसा कथानक आया है कि पुराने समय में हाटकेश्वर क्षेत्र में महाराज चमत्कार एक धर्मप्राण राजा हुए हैं उनके द्वारा श्रद्धापूर्वक वहा चमत्कारी देवी की स्थापना की गई थी। कौमारब्रत धारण करने वाली उन्हीं देवी ने लाखों मायारूप धारण करने वाले महिपासुग का वध किया था। महात्मा राजा चमत्कार ने जब चमत्कारपुर का निर्माण किया उस समय नगर की तथा उस नगर में निवास करने वाले समस्त ब्राह्मणों की रक्षा के लिए भक्तिभावित चित्त से चमत्कारी देवी को स्थापित किया था।

स्वामि कार्तिकेय ने तारकासुर का वध करके अपनी शक्ति को उसी चमत्कार नामक श्रेष्ठ नगर में स्थापित किया, जिससे रक्त-शृग पर्वत अत्यन्त दृढ़ हो गया। उसके बाद उन्होंने प्रसन्न होकर अम्बा बृद्धा, आभ्रा, माहित्या और चमत्कारी— इन चार देवियों से कहा— ‘आप सब मिलकर इस श्रेष्ठ पर्वत को सुरक्षित बनाये रखें, जिससे यह प्रलयकाल में भी अपने स्थान से विचलित न हो। यह उत्तम नगर सदा मेरे नाम से प्रसिद्ध हो और यहा के

८८/हमारी कुलदेवियाँ

सब ब्राह्मण सदा आप चारों देवियों को पूजा देगे।' स्वामी कात्तिकियजी की इस बात से प्रसन्न होकर उन देवियों ने 'बहुत अच्छा' कहकर अपने त्रिशूल का अग्रभाग लगाकर उस पर्वत को सब ओर से सुदृढ़ कर दिया।

अम्बा वृद्धा के द्वारा चमत्कारपुर नगर की रक्षा का वर्णन ऊपर आया है। अम्बा वृद्धा देवी जिस भगवती की पूजा करती थी उस कौमार्यव्रत धारण करने वाली भगवती आद्याशक्ति की आराधना में वे सदैव सलग्र रहकर उसी की ज्योति में लीन हो गई।

अत अम्बा वृद्धा महाराजा चमत्कार की पुत्रिया आदिशक्ति अम्बा में भक्तिभाव में विलीन होने के कारण उन्हीं अम्बा माता के रूप में पूजित हो गई।

### जगत म माता अम्बा देवी का मंदिर

उदयपुर से दक्षिण-पूर्व में (झौगरपुर की सीमा से मिले हुए मेवाड़ के छप्पन जिले का जगत गाव) स्थित जगत मे अम्बा माता का अति प्राचीन मंदिर अवस्थित है। इस माता को अम्बा देवी कहते हैं। यह स्थान पुणतत्त्व में दृष्टि से एक अनूठा स्थान है तथा दसवीं सदी के प्रारम्भ का है। मंदिर की दीवारों पर भी माता की मूर्तियाँ हैं तथा दक्षिण दिशा को देखती चामुण्डिका माता की मूर्ति है। द्वार के पास सप्तमातृकाएँ हैं जो कि मुख्य मंदिर से पूर्व की ओर लगभग पचास गज की दूरी पर हैं। जगत का अम्बा देवी का मंदिर मेवाड़ के गुहिल शासको द्वारा पूजित रहा है तथा उन्हने समय समय पर माता के भेंट चढ़ाई है।

महाराजा सामन्तसिंहदेव द्वारा माता के मंदिर में स्वर्ण कलश फाल्गुन सुदी ७ सम्वत् १२२८ (११७२ई) मे भट करन का शिलालेख है। एक अन्य शिलालेख सम्वत् १२७७ (१२२०ई), सिंहदेव के समय का है। सम्वत् १३०६ (१२४९ई) के एक और शिलालेख से ज्ञात होता है कि जयसिंहदेव द्वारा माता के मंदिर में स्वर्ण-दण्ड चढ़ाया गया था।

विराट— यहा सती के दाय पाव की अगुलिया गिरी थी। यहा सती को अम्बिका तथा शिव का 'अमृत' की सना दी गई है। जयपुर से उत्तर की ओर लगभग ६४ कि. मी. दूर बैराठ ग्राम म माता का यह शक्तिपीठ स्थित है।

## आमेर की अम्बा माता<sup>१</sup>—

आमेर के नामकरण के सम्बन्ध में अनेकानेक मत है, उनमें से एक मत यह भी है कि अम्बा माता के नाम से ही इसका नाम आमेर पड़ा हो, जो आगे चलकर अम्बापुर से आम्बेर बन गया हो। आमेर के मध्य में स्थित अम्बा के पति अम्बिकेश्वर महादेव का मंदिर है। आमेर में कछवाहो के पहले मीणों का आधिपत्य था, वे माता के अम्बा स्वरूप की पूजा करते थे, जिसे वे 'धाटा राणी' भी कहते थे। 'इस बात की पुष्टि किसी सीमा तक दसवी शताब्दी के एक मूर्ति फलक से भी होती है जो किसी प्राचीन द्वार का टुकड़ा है और जिसे शीतला माता की मूर्ति मानकर पूजा जाता है। सभवत यही शीतला माता अम्बा माता थी। जिसके पीछे आमेर को अम्बावती कहा गया।' आमेर के स्थानीय लोग अम्बा माता का मंदिर पूछने पर शीतला माता का मंदिर ही बताते हैं।

देश में अम्बा माता के अनेकानेक स्थानों पर मंदिर है, जिनमें से कुछ का वृत्तान्त यहा दिया जा रहा है—

- १ द्वादश ज्योतिलिंग मल्लिकार्जुन मंदिर से पश्चिम में लगभग दो मील दूरी पर सती के देह का ग्रीवा भाग जहाँ गिरा वहाँ भ्रमराम्बा देवी का मंदिर है। यह ५१ शक्तिपीठों में से एक है। अम्बाजी की मूर्ति भव्य है। आसपास प्राचीन मठादि के अवशेष हैं।<sup>२</sup>
- २ दिघवारा (सासन)– स्टेशन से लगभग ५ कि.मी. पश्चिमी गगा तट पर अम्बाजी का भव्य मंदिर है। चैत्र और आश्विन के नवरात्रों में यहा मेला भरता है तथा दूर-दूर के यात्री जात-जहूले उतारने आते हैं।
- ३ अम्बाजी का एक मंदिर आनर्त (गुजरात) में है।
- ४ गुजरात के आरामुरी स्थान पर अम्बाजी का मंदिर है। यहा मूर्ति नहीं अपितु देवीजी का यत्र है जिस पर कपड़े पहनाये गये हैं। भक्त देवीजी की प्रार्थना कर अपनी मनोकामना की प्राप्ति करते हैं। इस सम्बन्ध में माताश्री का विस्तृत विवरण निम्न प्रकार है—<sup>३</sup>

१ राजस्थान परिका, नगर परिकामा दिनांक ११५८९

२ कल्याण- तीर्थांक वर्ष ३१ (१९५७) स १ पृ ३३१ ३३२

३ कल्याण- शक्ति अक वर्ष १ (१९३४) पृ ६४७

## आरासुरी अम्बिकाजी

पुराणों में लिखा है कि अपने पिता दक्ष के यज्ञ में शिवजी को न बुलाने तथा उनका स्थान भी निर्धारित न करने और पिता द्वारा पुत्री का अपमान करने पर सती ने अपने को अपमानित महसूस किया तथा योगाग्रि में जल गई। आशुतोष भगवान को जब इसमीं जानकारी हुई तो उनका स्वरूप प्रलयकारी हो गया और वे सती का शव लेकर विचरण करने लगे। भगवान् विष्णु ने अपने सुदर्शन चर्क से सती के अगों को काटना प्रारम्भ किया। श्री विष्णु भगवान् के चक्र से कट कटकर दवी की देह के पृथक्-पृथक् अवयव भूतल पर स्थान-स्थान पर गिरे ओर गिरते ही वे पापाणमय हो गये। भूतल के ये स्थान महातीर्थ और मुक्तिक्षेत्र हैं। ये सिद्धपीठ कहलाते हैं और देवताओं के लिए भी दुर्लभ प्रदेश हैं। अर्बुदारण्य प्रदेश के आरासुर (आरासन) नाम के रमणीय पर्वत शिखर पर श्रीअम्बिकाजी का भुवनमोहन स्थान विद्यमान है। यहा सती के हृदय का एक भाग गिरा था। अतएव उस अग की पूजा अब भी होती है।

दिल्ली से अहमदाबाद को जाने वाली वी वी सी आई रेल्वे लाइन पर आबूरोड एक स्टेशन है। वहासे आरासुर तक करीब छौदह मील का रास्ता है। यह रास्ता बड़ ही सुन्दर पने जगलो म होकर जाता है। रास्ते मे नाना प्रकार के पुष्पों की सुगन्ध और छाट-बड़े झरनों के सुन्दर दृश्य मन को ऐसा मुथ कर देते हैं कि पदल चलने वाले यात्री को मार्ग के कष्ट का कुछ भी अनुभव नहीं होता। शिखर पर पहुचते ही यात्री वहा के अलौकिक दृश्य को देखकर भावोमत्त हो जाते हैं। मार्ग मे गगनचुम्बी पर्वतश्रेणी, लता पत्र, पुष्प-विचित्रा, बनभूमि, छोटे-बड़े झरनों का चक्र प्रवाह, श्वापदो से भरा हुआ गहन कानन, शास्य-श्यामल कपिक्षेत्र, ताल-तमाल-नारिकेल-परिवेष्टित ग्राम, साधु-सन्यासियों के योगाश्रम प्रभृति प्राकृतिक दृश्य यात्रियों के मन को आनन्द से आप्लावित कर देते हैं। छोटे-छोटे लड़के भी श्रीमाताजी की कृपा से पैदल आनन्दपूर्वक छेलते-कूदते चले जाते हैं। मार्ग मे बातकों की जय अम्बे, जय अम्बे की ध्वनि बहुत ही प्यारी लगती है। आबूरोड स्टेशन से तीन मील की दूरी पर एक तेलिया नामक नदी मिलती है। जिसको तेल लगाना या तेल का बना हुआ पदार्थ खाना होता है, वह यही लगा, खा लेता है,

क्योंकि इसके आगे तेल का व्यवहार विल्कुल ही नहीं होता। बारह मील की दूरी पर पर्वत की तलहटी में बसे हुए घर मिलते हैं, जिसे श्री अम्बिकाजी का नगर कहते हैं। नगर में प्रवेश करने पर श्रीहनुमान मंदिर तथा भैरव मंदिर मिलता है।

आरासुर पर्वत के सफेद होने के कारण श्री अम्बिकाजी 'धोळा गढ़वाली' माता के नाम से भी पुकारी जाती है। भगवतीजी का मंदिर सगमरमर पत्थर से बना हुआ है और बहुत ही प्राचीन है। मंदिर के चारों ओर धनी पुरुषों ने अपनी-अपनी कामनासिद्धि के उपलक्ष्य में लाखों रूपये व्यय करके धर्मशालाएं बनवा दी हैं। धर्मशालाओं में उनके मालिकों की ओर से यात्रियों के लिए पलग, बिछौना, बरतन वगैरह सब प्रकार की सुविधा रहती है।

गुजरात प्रान्तभर के बच्चों का मुण्डन सस्कार प्रायः यहाँ ही होता है। कहते हैं कि श्रीकृष्णभगवान् का मुण्डन सस्कार भी यहीं हुआ था। गुजरात में कदाचित् ही कोई ग्राम होगा जहाँ इस पीठ के उपासक न हो। उपासकों में केवल हिन्दू ही नहीं, बल्कि पारसी, जैन और मुसलमान आदि भी हैं। इस स्थान का इतना बड़ा माहात्म्य है कि प्रतिवर्ष लाखों यात्री दूर-दूर से श्रीअम्बा माता के दर्शन के लिए आते हैं, सहस्रों मनुष्यों की कामनाएं माताजी की कृपा से पूरी हो जाती हैं। पुत्रहीनों को पुत्र की प्राप्ति होती है, धनहीनों को धन की, रोगियों को स्वास्थ्य की प्राप्ति होती है। मनौती करने वाले जब मनोकामना पूरी होती है, तो वह जब तक श्रीमाताजी का दर्शन नहीं कर लेता, तब तक कोई नियम ले लेता है और प्राण-पण से उसका पालन करता है।

मंदिर में जिनका पूजन होता है, वे महादेवजी की पत्नी, हिमाचल और मैनाजी की पुत्री दुगदिवी हैं। इनको 'भवानी' अर्थात् काम करने की शक्ति या 'अम्बा' यानी जगत् की माता भी कहते हैं, यह मंदिर बहुत प्राचीन है। आगन में जो चौके जड़े हुए हैं, वे इतने घिस गये हैं कि उन्हे देखकर सहज ही मालूम हो जाता है कि मंदिर कितना पुराना है और कितने लोग माताजी के दर्शन करने आते हैं।

माताजी का दर्शन सबरे ८ बजे से लेकर १२ बजे तक होता है। भोजन का थाल रखने के बाद उन्होंने जाता है और किंतु शाम के मूर्यग्रन्थ के समय

बड़े ठाठ के साथ आरती होती है। उस समय बहुत भीड़ हाती है। मंदिर में बशुमार छत्र और सभामण्डप में बहुत से घण्टे लटकते हुए दिखाई देते हैं, जिन्हें श्रद्धालु यात्रिया ने लगवाया है। आरती के समय दर्शनार्थी इन सब घण्टा को बजाते हुए ध्यानमग्न हो जाते हैं।

माताजी को तीनों समय तीन पहर की पोशाक पहनायी जाती है। इससे वे सबैरे बाला, दोपहर को युवती और शाम को वृद्धा के रूप में दिखाई देती हैं। इसी से कहा गया है—

जैसे दिल से देख लो, देखो वैसा रूप।  
ब्रह्मरूप से देखकर देखो ब्रह्मस्वरूप॥

वास्तव में माताजी की कोई आकृति नहीं है, केवल एक बीसायन्त्र है, जो शृणार की विभिन्नताओं के कारण ऐसा दिखाई देता है।

जब तक यात्री माताजी के दरबार में रहते हैं, तब तक खाने, जलाने और सिर में लगाने के काम में तेल की जगह धी का ही व्यवहार किया जाता है। पति पत्नी साथ आने पर भी यहा जब तक रहते हैं, ब्रह्मचर्य का पालन करते हैं।

माताजी के मंदिर के पास एक विशाल चौक है, इसे चाचर कहते हैं। इस चाचर में रात को एक बहुत बड़ा तवा धी से भरकर जलाया जाता है, इसे भी चाचर कहते हैं।

रजस्वला स्त्री और सूतक लगे हुए लोग माताजी के चाचर में नहीं जा सकते। ऐसे लोगों के रहने के लिए अलग धर्मशालाएं बनी हैं। यदि कोई रजस्वला स्त्री चाचर में चली जाती है तो रात के समय जलते हुए धी में घड़ाका होने लगता है और उसमें से ज्वाला और धुआ निकलने लगता है, जब रजस्वला स्त्री वहाँ से चली जाती है तब ये उपद्रव शात हो जाते हैं। इसी प्रकार दिन के समय माताजी के मंदिर पर लगे हुए तीनों त्रिशूल ढोलने लगते हैं।

माताजी को थाल रखने वाले को कोठारी से पहले ही आज्ञापत्र ले लेना पड़ता है। आज्ञापत्र मिल जाने पर पुजारी एक चादी का बरतन दे देता

है और उसी में रखकर भोग की सामग्री एक निश्चित समय पर ली जाती है। भोग लगाने के समय ग्राहण लोग शोला (एक प्रकार का पवित्र वस्त्र) पहनकर माताजी का पादपूजन कर सकते हैं, और पास जाकर दर्शन का सकते हैं, क्योंकि उस समय भीड़ नहीं रहती। यात्री एक, तीन, पाच या सात दिन लगातार रह सकते हैं। सबै आठ घंटे की आरती के बाद आगूरोड़ की ओर वापस जाते हैं, जिनका जल्दी होती है वे पिछली रात को ही निकल जाते हैं।

माताजी के चाचर में हिन्दू के सिवा अन्य जाति का काई आदमी नहीं जा सकता। कुछ समय पूछ एक यूरोपियन सज्जन आये थे। कहते हैं कि रोके जाने पर भी उन्हाने माताजी की परीक्षा के लिए चाचर पर जाना चाहा। वे सीढ़ियों पर चढ़ ही रहे थे कि अकस्मात् ऐसे गिरे मानो किसी ने उठाकर नीचे फेक दिया हो। उनको बड़ा आश्चर्य हुआ। तम्हे-ऐस अन्यधर्मी सज्जनों के दूर से दर्शन की सुविधा के लिए सामने चाचर से दूर एक ऊची बैठक बना दी गई है, वहां से ये लोग दर्शन कर सकते हैं।

साधारणत श्रीअम्बाजी के यहा प्रत्येक पूर्णिमा को मेला लगता है, परन्तु भाद्रपद, आश्विन, कार्तिक और चैत्र की पूर्णिमा को विशेष रूप से भारी मेला लगता है।

माताजी के गढ़ के भीतर ही एक गहरी बाबड़ी है, उसी से पीने का पानी लिया जाता है। इसे लोग 'कलोधर वाव' कहते हैं। अब धर्मशालाओं में भी कुएं बन गये हैं।

मंदिर के पष्ठभाग की ओर थोड़ी दूर पर पवित्र मधुग जल का एक मानसरोवर है। मानसरोवर के दक्षिण पार्श्व म स्थित श्रीअजाई माता है। अजाई माता श्रीजगदम्बा अम्बिका जी की बहिन कहलाती है।

यहां से एक फोस पर एक छोटी-सी पहाड़ी पर 'गब्बर' (गहर) नाम का स्थान है। वहां जाने के लिए भी नाके पर टैक्स देकर रसीद लनी पड़ती है। उसका चढ़ाव मुश्किल होने के कारण यह कहावत प्रसिद्ध हो गई है कि—

‘जो जाय गब्बर वह हो जब्बर।’

गब्बर पर जाने का मार्ग बहुत ही कठिन है परन्तु श्रद्धावल से बहुत छोटे-छोटे बच्चे भी उस पर चढ़ जाते हैं।

उपर्युक्त गव्वर शिखर के विषय में एक कथा प्रसिद्ध है। कहते हैं पुरातन काल में एक ग्वाल की गायों में माताजी की गाय भी अज्ञात रूप से जगल में चरने जाती थी। बहुत दिनों तक चराई नहीं मिलने के कारण एक दिन सायकाल को वह ग्वाला उस गाय के पीछे-पीछे उसके मालिक के घर चला। वह गाय के साथ एक सुन्दर मंदिर के पास आ पहुंचा। मंदिर में एक दिव्य रमणी सुन्दर बस्त्र पहने झूले पर झूल रही थी। ग्वाले के चराई माणे पर उसने कुछ जौ उसके कम्बल में डाल दिये। ग्वाला असतुष्ट हाकर जौ बाहर फक्कर चलता बना। घर पहुंचने पर उसने सारा वृत्तान्त अपनी स्त्री से कहा। स्त्री बुद्धिमती थी ग्वाले की बात सुनकर वह चकित हो गई। उसने कम्बल का वह कोना दिखलाने के लिए कहा जिसमें जौ डाला गया था। उसे देखते ही उनके आश्चर्य का ठिकाना न रहा, क्याकि कम्बल में जो आठ-दस जौ के दाने बच रहे थे वह सोने के थे। पीछे ग्वाले ने बहुतेरा दूढ़ा, न तो उसे वह मंदिर ही मिला और न ही दिव्य रमणी ही दिखाई पड़ी। बेचारा पछताकर रह गया।

‘गव्वर’ पर चढ़ने के रास्ते पर एक मील के बाद एक गुफा आती है। उसे माई का द्वार कहते हैं। सुनते हैं कि इसी द्वार से भगवती के मंदिर में जाना होता था। पर्वत के भीतर देवी का एक मंदिर है, उसमें देवी का झूला है, सुनते हैं कि भक्तों को कभी-कभी आज भी देवी के झूले की ध्वनि सुन पड़ती है। द्वार तो सत्ययुग में ही बद हो गया था ऐसी जनश्रुति है।

‘गव्वर’ के शिखर पर तीन स्थान हैं। एक माता के खेलने की जगह। यहा पत्थर पर पैर बीं छोटी-छोटी अगुलियों के चिह्न दीख पड़ते हैं। दूसरा स्थान पारस पीपला है, और तीसरा श्रीकृष्ण भगवान् का ज्वारा है, इसी स्थान पर यशोदा जी ने श्रीकृष्ण जी का मुण्डन करवाया था।

श्री अम्बा माताजी के चमत्कार की अनेक कथाएँ प्रसिद्ध हैं। स १९८७ विक्रमी के भाद्रपद की पूर्णिमा की यात्रा में आते समय सीनोर ग्राम के पट्टीदार का एक तीन-चार वर्ष का लड़का रात के समय राह स्टेशन के आगे चलती गाड़ी से गिर गया। जबीर खींचकर गाड़ी खड़ी कराकर रात्रि में खाजने से उसका कुछ भी पता नहीं लगा। प्रात काल वह लड़का रेल्वे लाइन से कुछ दूरी पर रोता हुआ पाया गया। अपनी माता को देखने उसने रोते हुए कहा

कि रात भर तो तू मेरे पास वैठी रही, अभी कहा चली गई थी? लड़के की बात सुनकर सबको मालूम हो गया कि श्रीमाताजी ने ही उसकी रक्षा की थी। इस प्रकार के चमत्कार यहा आये दिन होते ही रहते हैं।

ऐतिहासिक दृष्टि से भी इस पीठ का महत्व कुछ कम नहीं है। प्रात स्मरणीय वीरवर मेवाड़ाधिपति महाराणा प्रताप, जब अपनी टेक पर अड़े अस्त्रवर से युद्ध करते बन-बन भ्रमण करते रहते थे, उस समय की बात है। उन्होंने अपनी रानी ईंडर नोश की कन्या से एक निश्चित तिथि को ईंडर म मिलने का वादा कर लिया था। अकबर को इसकी खबर लग गयी थी, और उसने ईंडर पर उनको पकड़ने के लिए घेरा भी डलवा दिया था। महाराणा अनेक वाधाओं के कारण निश्चित तिथि की सध्या तक अपना वादा पूरा नहीं कर सके। इससे वह बड़े चित्तित हुए। उधर बादशाह के द्वारा ईंडर पर घेरा डालने की बात भी उन्हें मालूम हो गई थी। महाराणा धर्मसकट मे थे। घोर अधियारी रात्रि थी और मूसलाधार वृष्टि हो रही थी, बड़े बड़े नदी नाले उमड़ रहे थे। पहाड़ी मार्ग द्वारा मेवाड़ से पचास कोस दूर ईंडर को उसी रात पहुचना था। महाराणा ने अपने अश्व चेटक को बढ़ाया और अनेक सकटों का सामना करते हुए साध्रमती (सावरमती) नदी के तीर पर पहुचे। नदी उमड़ी हुई बड़े ही तीव्र बैग से बह रही थी। चेटक नदी म उतरा और सर्प की भाति आगे बढ़ा, परन्तु मझधार में जाते ही एक बहते हुए पेड़ की डाल में उसकी टांग अड़ गयी और वह ढूँबने लगा। तब शक्तिपूजक महाराणा ने बड़े ही भक्तिभाव से श्रीअम्बा माता का स्मरण किया और कहा कि हे भगवती! यदि मैं रानी स मिलनर और बादशाह के घेरे को तोड़कर लोटा तो अपनी शक्तिरूपी तलवार तेरी चरणों मे भेट कर दूगा।' बस, क्या था, उसी क्षण जगदम्बा की कृपा से अश्व का पैर छूट गया और रानी से मिलकर बादशाह का घेरा तोड़कर जब लोटे तो श्रीअम्बाजी के दर्शन के लिए आये और उन्होंने अपनी तलवार भगवती के चरणों मे अर्पित की। यह तलवार आज भी मातृमंदिर मे विद्यमान है और उसकी नित्य पूजा होती है।

कहा जाता है कि राजा भीम की राजधानी कुन्दनपुर यही थी। श्रीविमणीजी

कुछ शताब्दियों पहले मदसोर के सेठ अखेरामजी व्यापारी बिसानगर वैश्य का जहाज रात्रि के समय तूफान आने के कारण समुद्र में डूबने लगा। तब सेठजी ने अम्बाजी को याद किया और अपनी सम्पत्ति का आधा हिस्सा जगदम्बा के दरबार में अर्पण करने का सक्रिय किया। इतना करते ही भगवती ने त्रिशूल द्वारा जहाज को उठाकर तुरन्त बिनारे पर लगा दिया और उसी रात को पुजारी को यह वृत्तान्त सूचित कर पोशाक बदल देने की आज्ञा दी। पुजारी ने मदिर खोलकर देखा तो माताजी की पोशाक भीग रही थी और त्रिशूल कुछ टेढ़ा हो रहा था। कपड़े निचोड़कर आचमन लेने पर जल खारा लगा। आबू के पास खारा पानी कहा से आता? माताजी के दिये हुए स्वप्न और प्रत्यक्ष की इस घटना की खबर दाता महाराज को दी गई। दाता महाराज वहां आये। इक्कीस दिनों बाद सेठ अखेराम वहां आ पहुंच और उन्होंने सम्पत्ति का आधा भाग माता की संवा में अर्पण किया। हवन कराकर माताजी को एक हीरा भेट किया जो अभी तक शृंगार में चढ़ता है और उनकी ओर से अखण्ड धृतदीप प्रारम्भ किया गया, जो उनके वशजों द्वारा अब तक जारी है।

श्रीअम्बाजी से करीब तीन मील दूर उदुम्बर वन है, वहां भगवान् कोटीश्वर शक्ति का मंदिर है। यही से सरस्वती नदी निकलती है, जो सिद्धपुर पाटण होते हुए कच्छ के मैदान में लीन होती है। कोटीश्वर महादेव के मंदिर के समीप पहाड़ से जो झरना निकलता है वह पहले एक कुण्ड में आता है, इस कोटीश्वरकुण्ड कहते हैं और फिर यहां से गोमुखद्वारा बाहर निकलता है। कोटीश्वर के पास श्रीमधुमूदन का मंदिर है, यही श्रीतण्डी-ऋषि का आश्रम है। यहां दान-पुण्य-हवनादि का बड़ा माहात्म्य पुराणों में वर्णित है। पूर्वजन्म के भील और भीलनी इसी कोटीश्वर की आराधना से दूसरे जन्म में नल और दमयन्ती नाम से उत्पन्न हुए थे। श्रीअम्बाजी से कोटीश्वर जान के लिए मोटर सर्विस है। रास्ते में विमलशाह के बनवाये हुए जैन मंदिर है, जिन्हे कुभारियाजी कहते हैं। ये मंदिर आबू के देलवाड़े के जैन मंदिरों से करीब पचीस कर्प पूर्व निर्मित हुए थे। इनमें भारतीय शिल्पकला के उत्तम नमूने देखने में आते हैं। अभी-अभी इन मंदिरों की मरम्मत में अहमदाबाद के जैनसंघ ने तीन लाख रुपये खर्च किये

है। इससे इनकी उत्कृष्टता का सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है। कुभारियाजी के मंदिर तथा आबू के देलवाडे के भटिरों के बनवाने में जो द्रव्य लगा था, वह श्रीअम्बाजी की कृपा से विमलशाह को गहर के निरुटवर्ती भण्डारा नामक शिखर से मिला था। इसी के उपलक्ष्य में जैन मंदिर कुभारिया में भगवती की मूर्ति पधरायी गयी है।

माताजी श्री अम्बिकाजी से राजधानी दाताभवानगढ़ १४ मील दूर है। इस रास्ते में तीन मील पर पत्थर का एक बड़ा भारी त्रिशूल आता है। इस स्थान पर यात्री एक श्रीफल चढ़ाकर आगे बढ़ते हैं। यह बहुत ही विकट स्थान है।

श्री अम्बिकाजी से ईंडर के गढ़ की ओर १२ मील तक पैदल जाने पर एक पहाड़ आता है, इसे चामुण्डा की टेकरी कहते हैं। यहाँ एक पाच मील के लगभग बड़े विस्तार वाला सरोवर है।

यहाँ चामुण्डा माता के मंदिर में जाने का द्वारा है। यह मंदिर बहुत ही छोटा और पुराना है।

अम्बिकाजी का यह प्रसिद्ध और जाग्रत तीर्थस्थान दाता स्टट की हुकूमत में है। दातानरश परमारबश के क्षत्रिय हैं। ये शक्तप्रवतक श्रीमान् विक्रमादित्य, विद्याविलासी महाराज भोज और वीरवर जगदेव परमार के वशधर हैं तथा श्रीअम्बा भवानी के परम उपासक हैं। वर्तमान दाता नरेन्द्र श्रीमान् भवानीसिंहजी बहादुर अपने पूर्वपुरुषों के सदृश वीर, विद्यानुरागी, अत्यन्त उदार-हृदय तथा श्री जगदम्बा माता के कपा-पात्र परम-भक्त हैं। यात्रियों के कष्टनिवारणार्थ आप सदा तैयार रहते हैं। यहाँ भीलों की विशेष बस्तिया होने पर भी यात्री निर्भय होकर चलते हैं, आभूषणों से लदी स्त्रिया घने जगल के मार्ग में अकेली यात्रा कर सकती हैं। रास्ते में ऐसा कड़ा राज्यप्रबन्ध है कि यदि कोई यात्री रास्ते में कोई वस्तु भूल जाय तो वह उसे उसके ढेरे पर ही मिल जायेगी।

यहा यात्रियों की सुविधा के लिए राज्य की ओर से एक डिस्पेलरी भी खोली गयी है। पोस्टऑफिस जा भी प्रबन्ध हो गया है। राज्य की ओर से टेलीफोन का भी प्रबन्ध है, उसका प्रयोग प्रजा और यात्री दोनों के लिए अवाधित कर दिया गया है। ऐसे धर्मप्रिय नरेन्द्र इस धर्मस्थान के प्रबन्धक

हे वह सोने मे सुगन्ध है। जगदम्बा इहें दीर्घयु तथा धर्मकार्य मे विशेष उत्साह प्रदान करे, यही प्रार्थना है।

**बड़ौदा-** बडोदा नगर मे मण्डवी के निकट अम्बा माता की सुन्दर प्रभावशालिनी मूर्ति है। वहा जाता है कि सप्राट विक्रमादित्य की इष्टदेवी यही अम्बा माता हरसिद्धि थी।

**कुण्डलपुर (वर्धा नदी के किनारे)-** यह स्थान अत्यन्त पुराना है। राजा भीषण की पुत्री ऋमणीजी यहा पूजन करने आती थीं तथा यहीं उनका हण हुआ था। मदिर एक टीले पर है। भगवती की चार फुट ऊची मूर्ति है।

**अमरावती-** नदी के एक तट पर अम्बिकाजी का मदिर है। यहा इस मदिर की बहुत मान्यता है।

**कोल्हापुर-** नगर मे पुराने राजमहल के पास खजाना घर है उसके पीछे महालक्ष्मी का विशाल मदिर है। इसे लाग अम्बाजी का मदिर भी कहते हैं। (तीर्थकि-३३२)

**मद्रास-** साहूकार पेठ मे यह मदिर है। इसे यहा चेनाम्बा का मदिर कहते हैं। इसे मद्रासपुरी की रक्षिका माना जाता है। तिरुनेल्वेली (तिन्नेवली) यह रेल्वे स्टेशन है। यहा पार्वती जी का प्रधान मदिर है। यहा पार्वती जी को 'कातिमति अम्बा' कहते हैं। (तीर्थकि-३४०-३८९)

**सूरत-** यहा सूरत रोड पर अम्बाजी का भव्य मदिर है। देवी की मूर्ति कमलाकर पीठ पर विराजमान है। मूर्ति रथ पर स्थित है, जिसमे दो धोडे और दो सिंहो की मूर्तिया बनी है। देवी के दाहिने गणेशजी और शक्तरजी तथा बाई और बहुचरा देवी की मूर्ति है। (तीर्थकि-४४०)

**ज्वालामुखी (पजाब)-** ज्वालामुखी राड स्टेशन से लगभग २० कि.मी दूर सिद्धिदा (अम्बिका) का यह शक्तिपीठ है। यहा शक्ति की जिहा विष्णुभगवान के चक्र से कटकर गिरी थी। (तीर्थकि-५१८)

**अम्बा-** अम्बिकाजी का एक मदिर आमागढ़ (जयपुर की चाहरदीवारी के उत्तर-पूर्व) मे भी है।<sup>1</sup>

\* कैटलाग ऑफ हिस्टोरिकल ट्रान्समन्ट्रा इन कपड़नारा ऑफ जयपुर ल गापाल नारायण बहुरा ऋमणिसिंह पृ ४६ ४७ टीप २१४

पारीको के निम्न अवटका की यह कुलदेवी है—

देवपुरा तिवाड़ी*	बूढणा
रोजडा उपाध्याय*	बूढणा
दीक्षित (दिक्खत)      जोशी	अम्बा

\* कहीं कहीं देवपुरा व रोजडा की माता ललिता बताई गई है।

● कुछ विद्वान इस माता का ललिता व लाहणा माता के नाम से भी सम्बाधित करते हैं।



माँ दुर्गाजी की नवी शक्ति का नाम सिद्धिदात्री भी है—

सिद्धगन्धर्वयक्षादचैरसुरेरमैरपि ।

सेव्यमाना सदा भूयात् सिद्धिदा सिद्धिदायिनी ॥

‘सिद्धा, गन्धर्वों, यक्षों, असुरों और देवों द्वारा भी सदा सेवित होने वाली सिद्धिदायिनी दुर्गा सिद्धि पदान करने वाली हो।’

भगवती दुर्गा सभी प्रकार की सिद्धियों को देने वाली है। मार्कण्डेय पुराण<sup>१</sup> में आठ प्रकार की सिद्धियों का वर्णन किया गया है—

१ अणिमा— सूक्ष्म से भी सूक्ष्म रूप धारण कर लेने के कारण ‘अणिमा’ कहते हैं। २ लघिमा— शीघ्र से शीघ्र कोई काम कर लेना ‘लघिमा’ नामक देवी का गुण है। ३ महिमा— सबके लिए पूजनीय हो जाना ‘महिमा’ कहलाता है। ४ प्रप्ति— जब कोई भी वस्तु अप्राप्य न रहे तो वह ‘प्रप्ति’ नाम सिद्धि है। ५ प्राकाप्य— सर्वत्र व्यापक होने से योगी को ‘प्राकाप्य’ नामक सिद्धि की प्राप्ति मानी जाती है। ६ ईशित्त्व— जब वह सब कुछ करने में समर्थ-ईश्वर हो जाता है तो उसकी वह सिद्धि ‘ईशित्त्व’ कहलाती है। ७ वशित्त्व— सबको वश में कर लेने से वशित्त्व की सिद्धि होती है। यह योगी का सातवाँ गुण है। ८ कामावसायित्त्व— जिसके द्वारा इच्छा के अनुसार कही भी रहना आदि सब काम हो सके, उसका नाम ‘कामावसायित्त्व’ है।

ये ऐश्वर्य के साधनभूत आठ गुण हैं।

इसी प्रकार ब्रह्मवैवर्तपुराण<sup>२</sup> में उपरोक्त आठ सिद्धियों के अतिरिक्त निम्न सिद्धियाँ ओर बताइ गई हैं—

१ दूष्टवण २ परकाया प्रवेश— ३ मनोयायित्व ४ सर्वज्ञत्व ५ अभीष्टसिद्धि ६ अनिस्तम्भ ७ जलस्तम्भ ८ विरलीयित्व ९ वायुस्तम्भ १० क्षुत्पिपासानिद्रा स्तम्भन (भूख प्यास तथा नींद का स्तम्भन) ११ वाक्सिद्धि १२ इच्छानुसार मृत प्राणी को बुला लना १३ सृष्टिकरण १४ प्राणा का आवर्ण।

सिद्धिदात्री भगवती माँ दुर्गा भक्तों और साधकों को ये सभी सिद्धियाँ प्रदान करने में समर्थ हैं।

<sup>१</sup> बत्याण— सर्व याक्षण्य ब्रह्मतुगगाम वर्ष २१ (१९४३) प ३१

<sup>२</sup> बत्या— सर्व ब्रह्मवैवर्तपुराण वर्ष ३३ (१९४३) प ५३३

देवी पुराण के अनुसार भगवान् शिव ने इनकी कृपा से ही इन सिद्धियों को प्राप्त किया था। इनकी अनुकम्पा से ही भगवान् शिव का आधा शरीर देवी का हुआ था। इसी कारण वह लोक में 'अद्बनारीश्वर' नाम से प्रसिद्ध हुए। माँ सिद्धिदात्री चार भुजाओं वाली है। इनका वाहन सिंह है। ये कमल पुष्प पर भी आसीन होती है। इनकी दाहिनी तरफ के नीचे वाले हाथ में चक्र, ऊपर वाले हाथ में गदा तथा बायी ओर के नीचे वाले हाथ में शाख तथा ऊपर वाले हाथ में कमल पुष्प है। नवरात्र-पूजन में नवें दिन इनकी उपासना की जाती है। इस दिन शास्त्रीय विधि-विधान और पूर्ण निष्ठा के साथ साधना करने वाले साधक को सभी सिद्धियों की प्राप्ति हो जाती है। सृष्टि में कुछ भी उसके लिए अगम्य नहीं रह जाता। ब्रह्माण्ड पर पूर्ण विजय प्राप्त करने की सामर्थ्य उसमें आ जाती है।

माता की कृपा से इसके भक्त अनन्त दुखरूप संसार से निर्लिपि रहकर वे सारे सुखों का भोग करते हुए मोक्ष को प्राप्त कर सकते हैं।

नवदुर्गाओं में माँ सिद्धिदात्री अतिम है। अन्य आठ दुर्गाओं की पूजा-उपासना शास्त्रीय विधि-विधान के अनुमार करते हुए भक्त दुर्गा-पूजा के नवें दिन इनकी उपासना में प्रवृत्त होते हैं। इन सिद्धिदात्री माँ की उपासना पूर्ण कर लेने के बाद भक्तों और साधकों की लौकिक-पारलौकिक सभी प्रकार की कामनाओं की पूर्ति हो जाती है। लेकिन सिद्धिदात्री माँ के कपापात्र भक्त के भीतर कोई ऐसी कामना शेष बचती ही नहीं है, जिसे वह पूर्ण करना चाहे। वह सभी सासारिक इच्छाओं, आवश्यकताओं और स्मृहाओं से ऊपर उठकर मानसिक रूप से माँ भगवती के दिव्य लोकों में विचरण करता हुआ उनके कृपा-ग्रस धीरूप का निरन्तर पान करता हुआ, विषय-भोग शून्य हो जाता है। माँ भगवती का परम सान्त्वित्य ही उसका सबस्त्र हो जाता है। इस परम पद को पाने के बाद उसे अन्य किसी भी वस्तु की आवश्यकता नहीं रह जाती।<sup>१</sup>

किणसरिया में माता का मंदिर—गौरीशकर हीराचंद आङ्गा ने जोधपुर राज्य का इतिहास प्रथम खण्ड में माता के विषय में निमान्ति वर्णन किया है—

<sup>१</sup> नवदुर्गा—गीता प्रस, गारखायुर।

किसरिया छोटा-सा गाव परबतसर परगने में है। इसके पास की एक पहाड़ी पर किसरिया अथवा कैवास माता का मंदिर है, जो प्राचीन है। इसमें वि स १०५६ (ई स १९१) का एक सस्कृत लेख है, जो चौहान राजा दुर्लभराज और उसके सामत दधीचक (दहिया) वशी चच्च का है। उसमें दुर्लभराज का सिहाराज का पुत्र और वाक्पतिराज का पौत्र बतलाया है। इसी तरह दहिया चच्च का वैरिसिह का पुत्र और मेघनाद का पौत्र कहा है। इस मंदिर के पास कई स्मारक स्तम्भ भी हैं, जिनमें से एक दहिया कीर्तिसिह (कीर्तु) के पुत्र विक्रम का वि स १३०० ज्येष्ठ सुदि १३ (ई स १२४३ ता १ जून) सोमवार का है, जिससे अनुमान होता है कि बुचकले के आसपास का प्रदेश चौहानों के सामत दहिया के अधिकार में था।'

इसी प्रसंग में पुरालेख विद्वान डॉ ब्रजमोहन जावलिया का मत है का मत है कि 'ऐसा प्रतीत होता है कि किसरिया में स्थित कैवास माता पथ्वीराज चौहान के पधान आमात्य कैमास दाहिमा की इष्टदेवी रही होगी और इसी कारण उसका कैवास (कैमास) माता नाम पड़ा होगा। कैमास नागौर का अधिपति था अतः नागौर के पारीक ब्राह्मण यदि इसकी पूजा-अचना के लिए आते हैं तो स्वाभाविक है। कैमास (कैयाय) माता की प्रतिमा के अतिरिक्त एक अन्य प्रतिमा ब्रह्मणी की भी उस मंदिर में प्रतिष्ठापित है। प्रथम मूर्ति को रुद्राणी के नाम से भी जाना जाता है। रुद्राणी का स्वरूप रोद्र होता है क्योंकि यह शतुओं को ल्लाने वाली, सहार करने वाली देवी है तथा भक्तों की मनोकामना पूर्ण करने वाली है। यही स्थिति जशनायितोदरी (कृशोदरी या बुभूक्षित उदर वाली) देवी के स्वरूप की भी है। यह विकराल स्वरूप वाली, नतोदर वाली और उभरी हुई पर्शु पक्षियों वाली देवी है। अतः स्पसाम्य के कारण इसे ही अशनोदरी (वशनायितोदरी) नाम दिया गया हो, यह सम्भव है।

अशनायितोदरी (कृशोदरी) का एक मंदिर मेवाड़ में उदयपुर जिले के जगत् गाव में है। यह प्रतिमा 'भूखी भड़गी' के नाम से जानी और पूजी जाती है। बड़ौदा (गुजरात) के राजकीय सप्रहालय में भी कृशोदरी की एक भव्य मूर्ति प्रदर्शित है।

पारीकों के निम्न अवटकों वी यह कुलदेवी है—

१ दाख (दक्ष)

२ रत्ना

उपाध्याय

तिवाड़ी

## आदि कुमारिका: कुमारिका माता

‘हिन्दू धर्मकोप’ के अनुसार शिवपत्नी पार्वती के अनेक नाम एवं गुण शिव के समान ही है। उनका एक नाम ‘कुमारी’ भी है। तैत्तिरीय आरण्यक (१० १७) में उन्हे कन्या कुमारी कहा गया है। स्कन्दपुराण के कुमारी खण्ड में कुमारी का चरित्र और महात्म्य विस्तार से वर्णित है। भारत का दक्षिणान्त अन्तरीप (कुमारी अन्तरीप) उन्ही के नाम से सम्बन्धित है। स्मृतियों में द्वादश वर्षीया कन्या का नाम भी कुमारी कहा गया है—

अष्टवर्षा भवेद् गौरी दशवर्षा च रोहिणी।  
सप्त्वासे द्वादशे वर्षे कुमारीत्यभिधीयते ॥

अर्थात् अष्ट वर्ष की कन्या गौरी और दस वर्ष की रोहिणी होती है। बारह वर्ष प्राप्त होने पर वह कुमारी कहलाती है। कुमारी से तात्पर्य है ‘कुमारयति आनन्देन क्रीड़ति सा कुमारी।’

‘अन्नदाकल्प’ आदि आगम ग्रन्थों में कुमारी पूजन के प्रसंग में कुमारी अजातपुष्या (जिसको रजोदर्शन नहीं हुआ हो) कन्या का कहा गया है। सोलह वर्ष पर्यन्त वह कुमारी रह सकती है। वय भेद से उसके कई नाम बतलाये गये हैं

एकवर्षा भवेत् सन्ध्या द्विवर्षा च सरस्यती।  
त्रिवर्षा तु त्रिधामूर्तिश्चतुर्वर्षा तु कालिका ॥  
सुभगा पञ्चवर्षा च पठवर्षा च उमा भवेत्।  
सप्तभिर्मालिनी साक्षादृष्टवर्षा च कुब्जिका ॥  
नवभि कालसङ्कुर्षा दशभिश्चापराजिता।  
एकादशे तु रुद्राणी द्वादशाब्दे तु भीरवी ॥  
त्रयोदशे महालक्ष्मी द्विसप्ता पीठनायिका।  
क्षेत्रजा पञ्चदशभि षोडशे चान्नदा भता ॥

एवं क्रमण सम्पूज्या यावत् पुण्य न जायते।  
पुण्यितापि च सम्पूज्या तत्पुण्यादानं कर्मणि ॥

भगवती जगदम्बा और शक्ति के विभिन्न रूप हैं। आदिकाल से ही शक्ति उपासना से प्ररणा, उत्साह और स्फूर्ति प्राप्त होती रही है। पौराणिक आठ्याना में ब्राह्मी, वैष्णवी, रौद्री आदि शक्तियाँ एवं इन शक्तियों की अनन्य शक्तियों का उल्लेख एवं कथानक विभिन्न प्रसगों में आया है।

कुमारिका शक्ति का एक रूप है जिसके सम्बन्ध में पौराणिक ग्रन्थों में अनेकानेक आठ्यान हैं। शिवपुराण<sup>१</sup> के अनुसार हिमालय को शकर भगवान ने पार्वती को प्रसन्न करने की इच्छा से अपना अन्त पुर बना लिया। कालान्तर में शुभ-निशुभ नामक दो दैत्य उत्पन्न हुए जो परस्पर भाई थे। घोर तपस्या कर उन्होंने ब्रह्माजी से यह वर प्राप्त कर लिया कि इस जगत् में विसी भी पुरुष में व नहीं माग तथा ब्रह्माजी से पार्थना की कि पार्वती देवी के अश से उत्पन्न जो अयोनिजा कन्या उत्पन्न हो, जिसे पुरुष का स्पर्श तथा रति प्राप्त नहीं हुई हो तथा जा अलघ्य पराक्रम से सम्पन्न हो, उसके प्रति कामभाव से पीड़ित होने पर हम युद्ध में उसी के हाथों मार जाये। उनकी इस प्रार्थना पर ब्रह्माजी ने 'तथास्तु' कहकर स्वीकृति दे दी।

ऐसा वर प्राप्त कर इन दैत्यों ने इन्द्रादि समस्त देवताओं को मुख में हराकर अनीतिपूर्वक वेदा के स्वाध्याय और यज्ञ आदि से उन्हें रहित कर दिया। इन्द्रादि देवों ने ब्रह्माजी को अपनी कथा सुनाई।

तब ब्रह्मा ने उन दोनों के वध के लिए देवश्वर शिव से प्रार्थना की— हे प्रभो! आप एकान्त में देवी की निन्दा करके भी जैसे-तैसे उन्हें काध दिलाइये और उनके रूप-रण की निन्दा से उत्पन्न हुई कामभाव से रहित, कुमारीस्वरूपा शक्ति को निशुभ और शुभ के वध के लिए देवताओं का अर्पित कीजिए।

ब्रह्माजी के इस तरह प्रार्थना करने पर भगवान् नीलताहित रुद्र एकान्त में पार्वती की निन्दा-सी करते हुए मुस्कुराकर बाले— तुम तो काली हो। तब सुन्दर वर्ण वाली देवी पार्वती अपने श्याम वर्ण के कारण आक्षेप सुनकर कुपित हो उठी और पति देव से मुस्कुराकर समाधानरहित बाणी द्वारा बोलीं।

‘प्रभो! यदि मेरे इस काले रग पर आपमा प्रेम नहीं है तो इतने दीर्घकाल से अपनी शिक्षा का आप दमन क्यों करते होते हैं? कोई स्त्री कितनी ही सर्वांग-सुदरी क्यों न हो, यदि पति का उस पर अनुगग नहीं हुआ तो अन्य समस्त गुणों के साथ ही उसका जन्म लेना व्यर्थ हा जाता है। स्त्रिया की यह सृष्टि ही पति के भोग का प्रधान अग ह। यदि वह उससे बचित हो गयी तो इसका और कहा उपयोग हो सकता है? इसलिए आपने एकान्त म जिसकी निन्दा की है, उस वर्ण को त्यागकर अब मैं दूसरा वण ग्रहण करूँगी अथवा स्वयं ही मिट जाऊँगी।’

ऐसा कहकर देवी पार्वती शश्या से उठकर खड़ी हो गयी और तपस्या के लिए दृढ़ निश्चय करके गद्याद् कण्ठ से जाने की आज्ञा मागने लगी।

इस प्रकार प्रेम भग होने से भयभीत हो भूतनाथ भगवान् शिव स्वयं भवानी को प्रणाम करते हुए बोले— ‘प्रिये! मैंने ब्रीड़ा या मनोविनोद के लिए यह बात नहीं है। मेरे इस अभिप्राय को न जानकर तुम कुपित क्यों हो गयी? यदि तुम पर मेरा प्रेम नहीं होगा तो और किस पर हो सकता है? तुम इस जगत् की माता हो और मैं पिता तथा अधिष्ठित हू। फिर तुम पर मेरा प्रेम न होना केसे सम्भव हो सकता है? हम दोनों का वह प्रेम भी क्या कामदेव की प्रेरणा से हुआ है, कदापि नहीं। क्याकि कामदेव की उत्पत्ति से पहले ही जगत् की उत्पत्ति हुई है। कामदेव की सृष्टि तो मैंने साधारण लोगों की रति के लिए की है। कामदेव मुझे साधारण देवता के समान मानकर मेरा कुछ-कुछ तिरस्कार करने लगा था, अत मैंने उसे भस्म कर दिया। हम दोनों का यह लीलाविहार भी जगत् की रक्षा के लिए ही है, अत उसी के लिए आज मैंने तुम्हारे प्रति यह परिहामयुक्त बात कही थी। मेरे इस कथन की सत्यता तुम पर शीघ्र ही प्रकट हो जायेगी।’

देवी ने कहा— ‘भगवन्! पति का प्यार से बचित होने पर जो नारी अपने प्राणों का भी परित्याग नहीं कर देती, वह कुलाग्ना और शुभलक्षणा होने पर भी सत्पुरुषों द्वारा निन्दित ही समझी जाती है। मेरा शरीर गौर वर्ण का नहीं है, इस बात को लकर आपको बहुत खेद होता है, अन्यथा ब्रीड़ा या परिवास में भी क्या आपके द्वारा मुझे काली कलूटी कहा जाना सभव हा सकता था। मेरा कालापन आपको प्रिय नहीं है, इसलिए वह सत्पुरुषों द्वारा

भी निन्दित है, अत तपस्या द्वारा इसका त्याग किये बिना अब मैं यहाँ रह ही नहीं सकती।'

शिव बोले— 'यदि अपनी श्यामता को लेकर तुम्हें इस तरह सताप हो रहा है तो इसके लिए तपस्या करने की क्या आवश्यकता है? तुम मेरी या अपनी इच्छा मात्र से ही दूसरे वर्ण से युक्त हो जाओ।'

दवी ने कहा— 'मैं आपसे अपने रण का परिवर्तन नहीं चाहती। स्वयं भी इसे बदलने का सकल्प नहीं कर सकती। अब तो तपस्या द्वारा ब्रह्माजी की आराधना करके ही मैं शीघ्र गौरी हो जाऊँगी।'

शिव बाल— 'महादेवि' पूर्वकाल मेरी मेरी ही कपा से ब्रह्मा को ब्रह्मपद की प्राप्ति हुई थी। अत तपस्या द्वारा उन्हें बुलाकर तुम क्या करोगी?'

दवी ने कहा, 'इसमें सदेह नहीं कि ब्रह्मा आदि समस्त देवताओं को आप से ही उत्तम पदा वी प्राप्ति हुई है तथापि आपकी आज्ञा पाकर मैं तपस्या द्वारा ब्रह्माजी की आराधना करके ही अपना अभीष्ट सिद्ध करना चाहती हूँ। पूर्वकाल मेरे जब मैं सती के नाम से दक्ष की पुत्री हुई थी, तब तपस्या द्वारा ही मैंने आप जगदीश्वर को पति के रूप में प्राप्त किया था। इसी प्रकार आज भी तपस्या द्वारा ब्राह्मण ब्रह्मा को सतुष्ट करके मैं गौरी होना चाहती हूँ। ऐसा करने में यहाँ क्या दोष है? यह बताइये।'

महादेवी के ऐसा कहने पर वामदेव मुस्कराते हुए-से चुप रह गये। देवताओं का ऋर्य सिद्ध करने की इच्छा से उन्होंने देवी को रोकने के लिए हठ नहीं किया।

तदन्तर पतिब्रता माता पार्वती पति की परिक्रमा करके उनके वियोग से होने वाले दुख को इसी तरह रोककर हिमालय पर्वत पर चली गयी। उन्होंने पहले सखियों के साथ जिस स्थान पर तप किया था, उस स्थान से उनका प्रेम हो गया था। अत फिर उसी को उन्होंने तपस्या के लिए चुना। तदन्तर माता-पिता के घर जा दर्शन और प्रणाम करके उन्हें सब समाचार बताकर उनकी आज्ञा ले उन्होंने सार आभूषण उतार दिये और फिर तपोबन में जा स्नान के पश्चात् तपस्वी का परमपावन वधु धारण करके अत्यन्त तीव्र एवं परम दुष्कर तपस्या करने का समर्थन किया। वे मन-ही-मन सदा पति के

चरणारविन्दा का चिन्तन करती हुई फिसी क्षणिक लिंग में उन्होंना भा ध्यान करके पूजन की वाह्य विधि के अनुमार जगल के फल-फूल आदि उपकरणा द्वारा तीनों समय उनका पूजन करती थी। 'भगवान् शक्ति ही ब्रह्मा का रूप धारण करके मरी तपस्या का फल मुद्य दग।' ऐसा हृष्ट विश्वास गहरा व प्रतिदिन तपस्या में लगी रहती थी। इस तरह तपस्या करते-मरते जब बहुत समय बीत गया, तब एक दिन उनके पास कोइ बहुत बड़ा व्याघ्र देखा गया। वह दुष्टभाव से वहा आया था। पावतीजी के निकट आते ही उस दुरात्मा भा शरीर जड़वत् हो गया। वह उनके समीप चित्रलिखित-सा दिखायी देने लगा। दुष्टभाव से पास आये हुए उस व्याघ्र का दखकर भी देवी पार्वती साधारण नारी की भाँति स्वभाव से विचलित नहीं हुई। उस व्याघ्र के सार अग अकड़ गये थे। वह भूख से अत्यन्त पीड़ित हो रहा था और यह सोचकर कि 'यही मेरा भोजन है' निरन्तर देवी भी ओर ही देख रहा था। देवी के सामन खड़ा-खड़ा वह उनकी उपासना-सी फरने लगा। इधर देवी के हृदय में सदा यही भाव आता था कि यह व्याघ्र मेरा ही उपासन है, दुष्ट वन जन्तुआ से मेरी रक्षा करने वाला है। यह सोचकर वे उस पर कृपा करने लगी। उन्होंने कृपा से उसके तीनों प्रकार के मल तत्काल नष्ट हो गये। फिर तो उसकी भूख मिट गयी और उसके अगा की जड़ता भी दू हो गयी। साथ ही उसकी जन्मसिद्ध दुष्टता नष्ट हो गयी ओर उसे निरन्तर तुम्हि बनी रहने लगी। उस समय उत्कृष्ट रूप से अपनी कृतार्थता भा अनुभव करके वह तत्काल भक्त हो गया और उस परमश्वरी भी सेवा करने लगा। अब वह अन्य दुष्ट जन्तुआ को खदेड़ता हुआ तपोवन में विचरने लगा। इधर देवी भी तपस्या बढ़ी और तीव्र से तीव्रतर होती गई।

देवता शुभ आदि दैत्यों के दुराग्रह से दुखी हो ब्रह्माजी की शरण मे गये। उन्होंने शमुपीड़नजनित अपने दुख को उनसे निवेदन किया। शुभ और निशुभ वरदान पाने के घमड से देवताओं को जैस-जैसे दुख देते थे, वह सब सुनकर ब्रह्माजी को उन पर बड़ी दया आइ। उन्होंने दैत्य वध के लिए भगवान् शक्ति के साथ हुई बातचीत का स्मरण करके देवताओं के साथ देवी के तपोवन भा प्रस्थान किया। वहाँ सुश्रेष्ठ ब्रह्माजी ने उत्तम तप में परिनिष्ठित पार्वती को देखा वे समाज जगत् की पतिका भी अपने बहती थी। आगे श्रीराजी

के तथा रुद्रदेव के भी जन्मदाता पिता महामहेश्वर की भार्या आर्या जगन्माता गिरिराज नन्दिनी पार्वती जी को ब्रह्माजी ने प्रणाम किया।

देवगणों के साथ ब्रह्माजी को आया दख देवी ने उनके योग्य अर्घ्य दक्ष स्वागत आदि के द्वारा उनका सत्कार किया। बदले में उनका भी सत्कार और अभिनन्दन करके ब्रह्माजी अनजान की भाति देवी की तपस्या का कारण पूछने लगे।

**ब्रह्माजी बाले— देवि !** इस तीव्र तपस्या के द्वारा आप यहा किस अभीष्ट मनोरथ की सिद्धि करना चाहती है ? तपस्या के सम्पूर्ण फलों की सिद्धि तो आपके ही अधीन है। जो समस्त लोकों के स्वामी है, उन्हीं परमेश्वर का पति के रूप में पाकर आपने तपस्या का सम्पूर्ण फल प्राप्त कर लिया है अथवा यह सारा ही क्रियाकलाप आपका लीलाविलास है। परन्तु आश्चर्य की बात तो यह है कि आप इतने दिनों से महादेवजी के विरह का कष्ट कैसे सह रही है ?

देवी ने कहा— **ब्रह्मन् !** जब सष्ठि के आदिकाल में महादेवजी से आपकी उत्पत्ति सुनी जाती है, तब समस्त प्रजाओं में प्रथम होने के कारण आप मेरे ज्येष्ठ पुत्र होते हैं। फिर जब प्रजा की वृद्धि के लिए आपके ललाट से भगवान् शिव का प्रादुर्भाव हुआ तब आप मेरे पति के पिता और मेरे श्वसुर होने के कारण गुम्जना की कोटि में आ जाते हैं और जब मैं सोचती हूँ कि स्वयं मेरे पिता गिरिराज हिमालय आपके पुत्र हैं तब आप मेरे साक्षात् पितामह लगते हैं। लोक पितामह ! इस तरह आप लोक्यान्न के विधाता हैं। अन्त पुर म पति के साथ जो बत्तान्त घटित हुआ है, उसे मेरे आपके सामने कैसे कह सकूँगी ? अत यहाँ बहुत कहने से क्या लाभ ! मेरे शरीर में जो यह कालापन है, इसे सत्त्विक विधि से त्यागकर मैं गौरवणा हाना चाहती हूँ।'

**ब्रह्माजी बाल देवि !** इतने ही प्रयोजन के लिए आपने ऐसा कठोर तप क्या किया ? क्या इसके लिए आपकी इच्छा मात्र ही पर्याप्त नहीं थी ? अथवा यह आपकी एक लीला ही है। जगन्माता ! आपकी लीला भी लोकहित के लिए ही होती है। अत आप इसके द्वारा मेरे एक अभीष्ट फल की सिद्धि कीजिए। निशुम्भ और शुम्भ नामम् दो दैत्य हैं, उनको मैंने वर द रखा है। इससे उनका घमड बहुत बढ़ गया है और वे देवताओं को सता रहे हैं। उन दोनों को आपके ही हाथ से मारे जाने का वरदान प्राप्त हुआ है। अत अब

विलम्ब करने स कोई लाभ नहीं। आप क्षणभर के लिए सुस्थिर हो जाइये। आपक द्वारा जो शक्ति रखी या छाड़ी जाएगी, वही इन दोना के लिए मृत्यु हो जायेगी।'

ब्रह्माजी के इस प्रभार प्रार्थना करने पर गिरिराजकुमारी देवी पार्वती सहसा अपने काली त्वचा के आवरण का उतारकर गौरवर्णा हो गयी। त्वचा कोप (काली का त्वचामय आवरण) रूप से त्यागी गई जो उनकी शक्ति थी उसका नाम 'कौशिकी' हुआ। वह काले मेघ के समान कान्तिवाली मृष्णवर्णा मन्या हो गयी। देवी की वह मायामयी शक्ति ही योगनिद्रा और वैष्णवी मृहलाती है। उसके आठ बड़ी-बड़ी भुजाएँ थीं। उसने उन हाथों में शाख, चक्र और त्रिशूल आदि आयुध धारण कर रखे थे। उस देवी के तीन रूप हैं— सोम्य, धोर और मिश्र। वह तीन नेत्र से युक्त थी। उसने मरुतक पर अर्धचन्द्र का मुकुट धारण कर रखा था। उसे पुरुष का स्पर्श तथा रति का याग नहीं प्राप्त था और वह अत्यन्त सुन्दरी थी। देवी ने अपनी इस सनातन शक्ति को ब्रह्मा जी के हाथ में दे दिया। वही दैत्यप्रवर शुभ्म और निशुभ्म का वध करने वाली हुई। उस समय प्रसन्न हुए ब्रह्माजी ने उस पराशक्ति को सवारी के लिए एक प्रबल सिंह प्रदान किया, जो उनके साथ ही आया था। उस देवी के रहने के लिए ब्रह्माजी न विन्ध्यगिरि पर वास स्थान दिया ओर वहा नाना प्रकार के उपचारा से उनका पूजन किया। विश्वरूपा ब्रह्मा के द्वारा सम्मानित हुई वह शक्ति अपनी माता गौरी को और ब्रह्मा जी को ऋषमश प्रणाम करके अपने ही अगा से उत्पन्न और अपने ही समान शक्तिशालिनी बहुसख्यक शक्तियों को साथ ले दैत्यराज शुभ्म-निशुभ्म को मारने के लिए उद्यत होकर विन्ध्यपर्वत को चली गई। उसने समरागण में उन दानों दैत्यराजों को मार गिराया।

कुमारिका के प्राकृद्य के सम्बन्ध में श्री देवी भागवत<sup>१</sup> में भी इसी प्रभार का वर्थानक आया है कि देवता जब दैत्यों से अत्यन्त सतम थे, तब उन्होंने देवी की स्तुति की। देवी ने अपने विग्रह से एक दूसरा रूप प्रगट कर दिया। जब भगवती पार्वती के शरीर से जगदम्बा साकार रूप से प्रगट हुई, तब सम्पूर्ण जगत् उन्हें 'कौशिकी' नाम से पुकारने लगा। पार्वती के शरीर

से भगवती कौशिकी के निम्न जाने पर शरीर क्षीण हो जाने के कारण पार्वती का रूप काला पड़ गया। अत वे 'कालिका' नाम से विद्यात् हुई। स्याही के समान काले वर्ण से वे बड़ी भयकर जान पड़ती थीं। भक्तों के सम्पूर्ण मनोरथ पूर्ण कर देना उनका स्वाभाविक गुण था। वे फालरात्रि नाम से परिचित हुई। भगवती जगदम्बा का एक दूसरा मनोहर रूप भी विराजमान था। सम्पूर्ण भूषण शुभ गणों से वह सम्पन्न था। तदन्तर भगवती जगदम्बा हस्तर दवताओं से कहने लगी— 'अब तुम लोग निर्भय होकर अपने स्थान पर विराजमान रहो। मैं शत्रुओं का सहार कर डालूँगी। तुम्हारा कार्य सम्यक् प्रकार से सम्पन्न करने के लिए मैं समराण में विचरूँगी। तुम्हे सुखी बनाने के लिए शुभ-निशुभ आदि सभी दानवों का म वध कर दूँगी। इसी माता ने दैत्यों का सहार किया।

नव दुग्माओं में दुर्गाजी की आठवीं शक्ति महागौरी को कुमारी रूप में माना है। इनकी आयु आठ वर्ष की मानी गई है— 'अष्टवर्षा भवेद् गारी'।

कुमारिका का एक कथानक कन्याकुमारी के रूप में भी आता है। कल्याण व शक्ति उपासना अक<sup>१</sup> में इसका वर्णन निम्न प्रकार किया गया है।

### कन्याकुमारी शक्तिपीठ<sup>२</sup>

कन्याकुमारी एक अन्तरीप है। यह भारत की अतिम दक्षिणी सीमा है। इसके एक ओर बगाल की खाड़ी, दूसरी ओर अखब सागर तथा सन्मुख भारत महासागर है। कन्याकुमारी में सूर्योदय और सूर्यास्त जा दृश्य अत्यन्त भव्य होता है। बादल न होने पर समुद्र जल से ऊपर उठते या समुद्र जल से पीछे जाते हुए सूर्यविम्ब जा दशन अत्यधिक आकर्षक होता है। इसे देखने के लिए प्रतिदिन प्रात -साय भीड़ लगी रहती है।

बगाल की खाड़ी के समुद्र में सावित्री, गायत्री, सरस्वती, कन्या, विनायक आदि तीर्थ हैं। दक्षी मंदिर के दक्षिण मातृतीर्थ, पितृतीर्थ और भीमातीर्थ हैं। पश्चिम में थोड़ी दूर स्थाणु (शिव) तीर्थ है। समुद्र तट के घाट पर स्नान कर ऊपर दाहिनी ओर श्रीगणेश जी का दर्शन करने के बाद कुमारी भगवती का दर्शन किया जाता है। मंदिर में द्वितीय प्राक्तार के भीतर इन्द्रमान्त विनायक हैं, जिनकी स्थापना द्ववराज इन्द्र द्वाग की हुड़ बतायी गयी है।

<sup>१</sup> कल्याण-शक्ति उपासना अक वर्ष ६९ (१९८३) पृ ४३५

<sup>२</sup> लघुक न माता क दर्शन नि ३१ १९९९ का क्रिय। साध पि शाभित व माहित ध।

कई द्वारों के भीतर जाने पर कुमारी देवी के दर्शन होते हैं। देवी की यह मूर्ति प्रभावोत्पादक तथा भव्य है। देवी के हाथ में जपमाला है। विशेष उत्सवों पर देवी का हीरक आदि रत्नों से शृगार किया जाता है। प्रतिदिन रात्रि में भी देवी का विशेष शृगार दर्शनीय होता है।

**पौराणिक आख्यान-** महाशक्ति कन्याकुमारी जी कथा के विषय में पुराणों में बताया गया है कि बाणासुर ने घोर तपस्या करके भगवान् शक्ति को प्रसन्न किया और अमरत्व का वर माँगा। शक्ति जी ने कहा— ‘कुमारी कन्या के अतिरिक्त तुम सबसे अजेय रहोगे।’ शिवजी से वर प्राप्त कर घोर उत्पाती वने बाणासुर ने देवताओं के लिए ग्राहि-ग्राहि मचा दी। तब भगवान् विष्णु के परामर्श से एक महायज्ञ का आयोजन किया गया। देवताओं के इस यज्ञ के कुण्ड से चिद् (ज्ञानमय) अग्नि से माता दुर्गा अपने एक अश से कन्यारूप में प्रगट हुई।

देवी ने पति रूप में भगवान् शक्ति को पाने के लिए दक्षिण समुद्र के तट पर कठोर तपस्या प्रारम्भ कर दी। तपस्या से प्रसन्न होकर आशुतोष ने उनका पाणिग्रहण करना स्वीकार कर लिया। देवताओं को चिता हो गयी कि कुमारी का शक्ति से विवाह हो जायेगा तो बाणासुर का वध न हो पायेगा। अतएव उन्होंने नारद जी को पकड़ा। विवाहार्थ आ रहे भगवान् शक्ति को ‘शुचीन्द्रम्’ स्थान पर नारद ने अनेक प्रपचो में इतनी देर तक रोक लिया कि मुर्ग बाग देने लगे और प्रात काल हो गया। विवाह मुहूर्त टल जाने से भगवान् शक्ति वही ‘स्थाणु’ (स्थिर) हो गये। अपना अभीष्ट पूर्ण न होने से देवी भी पुन तपस्या में जुट गयी जो अभी तक कुमारी रूप में यहाँ तपस्या कर रही है।

देवताओं की माया काम कर गयी और बाणासुर को भी अपना अन्त अपने ही हाथों करने की सूझी। अपने दूतों द्वारा तपस्या में लीन देवी के अद्भुत सौन्दर्य का वृत्तान्त सुनकर वह देवी के निकट आया और विवाह के लिए हठ पकड़ करके बेठ गया। फलत देवी ओर बाणासुर के बीच घोर युद्ध हुआ। अन्ततोगत्वा देवी के हाथों बाणासुर का वध हो गया और समस्त देवगण अश्वस्त हो गये।

जैसा कि उपरोक्त पौराणिक कथानक में आया है कुमारिका को कौशिकी भी कहते हैं तथा विन्ध्याचल पर्वत पर निवास करने के कारण उसे विद्यवासिनी भी कहते हैं। माता का यह स्थान उत्तर रेल्वे के मिर्जापुर स्टेशन से ६ कि.मी विन्ध्याचल स्टेशन गगा तट के पास बस्ती के मध्य ऊचे स्थान पर है। मंदिर में सिंह पर खड़ी ढाई हाथ की देवी की मूर्ति है। मंदिर के पश्चिम में एक आगन है जिसके पश्चिम में बाग्ह भुजा देवी है, दूसर मण्डप में खण्डेश्वर शिव है तथा दक्षिण की ओर महाकाली की मूर्ति है। उत्तर की ओर धर्मध्वजा देवी है। नवरात्रि में यहाँ मेला लगता है। मंदिर प्रागण में सेकड़ा ब्राह्मण दुर्गा सप्तशती का पाठ करत है। देवी भागवत में उल्लिखित १०८ शक्तिपीठों में विद्यवासिनी की गणना है। पुलिस थान के पास बटुक भैरवजी का मंदिर है।

**राजस्थान में कुमारी क्षेत्र<sup>१</sup>**— कोटा से ४४ मील पर इन्द्रगढ़ स्टेशन से ६ मील पूर्वोत्तर एक झील है यह प्राचीन कुमारिका क्षेत्र है। यहाँ प्राचीन भगवावशेष मिलते हैं। झील के पश्चिम में भगवान् शकर का मंदिर है। वहाँ एक कुण्ड शीतल जल का है और एक गर्म जल का है। कार्तिक पूर्णिमा तथा सोमवर्ती अमावस्या को यहाँ मेला भरता है।

जैसा कि पूर्व में लिखा गया है— अनन्दाकल्प आदि आगम ग्रन्थों में कुमारी पूजन की विधि दी गयी है। अनन्दाकल्प में दी गयी पूजा विधि निम्नोक्त है—

अथान्यत साधन वक्ष्ये महाचीनक्रमादभवत् ।

यनानुष्ठितमात्रण शीघ्र देवी प्रसीदित ॥  
अष्टम्याञ्च घतुददश्या कुह्वा या रविसक्रम ।  
कुमारीपूजन कुयाद्यथा विभवामात्मन ॥  
वस्त्रालङ्करणादयैश्च भक्ष्यर्थोऽन्यै सुविस्तरै ।  
पञ्चतत्त्वादिभिः सम्यग्देवीबुद्ध्या सुसाधक ॥'

माता जी मान्यता समाज के सभी वर्गों में है। पारीजा के निम्न अवटकों की यह कुल देवी है—

अजमेरा

जाशी

कुलत्था

ओशी

<sup>१</sup> वन्याग—तीर्थक वर्ष ३९ (१९५३) पृ. २८३

सोतड़ा\*

जोशी

\* कई स्थानों पर कुमारिका के सातड़ा जारियों की कुनौवी हान का उल्लंघन है वहीं कुछ स्थान पर इनकी कुनौवी करणी माता घताई गई है। करणी माता का प्रादुर्भाव आज स लगभग ६०० वर्ष पूर्व हुआ था जिसकि पारीओं का यह अवटक आदि है जिसमें जात प्रथम जानकारी सबत् १०० की है जय पुष्कर म ब्राह्मणों की जनगणना पारीक कुनभूषण सुधन्वाजी न कराई थी अत याद म भगवती स्वरूपा माँ करणी हारा सातड़ा अवटक के पारीओं की मनासामना पूर्ण करने के कारण उन्हें करणी माता का भी अपनी कुरा दबी के रूप म पूजना प्रारम्भ का लिया है।



जैसा कि उपरोक्त पौराणिक कथानको मे आया है कुमारिका को कौशिकी भी रहते हैं तथा विष्ण्याचल पर्वत पर निवास करने के कारण उसे विष्णवासिनी भी रहत है। माता का यह स्थान उत्तर रेल्वे के मिर्जापुर स्टेशन से ६ कि.मी विष्ण्याचल स्टेशन गगा तट के पास बस्ती के मध्य ऊचे स्थान पर है। मदिर मे सिंह पर खड़ी ढाई हाथ की देवी की मूर्ति है। मदिर के पश्चिम मे एक आगन है जिसके पश्चिम मे बारह भुजा देवी है, दूसरे मण्डप मे खण्डेश्वर शिव ह तथा दक्षिण की ओर महाकाली की मूर्ति है। उत्तर की ओर धर्मध्वजा देवी है। नवरात्रो मे यहाँ मेला लगता है। मदिर प्राणण मे सेकड़ो द्वाहण दुर्गा सप्तशती का पाठ करते हैं। देवी भागवत मे उल्लिखित १०८ शक्तिपीठो मे विष्णवासिनी की गणना है। पुलिस थाने के पास बटुक भैरवजी का मदिर है।

**राजस्थान म कुमारी क्षेत्र<sup>१</sup>**— कोटा से ४४ मील पर इन्द्रगढ स्टेशन से ६ मील पूर्वोत्तर एक झील है यह प्राचीन कुमारिका क्षेत्र है। यहाँ प्राचीन भग्नावशेष मिलते हैं। झील के पश्चिम मे भगवान् शकर का मदिर है। वहाँ एक कुण्ड शीतल जल का है और एक गर्म जल का है। कार्तिक पूर्णिमा तथा सामवती अमावस्या को यहाँ मेला भरता है।

जैसा कि पूर्व म लिखा गया है— अन्नदाकल्प आदि आगम ग्रन्थो म कुमारी पूजन की विधि दी गयी है। अन्नदाकल्प<sup>२</sup> मे दी गयी पूजा विधि निम्नोक्त है—

अथान्यत् साधन वक्ष्ये महाचीनक्रमादभवम् ।  
येनानुष्ठितमात्रेण शीघ्र देवी प्रसीदति ॥  
अष्टम्याब्द चतुर्दश्या कुह्वा वा रविसक्रमे ।  
कुमारीपूजन कुर्याद्यथा विभवापात्मन ॥  
वस्त्रालङ्करणादयैश्च भक्ष्यभोज्ये सुविस्तरै ।  
पञ्चतत्त्वादिभि सम्यग्देवीयुद्घया सुसाधक ॥'

माता सी मान्यता समाज मे सभी वर्गो मे है। पारीजा व निम्न अवटका मी यह तुल देवी है—

अजमरा

जाशी

कुलत्था

जाशी

<sup>१</sup> रन्यान— तीर्थास्त वर्ष ३० (१९५०) पृ २८३

सोतड़ो\*

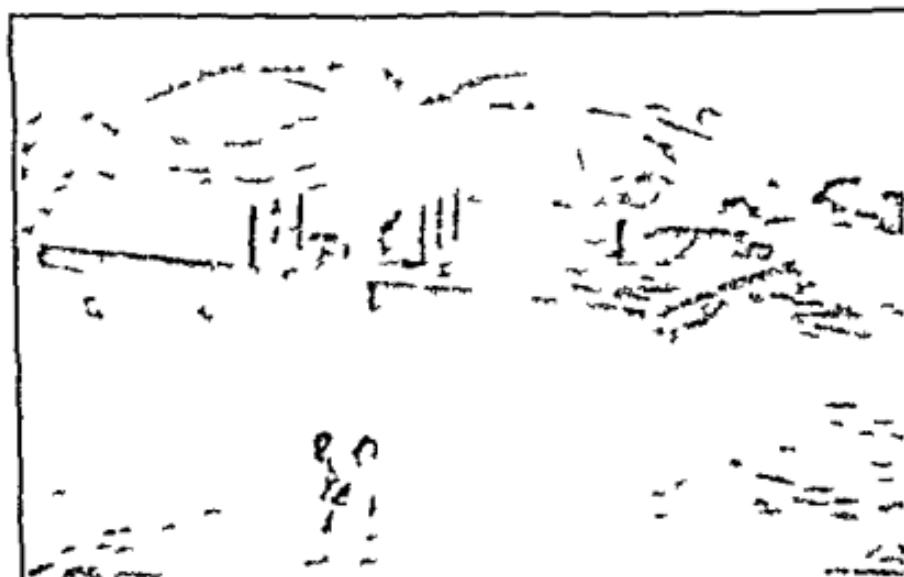
जोशी

\* कई स्थानों पर कुमारिका के सातडा जारियों की कुलदब्बी हान का उल्लेख है वहाँ कुछ स्थानों पर इनकी कुलदब्बी करणी माता यताई गई है। करणी माता का प्रादुर्भाव आज स लगभग ६०० वर्ष पूर्व हुआ था जबकि पारीकों का यह अवटक आदि है जिसकी जात प्रथम जानकारी सबत् ९०० की है जब पुष्कर म ग्राहणों की जनगणना पारीक कुलभूषण सुधन्वाजी न कराई थी अत याद म भगवती स्वरूपा माँ करणी द्वारा सातडा अवटक के पारीकों की मनाकामना पूर्ण करन के कारण उन्हान करणी माता का भी अपनी कुल दब्बी के स्पष्ट म पूजना प्रारम्भ कर दिया है।

□□□



स्वामी विवेकानन्द मेमोरियल



गढ़िया घाट

## आदि शक्ति : आद सगत माता

भगवती दुर्गा को ही मुख्य अथवा आदिशक्ति माना जाता है। अन्यान्य शक्तिया उसकी ही विभूति पानी जाती है। देवी की नौ मूर्तियाँ हैं, जिन्हें नवदुर्गा कहते हैं। इनके पृथक्-पृथक् नाम बताये गये हैं यथा—

प्रथम नाम शैलपुत्री है। दूसरी मूर्ति का नाम ब्रह्मचारिणी है। तीसरा स्वरूप चन्द्रघण्टा के नाम से प्रसिद्ध है। चौथी मूर्ति को कूष्माण्डा कहते हैं। पाचवी दुर्गा का नाम स्कन्दमाता है। देवी के छठे रूप को कात्यायनी कहते हैं। सातवा कालरात्रि और आठवा स्वरूप महागौरी के नाम से प्रसिद्ध हैं। नवी दुर्गा का नाम सिद्धिदात्री है। ये सब नाम सर्वज्ञ महात्मा वेद भगवान् के द्वारा ही प्रतिपादित हुए हैं। जो मनुष्य अग्नि में जल रहा हो, रणभूमि में शत्रुओं से घिर गया हो, विषम सकट में फस गया हो तथा इस प्रकार भय से आतुर होकर जो भगवती दुर्गा की शण में प्राप्त हुए हो, उनमा कभी कोई अमरण नहीं होता। युद्ध के समय सकट में पड़ने पर भी उनके ऊपर कोई विपत्ति नहीं दिखायी देती। उन्हे शोक, दुख और भय की प्राप्ति नहीं होती।<sup>१</sup>

जिन्हाने भक्तिपूर्वक देवी का स्मरण किया है, उनका निश्चय ही अभ्युदय हुआ है। देवी की अन्य शक्तियों में चामुण्डा देवी प्रत पर आरूढ होती है। वाराही भैसे पर सवारी करती है। एन्द्री का वाहन ऐरावत हाथी है। वैष्णवी देवी गरुड पर ही आसन जमाती है। माहेश्वरी वृषभ पर आरूढ होती है। कौमारी का वाहन मयूर है। भगवान् विष्णु की प्रियतमा लक्ष्मीदेवी कमल के आसन पर विराजमान है और हाथों में कमल धारण किये हुए है। वृषभ आरूढ इश्वरी देवी ने श्वेत रूप धारण कर रखा है। ब्राह्मी देवी हस पर बैठी हुई है और सब प्रकार के आभूपणों से विभूषित है। इस प्रकार ये सभी माताएँ सब प्रकार की योगशक्तियों से सम्पन्न हैं। इनके सिवा ओर भी बहुत-सी देवियाँ हैं, जो अनेक प्रकार के आभूपणों की शोभा से युक्त तथा नाना प्रकार के रूप से सुशोभित हैं। ये सम्पूर्ण देविया ब्रोध में भरी हुई हैं और

<sup>१</sup> कल्याण- मार्कंडय ब्रह्मपुराण- वर्ष २१ (१९४७) पृ ५६

भक्तों की रक्षा के लिए वाहन पर बैठी दिखाई देती है। शश, चक्र, गदा, शक्ति हल और मुसल, खेटक और तोमर परशु तथा पाश, कुन्त और मिशूल एवं उत्तम शार्न्दीधनुष आदि अस्त्र-शस्त्र अपने हाथों में धारण करती है। दैत्यों के शरीर का नाश करना, भक्तों को अभयदान देना और देवताओं का कल्याण करना— यही उनके शरन धारण का उद्देश्य है। 'महान् रोद्ररूप, अत्यन्त धार पराप्रम महान् बल और महान् उत्साहवाली देवी! तुम महान् भय का नाश करन वाली हो। तुम्हारी ओर देखना भी कठिन है। शतुआ का भय बढ़ाने वाली जगदम्बिके! मेरी रक्षा करा।'

श्रीमद्देवी भागवत में वदों ने भगवती देवी की स्तुति करते हुए कहा है—

देवी आप महामाया है, जगत् की सहि करना आपका स्वभाव है, आप कल्याणमय विग्रह धारण नरने वाली एवं प्रिणुणा है। अखिल जगत् आपका शासन मानता है तथा भगवान् शक्ति के आप मनोरथ पूर्ण किया करती है। सम्पूर्ण प्राणियों को आश्रय देने के लिए आप पथ्वीस्वरूपा है, प्राणधारियों के प्राण भी आप ही हैं। धी, श्री, काति, क्षमा, शाति, श्रद्धा, मेधा, धति और स्मृति ये सभी आपके ही नाम हैं। अङ्गार में जो अर्ध मात्रा है, वह आपका ही निर्विशेष रूप है। गायत्री में आप प्रणव हैं। जया विजया धात्री, लज्जा-कीर्ति स्पहा और दया इन नामों से आप प्रसिद्ध हैं। पुराणा ने जो घोषणा की है कि ब्रह्मा में जो सर्जन-शक्ति है, विष्णु में जो पालन-शक्ति है तथा शिव में जो सहार-शक्ति है एवं सूर्य में जो प्रकाशन-शक्ति है तथा शेष और मन्त्रच्छप में जो पथ्वी को धारण करने की शक्ति है अग्रि में जलाने की ओर वायु में जो हिलान-हुलाने की शक्ति है— या सब में जो शक्ति विद्यमान है वही आद्याशक्ति है। गौरी, ब्राह्मी, रोद्री, वाराही, वेण्वी शिवा, वारणी, कौवेरी, नारसिंही और वासवी सभी इसके रूप हैं। परमात्मा और आद्याशक्ति दाना एवं मूर्प, चिन्मयस्वरूप, निरुण और निर्मल हैं। जो शक्ति है वही परमात्मा है और जो परमात्मा है, वही शक्ति है। भगवती देवी न अवतार लेने का प्रयोजन इस प्रकार बताया है— श्रेष्ठ पुरुषों की रक्षा करना, वेदा

को सुक्षित रखना और जो दुष्ट है, उन्हे मारना— ये मेरे कार्य है, जो अनेक अवतार लेकर मेरे द्वारा किय जाते हैं। प्रत्येक युग में मैं ही उन अवतारों को धारण करती हूँ।

मीता म भी भगवान् श्रीकृष्ण ने ऐसा ही कहा है—

परिग्राणाय साधूना विनाशाय च दुष्कृताम्।

धर्मसस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे॥

(४/८)

पर ब्रह्मस्वरूपा भगवती देवी के दो स्वरूप हैं— निर्णुण और सगुण। सगुण के भी दो भेद हैं— निराकार, साकार। इस आद्या शक्ति से सारे सप्तार की उत्पत्ति होती है। उपनिषदों में इस आद्याशक्ति को पराशक्ति के नाम से कहा गया है।

ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति, ब्रह्माजी की कमल द्वारा उत्पत्ति, मधु और कैटभ नामक दो दानवों की विष्णु के ज्ञान के मैल से उत्पत्ति, ब्रह्मा का विष्णु दर्शन, योगनिद्रा का भगवान् विष्णु के विग्रह से निकलना, भगवान् विष्णु एव दैत्य मधु-कैटभ का घमासान युद्ध मधु कैटभ का युद्ध म मारा जाना आदि कथानक विस्तार से अनेकानेक ग्रन्थों में दिये गये हैं। मधु और कैटभ के बध के बाद ब्रह्मा और विष्णु दो ही थे, वहीं मन्द्र भी प्रगट हो गये। तीनों को आद्याशक्ति के दशन हुए।

देवी आद्याशक्ति अपने स्वरूप का वर्णन करते हुए कहती है— मे और ब्रह्म एक ही है। मुझम और ब्रह्म में किञ्चिन्मात्र भेद नहीं है। जो वे हैं, वही मैं हूँ, और जो म हूँ, वही वो है, ऋग्वेद के दशम मण्डल के १२५वें सूक्त में अदि शक्ति जगदम्बा कहती है— ‘मैं ब्रह्माण्ड की अधीश्वरी हूँ, मैं ही सारे कर्मों का फल भुगताने वाली और ऐश्वर्य देने वाली हूँ। मैं चेतन एव सर्वज्ञ हूँ। मैं एक हाते हुए भी अपनी शक्ति के अनेक नामरूप भासती हूँ। मैं मानवजाति की रक्षा के लिए युद्ध ठानती हूँ और शत्रु का सहार कर पृथ्वी पर शाति की स्थापना करती हूँ। मैं ही भूलोक और स्वर्ग लोक का विस्तार करती हूँ। मैं जनक की भी जननी हूँ। जैसे बायु अपने आप चलती है, वैसे ही म भी अपनी इच्छा से समस्त विश्व की स्वयं रचना करती हूँ। मैं सर्वथा

## विशालि-तत्त्व



१२२/हमारी कुलदेवियाँ

यादी

वेणी

रोटी

## करणी माता

भक्तों के हितार्थ, दुष्टों का विनाश करने, समाज में सुख-शांति व धन-धान्य पूर्ण करने हेतु कइ बार माँ भगवती मानवीय रूप में भी अवतरित होती है। ऐसी ही भगवती माँ के अशावतार के रूप में माँ करणी ने इस भू-धरा पर अवतरित हाकर न केवल अपने भक्तों की मनोकामना पूर्ण की अपितु अपने अद्भुत चमत्कारों से मानव मात्र को उपकृत किया।

करणी माता मानवीय रूप में भगवती जगदम्बा का अशावतार थी किन्तु आज भी वे अपने भक्तों की आर्त पुकार पर प्रत्यक्ष होकर उनके दुख-दर्द को हरती है एव उनकी मनोकामना पूर्ण करती है, बस आवश्यकता केवल इस बात की है कि भक्त उन्हे एक बार सच्चे हृदय से याद करे, पुकारे।

करणी माता, आवडमाता जो भगवती का ही अशावतार है, की भक्त थी, उनकी सेवा करती थी। आवड माता, जो सर्वमान्य लोकदेवी है आदि-शक्ति हिंगलाज का अवतार मानी जाती है। सती के मत देह के विभिन्न अग जहाँ-जहाँ गिरे वे शक्तिपीठ हो गये। इसके पूर्व कि हिंगलाज शक्तिपीठ एव करणीधाम का वर्णन किया जावे, भगवती सती के सम्बन्ध में जानकारी प्राप करलें, क्योंकि माँ करणी भगवती सती का ही अवतार है।

भगवती सती भगवती सती की कथा जगत् प्रसिद्ध है। पुराणों में इसके चरित का विशद वर्णन है। तन्त्रचूडामणि, कल्याण के शिवाङ्ग, शक्ति अक, शिवपुराणाङ्ग, गणेशाङ्ग, शक्ति उपासना अक, शिवोपासाङ्ग तथा सक्षिप्त देवी भागवत अक में माँ सती का विस्तार से वर्णन किया गया है।

इस कथा का सक्षिप्त कथानक इस प्रकार है कि दक्ष के यहा देवी शिवा (सती) का अवतार हुआ। दक्ष ने अपनी पुत्री का नाम उमा<sup>१</sup> रखा। सती का विवाह भगवान् शिव से हुआ। दक्ष ने एक बार यज्ञ किया जिसमें सभी देवताओं को आमंत्रित किया, किन्तु भगवान् शिव को निमत्रण नहीं भेजा।

१. सक्षिप्त शिव पुराणाङ्क मीलाप्रस, गारण्डपुर पृ १३८

● लेखक माता के दर्शनार्थ नेशनोक दि १८१० ११ को गया। साथ में वि रेहित व धर्मपत्नी मुरीता थे।

उमा को जब इसकी जानकारी हुई तो उसने भगवान् शिव से यज्ञ में चलने की प्रार्थना की। भगवान् शिव ने कहा कि बिना निमग्न कही भी नहीं जाना चाहिए भले ही वह तुम्हारे पिता का धर ही क्यों न हा। सती के अति आश्रह पर भगवान् आशुतोष न सती को यज्ञ में जाने की अनुमति दे दी। यज्ञ स्थल पर जब सती उमा पहुंची तो उसे यह देखने अत्यन्त क्षोभ हुआ कि सभी देवता अपने स्थान पर आसीन हैं, बिन्तु भगवान् शिव के लिए यज्ञस्थल पर कोई स्थान नहीं रहा गया है। यही नहीं, उमा का भी वहाँ सत्कार हाने के स्थान पर, बिना बुलाय आने पर तिरस्कार-सा ही हुआ। सती इस प्रकार के व्यवहार से अति क्षुब्ध हुई और उसने योगाग्रि में अपने शरीर को भस्म कर दिया।

भगवान् शक्ति को जब सती के भस्म होने का समाचार ज्ञात हुआ तो उनकी कोणाग्रि ने ब्रिलोक में प्रलय मचा दिया। दक्ष का यज्ञ नष्ट कर दिया। भगवान् शक्ति सती के विरह में अधीर हो गय तथा यज्ञस्थल पर वौरभद्रादि अनुचरों के साथ जाकर दक्ष का मार डाला और यज्ञ विघ्वस्त कर दिया। शिवजी सती की मृत देह को कधे पर रख चारों ओर उद्भट भाव में नाचते हुए धूमन लगा। यह देखकर भगवान् विष्णु ने अपने चक्र से सती का अग-प्रत्यग काट डाला। सती की मृत देह के अग-प्रत्यग इम्यावन खड़ा में विभक्त हो जिस जिस स्थान पर गिरे थे, वहा एक-एक भैरव और एक-एक शक्ति नामा प्रकार की मूर्ति धारण कर अवस्थान करती है, उन्हीं सब स्थानों का नाम महापीठ पड़ा है।<sup>१</sup>

सती का ब्राह्मरथ हिंडुला स्थान पर गिरा। 'यह स्थान हिंगलाज बलाचिन्मान के लासबेला स्थान में हिंगोस नदी के तट पर कराची से १० मील उत्तर-पश्चिम (पश्चिम पाकिस्तान) में है। यहाँ गुफा के अदर ज्योति के दर्शन होते हैं।<sup>२</sup> करणी माता को सती का ही अशावतार माना जाता है।

करणी माता के चरित एवं घमत्कारा के वर्णन की यो तो अनेकानेक पुस्तके हैं बिन्तु अभी हाल ही में शार्दूलसिंह जी कमिया द्वारा रचित 'करणी-कथामृत' नामक शोध-ग्रन्थ का प्रकाशन हुआ है जिसमें करणी माता

<sup>१</sup> कन्याण शक्ति अक्त वर्ण १ (१९३४) पृ ६४४

<sup>२</sup> कन्याण तीर्थांक वर्ण ३३ (१९५३) पृ ५१५

के जीवन चरित एवं उसके चमत्कारों का विस्तृत उल्लेख किया गया है। कृपालु प्रकाशक महोदय की अनुमति से माता-करणी चरित के कुछ अश एवं कथानक-करणी-कथामृत<sup>१</sup> से यथावत् उद्धृत किये जा रहे हैं।

## आदि शक्तिपीठ हिंगलाज

“सुदूर पश्चिम मे मकरान पर्वतमाला मे बलूचिस्तान के लासबेला क्षेत्र में ज्योतिर्मयी माता आदि शक्ति हिंगलाज की गुफा है। यह उन्नत विशाल गुफा हिंगलालय के नाम से विख्यात है। हिंगलालय सबसे बड़ा आदि शक्ति पीठ है। समस्त भारत मे युगों से हिंगलाज माई की सर्वाधिक मान्यता रही है।

‘कहते हैं कि नगवती सती का वराग यहाँ गिरा था। मातेश्वरी की माण हिंगलू (कुमकुम) से सुशोभित थी, इससे हिंगलालय कहलाता है। गुफा के बाहर दीवाल पर शक्ति का प्रतीक त्रिशूल अकित है। अधेरी गुफा के अतिम भाग मे माता का सिदूर-वेष्टित पापाण-पाट लालबस्त्र से आच्छादित है। पावन गुफा दीपज्योति से आलोकित है।

प्राचीन काल से ही गिरिनामा सन्यासी, नाथ अवधूत, देवीपुत्र चारण और अनेक श्रद्धालु भक्त हिंगलालय की यात्रा करते आये हैं। इस पावन यात्रा को माई-स्पर्श करना कहते हैं। श्रद्धालु यात्री माई के पाट पर लाल चूदड़ी चढ़ात है। छडीदार पूजा करवाता है। यात्रीगण रात भर माता का भजन-कीर्तन करते रहते हैं। शीघ्र प्रात शरणकुण्ड मे स्नान कर कटिवस्त्र धारण कर गुफा में पुन प्रवेश करते हैं। कोटड़ी का पीर यात्री युगल को पाट के नीचे बनी अँधेरी सँकरी गुफा मे प्रवेश करने की अनुमति देता है। जब दोनो यात्री माता की गर्भ योनि से बाहर आते हैं तो चागली माई चदेले की धृटी व गुड़ की डली देती है।<sup>२</sup> माई के स्पर्श कर लेने पर यात्री युगल सहोदर भ्राता बन जाते हैं। पीढ़ियों तक इस सम्बन्ध को निभाते हैं। द्विजन्मा और निष्पाप हो जाते हैं।

१ करणी कथामृत (द्वितीय संस्करण) ले शार्दूलमिह विद्या प्रकाशक डा एम सी खण्डेलवाल एम सी खण्डेलवाल एड सस बी २१० जनता कॉलोनी जयपुर ३०२०४ विस्तृत अध्ययन एवं जानकारी के लिए उक्त उम्मतक पढ़ें।

२ हिंगलाज देवी की पूजा चागला खापे के मुसलमान करते हैं जो चाग्णों से ही मुसलमान बने हुए हैं तथा अपने बो चाण मुसलमान करते हैं। हिंगलाज देवी की पूजा करने का अधिकार चागला खाप की ग्रहवाणिं कन्या बो मिला हुआ है। वह चागली माई कहलाती है। चागली माई साधारू शक्ति व्यक्षण ही मारी जाती है। चागली माई अपनी हाव नई कन्या के मिं पा रखकर नई चागली माई तय करती है। उसे माई की ज्योति ज्ञाने का आशीर्वाद देती है। अभी परिवार का प्रविष्टि कोटड़ी का पीर बनता है।

चेत्र मास म प्रति वर्ष कराची के स्वामीनारायण मंदिर में यात्रिया का सघ उठता है, जिसमें अधिकाश सिधी और गुजराती भाग लेते हैं। पिछली बार गजस्थानी इस पावन यात्रा में सम्मिलित हुए जिनमें एक यात्री लेखक को अनायास ही मिल गया। अनेक सुखद प्रसंग सुनाय।

आद्या शक्ति हिंगलाज के मुख्य एकादश धाम है। कागड़ा की ज्यालामुखी, असम म कामाट्या, मदुरा की मीनाक्षी, दक्षिण में कन्याकुमारी, गुजरात में अम्बाजी, मालवा की कालिका, वाराणसी की विशालाक्षी, गया की मगला देवी बगाल की सुन्दरी और नेपाल की गुह्येश्वरी। हिंगलालय सहित इन ग्यारह रूपों में भगवती हिंगलाज पूजा ग्रहण करती है।

‘कहते हैं भगवती सती क अवयव ओर आभूषण बावन स्थाना पर बिखर गये थे। यह सब शक्तिपीठ रहते हैं’ जहाँ भगवती के सग बावन भैरव निवास करते हैं। हिंगलालय ना भैरव भीमलोचन है। भारत म हिंगलाज माता के अनेक मंदिर हैं जिनमें जैसलमेर जिले के लुद्रवा ग्राम म हिंगलाज माता का प्राचीन मंदिर है। मंदिर भूमिगत हो गया है, जिसमें सीढ़ियाँ उत्तर कर नीच जाना हाता है। वाडमेर जिले म सिवाणा तहसील म छप्पन की पहाड़ियाँ में कोयलिया गुफा म हिंगलाज माता का प्रसिद्ध मंदिर है। रमणीक स्थान है। इस जनपद म माता की बड़ी मान्यता है। पुरी सन्यासी माता के पुजारी हैं।

सीकर जिले म फतेहपुर के दक्षिण म राय्टीय राजमार्ग के निकट एक ऊचे टीले पा महात्मा बुद्ध गिरी की मढ़ी है। चारों ओर आरण है। भव्य भवन है। सीटियाँ चढ़कर ऊचाई पर विशाल द्वार है। सामने हिंगलाज माता का सुगम्य मंदिर है। महात्मा बुद्ध गिरी महान साधक हुए हैं। उनकी अभिलाषा पूर्ण रूप का हिंगलाज माता अपने ज्यातिर्मय दिव्य स्वरूप म यहाँ आ प्रकट हुई, तब से पूजा आरम्भ है। गिरी सन्यासी माता के पुजारी हैं। दो सौ वर्ष से अद्यष्ट दीपक प्रज्वलित है। मंदिर म माता जी लाल घूड़ड़ी और चूड़ के दर्शन है। यह अवधारणा चली आ गई है कि मढ़ी जी यात्रा हिंगलालय

१ तर गुडामणि में बावन शक्तिपीठ का उल्लेख है। इन महारीन भी कहते हैं। वल्याण क तीर्थैक म इसामन शक्तिपीठ गिनाय है। तीर्थी भागरत म अष्टतार शत (१०८) शक्ति धाम का विवाह मिलता है।

की यात्रा मानी जाती है। चूरुं जिले में बीदासर ग्राम में नाथो के अखाड़े में हिंगलाज माता का पुराना मंदिर है। अजमेर जिले में अगाइ से पूर्व में पहाड़ी पर माता का मंदिर है।

‘जैसलमर जिले में हिंगलाज माता के अनेक मंदिर हैं, जिनमें जैसलमर नगर के घड़सीसर तालाब के मध्य एक गाल टापू पर हिंगलाज की साल है, जिसकी बड़ी मान्यता है। दर्शनार्थी तालाब में तैर कर माता के मंदिर तक पहुंचते हैं। जैसलमेर के पुष्करणा समाज में माता का बड़ा इष्ट है। हरियाणा की सीमा पर बलेश्वर के पवत पर हिंगलाज माई का पुराना मंदिर है। फालना की पहाड़ी पर माइ का मंदिर है। महाराष्ट्र में गढ़ हिंगलाज एक तीर्थस्थल है। पाकिस्तान के सिन्ध प्रान्त में अनेक मंदिर हैं। इधर गुजरात और मालवा में माइ के मंदिर हैं। याहे अन्यत्र माई के मंदिर न हो मिन्तु चारण समाज में सर्वप्र आदि-शक्ति हिंगलाज का प्रबल इष्ट रहा है। माता अनेक रूपों में इस जाति में अवतारित होती रही है।’

### हिंगलाज माता का शक्ति के स्थान में समय-समय पर अवतार

डॉ श्री सोहनदानजी चाणण<sup>१</sup> के अनुसार हिंगलाज माता ने समय समय पर चारण जाति में अवतार लिया है। जिन शक्ति रूपों में इस माता ने अवतार लिया इसका विवरण निम्न प्रकार है—

‘चारण समाज के लाग शक्ति उपासना है तथा बलूचिस्तान स्थित पौराणिक विरयात शक्तिपीठ ‘हिंगलाज’ को अपना प्रधान पीठ मानते हैं। इनमें यह मान्यता है कि हिंगलाज माता समय-समय पर हमारा जाति में अवतार लेती है। इन शक्ति-अवतारों में आवड़ माता, राजल माता, सैणी माता, करणी माता, बिरवड़ी माता, छाडियार माता, गीगाई माता, चूद माता, द्वल माता, मालणदे माता, सोनल माता, हाँसबाई माता आदि के नाम विशेष उल्लेख हैं। इन देवी-अवतारों ने राजस्थान, गुजरात, मध्यप्रदेश, दिल्ली के अनेक राजा-महाराजा और वादगाहों तक को अपन परच-प्रबाड़ी (वरदानों) से चमत्कृत एवं उपकृत किया है, अन्यायी, प्रजाशोपक नृपतियों को आतकित कर प्रजा-मेवक गजाओं का सिंहासनास्थ भी बनाया है तथा प्रजाजना की रक्षा कर मातृत्व की अनूठी पहचान स्थापित

की है। उक्त देवी अवतारों के महत्त्वपूर्ण कृत्यों के प्रमाण में आज भी यह दोहा प्रचलित है—

‘आवड तूठी भाटियाँ, कामेही गौड़ाह।  
श्री बिरवड सिसोदियाँ, करणी राठौड़ाह ॥’

अथात् आवड माता ने भाटी शाखा, कामेही माता ने गौड़ शाखा, बिरवडी माता ने सिसोदिया शाखा तथा करणी माता ने राठौड़ शाखा के क्षत्रियों की सहायता कर उनके नये-नये राज्य स्थापित करवाये ।”

### सप्त मातृका<sup>१</sup>

बाडमेर जिले की धारीमना तहसील में चाळकनू ग्राम में साहवा शाखा का एक चारण निवास करता था। उसका नाम मामड था। वह शक्ति का परम उपासक था। पुग्रहीन था। पुत्र कामना को लेकर उसने सात बार हिंगलालय की दुर्गम यात्रा की। उसकी भाव-भक्ति से माई प्रसन्न हो गई। सातवी बार जब उसने हिंगलालय की गुफा में प्रवेश किया तो माता न प्रसन्न होकर कहा मृ॒ आइस। (मै अवतरित हॉऊंगी)।

मामड के घर महड़ शाखा की चारण मोहवती की कोख से विक्रम सवत् ८०८ की चैत्र शुक्ला नवमी को आदि शक्ति हिंगलाज माई आईजी के रूप में अवतरित हुई। नया अवतार लेकर माता आवडा मामडाई (माहमाई) के नाम से विद्युत हुई। आवडजी सात बहिने थी। सातों ही शक्ति का अवतार थी।

आवड गुल रूपा अछी, लागी छाछी होल।

गढ़वी मामडिये घरा साता बैन सताल।

‘आवडा, आछी छाछी, गहली, हुती, रूपा और लागदे सम मातृका है। साता बहिन आजना ब्रह्मचारिणी रही। इनमें सबसे छोटी बहिन लागदे जैसलमेर क्षेत्र में खाड़रायजी कहलाती है, वही गुजरात में खाड़ियारजी के नाम से पूजी जाती है। खाड़ियार की सौराष्ट्र-गुजरात में बड़ी मान्यता है। गाँव-गाँव में खाड़ियार के मंदिर हैं। अहमदाबाद नगर में खोड़ियार के २८ मंदिर हैं।

“पश्चिम भारत में पिछले बारह सौ वर्ष से अनेक नामों से इन सातों बहिनों की पूजा-अर्चना चल रही है। कहीं ‘बाया’ के नाम से तो कहीं ‘माया’ (मावल्या-माताएँ) के नाम से पूजी जा रही है। सातों बहिनों की लोक देवी के रूप में सर्वाधिक मान्यता है। अनेक जातियों में सातों बहिनें बाया के रूप में पूजी जाती हैं। हिन्दुओं के बहुसंख्यक समाज में माया (मावल्या) कुलदेवी के रूप में प्रतिष्ठित है। नवजात शिशुओं को माया के धोक दिलाते हैं। जात-जड़ला चढ़ाते हैं। बड़े महीनों<sup>१</sup> में शुभ्ल पक्ष में और नवरात्रि में स्थान-स्थान पर माता के मेले भरते हैं।

“सामान्यत हिन्दू समाज में सातों बहिनों की बड़ी मान्यता है। विवाह के समय माया बैठाते हैं। महिलाएँ माया के बधावे गाती हैं। बाया, माया, महामाया, मावलिया, चालक-नेचिया, झूगरेचिया और बीजासणिया के नाम पर चादी-सोने की पातड़ी पहिनते हैं। महिलाएँ स्वयं पातड़ी पहनती हैं और अपने बच्चा को पहनाती हैं। पातड़ी पर सातों बहनों का स्वरूप अकित होता है। सामान्य हिन्दू समाज में युगों से यह लोक-विश्वास चला आ रहा है कि बाया की पातड़ी रक्षा कवच का काम करती है।

“आवड माता सर्वमान्य लोक देवी है। आदि शक्ति हिंगलाज का अवतार है। प्रतिमास शुभ्ल पक्ष की सप्तमी को माता की पूजा होती है। घर-घर में आई मा के नेवज (नेवेद्य) चढ़ाते हैं। माता के मिश्री का या लापसी का भोग लगता है। आवड माता के बाबन नाम है और बाबन ही धाम है।

“चालकनू ग्राम में जन्म ग्रहण करने के कारण चालराय या चालकनेची के नाम से यह माता जानी जाती है। चालकनू गाव में चालराय का पुराना मँढ है।

“एक बार अकाल पड़ जाने पर सातों बहिने अपने माता-पिता के साथ गाये चराती हुई सिध प्रान्त की ओर चली गई थी। नानणगढ़ के आततायी शासक सूमरा पर कुपित होकर उन्होंने उसका राज्य नष्ट कर दिया। उसके पुत्र नूरन का भख (भक्षण) ले गई। मार्ग में अवरोध उत्पन्न करने वाले हाकड़ानद का आचमन कर गई। सपरिवार अपने गोधन को साथ लेकर माड़ प्रदेश (जैसलमेर

<sup>१</sup> बड़े महीना में वैशाख, भाद्रवा व माय माह जात है।

क्षेत्र) की ओर आ गई। यहा काले दूगर पर निवास काने के कारण काळामँडंड की राय, दूगरराय अथवा गिरवरराय के नाम से विरयात हो गई। यहा सातो बहिनें दूगरचियाँ कहलाती हैं। जैसलमेर क्षेत्र में दूगरचियाँजी की सर्वाधिक मान्यता है। अनेक जातिया इन्ह कुल-देवी के रूप मे पूजती है। मीठा भोग चढ़ता है।

“उन दिना माड प्रदेश आततायियो से आतकित था। ये कूरकर्मी धन-जन को क्षति पहुचाते थे और गोहत्या करते हुए भी पीछे नही हटते थे। गोरक्षा एव जनकल्याण की भावना से प्रेरित होकर कर्णामयी आई मा ने ऐसे अनेक देत्यो का नाश किया। इन कूरकर्मियो का नाश कर माता घण्टियालीजी सावडामँदराय और तेमडाराय के नाम से विरयात हो गई।

बोर टीले पर तणुराव और रानी सारांदे को आई मा परमेश्वरी ने आशीर्वाद दिया। तणुराव के सामत भादगिया की भक्ति से प्रसन्न होकर उसे वरदान दिया कि यहा तो नाम से पूजी जाऊगी। जैसलमेर जिले मे ग्राम धोलिया के निकट बोर के ऊचे टीले पर श्रीभादरियाराय का भव्य मंदिर है। मंदिर मे एक ऊचे सिहासन (साहग) पर काल पापाण की सुरम्य प्रतिमा है। आई मा कमल दल पर विराजमान है, बहिन दोना ओर खड़ी है। मण्डप म सामने लाल कपडे से बधा माता का ढाल रखा हुआ है। जब कभी रात जगते है, माता के उमावे (प्रशस्ति-गान) गाये जाते है, तब ढोल बजाया जाता है। सम्रेत स्वर म माता के उमावे सुनकर श्रद्धालु श्रोता भाव-विभोर हो उठते है। मंदिर म अखण्ड ज्याति प्रज्ञति है। नियमित पूजा-विधान है।

भादगियाराय का पुराना मंदिर टीले के उत्तर म है। यह विशाल नवीन मंदिर विक्रम सवत् १८८८ म महारावल गजसिंह न बनवाया। भादरियाराय का विस्तृत ओरण है। ओरण की चोबीस कोस की परिमा है। मंदिर म इस आशय ना एक शिलालेख अवित है।

‘मंदिर से लगा हुआ भारत का सबस बड़ा सैनिफ अभ्यास स्थल (फाइरिंग रेज) है। भारतीय सेना में इस मंदिर की बड़ी मान्यता है। भारत के विभिन्न भागों से जो सैनिफ बल आते है सर्वप्रथम भादरियाराय को नमन कर रेज में उत्तरते है।

“तणुराव के आग्रह पर आई माँ परमेश्वरी विक्रम सवत् ८८८ में तनोट पधारी। जहाँ तनोटराय का जाग्रत देवल है। तनोटराय का मढ़ भारत की परिचिनी सीमा पर ऊचे टीबा से घिरी हुई समतल भूमि पर स्थित है। छोटा-सा मंदिर है। सप्त-मातृका के पाट के दर्शन है। अखण्ड दीपक प्रज्वलित है। भारतीय सैनिकों की श्रद्धा का केन्द्र-स्थल है। सीमा सुरक्षा बल (B S F) की ओर से पूजा-व्यवस्था है। १९६५ के भारत-पाक युद्ध में शत्रु सेना तनोट से आगे घण्टियाली के ऊचे टीले तक बढ़ आई थी। तनोट पर वम बरसाये पर एक भी वम नहीं फटा। बाद में इन वमों को ठड़ा करके इनके खोलों को प्रदर्शनार्थ रख दिया गया है। तनोट शत्रु सेना से घिरफ्तर भी सुरक्षित रहा।\* लागवाला और तनोट क्षेत्र को भगवती ने बचा लिया। अपने पाच सौ सैनिक खोकर पाक सेना भाग खड़ी हुई। आईमाता की कृपा से भारत की कोई सैनिक क्षति नहीं हुई। इस युद्ध में भारतीय सैनिकों का मनोबल मातेश्वरी के नाम पर ऊँचा बना रहा, जिसकी याद में तनोट के प्रवेश द्वार पर सेना का विजय स्तम्भ खड़ा है। विजय स्तम्भ पर इस घटना का शिलालेख भी अंकित है।

तब से ही तनोटराय सीमा सुरक्षा बल की कुलदेवी बन गई है। सीमा की हर चौकी पर तनोटराय का थान है। लाल ध्वजा फहराती है। सध्या समय सीमा सुरक्षा बल के जवान मिलकर पूजा आरती करते हैं। सब माता पर आश्रित हैं। माता भारतीय सैनिकों का मनोबल बढ़ाती रहती है।

“तणोट से चलकर आइ मा परमेश्वरी गग्लाँओ पर्वत पर चली आई। विक्रम सवत् ८८८ से १९९९ तक, एक सौ ग्रामह वर्ष तक सार्तों बहिना ने इस पर्वत पर रहकर तपस्या की। इस पावन स्थल को दूसरा हिंगलाज धाम

\* यह युद्ध १६ नवम्बर १९६५ का हुआ था। तनोट चारा तरफ से पिर तुका था। कर्नल जयसिंह राठौड़ (थैलासर) बीकाना के नवत्व में हमार बवल तीन सौ सैनिक थे। शत्रु न तीन तरफ से धुआधार हमला कर दिया। हमार जवान निरन्तर लड़ते रहे। दूसरे दिन एक जवान में भगवती का भाव आया कि घबराओ मत तुम्हारा बाल भी बाका नहीं हागा। हुआ यही तनोटराय की बप्ता से भारतीय सना के किसी जवान का काई चाट नहीं आई और शत्रु की फौज हतारा हाकर पात्र सौ शब छाड़कर भाग खड़ी हुई। आश्वर्य इस बात का है कि मन्त्रि के आसपास ३००० चम घरसाय गये मन्त्रि के एक घोंगे भी नहीं आई। — भगवती श्री आवङ्जी लखक — ठा मूलसिंह भाटी जैसलमर

बना दिया। यहा गहरी गुफा में तेमडा नाम का कुख्यात दैत्य निवास करता था। लोग भयभीत और आतकित थे। आई परमेश्वरी ने प्रिशूल के एक ही प्रहार में इस मार गिराया। गुफा के द्वार को एक शिला लगाकर बन्द कर दिया। यह तारा शिला कहलाती है। गुफा में शिला के दर्शन है। गरलाँओ पर्वत की इस ऊची खोह में सप्त मातृमाओं का पुनीत पाट स्थापित है। यहा आकर माता तेमडाराय के नाम से विख्यात हो गई। हिगुलालय के बाद पश्चिम भारत में तेमडाराय की गुफा ही बड़ा शक्ति पीठ है। दूर-दूर से यात्री तेमडाराय के दर्शन करने आते हैं। अनेक श्रद्धातु अपने आवास स्थल में पद-यात्रा करते हुए यहा आते हैं। माता मेहाई ने दो बार तेमडाराय की यात्रा की। लोक विश्वास चला आ रहा है कि तेमडाराय शीघ्र फलदायिनी है।

नाथ पथ में दीक्षा ग्रहण कर माता ने कानों में मुद्रा धारण कर ली, इससे मुद्राळी कहलाती है। आईनाथ के नाम से विट्यात है। जैसलमेर में आईनाथ का देवल है। जाडचा की आशा पूर्ण करने पर माता आशापूरा कहलाई। सिध क्षेत्र में कठियावाड़, गुजरात में और राजस्थान में पोहकरन के निकट आशापूरा के मंदिर हैं। जैसलमेर के निकट गजरूप सागर की पहाड़ी पर माता सागियाजी का मंदिर है। रावतणु के पुत्र विजयराज ने बीजणोट नगर बसाया जहा बीजासण माता का मंदिर है। साता बहिने बीजासणिया कहलाती है। देवीकाट के पास एक सरोवर के तट पर देगराय का भव्य मंदिर है। बारह कास का ओरण है। साता बहिना के देवल है। दगराय की दूर-दूर तक मान्यता है। पास में ही साबडामढाराय का मंदिर है।

हाकडानद में स्नान करते समय सूमरा की कुदृष्टि से बचने के लिए सातों बहिना ने नागिन का रूप धारण कर लिया था जो नागणेविया कहलाती है। बीकानेर में नागणेविया का प्रसिद्ध मंदिर है। सातों बहिन ऊन कातने में सिद्धहस्त थी। अपने हाथ की कती ऊन की लोबड़ी ओढ़ती थी। इसी कारण कतियाणीजी कहलाती है। फलौदी में लटियाल माता का मंदिर है। लटियाल आई मा परमेश्वरी का ही नाम है। आईमा के अनेक नामों से अनेक मंदिर हैं, जिनम बावन धाम प्रसिद्ध हैं। सुवाप में आबड़जी का पांचीन मंड है। देशनोक में तेमडाराय का मंदिर है। ऐरथल अलवर में आबड़ देवी का प्रसिद्ध मंदिर है। हिन्दू एवं मंव सब पूजते हैं। जयपुर जिले में झोड़ुदा गांव में छगराय का पुराना मंदिर है। इस मंदिर की बड़ी महिमा है।

“जालौर जिले की भीनमाल तहसील में सूधा पवत पर आईनाथ परमेश्वरी का प्राचीन मढ़ है। माता सूधाराय सूधामढ़राय, चामड़माता, आईनाथ के नाम से विख्यात है। देवी देसाणराय ने सूधाराम की दो बार यात्रा की थी। सूधाराय का शक्तिपीठ नाथ योगियों का अखाड़ा रहा है। इस शक्ति तीर्थ के पीठाधीश आईजी कहलाते थे। चामड़ माता चौहान राजपूतों एवं रोहडिया शाखा के चारों की कुल देवी है।

‘भगवती आइमाता लोक देवी है। भवगती अवतीण हुई तब से लगाकर अब तक सातो बहिनों की पाट की पूजा प्रचलित है। इन वर्षों में एक नया प्रचलन चल पड़ा है। पाट का स्थान दुर्गा की पौराणिक प्रतिमाएं लाती जा रही है। यह सब अज्ञानवश हो रहा है। तेमडाराय, तन्नोटराय और घण्टियाल्लीजी में यह सब प्रत्यक्ष देखा जा सकता है। नवीन प्रतिमाएँ स्थापित कर दी गई हैं।

“राजस्थान का शक्तिभक्ति काव्य भगवती श्रीआवडमाता की चित्तजाओ, पवाडा, लोकगीतों से परिपूर्ण है। आइ मा परमेश्वरी के उमावे लोक-साहित्य की एक निधि है। जब माता की गत जगाते हैं तो भगवती के उमावे भाव-भक्ति के साथ पूरी रात गाते रहते हैं। भादरियाराय भगवती का सबसे विशाल मंदिर है। दूगरराय सबसे लोकप्रिय धाम है। तन्नोटराय सबसे जाग्रत देवल है और तेमडाराय महान् शक्तिपीठ है। लोक-मान्यता चली आ रही है कि १९१ वर्ष तक इस धरा को आलोकित कर विद्रोह सबत् १९९ में सातों बहिनें विमान (बाया का पालणा) में वैठ हिंगलाज धाम की ओर सदेह प्रस्थान कर गईं। ‘बाया का पालणा’ की पूजा परम्परा आज भी प्रचलित है।”

### जगदम्बा श्री करणी देवी

कल्याण के शक्ति अक<sup>३</sup> म जगदम्बा श्री करणी देवी का वृत्तान्त दिया गया है जो पठनीय है।

“बीमनर शहर से लगभग २० मील (३२ किलोमीटर) दक्षिण में बीमनेर रेल्वे का स्टेशन में देशनोक है। यहाँ पर स्टेशन के पास ही श्री करणी देवी का प्रसिद्ध मंदिर है। श्री करणी देवी कोई पौराणिक देवी नहीं है। यह मनुष्य

देह में अवतरित हुई थीं और इन्होंने अपनी देवी शक्तिया का परिचय देमर लोगों के मन में विश्वास जमा दिया कि यह काई साधारण जीव नहीं है, बल्कि साक्षात् महामाया की अवतार है।

“जोधपुर राज्य के अन्तर्गत सुआप नामक एक गाव था। प्राय ६०० वर्ष पूर्व यहां मेहोजी नाम के एक चारण रहते थे। वह अत्यन्त सात्त्विक वृत्ति वाले तथा भगवती के उपासक थे। उनके लगातार छ पुत्रिया उत्पन्न हुई थीं अतएव पति-पत्नी पुत्र के लिए बड़े लालायित थे। इस उद्देश्य से मेहोजी माता भगवती से प्रार्थना किया करते थे और प्रतिवर्ष हिंगलाज जामर दशन किया करते थे। कहते हैं, भगवती ने उनकी भक्ति से प्रसन्न होकर उन्हें दर्शन दिया और वर मागने को कहा। मेहोजी ने भगवती को प्रणाम कर प्रार्थना की कि मेरे चाहता हूँ कि मेरा नाम चल।” श्रीदेवी तथास्तु कहकर अन्तर्धान हो गयी।

उसके बाद उनकी धर्मपत्नी देवलदेवी को गर्भ रहा। इस बार पति-पत्नी का आशा हुई कि श्रीदेवी की मृपा से अवश्य ही पुत्र रूप प्राप्त होगा, उन्होंने एक ज्योतिपी से गणना भी कराई और उन्होंने भी आश्वासन दिया कि इस गर्भ से पुत्र उत्पन्न होगा। किन्तु भला माता की इच्छा किसे मालूम थी? वह किस तरह नाम चलाना चाहती थी यह कौन कह सकता था? आश्विन शुक्ल ७ स १४४४ को बालिका ने प्रसूतिगृह में ही अपनी माता को चतुर्भुजी देवी के रूप में दशन दिये थे।

बालिका के जन्म के समय पर मेहोजी की बहिन भी वही वर्तमान थी। उहोंने बालिका को भूमिष्ठ होते देख, तुरन्त अपने भाई के पास आकर हाथ की अगुली टेढ़ी कर कहा— फिर वही पत्थर आ पड़ा। यह सुनकर पिता का दिल उदास हो गया और उधर उनकी बहिन की अगुली जो टेढ़ी हुई थी, वह वैसी ही रह गयी। उस समय लोगा ने समझा, अगुली में बादी आ गयी है।

बालिका के जन्म के बाद से मेहोजी के दिन बदल गये। उनका घर धन-धान्य और पशुओं से भर गया। सारी चिन्ताएँ दूर हो गयी। मानो उनके घर साक्षात् लक्ष्मीजी आ विराजी हो। उन्होंने नवजात बालिका का नाम रिधुबाई रखा और उनका लालन-पालन वे बड़ी तत्परता और प्रेम के साथ करने लगे। रिधुबाई का स्वरूप बहुत ही मनोहर श्यामर्ण था और उनके चेहरे पर एक अपूर्व तेज दिखाई पड़ता था।

“धीर-धीर रिधुवाई छ सात वप की हुई। इसी समय उनकी बुआ पुन समुराल से लौटकर आयीं और उनके लिए कुछ गहने और कपड़े भी लायी। वह अपनी भतीजी को बड़े स्नेह की दृष्टि से देखती थी और बराबर उसे नहाने-धुलाने, खिलाने-पिलाने आदि का ख्याल रखती थी। एक दिन वह रिधुवाई को नहलाकर उनके सिर के बाल गूथ रही थीं, उस समय उनकी टेढ़ी अगुली बार-बार बालिका के सिर में लगती थी। उन्होंने पूछा—‘बुआ! मेरे सिर में बार-बार टक्क-टक्क क्या लगता है?’ उनकी बुआ ने अपनी अगुली की सारी पुरानी कहानी सुना दी। इस पर उन्होंने अगुली दिखाने को कहा और बुआ के दिखाते ही अगुली को अपने कोमल कर-सर्प द्वारा ठीक कर दिया। यह देख उनकी बुआ बड़ी चकित हुई। किन्तु उन्होंने अपने दात दिखाकर मना किया कि यह बात किसी से कहना नहीं, अन्यथा इन्हीं दातों से तुम्हे चबा डालूगी। उनके सिहनी जैसे दात देखकर उनकी बुआ काप गई और उन्होंने बचन दिया कि मैं किसी से कुछ न कहूँगी। कहते हैं, उसके बाद ही रिधुवाई का नाम ‘करणी’ पड़ गया और वही नाम आज तक प्रसिद्ध है।

“एक दिन देवीजी कुछ भोजन की सामग्री लेकर अपने खेत को जाती थीं। रास्ते में जैसलमेर के महाराज शेखोजी अपनी असख्य सेना के साथ मिले। राजा साहब ने उन्हें देखकर उनसे प्रार्थना की कि ‘मैं और मेरी सेना क्षुधा से व्याकुल हो रहे हैं। गाव यहां से दूर है। यदि आप कुछ भोजन देतो बड़ी कृपा हो।’ यह सुनकर देवीजी ने कहा कि ‘सेना सहित आप वैठकर भोजन कर लीजिए।’ कहते हैं, उस थोड़ी-सी सामग्री में से ही देवीजी ने सेना सहित राजा को भरपेट भोजन करा दिया। यह देखकर राजा अवारू रह गये। राजा को इस प्रकार आश्चर्यान्वित देखकर देवीजी ने कहा कि ‘आश्चर्य की कोई बात नहीं। सकटकाल में मेरा स्मरण करना, मैं अवश्य तुम्हारी सहायता करूँगी।’ राज शेखोजी वहां से चलकर युद्धक्षेत्र में पहुँचे और दैवात् उस युद्ध में उनकी सेना हार गयी तथा उनके रथ का एक घोड़ा भी मारा गया। सकटकाल उपस्थित देख राजा को देवी की बात याद आई और उन्होंने तुरन्त उनका स्मरण किया। कहते हैं, श्रीदेवीजी तुरन्त सिंह के रूप में प्रकट होकर रथ में जुत गयीं और उनकी कृपा से अन्त में शेखोजी की विजय हुई।

“एक बार श्रीकरणी देवी के पिता को सर्प ने डस लिया। तब श्रीदेवी ने उन्हे केवल अपने करकमल से स्पश करके अच्छा कर दिया। इस तरह

नाना प्रकार की लीलाएं करते हुए उन्होंने युवावस्था में पदार्पण किया। पुत्री को विवाह योग्य देखकर उनके पिताजी ने साठीका (साठीका ग्राम बीकानेर-राज्यान्तर्गत देशनोक से लगभग ३० किलोमीटर पर है) ग्राम में दीपोजी नामक व्यक्ति को वर स्थिर किया। निश्चित तिथि पर बड़े समारोह के साथ उनका शुभ विवाह सम्पन्न हुआ। विवाह के बाद देवीजी ने रह-सम्भाषण में अपने पतिदेव से कहा कि 'मेरे गर्भ से आपके कोई सतान नहीं हो सकती, अतएव आप मेरी बहिन से दूसरी शादी कर लीजिए।' इतना कहकर उन्होंने दीपोजी को साक्षात् भगवती रूप में दर्शन दिये। तब उनके कथनानुसार दीपोजी ने दूसरा विवाह उनकी बहिन गुलाब से ही कर लिया जिसके गर्भ से चार पुत्र उत्पन्न हुए। ये चारा पुत्र देवीजी के ही कहलाते थे और उन्हीं के साथ रहते थे। दीपोजी ने आजन्म देवीजी को माता रूप में ही देखा।

समुराल में भी उन्होंने कई चमत्कार दिखाय। एक दिन उनकी सास ने कहा— 'देखो वह! यहा खूब सावधानी के साथ रहना। यहा बहुत अधिक बिच्छू होते हैं।' इस पर देवीजी ने कहा— 'यहा तो दर्शन को भी बिच्छू नहीं।' कहते हैं, उस दिन से आज दिन तक वहा एक भी बिच्छू नहीं देखा गया। उसी दिन देवीजी ने अपनी सास को साक्षात् दर्शन भी दिये। एक समय आप गाय दुह रही थी कि उसी समय मुल्तान के पास अपनी नोका ढूबती देख सठ झगड़ाह ने उनका स्मरण किया। तत्क्षण देवीजी ने अपने हाथ फेलाकर नौका को बचा लिया। श्रीदेवीजी ने इस प्रकार अनेकों लीलाएं करते हुए समुराल में प्राय पचास वर्ष बिता दिये।

<sup>1</sup> 'एक समय साठीका ग्राम में लगातार कई वर्षों तक वर्षा न होने के कारण दुर्भिक्ष पड़ गया। अन्न की कौन कहे, जल मिलना भी दुश्वार था। गौआ को कष्ट देवीजी से नहीं सहा गया। वह यहा से गौआ को साथ लेकर चल पड़ी। यहा से चलकर वह पहले राठौर राजा बान्होजी की राजधानी जागलू आयी। यहा कुएं की घेलिया जल से भरी थी। देवीजी ने राजकर्मचारिया से गायों का जल पीने देने के लिए प्रार्थना की, किन्तु राजाज्ञा के बिना उन्होंने जल पिलाने से इन्कार कर दिया। फिर राजा स पूछा गया, किन्तु यहा भी सूखा ही उत्तर मिला। इसी बीच यह बात राजा के कनिष्ठ भ्राता रणमलजी के कानों पड़ी। वह देवीजी का आगमन सुन तुरन्त उनके सामने उपस्थित

हुए और उन्होंने प्रणाम कर सेवकोचित आज्ञा की प्रार्थना की। देवीजी ने 'राजन्'। शब्द से सम्बोधित कर गाया को पानी पिलाने को कहा। रणमलजी ने तुरन्त आज्ञा दे दी और सब गायें पानी पीकर तृप्त हो गयी। किन्तु कहते हैं, गायों के पानी पी लेने पर भी पानी ज्या-का-त्यों भरा रहा, जरा भी कम न हुआ। यह देख रणमलजी की श्रद्धा बहुत बढ़ गयी और वह उनके साथ हो लिए और देवीजी के बार-बार मना करने पर भी वापस न लोटे।

"यहा से चलकर देवीजी नेड़ी स्थान पर आयी और जगल म गौओं के लिए धास आदि की सुविधा देखकर वर्ही रहने लगी। जगल के रक्षकों को जब यह बात मालूम हुई तो उन्होंने देवीजी को वहा से चले जाने के लिए कहा। किन्तु देवीजी ने उनकी कोई परवाह नहीं की। फिर यह खबर राजा के पास भेजी गई। यह स्थान भी कान्हाजी के ही राज्य म था। उन्होंने पहले दो राजपूत वीरों के द्वारा कहलवाया, किन्तु देवीजी ने कहा कि 'सियारो! जाओ, अपने राजा को भेज दो, तभी मैं जाऊंगी।' इतना कहते ही उन लोगों का मुह सियार जैसा हो गया। फिर उन्होंने बड़ी प्रार्थना की, तब देवीजी ने कहा कि 'जाओ, मेरा सदेश राजा को सुना दो, उसके बाद मुह ठीक हो जायेगा।' ऐसा ही हुआ। परन्तु राजा ब्रोध से आग बबूला हो गये। उन्होंने सदलबल देवीजी पर आक्रमण कर दिया, परन्तु देवीजी के आगे उनकी एक न चली। अन्त म उन्होंने देवीजी को वहा से चले जाने को कहा। देवीजी ने कहा, 'मेरी यह छोटी-सी पेटी गाढ़ी पर रखवा दो, मैं चली जाऊंगी।' राजा ने बड़ी चेष्टा की, अपने सब आदमी तथा अन्त मे हाथी तक को लगाया किन्तु यह बक्स जरा भी टस से मस नहीं हुआ। तब राजा ने कहा कि 'यदि वास्तव मे तुममे शक्ति हो तो बताओ मेरी मृत्यु कब हागी।' देवी ने कहा 'एक वर्ष म।' किन्तु राजा ने कहा कि यह समय बड़ा लम्बा है, और पहले बताओ। देवीजी ने धीर-धीर समय घटाकर एक धड़ी तक कह दिया, किन्तु राजा उतावले हो गे थे, वह और भी जल्दी करने का हठ करने लगे। बस, देवीजी ने एक लकीर खेंचकर उसे पार करने को कहा और ज्यों ही उनके धोड़े ने पैर उठाया, देवीजी ने सिहरूप मे राजा और धोड़ा दोनों का अत कर दिया। इस खबर को सुनकर राजमाता और रानी रोती-बिलखती यहा आयी

किया। वह छत्र अब भी मंदिर में मौजूद है और बड़ी पूजा के समय निकाला जाता है। इस सम्बन्ध का शिलालेख भी मंदिर में रखा हुआ है।

‘स्व महाराज सूरतसिंह ने देवीजी के मंदिर का कोट बनवाया था। स्व महाराज डूगरसिंहजी ने देवीजी के मंदिर में (जिसमें मूर्ति स्थापित है) सोन के किवाड़ लगवाये थे और एक बड़ा-सा छत्र बनवा दिया था। महाराज श्रीमान् सर गगासिंहजी बहादुर ने मरुराम के पत्थर का चौक, लाल पत्थर की दीवाले बनवायी और सोने-के पूजा के पात्र प्रदान किये। मंदिर का प्रवेश द्वार सठ श्रीचादमलजी ढांग सी आई ई ने बनवाया। या तो समूचा मंदिर कारीगरी की दृष्टि ने देखने योग्य है, परन्तु इसके प्रवेशद्वार की शोभा निगली है। सागरमर मर पत्थर पर नाना प्रकार के बेलबूट, फलफूल, महराब, पशु-पक्षियों के और देवी-देवताओं के चित्र इतने सुन्दर और सजीव बने हैं कि देखने वाले आश्चर्य सागर में ढूब जाते हैं। कहते हैं, इस दरबाजे को बनाने में एक लाख से ऊपर खर्च पड़ा है। भारतीय शिल्प ऋला का यह एक बहुत ही उत्तम नमूना समझा जाता है।

‘प्रवेश द्वार से भीतर सहन में घुसन पर सामने योगमाया के दर्शन हाते हैं। जिस ताहे में यह प्रतिमा स्थापित है, कहते हैं, उस माताजी ने स्वयं अपने हाथा बनाया था। प्राय धनी लोग देवीजी को छत्र चढ़ाया करते हैं, जिससे यहाँ छत्रों की भग्मार है। श्रीदेवीजी की मूर्ति सोने के सिंहासन पर विराजमान है।

माताजी के मंदिर में कावे (चूहे) बहुत हैं, जो सर्वत्र मंदिर भर में स्वतंत्रपूर्वक विवरण करते हैं। इनमीं अधिकता के मारे दर्शनार्थियों को बहुत बच-बच कर मंदिर में चलना पड़ता है। जिससे वे दबकर मर न जाय। कहते हैं, देवीजी के वशज चारण लोग ही मरने पर कावा हुआ बरते हैं और फिर कावे से चारण हाते हैं। यमराज पर क्रोधित होने के चारण ही उन्होंने अपने वशजों के लिए ऐसा प्रवाध किया था। यही चारण है कि लाग इन्हें भी आदर की दृष्टि से देखत है और श्रद्धानुसार दूध, मिठाई आदि खिलाया करते हैं। इन चूहों के चारण लाग इन्हे ‘चूहों वाली माता’ भी कहते हैं। इन चूहों के बीच कभी-कभी सफद चूहे के रूप में घूमती देवीजी भी भज्जों को दर्शन दिया करती है। सबसे विचित्र बात तो यह है कि इतने चूहे हान पर भी यहा कभी

प्लेग का प्रकोप नहीं होता। इस स्थान मे चील को भी पवित्र माना जाता है और मंदिर की ध्वजा पर उसका बैठना शुभ माना जाता है।

“देवीजी का एक स्थायी कोप है जिसकी कुजी और हिसाब की बहिया बन्ना सुथार के परिवार के जिम्मे रहती है। यह परिवार उसी समय दशनोक मे आकर बस गया था और तभी से यहाँ है। यह कोप दो आसवाल एक सुथार, एक किलेदार और चार चारणों की उपस्थिति में खोला जाता है। इस कोप से पुजारी आदि चारणों को कुछ वेतन नहीं मिलता, केवल शादी-विवाह या श्राद्ध आदि विशेष अवसरों पर सहायता दी जाती है। कोप से मंदिर के प्रबन्ध के लिए जो नौकर-चाकर है, उह तनख्वाह दी जाती है या मंदिर के सम्बन्ध मे दूसरे खर्च होते हैं। देवीजी पर जो कुछ चढ़ोती आती है, वह उनके पूजा करने वाले चारणों का (जो उही के वशज होते हैं) बाट दी जाती है।

“यात्रियों की सुविधा के लिए स्टेशन के पास ही बीकानेर के सुप्रसिद्ध मोहता-परिवार ने एक बड़ी धर्मशाला बनवा दी है। देशनोक के तेमडे जी के मंदिर मे माताजी की वह छोटी-सी पूजा की पेटी भी रखती है, जिस कान्होजी ने उठाने का प्रयत्न किया था।

“देशनोक से एक मील पश्चिम में नेडी स्थान है। यहा भी एक मंदिर है और उसके अद्या एक गहरी गुफा है। यहा पर भी एक भक्त सेठ ने एक धर्मशाला बनवा दी है। इसी धर्मशाला मे श्रीकरणी जी के अनन्य भक्त आत्मस्वरूप जी महाराज रहते थे। आपको माताजी के अनेक दृष्टात मिल है। आप कही दूसरी जगह नहीं गय केवल माता श्री करणजी की उपासना म ही जीवन व्यतीत किया है। आप अपनी भक्ति, त्याग, गभीरता आदि सदगुणों के लिए प्रसिद्ध हैं।

### श्री करणीधाम देशनोक

श्री करणी-कथामत<sup>१</sup> मे करणी धाम देशनोक का सजीव वृत्तान्त दिया गया है, जो निम्न प्रकार है—

मन देसार्णे रै मगा, हगापगा घण हाय।  
जग माही औडी जगा, हगा न देखी दोय॥

‘बीकानेर से ३२ किलोमीटर दक्षिण में देशनारू बसा हुआ है। यह स्थान बस मार्ग और रेलवे लाइन से जुड़ा हुआ है। बीकानेर और नागौर के बीच देशनोक रेलवे स्टेशन है। बीकानेर से दक्षिण दिशा में जाने वाली सभी बसें देशनोक होकर जाती हैं। बस सीधी देशनोक के श्रीकरणी मंदिर के सामने आकर रुकती है। देशनोक आने-जाने में पूरी सुविधा है।

देशनोक का सबसे बड़ा आकर्षण श्रीकरणी मैंड देशनोक है। श्रद्धालु यात्री दूर-दूर से चलकर श्रीकरणी माता के दर्शन करने इस मैंड की ओर खिचे चले आते हैं। यह समय यात्रियों का मेला लगा रहता है। राजस्थान के बाहर गुजरात, मध्यप्रदेश और हरियाणा तक माता की मान्यता है। आश्विन नवरात्रि के अवसर पर सैकड़ा यात्री पदयात्रा करते हुए देशनोक पहुंचते हैं। बीकानेर, चूरू, हनुमानगढ़ श्रीगगानगर और नागौर जिलों से तो इतने अधिक पदयात्री आते हैं, जिनकी कोई गिनती ही नहीं। मातेश्वरी की अपार महिमा है, न जाने कहा कहा से लाग दशन करने चले आ रहे हैं। पुण्य धाम देशनारू भारत का नूतन शक्तिपीठ बन गया है।

देशनारू के द्वार पर ही जोगमाया देवी देसाणराय का विशाल भव्य मंदिर है। उन्नत सिहद्वार है। द्वार के भीतर प्रशस्त प्रागण है। आगे मध्य द्वार है। अदा सगमरमर झा चौक है। तीसरा अतराल द्वार है और सामने निजमंड जिसके द्वार पर स्वर्णजडित ऊपाट है। निज मैंड अखण्ड दीपशिखा से आलोकित रहता है। निज मंदिर के ठीक मध्य में श्री करणी माता की मनारम सिन्दूर चित्र प्रतिमा है। मुखारविन्द पर सोम्य भाव है, ओठों पर किंचित् मुस्कान, ऊमलदल की भाति अर्द्ध-विकसित उभा हुए निर्मल नेत्र हैं, शीश पर स्वण मुकुट है काना में बड़-बड़े कुण्डल हैं माता ने कचुवी धारण कर रखी है, आदन का दींगी लावड़ी है और पहिने झा धावळा। कमर में धाबले का साड़णा बधा हुआ है जो करघनी सा लगता है। माता के सोम्य मुखारविन्द से करुणा थर रही है। माता शक्ति स्वरूप है। दाहिने हाथ में प्रिशूल और धाम कर में कालू पीथड़ का नरमुण्ड है, जिसकी माता ने चाटी पकड़ रखी है। माता के हाथों में छूड़िया है और पैरों में आभूषण। गलहार और मोतियों की माला से माता सुशाभित है। मनोहारी रूप है जो दरहते ही बनता है। श्रद्धालु यात्री माता का निहारता हुआ अघाता ही नहीं। यह काई पायाणी

प्रतिमा नहीं है। पूर्ण जाग्रत और चिन्मय स्वरूप है। अपने सेवकों की सहायता में तत्पर खड़ी है।

“मातेश्वरी द्वारा स्वनिर्मित भारी पाषाण खण्डों से बना गोल मँड है। काबे इधर-उधर किलाल कर रहे हैं। माता की प्रतिमा के दोनों ओर भैख खड़े हैं। दाहिनी ओर कालाजी है। सुकुमार रूप है। भगवती और भैख युगल के दाहिनी ओर एक पाषाण शिला पर माता मेहाई की पाच बड़ी बहिनों की मूर्तिया है\* और बाम भाग में जूनी जोगण आवड माता का पाट स्थापित है, जिसमें साता बहिने खड़ी हैं। विक्रम सवत् १५९५ में चैत सुदी चौदस को जैसलमेर के महान शिल्पी बन्ना सुथार द्वारा निर्मित इस दिव्य प्रतिमा की मँड में स्थापना हुई। इसी उपलक्ष्य में प्रति मास चौदस को मंदिर में विशेष पूजा होती है। शुक्ल पक्ष की चतुर्दशी को रात को नौ बजे भोग आरती होती है। लापसी का प्रसाद चढ़ता है। केवल देशनोक के श्रीकरणी मंदिर में ही नहीं चादणी चौदस को जोगमाया से जुड़े हुए हिन्दू समाज में घर-घर म पूजा होती है। नेवज बनता है। प्रतिमास चादणी चौदस के दिन बड़ी सख्या में दूर-दूर से चलकर भक्तगण देवी देसाणराय के दर्शनार्थ उपस्थित होते हैं। हर मास चौदस को मेला मड़ जाता है। यह सब जोगमाया की कृपा है।

‘आप चादणी चौदस को आओ चाहे किसी दिन आओ यहा देसाणधाम में तो नित उठ वही आनन्द लुटता रहता है। प्रात शीघ्र ही मगला आरती होती है। इससे कोई आधा घटे पूर्व मंदिर में नगरे बजना आरम्भ हो जाता है। यात्री नहा-धोकर आरती से पूर्व मंदिर में आ उपस्थित होते हैं। मगला की जोत-आरती का दृश्य बड़ा सुहावना लगता है। निज मंदिर में जोत जगमगाने लगती है। मगला की जोत का पुण्यदर्शन माना जाता है। देशनोक निवासी नर-नारी मगला के दर्शन करने आते हैं। आरती के समय ढोल बजता है। बाजदार ढोल बजाता है। नोबत-नगरे और झाझ-झालर की सुमधुर ध्वनि सर्वेग से गूजने लगती है। हृदय में आनन्द की वेला उत्तर आती है। मगला का अपना ही महत्व है। मगला की जोत निज मंदिर से उत्तर में आवड माता के मँड में जाती है वहा जोत आरती होती है। तत्पश्चात् जोत सतीजी के

\* जनशुति और लाक मान्यता की इस प्रतिमा से संपुष्टि होती है। यह अपन आप म एक अकाट्य

देवरे में आती है। लाखुणजी की छोटी पुत्री मानू और उसकी सहेली सती हो गई थी। यह उन्हीं का देवरा है। देशनोक के कोतवाल दशरथ मेघवाल की बड़े प्राण में इसी जोत से पूजा होती है। तत्परचात् दक्षिण में स्थापित प्रतिमाओं की पूजा होती है। इस आरती के तुरन्त बाद में माताजी की कलेवा-आरती होती है।

मगला आरती के बाद सूर्योदय तक नगरे बजते रहते हैं। इसी प्रकार मध्याह्न काल में नगरे बजते हैं। सध्या आरती से पूर्व बजते हैं और अर्द्ध-रात्रि को बजते हैं। ढोल केवल जोत आरती के समय बजता है। सध्या आरती को भी इसी प्रकार आनन्द लुटता है। मंदिर पर माइक से मातेश्वरी का चिरजा-गान चलता रहता है। सारे दिन बातावरण मातृमय बना रहता है।

मातेश्वरी की अनूठी मर्यादाएँ हैं। माता के वशज ही माता के पुजारी हैं। बारी-बारी से एक-एक मास पूजा करते हैं। शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा को बारी बदलती है। बारीदार एक मास तक मंदिर में रहता है। परिवार की महिला उस भाजन करा जाती है और सध्या को अपने घर चली जाती है। पुजारी मंदिर में ही रहता है। मंदिर में ही सोता है। कितनी ही अनिवार्यता क्या न हो मंदिर छाड़ना नहीं जाता।

देशनोक की जाई अथवा देशनोक में आई माता मेहाई को दादीसा, दादीमा, दादीजी, माजीसा कहकर सम्बोधित करती है। पूरी नगरी एक बड़े परिवार की भाति रह रही है। सज जोगमाया से जुड़े हुए हैं। पास्पर ‘जय माताजी की’ ऋग्वा अभिवादन करते हैं। माता की नगरी में जब काई नया बालक जन्म लेता है तो जाये से उठन के बाद जननी स्वयं नवजात शिशु को लम्फर सर्वप्रथम श्रीमंदिर में उपस्थित होती है। शिशु को मातेश्वरी के समुख लिटाती है। श्रीफल भट करती है। माजीसा के पाय लगती है। सभी जातियों की महिलाएँ देवी दसाणराय के मैंड में आती हैं, अपने साथ बाजरी की पाटली लाती हैं, कबां को बाजरी डालती हैं और कबूतरा को दाना चुगाती है। देशनोक नगरी में बीनू परिवार की महिला चाहे बूढ़ी-बड़ी ही क्या न हो जैसे ही मंदिर में प्रवेश करती है थाङ्ग धूपट सारती है। प्रतिमा के समुद्ध मुह खोल कर राझी नहीं होती, दादीसा जा सामन चिराजमान है। नीची दुक्कर अपनी साझी व अचल में ‘पाय लागू’ करती है। यह सब हिन्दू संस्कृति का उज्ज्वल परा है। शिष्टाचार और शालीनता ज्ञा परिचायक है।

“मर्यादानुसार देशनोक के श्रीमँड मे पर्दा रखना मना है। यदि श्वसुर पुजारी है और पुत्रवधु दर्शनार्थ उपस्थित होती है तो श्वसुर के हाथ से सिन्दू बिन्दी ले लेती है। भगवती की कृपा से देशनोक के चारण समाज मे आरम्भ से ही पर्दाप्रथा नहीं रही। माता मेहाई ने पर्दाप्रथा को कभी प्रश्रय नहीं दिया। यही कागण रहा होगा कि उस सामन्त युग मे यात्री महिला जैसे ही देशनोक के ओरण मे प्रवेश करती है, अपना पर्दा उतारकर एक ओर रख देती।

“देशनोक के श्रीमदिर म सूबा-सूतक (अशोच) नहीं लगता। मदिर मे पचाङ्ग का हस्तक्षेप नहीं चलता। तिथि उदयात मानी जाती है। यदि चादणी चौदस दो है तो दूसरी चौदस को मनायेगे। सूर्यग्रहण आ गया तो भी पूजा बन्द नहीं होगी। जोत-आरती यथावत् चलेगी। पुजारी के लिए स्पष्ट परम्परा चलती आ रही है, उसका पालन करना होगा। स्नान करके ही निज मदिर मे प्रवेश करगा। पुजारी जोत-पूजा में तनिक भी प्रमाद नहीं दिखायेगा। शुद्ध सात्त्विक जीवन जीयेगा। मदिरापान नहीं करेगा। सुरगा साफा बाधकर जोत-पूजा मे लगा रहेगा।

देशनोक के श्रीकरणी मदिर मे माता के मीठा नेवज चढ़ता है। जो नेवज मँड के रसोबडे मे तैयार होगा माता के उस फा भोग लगेगा। चादणी चौदस को लापसी का भोग लगता है और आखा तीज को खीचडे का। उस दिन सबा मण खीचडा बनता है, जिसका सब प्रसाद लेते हैं। जोत-आरती के समय माता के भोग के थाल पर काबे टूट पड़ते हैं। माता कितनी करणामयी है काबे स्वच्छन्द मदिर मे विचरण करते रहते हैं। सुरक्षा के लिए मदिर के ऊपर जाल लगा हुआ है। सबसे बड़ी बात यह है कि काबे मुख्य द्वार से बाहर नहीं जाते। लोगो के मुख से सुना है कि ‘काबा कार लोपे नहीं।’

माता की स्थापित की हुई मर्यादाए केवल मदिर तक ही सीमित नहीं है। माता की नगरी और माता के रक्षित घन (ओरण) की अपनी मर्यादाए है। पावन धरा देशनोक माता की आदर्श नगरी है। प्रेमी भक्तों की कामना है कि यह नगरी सदा आदर्श ही बनी रहे। यह नगरी पवित्र है इसका ओरण परम पवित्र है। इसी भावना से प्रेरित होकर हर वर्ष कार्तिक सुदी चौदस का ओरण की परिक्रमा आरम्भ होती है। सैकड़ो श्रद्धालु परिक्रमा मे सम्मिलित होते हैं। यहा श्रीमँड मे नियमित जोत-पूजा के अतिरिक्त आये दिन रातीजग

(रात्रि-जागरण) लगते रहते हैं। माता के रात्रि-जागरण में घत का दीपक जलता है। नाइ की मशाल जलती है। बड़ी धूमधाम रहती है। रात में जब चिरजाए आरम्भ होती है, एक समां बध जाता है। माता की महर बरसने लगती है। यह सब तो आठे दिन के आयोजन है। नवरात्रि की तो महिमा ही न्यारी है। आश्विन नवरात्रि में क्या धूम पड़ती है, समूचा देश ही देशनोक की ओर उमड़ पड़ता है। आश्विन सप्तमी को श्री करणी-जयन्ती के अवसर पर शोभा यात्रा निकलती है जो तेमडाराय के मैंढ तक जाती है। देशनोक नर-नारियों से उफनने लगता है।

देशनोक का मैंढ माता मेहराई का अपने हाथ का थिरपा हुआ है। इस मैंढ के मध्य भाग में देवी देसाणराय की प्रतिमा स्थापित है। बीकानेर के राजा सूरसिंह (विक्रम सं १६७१ से १६८८) ने देशनोक मैंढ में प्रथम निर्माण कार्य कराया। गोल मैंढ के चारों ओर चोकोर मण्डप बना। परिक्रमा और मैंढ के सामने अन्तराल मण्डप बना जिसके तीनों ओर तीन दरवाजे हैं जिन पर चाढ़ी के किंवाड़ चढ़े हुए हैं। किंवाड़ पर देवी देवताओं के चित्र अकित हैं।

दूसरा निर्माण कार्य इससे अनुमानत दो सो वर्ष पश्चात् महाराजा सूरतसिंह के समय में हुआ, विक्रम संवत् १८८२ में। चारों ओर चार बुर्जों वाला ऊँचा प्राचीर और विशाल सिंहद्वार बनकर तैयार हुआ। तीसरी बार का निर्माण महाराजा गगासिंह ने करवाया। मध्य द्वार व मध्य भाग का समस्त सागमरमर का निर्माण उन्हीं के समय का है। राजा ने पुत्रोत्सव (जड़ला) के अवसर पर सन् १९०६ में भीतरी प्राण में सागमरमर के चोके जड़ाये, परिक्रमा सुधराई। मध्यद्वार की छत पर सुनहरा चित्राकन कराया जो बड़ा मनोरम है।

बाहर का विस्तृत चौक पहले कच्चा था। फिर लाल पत्थर के चौके लगाये गये, जिन्हें हटाकर अब सुन्दर टाइट्स लगा दिये गये हैं। सिंहद्वार के मध्य भाग में काठ के पुराने किंवाड़ है। उनके आग जस्ते के चम्पदार विशाल मगाल-पाट चढ़े हुए हैं।

‘श्रीमद देशनोक में उत्तर की ओर भगवती आवङ्ग माता का मंदिर है। पाट के दशन है। पाट का शीर्ष भाग वृत्ताकार ओर क्लापूण है। पाट पर सातों वहिनों का स्वरूप है। सागमरमर का छाटा-सा मनोहर मंदिर है। मुख्यद्वार के अन्त प्रमोष व पार्श्वभाग में मातश्वरी के घाल दशरथ मेघवाल

का देवरा है, इस देवरे के पास मे ही दो बड़े कडाव रखे हुए हैं, जिनको सावण-भाद्रवा के नाम से पुकारते हैं। इन कडावों मे माता का नेवज बनता है। इन कडावों मे नब्बे मन लापसी का दलिया, चालीस मन गुड और नौ मन घी का नेवज एक बार मे बन जाता है। प्रसाद पूरी नगरी मे वितरित किया जाता है। सावण-भाद्रवा के पास ही होमशाला है, जहा दुर्गाष्टमी को हवन होता है।

“श्री मंदिर से लौटते समय मुख्य द्वार के बाहर की ओर सजाये सगमरमर के शिल्प वैभव का देखना न भूले। यह सगमरमर का कलात्मक सिंहद्वार सेठ चादमल ढड्ढा ने बनवाया जिसका महान् शिल्पी था हीरा सुथार। काबो की मनोगम पक्किया, केवडे के पत्ता मे लिपटी सर्पकितिया, पूरी बजाते सपेरे, बनस्पति और जीव-जन्मुओ का कुशल सजीव अकन सब अद्भुत और आकर्षक लगता है। हीरा सुथार ने जिस मनोयोग के साथ तन्मय होकर इस कलाकृति को तैयार किया वह सब मातेश्वरी की कृपा का प्रतिफल है। इसकी एक सुन्दर अन्तर्कथा है जिसे बहुत वर्ण पूर्व सुनने का सोभाग्य प्राप्त हुआ।

‘कथामत’ का लेखक युवावस्था मे (जब वह २१ वर्ष का था) देशनोक घूमने चला आया। वह सेवापुरा से पैदल चलमर जयपुर आया। जयपुर से ट्रेन पकड़ी और सुबह देशनोक आ उतरा। उसने अपने जीवन मे चीलो स्टेशन पर सर्वप्रथम राष्ट्र ध्वज के दर्शन किये। इस कारण तिथि याद रह गई। १५ अगस्त, १९४७ का शुभ दिन था। देशनोक के रेल्वे स्टेशन पर भी वही तिरंगा लहरा रहा था। कुछ देर तो वह ध्वज की ओर निहारता रहा, फिर श्रीमँद की राह ली। मंदिर मे उसे दो ही चीजो ने आकर्षित किया। एक तो थे चुहल मचाते कावे और दूसरा था मंदिर का मुख्य द्वार। इस कलाकृति को देखकर तो मन मोहित हो चला। अपराह्न वह नहड़ी जी के यहा घूमता हुआ पहुचा। नेहडीजी के मंदिर की परछाया में दो बयोबद्ध चारण बैठे बातें कर रहे थे। पूछने पर उनम से एक ने श्रीमँद के मुख्य द्वार की शिल्प कथा कह सुनाई।

बद्द सज्जन ने बताया कि उसने उस शिल्पी को देखा था। सगमरमर के बीच बैठा वह काम मे लगा रहता। वर्षों तक काम चलता रहा। सेठ कही बाहर रहता था। वहा से जब देश आया तो शिल्पी से पूछा— ‘हीरा, अब किताक दिन ओर लागसी।’

दूसरी बार जब सेठ आया तो वही प्रश्न था ओर वही उत्तर।

तीसरी बार सेठ उतावला (व्यग्र) हो उठा ओर पूछा, हीरा काम पूरे रुद हुसी।'

हीरा न उत्तर दिया, 'जोगमाया ही जाणे। सठा थारी म्हारी ऊमर मं तो नाम पूरा व्है नहीं।'

'जणा मने दूसरी जगा सू कारीगर त्याणा पडसी।'

आ आप जाणो।' हीरा अपनी छीणी हथौडी लेझर घर चला गया। आगरे संनय शिल्पी आये। हीरा न प्रस्तावित निर्माण काय का कहीं कागज पर चिग्रामन तो किया नहीं था। श्रीमदिर के एक ओर तराशे हुए पापाण खण्डों के तीन दरखाजे बन रहे थे। कुछ समझ में आया नहीं। नये शिल्पी कुछ नहीं का पाये।

सेठ हार खाकर किंग हीरा को बुलाने गया। हीरा ने साफ उत्तर दे दिया कि भगवती ने दाल रोटी दे रखी है। अब मुझ से काम होगा नहीं।

सेठ धमसकट मे पड गया। वह बीकानेर महाराजा गगासिंह से मिला। सारी बात कह सुनाई। राजा ने अपने किसी बडे सामन्त को हीरा को बुलाने भेजा। उसे भी कहीं उत्तर मिला। अन्त मे महाराजा गगासिंह एक दिन स्वयं धाडे पर चढ़कर हीग की गुवाढी मे पहुच गये। राजा को आया देख हीरा हाथ जोड़कर खडा हो गया। राजा ने उसके कुशल समाचार पूछे। मंदिर का प्रसग चलाया। हीरा ने उत्तर दिया— जोगमाया री दया है। आपरा राज में सत्र सुख चैन है। आप पधार आया तो चाल्या सरसी।'

वहा छीणी हथौडी फिर चलने लगी। सिहद्वार के शीर्ष भाग तक काम पूरा कर दिया। गवाक्ष वा अलमरण अदृष्टा ही रह गया। हीरा नहीं रहा जो कुछ वह रुर गया वही अद्वितीय है।

'श्रीमैंद देशनोक के सामने पूर्व दिशा मे श्रीकरणी सभागार है। भव्य भवन है। ५२X३६ फीट का विशाल मडप है। सगमगमर का सुन्दर फश है। यात्रिया के लिए सभागार का आकर्षण भवन की दीवालों पर बने एीन चित्र है। माता मेहर्ई के जीवन प्रसगा से जुडे २२ भित्ति-चित्र है। पट्टशती जयन्ती पर श्रीकरणी मंदिर निजी विन्यास की ओर से इस सभागार का निर्माण हुआ। प्रात से साय तक सभागार दर्शकों के लिए खुला रहता है।'

“देशनोक मे यात्रियो के ठहरने के लिए अनेक धर्मशालाएं, विश्राम-स्थल और अतिथिगृह है। श्रीमँड के सामने श्रीकरणी विश्राम-स्थल है जिसके मुख्य भवन मे १३ कमरे और पीछे की ओर २२ कमरे है। कमरो के सामने लम्बे बरामदे मे ५० आलमारिया है। इसी विश्राम स्थल से लगे दक्षिण मे दस पृथक् विश्राम कक्ष हैं, जिनकी चाबी विश्राम-स्थल के व्यवस्थापक के पास रहती है। विश्राम स्थल (धर्मशाला) के कमरो का नाममात्र का किगया है। जल और प्रकाश की सुविधा है। श्रीमँड देशनोक के सामने प्रशस्त प्राण है। तोण द्वार है। श्रीमँड और विश्राम स्थल के दक्षिण भाग मे यात्री विश्रान्ति गृह है। बीच मे बड़ा हॉल है, पास मे प्याऊ है, पार्श्व भाग मे सुविधा कक्ष है। श्रीमँड के चारों ओर सड़क बनी है।

“जब विश्राम स्थल और धर्मशालाए नहीं थीं, देशनोक धाम के यात्री श्रीमँड मे ही ठहरा करते थे। वह सुविधा आज भी उपलब्ध है। कोई यात्री चाहे तो मंदिर मे ठहर सकता है। नीचे बरामदे है। ऊपर चार बड़े कमरे है। सब यात्रियो के लिए है। मंदिर के उत्तर मे मोहता धर्मशाला है। पास मे ही राजस्थान पर्यटन विकास निगम द्वारा निर्मित श्रीकरणी-यात्री निवास है। भगवती की कृपा से इन दिनो श्रीकरणी-यात्री निवास की व्यवस्था श्री करणी मंदिर निजी प्रन्यास के हाथ मे आ गई है।

“नवरात्रि के दिनो मे आवास की विशेष व्यवस्था रहती है। यात्रियो की सुविधा के लिए लोग निजी गेस्ट हाउस खाली कर देते है। पूरी नगरी यात्रियो की सुख-सुविधा का ध्यान रखती है। देशनोक धाम की यह अपनी विशेषता है।

“श्रीकरणी धर्मशाला (विश्राम स्थल) के उत्तर मे ‘श्री करणी भोजनालय’ का भवन है। पुरुषों ओर महिलाओ के बैठने के लिए अलग-अलग कमरे है। इस भोजनालय मे एक कर्मचारी बारह भास रहता है। कोई गरीब यात्री आ जाये तो भाजन करा देता है। सदावर्त व्यवस्था चलती है।

“भोजनालय मे नवरात्रि पर्व पर विशेष व्यवस्था रहती है। सुबह नो बजे से रात को दस बजे तक कोई भी आओ और भोजन पाओ। यहा राव शेखा को जिमान वाली बाला रिधुवाई का भण्डार चतता है। भूरा भस्तरी की कडाही नौ दिन तक चलती ही रहती है। माँतों के यात्री जीमते रहते है। ~

‘इस भोजनालय मे सौ व्यक्ति एक साथ बैठ कर भोजन कर सकते हैं। पुरुष और महिलाओं के बैठने की व्यवस्था अलग-अलग है। सेवादार तत्पर खड़े रहते हैं। माता के यात्रियों को बड़े स्नेह और सत्कार के साथ जिमाते हैं। लम्बा कुरता पहिने और ऊची चोटी बाधे सेवाभावी महिलाएं आगन्तुक महिला यात्रियों की सार-सभाल रखती हैं। कोई बरतन साफ करने मे लगी है तो कोई परोसने मे। सभी सेवा का लाभ लूटने मे लगे रहते हैं। सेवादल पर भगवती ‘माजीसा’ की कृपा बरसती है। माता मेहाई की अपार लीला है।

ये सब सेवादार एक ही सूत्र में बध हुए हैं। एक ही गाव परिवार से चल कर आते हैं। समस्त भोजन सामग्री अपने साथ लेकर आते हैं। नौ दिन तक जिमाते हैं और चले जाते हैं।

श्री करणी विश्रामस्थल के सामने से जो सड़क जा रही है, यही पास मे ही मातेश्वरी का करणीसर कुवा है। शानदार कुवा है। विशाल टैक है। वितनी ही मोटर चलाओ इस कुण मे कभी पानी नहीं ढूटता। यह ‘सुवापरी संगत’ का प्रत्यक्ष परचा है। चार फीट पानी का भराव बना रहेगा।

‘देशनोक मे माता की पुरातन मंडी पर निर्मित आई मा तेमडाराय का मंदिर है। यह मंदिर सुनारों के बास मे बस्ती के बीच मे है। मंदिर भ तेमडाराय की मनोरम प्रतिमा है। चौकोर पाट पर सातो बहिने उत्कीर्ण हैं। किसी कुशल शिल्पी की कृति है। माता के मुण्डारविन्द बड़े मनोहारी हैं। शीश पर मुकुट और काना मे कुण्डल। सिदूर चर्चित प्रतिमा बड़ी ही सुहावनी लगती है। इसी पाट के पृष्ठभाग पर श्रीकरणी किनियाणी द्वारा पूजित वह पुरातन करण्ड (पूजा-मजूपा) स्थापित है। यह मातेश्वरी का दर्शनीय करड है। यही करण्ड काना चाडावत के लिए सुमेर बन गया था। इस करण्ड की अपार महिमा है। यह करण्ड माता का पुनीत प्रतीक है। इस मंदिर मे नित्य नियमित जात-पूजा होती है। माता क सप्तस छाट पुत्र लाखणजी के वशज मंदिर की पूजा करते हैं।

‘देशनोक की स्थापना से पूर्व अम्बा अण्यवासिनी जागन्कू के बीड़ मे रहती थीं। वह पावन स्थल ‘नेहडीजी’ के नाम से प्रसिद्ध है। श्रीमंड से नेहडी जी तक सड़क बनी हुई है। नेहडीजी श्रीमंड से थोड़ी दूर पश्चिम मे है। बीच मे आरण आता है। नेहडीजी की महिमा न्यारी है। यह पावन

वन दूसरा व्रजधाम है। आम्बा अरण्यवासिनी ने नेहड़ीजी मेरहकर इस वृन्दावन मेर्नौ वर्ष तक गाये चराई हे। गौसेवा मानवता का प्रतीक है। हिन्दू संस्कृति का यह एक उज्ज्वल आयाम है।

“जिसने जीवन भर गोसेवा की वह हमारा आराध्य बन गया। जिसने गायों के लिए अपने प्राण दे दिये, वह हमारा देवता बन गया। गोभक्त जाम्भाजी और गोरक्षक पाबू राठौड़ इसी कारण लोक पूज्य हैं। गोकुल के गोपाल की तो बात ही निराली है।

‘नेहड़ीजी’ उस खेजड़ी का नाम है, जहाँ बैठकर माता मेहाई विलोवण (दधि-मथन) किया करती थी। जागद्धु आगमन पर विश्रम सबत् १४६७ मेरे किसी शुभ वेला में मातेश्वरी ने दही के छीटि देकर नेहड़ी के रूप में खेजड़ी की एक गीली लकड़ी रोपी थी। वही हरी डाली नेहड़ीजी बन गई जो ‘हरी-भरी’ लहरा रही है। शताव्दिया से इस खेजड़ी की पूजा हो रही है।

“इस खेजड़ी के नीचे विक्रम सबत् १९९९ के आश्विन मास मे माता मेहाई की प्रतिमा स्थापित कर दी गई। प्रतिमा के अधोभाग मे इस आशय का शिलालेख अकित है। छोटा-सा सुरम्य देवरा बना दिया। भीतर चार तिबारे खुल रहे हैं। इन सबके ऊपर नेहड़ीजी की पवित्र खेजड़ी फेली हुई है।

“इन्हीं वर्षों में बहुत कुछ बन गया है। सामने प्रागण में सगमरमर लग गया। दोनों ओर दो विश्राम स्थल बन गये। प्रागण में एक पीपल का पेड़ लग रहा है। माता का देवरा, देवरे के सामने का कमरा, बगल का रसोवडा और चारों ओर का परकोटा बीकानेर के महाराजा गगासिंह ने बनवा दिया था। मंदिर के पिछले भाग में एक गुफा है, जहाँ आत्मस्वरूप बाबा का धूणा है। बाबा ने चालीस वर्ष तक यहाँ रहकर तपस्या की। कहते हैं माता मेहाई की प्रेरणा से ही बाबा सागरिया से चलकर यहाँ आया। मंदिर से थोड़ी दूर पश्चिम में भोम्पाजी की खेजड़ी है, खेजड़ी के सामने थान है। नेहड़ीजी के मंदिर की ओर से सध्या को बाबा के धूणे पर और भोम्पाजी के थान पर दीपक जलात है।\*

‘नेहडीजी के मंदिर में बाहर के प्रागण में प्रवेश करते ही मातेश्वरी अम्बा अरण्यवासिनी के दर्शन होते हैं। जाग्रत प्रतिमा है। माता का बाला स्वरूप है। बाये हाथ में त्रिशूल है। मुख-मण्डल पर अद्भुत सौम्य भाव है। प्रतिमा का शृगार होता है। श्रीमँड की भाति जोत-आरती होती है। प्रसाद वितरित होता है। जो वारीदार (पुजारी) देशनोक के श्रीमँड में पूजा करता है, वही परिवार नेहडीजी की पूजा करता है। दोना मंदिर एक ही माने जाते हैं। प्रतिमा की जोत-आरती के साथ ही नेहडीजी की खेजडी की जोत-आरती होती है।

खेजडी नेहडीजी माता का जीता जागता स्मृति-चिह्न है। नेहडीजी प्रेमी भक्तो का कल्पतरु है। नेहडीजी के कोमल पत्ते, अकट्क टहनिया और बक्राकृत लहराते हुए छाटे-मोटे डाले कितने सुहावने लगते हैं। नेहडीजी की सबसे बड़ी महिमा यह है कि यह पावन-स्थल शताब्दियों से एक पुनीत साधना स्थल रहा है। यहा आते ही मन एक उच्च भाव भूमि पर विचारण करने लगता है। घण्टे दो घण्टे बैठकर देखे, करणी करणामयी यहा आनन्द वर्षण करती रहती है।’’

करणी माताजी के आने वाले भक्तो को मातुश्री के दर्शनों के अतिरिक्त निम्न वस्तुएँ भी देखनी चाहिए—

- १ श्री करणी माता द्वारा निमित गुफा,
- २ काबा का जुलूस,
- ३ मुर्य द्वार की आकर्पक कलापूर्ण कारीगरी,
- ४ मुख्य स्थान नेहडीजी,
- ५ श्री करणी माता की पूजा की पेवटी।

**श्री करणी माता के अन्य स्थानों पर देवालय**

श्री करणी माताजी के देश में पूजित एव स्थापित देवालयों, लोकदेवी एव शाक्त मत के सम्बन्ध में श्री करणी-कथामृत<sup>१</sup> में विस्तृत जानकारी दी गई है जिसके अनुसार—

“पश्चिम भारत में शताव्दियों से जूनी जोगण आई माता की पूजा-अर्चना चल रही है। सात सौ वर्ष बाद पश्चिम राजस्थान में फलौदी के निकट ग्राम सुवाप में मेहा चारण के घर आबडा मामडाई बाला रिधुबाई के रूप में कृपा कर फिर अवतरित हुई, जिनके पावन प्रसगों से हम सब अवगत हैं।

“माता मेहाई के चार मुख्य धाम हैं— सुवाप, साठीका, देशनोक और परमधाम रिणमैठ गडियाला। इन चारों धामों के अतिरिक्त गाव-गाव के करणी माता के थान, मैठ या मंदिर हैं। अधिकाश स्थानों पर शक्ति का प्रतीक विशूल अक्षित है। जाल खेजड़ी अथवा नीम पर लाल ध्वजा फहरा रही है। कही-कही माता की प्रतिमा स्थापित है। अनेक स्थानों पर नित्य जोत-आरती होती है।

राजस्थान से बाहर मालवा, गुजरात, उत्तरप्रदेश और हरियाणा में अनेक स्थानों पर करणी माता के मंदिर हैं। यमुना तट पर श्रीकरणी माता मंदिर, मथुरा, श्रीकरणी मंदिर गोविन्दपुरी हरियाणा, श्रीकरणी मंदिर नागवाडा, भोपाल प्रसिद्ध मंदिर है। नरसिंहगढ़ (मध्य प्रदेश) में माता का विशाल मंदिर है। जोरहाट (असम) में करणी माता का मंदिर है।

“राजस्थान में करणी माता के अनेक प्रसिद्ध मंदिर हैं, जिनमें नियमित रूप से जोत-आरती होती है। अनेक गावों में इन पिछले वर्षों में नित्य जात-आरती आरम्भ हो गई है। ऐसे गावों की सख्त्या बढ़ती जा रही है। कुछ उल्लेखनीय मंदिरों के नाम—

श्री करणी मंदिर करणीघाट पुष्कर (अजमेर)

श्री करणीधाम छोटिया (चूरू)

श्री करणी मंदिर मथाणिया (जाधपुर)

श्री करणी मंदिर कीतासर (चूरू)

श्री करणी मंदिर बाला किला (अलवर)

श्री करणी मैठ खुडद (नागोर)

श्री करणीकोट दाता (सीकर)

श्री करणीजी का मंदिर चारण छात्रावास (जोधपुर)

श्री करणी धाम छावसरी (झुन्द्हुनु)

श्री करणी मंदिर चदपुरा (जयपुर)

श्री करणी मंदिर नान्ता (कोटा)

‘चारणा’ के हर गाव में करणी माता का मंदिर मिलेगा। इनमें कुछ मंदिर तो बहुत ही भव्य और व्यवस्थित हैं। इनमें से अनेक गावों में जोत-आरती होती है। शेष में धूप-दीप करते हैं। कुछ गावों में मंदिर में माइक व्यवस्था भी है जहाँ प्रातः सायं माता का चिरजागान होता रहता है। गाव के शात वातावरण में चिरजागान सुहावना लगता है। चिरजागान और नाम सकीर्तन से गाव के वातावरण में सात्त्विकता आ जाती है।

‘राठोड़ राजपूत करणी माता’ को अपनी कुल देवी मानते हैं। घर-घर में करणी माता की पूजा होती है। पुष्करणा समाज में करणी माता का बड़ा इष्ट है। अपने घरों में माता की पूजा करते हैं। विश्नोई समाज और सोनिया में माताजी की बड़ी मान्यता है। पश्चिम राजस्थान के सभी जिलों में अधिकाश हिन्दू समाज में करणी माता की बड़ी मान्यता है। भारत में लाखों परिवार करणी माता से जुड़े हुए हैं। आई मा परमेश्वरी की पातड़ी की भाति करणी माता की चादी, सोन की मूरत गले में धारण करते हैं। नोहर-भादरा की ओर देखने में आया, महिलाएं करणी माता की मूरत का सोने का काठला (कठहार) पहनती हैं। पश्चिम भारत में आइ मा छूगराय और श्री करणी मेहाई की पूजा का प्रचलन है। शुक्ल पक्ष की सप्तमी को छूगराय और चादणी चौदस को करणी माता के प्रसाद चढ़ाने की परम्परा शताब्दियों से चल रही है। उस दिन घर-घर में नवज (नेवेद्य) बनता है। माता को पूजते हैं। नवरात्रि का पावन पर्व मातृ-उपासना का सर्वमान्य समय माना जाता रहा है। सम्पूर्ण भारत में समस्त हिन्दू समाज नवरात्रि के दिनों में किसी न किसी रूप में माता को मनाता है।

### लोक देवी

लोक देवी के रूप में आवङ्ग माता और करणी माता की सर्वाधिक मान्यता है। गुजरात की सर्वप्रिय लोकदेवी खोड़ियारजी है। खोड़ियार के बाद दैचरामाता की गुजरात में बड़ी मान्यता है। आबू के पास आरापुर श्वेत पर्वत पर अम्बाजी का मंदिर है जो धोलामैड़ की राय कहलाती है। लोकदेवी के रूप में अम्बाजी की बड़ी मान्यता है। दर्शनार्थियों की भीड़ लगी रहती है। अम्बाजी चमुड़ा चारण की वहिन थी और विश्वदी जी चमुड़ा चारण की पुत्री, इसी से विश्वदी चमुड़ा इ कहलाती है। लान्देवी विश्वदी अग्रपूर्णा

के रूप में विख्यात है। विरवड़जी के अनेक मैँढ हैं। जोधपुर जिले में विराई गाव में नदी के किनारे माल्हण माता का थान है। माल्हण माता की कृपा से विराई में जलाभाव नहीं है। लोकदेवी के रूप में राजलवाई के अनेक मैँढ हैं। जिनमें रोहिट के पास गढ़वाड़ा का मैँढ और लाडणू के पास समना का मैँढ प्रसिद्ध है। बड़ी लोक-मान्यता है। समना में एक बृद्ध मोतीसर माता का पुजारी है। बड़ी भाव-भक्ति से पूजा करता है। स्वरचित चिरजाए सुनाता है।

‘नागौर जिले में इन्दोखा गाव में लोक देवी गीगायजी का प्रसिद्ध थान है। चारा ओर ओरण है। माता की बड़ी मान्यता है। माता के प्रसिद्ध पवाड़े हैं। नावद में गीगाय माता ने अपने बछड़ों को नाहर बना दिया था, जिन्हे देख कर मुसलमान आक्रान्ता सिर पर पैर रखकर भाग गये। इसी प्रकार लोक-देवियों के अनेक नाम हैं। अनेक धाम हैं। बहुसूखक हिन्दू समाज इन लोक पूज्य देवियों से जुड़ा हुआ है। लोग भाव-भक्ति से माता की जात देते हैं, पूजा-अर्चना होती है, मेले भरते हैं, माता के नाम पर सुवासिनी जिमाते हैं, रात जगाते हैं, सामाजिक समारोह अथवा परिवारिक उत्सव में माता की चिरजाए गाते हैं, माता को मनाते हैं। महिलाएं सामूहिक रूप से माता की चिरजाए गाती हैं, जब माता की चिरजाए गा चुकी तो अन्त में भैरव गायेंगी। भैरव माता का पार्पद है, अग्रगामी है। चारण समाज की महिलाएं भैरव को बीरा (भाई) कहकर सम्बोधित करती हैं। कहते हैं जब चिरजागान होता है भैरव एक पैर पर खड़ा होकर तन्मयता के साथ माता का गुणगान सुनता है। भैरव को विश्राम देने के लिए अन्त में भैरव गाया जाता है। शाक्त परिवार में मातेश्वरी और भैरव परिवार के सम्माननीय सदस्य माने जाते हैं। ऐसे परिवार माई से कृपा-भाव की कामना करते हैं। काई छोटा-मोटा काम हो तो भैरव से निवेदन कर देते हैं। भैरव कारज सुधार जाता है।

### शाक्त मत

“सम्पूर्ण चराचर जगत शक्ति से ओत-प्रोत है। शक्ति अनन्त है, सर्वत्र है और सबमें व्याप्त है। आदि-शक्ति ज्योतिर्मयी है और स्वभाव से आनन्दमयी। तेज, बल, ऐश्वर्य, विभूति शक्ति के गुणधर्म हैं। सृष्टि में जो विविधता दृष्टिगोचर हो रही है, यह सब जगद्वाका का लीला विलास है। इस विविधता के पञ्चल

‘मानव आदिकाल से ही शक्ति का पुजारी रहा है। शक्ति धर्म अन्यथद्वा पर टिका हुआ नहीं है। यह जीवन का शाश्वत सत्य है। पूर्ण वैज्ञानिक और व्यावहारिक है। सभी मत मतान्तर शक्ति का लोहा मानते हैं। सभी धर्मों में किसी न किसी रूप में शक्ति की उपासना चल रही है। मानव शक्ति के बिना शून्य है। जब मानव पर कष्ट आता है तो वह अपने इष्टदेव को पुकारता है। जब देवताओं पर सकट आता है तो वे परिव्राण पाने के लिए शक्ति का स्मरण करते हैं। स्तव गान करते हैं।

शास्त्र में ‘शक्ता एव द्विजा सर्वे’ कहा गया है। इसके पीछे एक गृह रहस्य है। जो मानव सासारिकता से ऊपर उठना चाहता है, जो धार्मिक भावना से अनुप्राणित है, उसे इसी जीवन में एक नई दृष्टि मिल जाती है। ऐसे सभी लोग किसी न किसी रूप में शक्ति के उपासक हैं। वे शक्ति-भावना को जीवन में मान्यता देते हैं। पल भर के लिए भी शक्ति के प्रभाश से विमुख नहीं होना चाहते।

करणी माता का मंदिर देशनोब्क में तो ही ही साथ ही सुवाप वह पवित्र स्थान है जहा माता ने रिधू बाई के रूप में जाम लिया तथा अपना बाल्यकाल व्यतीत किया। ग्राम साठीका जहा माता लीलारूप में विवाहिता होकर गई एक पवित्र धाम है जहा मातुश्री करणीजी ने सदेह लीला समाप्त कर देह त्याग किया तथा भवगती की ज्योतिर्लीन हो गई।”

पारीका के एक अवटक सोतडो (जोशी) की कुल देवी करणी माता बताई गई है।\*

\* करणी माता का ग्रामधर्म आज से लगभग ६० वर्ष पूर्व हुआ था जबकि पारीका का यह अवटक अनानि है जिसकी जात प्रथम जनकारी सबत ९०० की है जहा पुक्कर में ग्रामणों की जनगणना पारीक कुल भूगण सुधन्वाजी न कराई थी। अत बाद में भगवती स्वरूपा मा करणी द्वारा सोतडा अवटक के पारीकों की मनाकामना पूर्ण करन के कारण उन्होंने करणी माता का अपनी कुल देवी के रूप में पूजना प्रारम्भ कर दिया हा यह सभव है।

\* कुछ विद्वान सातडा अवटक की कुन देवी जहा करणी माता का बतात हैं, वहीं कुछ विद्वान सातडा अवटक की कुल देवी कुमारिका का बतलात है।

## कालीः भद्रकालीः कालिका. वरदायिनी माता

काली, भद्रकाली एवं कालिका भगवती के ही स्वरूप हैं, इनमें भेद नहीं है तथापि हिन्दू धर्मकोष<sup>१</sup> में माता के तीनों स्वरूपों की जो व्याख्या की गई है वह निम्न प्रकार है—

### कालिका

काले (कृष्ण) वर्णवाली। यह चण्डिका का ही एक रूप है, इसके नामकरण तथा स्वरूप का वर्णन कालिका पुराण (उत्तरतन्त्र, अ ६०) में निम्न प्रकार से किया गया है— ‘इन्द्र के साथ सभी देवतागण हिमालय में गगावतरण के पास महामाया वो प्रसन्न करने लगे। उनके द्वारा स्तुति किये जाने पर देवी ने मातत्रवनिता की मूर्ति धारण करके देवताओं से पूछा ‘तुम अमरों द्वारा किस भाविनी की स्तुति की जा रही है? किस प्रयोजन के लिए तुम लोग मातह-आश्रम में आये हो? ऐसा बोलती हुई मातही के शरीर से एक देवी का रूप प्रगट हुआ। उसने कहा, देवगण मेरी स्तुति कर रहे हैं। शुभ्म और निशुभ्म नामक दो असुर सभी देवताओं को पीड़ित कर रहे हैं। इसलिए उनके वध के लिए समस्त देवताओं द्वारा मेरी स्तुति हो रही है।’ मातही की काया से उसके निकल जाने पर वह घोर काजल-सदृश कृष्णा (काली) हो गई। वही कालिका कहलायी, जो हिमालय के आश्रय में रहने लगी। उसी को ऊपर लोग उग्रतारा कहते हैं। क्योंकि वह उग्र भय से भर्तों का सदा त्राण करती है।’

### काली

शक्ति में शक्ति के आठ मातृका रूपों के अतिरिक्त काली की चर्चा का भी निर्देश है। प्राचीन काल में शक्ति की, कोई विशेष नाम न लेकर, देवी या भवानी के नाम से पूजा होती थी। भवानी से शीतला का भी बोध होता था। धीर-धीर विकास होने पर किसी न किसी कार्य का सम्बन्ध किसी

विशेष देवता या देवी से स्थापित होने लगा। काली की पूजा भी इसी विकासक्रम में प्रारम्भ हुई। त्रिपुरा एवं चटगाव के निवासी काला बकरा, चावल, केला तथा दूसरे फल काली को अर्पण करते हैं। वहाँ काली की प्रतिमा नहीं होती, केवल मिट्ठी का एक गोल मुण्डाकार पिण्ड बनाकर स्थापित किया जाता है।

मंदिर में काली का प्रतिनिधित्व स्त्री-देवी की पतिमा से किया जाता है, जिसकी चार भुजाओं में, एक में खद्ग, दूसरी में दानव का शिर, तीसरी वरद मुद्रा में एवं चतुर्थ अभय मुद्रा में फैली हुई रहती है। कानों में दो मृतकों के कुण्डल, गले में मुण्डमाला, जिहा तुङ्गी तक बाहर लटकी हुई, कटि में अनेक दानव करों की करधनी लटकती हुई तथा मुक्त केश एड़ी तक लटकते हुए होते हैं। यह युद्ध में हराये गये दानव का रक्तपान करती हुई दिखाई जाती है। वह एक पैर अपने पति शिव की छाती पर तथा दूसरा जघा पर रखकर खड़ी होती है।

आजकल काली को कबूतर, बकरा, भैसों की बलि दी जाती है। पूजा खद्ग की अर्चना से प्रारम्भ होती है। बहुत से स्थानों में काली अब वैष्णवी हो गई है। (दे कालिका पुराण)।

### भद्रकाली

काली के सौम्य या वत्सल रूप को 'रात्या' या भद्रकाली कहते हैं, जो प्रत्यक बगाली गाव की रक्षिका होती है। महामारी आरम्भ होने पर इसके सम्मुख प्रार्थना व यज्ञ किये जाते हैं। काली को उदार रूप में सभी जीवां की माता, अन्न देने वाली, मनुष्या व जन्तुओं में उत्पादन शक्ति उत्पन्न करने वाली मानते हैं। इसकी पूजा फल-फूल, दुध, पश्ची से उत्पन्न होने वाले पदार्थों से ही की जाती है। इसकी पूजा में पशु बलि निषिद्ध है।

### काली

लगभग इसी स मिलती-जुलती कथा 'दुर्गा सप्तशती' में भी है। शुभ-निशुभ के उपद्रव से व्यथित देवताओं ने हिमालय पर देवी-सूक्त से देवी को बार-बार जब प्रणाम निवेदित किया, तब गौरी देह से कौशिकी का प्राकट्य हुआ और उसके अलग होते ही अम्बा पार्वती का स्वरूप कृष्ण-वर्ण हो गया, वे ही काली नाम से विद्यात हुई।

तस्या विनिगताया तु कृष्णाभूत् सापि पार्वती।  
कालिकेति समाख्याता हिमाचलकृताश्रया॥  
दुर्गा सप्तशती ५/८८

आदि-दैत्य मधु और कैटभ के कुलो मे उत्पन्न शुभ-निशुभ नाम के दो दैत्यो ने उग्र तपस्या कर ब्रह्माजी से अजेय होने का वर प्राप्त किया। तीना लोको पर उन्होने आक्रमण किया। सारे देवता निर्वासित किये गये। ब्रह्मा, विष्णु, शिव सहित इन्द्रादि देवों ने जाहवी तीर पर 'नमो देवै' इस स्तोत्र से त्रिपुराम्बा की स्तुति की। त्रिपुराम्बा ने प्रसन्न होकर मौरी को भेजा। मौरी ने देवों का वृत्तान्त सुनकर काली रूप धारण किया और शुभ-निशुभ द्वारा प्रेरित चण्ड-मुण्ड नामक दैत्यो का वध किया।<sup>१</sup>

### भद्रकाली

भद्र शुद्धात्मविज्ञान भद्रलोकानुरूप भद्रल च वा कलयति जनयतीति भद्रकाली।

इस निर्वचन के अनुसार भद्रकाली शब्द का अर्थ है, 'शुद्धात्मविज्ञानदात्री शक्ति'।<sup>२</sup>

### स्थान

(१) काली मा के स्थान भागतवर्ष मे अनेकानेक है तथा भक्तलोग अपनी अपनी आस्थानुसार वहा जाकर भगवती की पूजा, आराधना करते है, जात-जड़ूले उतारत है। राजस्थान मे भी भगवती काली के मंदिर कई स्थानो पर है जिनमे बीकानेर जिलान्तर्गत नापासर एव अजमेर जिलान्तर्गत पुष्कर विशेष उल्लेखनीय है। अमरनाथ पाठक के अनुसार- 'तीर्थगुरु पुष्करराज मे, पुष्कर के उत्तर की ओर (मारवाड मोटर बस स्टैड के पाम) पहाड़ी पर भगवती के इक्यावन शक्तिपीठो मे से एक प्रमुख शक्तिपीठ है। यहा भगवती सती मी कलाई का मणिबध गिरा था। यहा मणीबधो की पूजा होती है। यहा पर माताजी

<sup>१</sup> कल्याण- शक्ति अक्ष वर्ष ९(१९३४) पृ ११९ कल्याण संक्षिप्त श्रीदेवीभगवताक वर्ष ३४(१९६०), पृ ६१५ कल्याण शक्ति उपासना अक्ष वर्ष ६१(१९८७) पृ २५९

<sup>२</sup> कल्याण शक्तिअक्ष, वर्ष ९ (१९३४) पृ ४१४

की एक भव्य मूर्ति है जिसे यहा के लोग कालिका माता के नाम से पूजते हैं।<sup>१</sup>

(२) राजस्थान के ऐतिहासिक दुर्ग चित्तोड़ में भी भगवती कालिका का एक भव्य प्राचीन मंदिर है। मंदिर में अखण्ड ज्योति जलती रहती है। मंदिर में स्तम्भों पर अगणित मूर्तियाँ एवं बेल-बूट बने हुए हैं। 'इसका निर्माण मोरीवश के शासक मोरी ने कराया था, यहा ९वीं शती का एक शिलालेख भी है।<sup>२</sup>

### भवाल का कालिका माता का मंदिर

कालिका माता का एक विशाल एवं प्राचीन मंदिर नागौर जिलान्तर्गत मेडता तहसील के ग्राम भवाल में भी है, जहा कालिका देवी की मूर्ति के साथ ही ब्रह्माणी माता की भी मूर्ति है। दोना मूर्तिया तीन-तीन फुट की है। काली माता को ढाई प्याल मंदिरा के भोग के रूप में अर्पित किये जाते हैं, जो केवल चादी के प्याले म ही माता स्वीकार करती है। (मंदिर निर्माण एवं चमत्कारों के सम्बन्ध में चतुर्मुखी माता ब्रह्माणी के शीर्षक के अन्तर्गत देखें।)

इस स्थान का वर्णन जोधपुर राज्य के इतिहास<sup>३</sup> में निम्न प्रकार किया गया है—

भवाल, यह स्थान मेडता से १२ मील दक्षिण म है। गाव के बाहर महाकाली का मंदिर है। यह पहले पचायतन<sup>४</sup> मंदिर था, पर अब चारों कोनों पर के देवालय नष्ट हो गये हैं। मंदिर के द्वार पर विष्णु की मूर्ति बनी है, जिसकी दाहिनी ओर ब्रह्मा और बाई ओर शिव है। ऊपर नवग्रह बने हैं। भीतर बीस हाथों वाली महाकाली की मूर्ति है, जिसकी बाई ओर ब्रह्माणी है। दोनों मूर्तियाँ नवीन प्रतीत होती हैं। बाहर के तीन ताकों म से एक में

<sup>१</sup> तीर्थगुरु पुष्कराज अमराथ पाठक प ११

<sup>२</sup> भारत के दुर्ग ल दीनानाथ दूज पु ४५

<sup>३</sup> जोधपुर राज्य का इतिहास, प्रथम खण्ड ल गौरीशंकर होगारा आज्ञा पृ ३५ ३६

<sup>४</sup> पचायतन मंदिर म पाच मंदिर हात है—मुट्ठ मंदिर मध्य म और शम चारों कानों पर। विष्णु के पचायतन मंदिर के मध्य का मुट्ठ विशाल मंदिर विष्णु का हात है और मंदिर की पञ्चमा के चारों कानों म ईशान काण म शिव आम्रव म गणपति नैऋत्य म सूर्य और वायव्य काण म देवी के छाट छाट मंदिर हात है।

महिपासुरमर्दिनी, दूसरे में गणेश और पश्चिम के तीसरे ताक में एक छ हाथों वाली मूर्ति है, जिसमें सूर्य, शिव एवं ब्रह्मा का मिश्रण पाया जाता है, क्योंकि ऊपर के दो हाथों में नाल सहित कमल (नीचे के दाहिनी ओर के दोनों हाथ टूटे हैं) और शेष में से एक में पाश तथा दूसरे में चक्र है। सभा मण्डप में स्तम्भ सोलकिया के समय के बने हैं। मंदिर के सामने दो देवालय हैं, जो सुरक्षित दशा में हैं। इसमें विस ११७० (चैत्रादि ११७१) ज्येष्ठ बदी १० (ईस १२१४ ता २ मई) का एक लेख है, जिससे यह अनुमान किया जा सकता है कि यह मंदिर १२वीं शताब्दी के बाद का निर्मित नहीं है। विस १३८० माघ बदी ११ (ईस १३२३ ता २४ दिसम्बर) के लेख से प्रतीत होता है कि उस समय इसका जीर्णोद्धार हुआ होगा।

### भकरी का भद्रकाली माता का मंदिर

यह स्थान पारीकों की कुलदेवी के रूप में प्रमुख रूप से माना जाता है। भद्रकाली माता का स्थान ग्राम तापडवाडा में है। अजमेर से भकरी ६० कि.मी. की दूरी पर है। मेडता से अजमेर सड़क मार्ग पर भकरी ४० कि.मी. है। भकरी से तापडवाडा दक्षिण में ३ कि.मी. है जहाँ माता विराजती है। भकरी के किले में शीतला माता का मंदिर है।

माता के मंदिर में चैत्र के नवगत्रों में ९ दिन तक अष्टाङ्ग ज्योति जलती है तथा ९ दिन तक रामायण का अष्टाङ्ग पाठ होता है। इस अवसर पर हवन भी होता है। ये मारे कार्यक्रम जनसहयोग से सम्पादित होते हैं। स्थानीय लोग श्रद्धानुसार अपना योगदान देते हैं।

अभी हाल ही में स्थानीय लोगों के जनसहयोग से माता के मंदिर के आगे (निज मंदिर के आगे के दो अति पुराने छोटे छोटे सभा मण्डपों के आगे) एक विशाल सभा मण्डप का निर्माण कराया गया है तथा इसके बायीं ओर एक बड़ा बरामदा (सवत् २०५५) दिनांक १९ ९८ को बनाया गया है। बरामदा हाल के बाद में निर्मित हुआ है। बरामदे का निर्माण ‘तिवाडी नदरामजी के सुपुत्र सूरजमलजी पारीक, तापडवाडा ने कराया है।

१ निनाक २३ द १९९१ का लखक न माता के दर्जन किय। साथ म चि शाभित च माहित भी थ।

मंदिर के वर्तमान पुजारी गत ३-४ पीढ़ियों से मंदिर में माता की संवाकर हर है।

मंदिर के बाहर विजय स्तम्भ पर तीन ओर शिलालेख उत्कीर्ण है।

मंदिर ग्राम तापड़वाड़ा के उत्तर की ओर गाव के बाहर है। मंदिर के चारों ओर बाउण्डी बनी हुई है।

माता का गर्भगृह एवं उसके आगे के दो छोटे सभामण्डप अति प्राचीन हैं।

माता के सामने भैरूजी विराजमान है।

माता के आगे निमित दो छोटे सभामण्डपों में दूसरे सभा मण्डप में शीतला माता की मूर्ति है। शीतला माता के पास ही चौसठ योगिनियों की मूर्तियाँ विराजमान हैं।

भद्रकाली माता को कालिका के रूप में मानते हैं। मूर्ति अष्टभुजायुक्त है। मूर्ति के बाई ओर दो जोगनिया माताओं की मूर्तियाँ हैं जो मंदिर के समय की ही प्राचीन मूर्तियाँ हैं।

माता की कोई सवारी नहीं है।

### कुछ घमत्कारिक कथानक

(१) सबत् १९७२ में प्लेग हुआ था। श्री हरिरामजी गोदारा जो माता के भक्त है तथा भक्ति से माता का स्थान बताने हेतु हमारे साथ मंदिर में आय थे<sup>१</sup> ने बताया कि उनके पिता गणरामजी के अनुसार माता ने प्रत्यक्ष बोलकर गाव वालों को कहा कि दो बकरों की बलि दी जावे, गाव में महामारी नहीं फैलेगी। माता के आदेशानुसार माता के दो बकरों की बलि चढाई गई गाव में महामारी नहीं फैली और गाव में महामारी से कोई मौत भी नहीं हुई।

(२) महामारी के समय सबत् १९७२ में ही, गाव वाले बताते हैं, लोगों ने सात माताओं को मंदिर में देखा, जिनके हाथों में खप्पर थे तथा वे सातों माताएं मंदिर से निकल कर उत्तर की ओर चली गईं।

माता का रंग काला है इसलिए माता को भद्रकाली कहते हैं।

<sup>१</sup> टिनाक २३ द १९९९ का लखक माता के दर्शन एवं अध्ययन हतु गया था।

## भोग

माता के वर्तमान में नारियल, सीरा, पुड़ी, लापसी, चूरमा आदि का मीठा भोग ही लगता है। सामिध भोग नहीं लगता।

यह माता पारीकों के अलावा— ब्राह्मणों, जाटों, राजपूतों, माहेश्वरियों आदि के कई अवटकों की कुल देवी है तथा गाव वालों के अतिरिक्त आसपास एवं दूरस्थ प्रदेशों से सभी जाति वाले माता के यहा आते हैं, जात-जड़ले उतारते हैं।

वर्तमान पुजारीजी से तीन पीढ़ी पूर्व पुजारी श्री सीतापुरीजी हुए हैं। सीतापुरीजी को माता प्रत्यक्ष दर्शन देती थी। ऐसा बताते हैं— प्रात एवं सायकाल जब वे माता के दर्शन करने एवं सेवा पूजा करने आते तो माता की पोशाक से भरभूते एवं काटे चुन-चुनकर निकालते थे।

एक बार की घटना है। नवरात्रि में रामायण का अखण्ड पाठ हो रहा था। रामायण का पाठ पण्डित हरसुखजी कर रहे थे। रात्रि में उन्हे माता ने प्रत्यक्ष दर्शन दिये। उन्हे माता ने विराट रूप में दर्शन दिये थे। वे माता के विराट रूप को देखकर डर गये, पसीने-पसीने हो गये तथा बेरे पर जाकर स्नान किया।

माता के भोग और अर्चन हेतु २०-२२ बीघा जमीन अर्पित है। जमीन में कुआ भी है।

मंदिर की परिधि में दो समाधिया हैं। ये समाधिया लगभग पाच सौ वर्ष पुरानी बताई जाती है। जो वर्तमान में जीण-शीर्ण अवस्था में है। इनमें से एक समाधि पर ठाकुर जालमसिंहजी के समय का चरणाकित सगमरमर पत्थर है, जो समाधि के एक कोने पर रखा हुआ है जिस पर सावण बुदी ६ सवत् २०१२ उत्कीर्ण है।

मंदिर के हाल में प्रवेश करते समय बाई ओर सीढियों के पास छण्डित मूर्तिया हैं जिन्हे दीवार में चुन दिया गया है ताकि वे सुरक्षित रहें। नवीन सभा-मण्डप के निर्माण के पहले ये मूर्तिया पुराने सभा मण्डप के पास रखी रुई थीं।

## काजीपुर की भद्रकाली<sup>१</sup>

भद्रकाली माता का एक स्थान जिसे स्थानीय लोग काली माता भी कहते हैं जयपुर से ८० कि.मी., नागौर से १३० कि.मी. व साभर से उत्तर पूर्व में ६ कि.मी. की दूरी पर काजीपुर नामक ग्राम में है। मिट्टी के भूरे टीले पर सिदूर चर्चित पापाण रूप में माता विराजती है जिसका शगार माली पत्ना से किया जाता है। मूल मंदिर अति प्राचीन था, किन्तु मंदिर का वर्तमान स्वरूप वि स २००२ की वैशाख शुक्ला सप्तमी तदनुसार सन् १९४६ में बाशीरामजी वरना जोशी द्वारा निर्मित कराया गया। यह मंदिर लगभग एक बीघा जमीन पर अवस्थित है। भूभाग के मध्य में १० × ८ फुट के कमर में माताजी का विग्रह है तथा इसके आगे ८× १० फुट का बरामदा है।

माता के मंदिर में तीन मूर्तियां विराजमान हैं। भद्रकाली माता की मूर्ति मध्य में तथा उसके दाई आर महालक्ष्मी एवं बाई आर भगवती महासरस्वती की प्रतिमा शोभायमान हैं। भद्रकाली माता का आयुध तलवार है। माता के दाहिनी ओर भैरवजी का स्थान है।

बरना जाशी दूर-दूर से आकर माता के यहा जात-जड़ले उतारते हैं, मनोती मानते हैं माता भक्तों की मनोकामना पूर्ण करती है। विगत सात वर्षों से यहाँ आसोज के नवरात्रा की स्थापना होती है।

ग्राम काजीपुर के निवासियों का कहना है कि जब जब भी ग्राम वालों पर कोई विपत्ति आती, माता स्वयं किसी न किसी रूप में ग्रामवासियों को सचेत कर देती थी।

मंदिर निर्माण के बाद सवत् २००२ में सीकर के मक्खनलालजी गौड़ माता की पूजा अचना के लिए आए। वर्तमान में उनके पुत्र श्यामलालजी माता की पूजा-अचना करते हैं। जिसका व्यय भार स्थानीय ग्रामवासी एवं वरना जोशी उठाते हैं।

यात्रियों की सुविधा एवं रात्रि विश्राम हेतु हाल ही में स्व विड्ल स्वरूपजी जोशी (वरणा) ने मंदिर परिसर में एक धर्मशाला का निर्माण कर सन् १९९८ में माता का अर्पित की है। धर्मशाला में दो हाल, दो छोटे कमरे एवं ६२ पट्टिया का वगमदा है।

<sup>१</sup> माता के गम्भीर में यह जानकारी श्री नवनौतनी पारीक (भाला जागी) न नी है।

## कुरुक्षेत्र की भद्रकाली \*

कुरुक्षेत्र अनेक तीर्थों एवं मदिरों की समागम स्थली के रूप में धर्म-क्षेत्र के रूप में विश्ववित्यात है। यहां पर भगवान् एवं शक्ति ने समय-समय पर अपनी लीलाओं को दर्शाकर भक्तों के कल्याणार्थ कुरुक्षेत्र को पावन देवभूमि का गोरव प्रदान किया है।

कुरुक्षेत्र में करीब तीन सौ साठ मदिर, सात वन (काम्यक, आदिला, शारा, फलका, सूर्य, मधु, शीत), सात नदिया (सरस्वती, वैतरणी, आपागा, मधुखवा, कौशिकी, दृष्टदेवती, हिरण्यवती) और चार पावन कूपों (चन्द्रकूप, विष्णुकूप, रुद्रकूप, देवीकूप) का वर्णन मिलता है। यहाँ स्थित श्री देवीकूप (भद्रकाली) का महत्त्व सर्वविदित है।

झासी मार्ग पर प्रसिद्ध स्थानीश्वर महादेव मदिर से थोड़ी दूर पर स्थित माता भद्रकाली का मदिर इक्यावन शक्तिपीठा में शोभायमान है। इस मदिर के समीप ही महाराजा फरीदकोट की समाधि है जहां नवरात्रा तथा दशहरे में भारी मेला लगता है। इस दिन माता भद्रकाली पर मिट्टी तथा लकड़ी के घोड़े विशेष रूप से चढ़ाये जाते हैं।

कुरुक्षेत्र के इस स्थान पर सती के पैर की एड़ी गिरी थी।

भद्रकाली मदिर कुरुक्षेत्र हरियाणा का एकमात्र सिद्ध शक्तिपीठ है, जहां पर महाभारत युद्ध से पहले पाढ़वों ने विजय की कामना से मा काली का पूजन किया था तथा अर्जुन ने मा की स्तुति 'श्री दुर्गास्तोत्र' के रूप में की। मा काली शक्ति अधिष्ठात्री देवी है तथा उनकी कपा के बिना कोई काम सम्पन्न नहीं हो सकता। महाभारत के युद्ध में विजय पाने के बाद पाढ़वों ने भगवान् श्रीकृष्ण के साथ मा भद्रकाली को भेट स्वरूप घोड़ा समर्पित किया। तभी से अनेक अवसरों पर मनोकामना पूर्ति हेतु देवी पा मिट्टी अथवा लकड़ी के घोड़े चढ़ाये जाते हैं। मा भद्रकाली यदुवशियों की भी कुल देवी मानी जाती है। कहा जाता है कि श्रीकृष्ण एवं बलराम का मुडन सस्कार भी इसी शक्तिपीठ में हुआ था।

काली माता का एक मदिर ग्राम पल्लू, जिला चूरू में भी है जिसका विवरण चतुमुखी माता के वर्णन में देखें।

काली भद्रकाली कालिका-वरदायिनी माता के अन्य कतिपय मंदिर माता के या तो अनेकानेक स्थानों पर मंदिर हैं तथापि उनमें से कतिपय के नाम निम्न प्रकार हैं जिनका उल्लेख कल्याण में किया गया है—

- |                    |   |
|--------------------|---|
| नीर्थक १३८         | १ विध्याचल रेल्वे स्टेशन के पास   |
| नीर्थक १३९         | २ काली खोह-विध्याचल से तीन कि.मी यहां से एक-डेढ़ कि.मी दूर काली देवी का दूसरा मंदिर।  |
| तीर्थक १३९,<br>१७२ | ३ तारापुर-रामपुर हाट स्टेशन-हावड़ा से १२९ मील हावड़ा-क्यूल लाइन पर।   |
| नीर्थक १७९         | ४ कलवत्ता में दो प्रसिद्ध मंदिर—आदि काली व काली मंदिर।  |
| तीर्थक २०८         | ५ मर सेनी (सवडा तहसील-दतिया) से लगभग ६ कि.मी दूर इसे रतनगढ़ की माता भी कहते हैं।  |
| तीर्थक २१६         | ६ उज्जेन में माता के भद्रकाली व महाकाली- दो मंदिर   |
| तीर्थक २३१         | ७ ओकारेश्वर   |
| तीर्थक २४६         | ८ नासिक-भद्रकाली  |
| तीर्थक २७९         | ९ आमेर (महल में) (जयपुर)  |
| तीर्थक २८०         | १० त्रिवेणी (शाहपुरा जयपुर)   |
| तीर्थक ३३८         | ११ वाराणसी-मध्य रेल्वे की बाड़ी-बेजवाड़ा लाइन पर काजीपेट से १० कि.मी दूर भद्रकाली मंदिर।  |
| तीर्थक ३६५         | १२ कावेरी नदी पर कुम्भकोणम नगर-महामाया मंदिर में महाकाली की मूर्ति है।  |
| तीर्थक ४०१         | १३ भोरोल-देवराज स्टेशन, पालनपुर काण्डला लाइन पर देशराज स्टेशन से थराद, थराद से भारोल  |
| तीर्थक ४०३         | १४ हाटकेश्वर (बड़नगर) (अहमदाबाद से महसाना), मेहसाना से बड़नगर रेल्वे स्टेशन, रतलाम इन्डौर लाइन पर पड़ने वाले बड़नगर से यह भिन्न है। |
| तीर्थक ४२२         | १५ गिर्नार-महाकाली शिखर पर गुफा में।  |
| तीर्थक ५१४         | १६ कालज्ञार पर्वत पर, काली-१० शक्ति स्थानों में से एक।  |
| तीर्थक ५१८         | नलहाटी-हावड़ा-क्यूल लाइन के नलहाटी स्टेशन से ३ कि.मी दूर। यहां सती की उदरनली गिरी थी।   |

तीर्थक ५२७	१८, मालवा (उज्जैन)– कालिका।
शक्ति उपासना	१९ दिल्ली से शिमला जाने वाली रेल्वे लाइन पर कालक
अक ४१३	जक्षन- यहा भगवती कालका का प्रसिद्ध मंदिर है।

जैसाकि प्रारम्भ मे बताया गया है काली, कालिका, भद्रकाली माता भगवती के ही स्वरूप है, इनमे भेद नहीं है तथापि पारीको के अवटको मे काली माता के कालिका एव भद्रकाली स्वरूप की ही मान्यता है। अनेकानेक विद्वान् जहा कालिका एव भद्रकाली को निम्न ६ अवटको की कुलदेवी के रूप मे दर्शित करते हैं वही कुछ विद्वान् माता के कालिका व भद्रकाली के अलग अलग स्वरूप को निम्न अवटको की माता के रूप मे दर्शित करते हैं—

### भद्रकाली

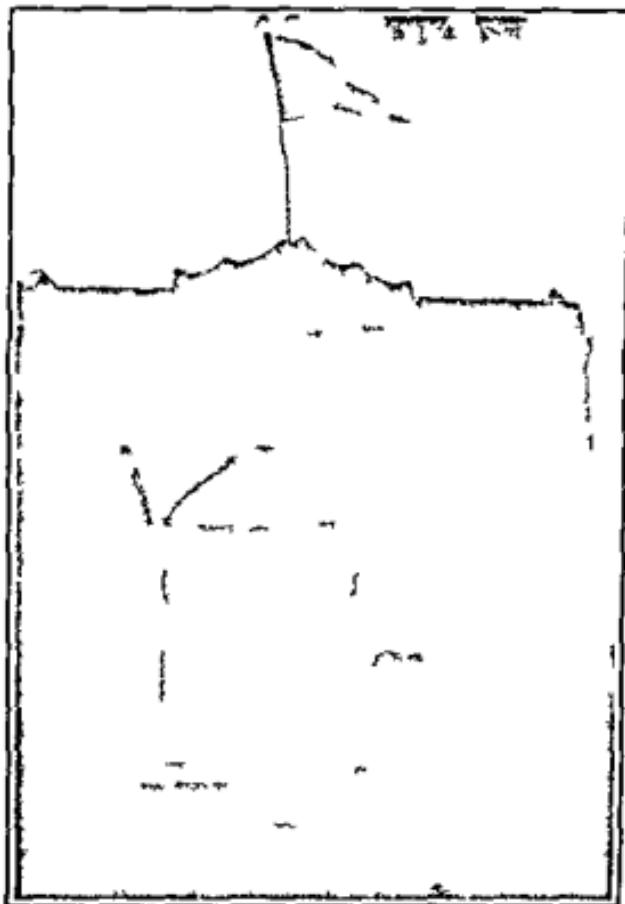
१ वरणा	जोशी
२ पाठक	व्यास
६ भार्गव	तिवाड़ी

### कालिका

२ बिडजारा विणजारा	उपाध्याय
३ दुरघाट दुरगाट धुरघाट	तिवाड़ी
४ पुरपाट	तिवाड़ी



१६८/हमारी कुतदेवियाँ



भद्रकाली – त्योद काजीपुरा (सामर)



भद्रकाली – मारी माता

## कुञ्जल माता

पारीकों के ६ अवटकों की कुलदेवी कुञ्जल या कुञ्जला माता के मानवीय रूप का प्राकट्य<sup>१</sup> माघ सुदी १३ वि स १०८९<sup>२</sup> में नागौर जिले की जायल तहसील के वर्तमान ग्राम डेह में हुआ था। वह शक्ति उपासक थी। आद्या शक्ति दुर्गा की वे भक्ति थी। ये सस्कार उह अपने परिवार द्वारा, नवरात्रों में देवी पूजा के समय ही मिल गये थे। यही कारण था कि वह शिव मंदिर में नियमित रूप से जाकर भगवान् शिव एव आद्या शक्ति भगवती पार्वती का पूजन करती थी। वह शक्ति का अशावतार थी। शक्ति में ही विलीन हो गई। अत माँ दुर्गा उनकी आराध्या होने से मा दुर्गा की पूजा अर्चना कुञ्जल माता के रूप में भी होने लगी एव उन्हे कुलदेवी के रूप में माना जाने लगा।

### दुर्गा माता

यह आद्या शक्ति है। यह पराशक्ति है। 'दुर्गा' का अर्थ है 'जो दुर्गति का नाश करे' क्याकि यही पराशक्ति पराप्वा दुर्गा- ब्रह्मा, विष्णु एव महेश वी शक्ति है। यह विश्वमोहिनी है, ये ही अधिदैविक रूप में पाश, अकुश, धनुष और बाण भी धारण करती है। ये ही महा विद्या है। जो इन्हे जानता है वह शोक और सासारिक दुख (जन्म-मृत्यु) को पार कर जाता है। दुर्गा देवी एक ओर अनुग्रह विधायिनी है तो दूसरी ओर दुष्टनियहकारिणी। वे शरणापन्न जीव पर विशेष रूप से सदा दयार्द्रु रहती है। जब जब लोक मे दानवी

१ पारीकों की छुत्तदवियों के न्यूनार्थ एव परिचय प्राप्ति हतु लखक जब नागौर जिल म गया ता दिनाक २२ ६ १९९९ का श्री सत्यनारायणजी पारीक (खातडिया) ग्राम माकाला जिला नागौर न बताया कि, ऐसा भी सुना जाता है कि माता धरती में मिली थी धरती (भूमि) म ही समा गई।

२ सुश्री प्रज्ञा पारीक निशा क अनुगार कुञ्जलन्द्वी का प्राकट्य वैशाख मुदी १०७६ का सकराण्या जाशी क यहा हुआ तथा शान्ति हतु बारात पौष सुदी १३ सवत् १०८९ का आई। सदर्भ-पारीक गौरव वर्ष १ अक २ पृ ४२

याधा (अव्यवस्था) उपस्थित हो जाती है तथा अनीति, अनाचार, दुराचार के ले जाता है, तब तब वे अचिन्त्य चैतन्य शक्ति (सच्चिदानन्दात्मिका) अवतार न कर नाम-रूप की उपाधि धारण कर लोक-शत्रुआ का (समाज विरोधी तत्त्व का) नाश करती है। दुर्गा सप्तशती मे कहा है—

इत्थ यदा यदा याधा दानवोत्था भविष्यति ।

तदा तदावतीर्याह करिष्याम्यरि — सक्षयम् ॥

(११/५४-५५)

बस्तुत विश्व व्यवस्थिति भगवती का मुख्य प्रयोजन होता है। जब विश्व व्यवस्था बिंगड़ने लगती है, समाज उच्छृंखल होने लगता है, तब वह शक्ति किसी नाम रूप का अवष्टम्भ लेकर प्रादुर्भूत होती है और निश्चानुग्रह के प्रयोगो से लोक-धर्म (सामाजिक व्यवस्था) की स्थापना करती है। यह शक्ति ज्योति सर्वातिशायिनी है, इससे बढ़कर और कुछ नहीं है। अर्थवृशीर्प<sup>१</sup> अथवा दुर्गोपनिषद् की श्रुति कहती है कि वह शक्ति 'दुर्गा' है।<sup>१</sup>

यस्या परतर नास्ति सेषा दुर्गा प्रकीर्तिता ।

दुर्गा देवी की आठ भुजाय है जिनम ब्रह्मश गदा, खडग, त्रिशूल, वाण, धनुष, कमल, खेट (ढाल) और मुङ्ग आयुध है। मस्तक पर मुकुट व चन्द्रमा का चिह्न, तीन नेत्र व लाल वस्त्र धारण किये हैं तथा सिंह के कधे पर सवार हो शूल से महिषासुर का वध कर रही है, ऐसा स्वरूप है माता दुर्गा का।

दुर्गा सप्तशती मे माता के १०८ नाम गिनाय गये हे।

आद्याशक्ति भगवती दुर्गा ने जब महिषासुर की सेना, उसके सेनापतियों एव महिषासुर का वध कर दिया तब इन्द्रादि देवताओ ने देवी की अनेकानेक प्रकार से स्तुति की तथा निवेदन किया— हम जब जब आपका स्मरण कर तब तब आप दर्शन देकर हम लोगों के महान् सकट दूर कर दिया करे।

सस्मृता सस्मृता त्व नो हिसेधा परमापद

यश्च मर्त्य स्तवेऽभिस्तवा स्तोप्यत्यमलानने ॥३६॥

मार्कण्डेय पुराण ४/३६

हिन्दू धर्मकाप के अनुसार— ‘दुर्गा की मूर्ति का अकन शक्ति के प्रतीक के रूप में हुआ है। वे अत्यन्त सुन्दरी (त्रिपुर-सुन्दरी) हैं, परन्तु महती शक्तिशालिनी के रूप में दिखाइ जाती है। उनकी आठ, दस, बारह अथवा अठारह भुजाए होती हैं जिनमें अस्त्र-शस्त्र धारण किये जाते हैं। उनका वाहन सिंह है, जो स्वयं शक्ति का प्रतीक है। वे अपनी शक्ति (एक शम्ब का नाम) से महियासुर (तमोगुण के प्रतीक) का वध करती है।’<sup>१</sup>

दुर्गा के पहले मदिरा एवं मास का भोग लगता था किन्तु अब धरि-धरि शाकतपूजा पद्धति पर वैष्णव धर्म का प्रभाव पड़ने पर दुर्गा बहुत अश में अब वष्णवी हो चुकी है।

भगवती दुर्गा की पूजा नवदुर्गा के रूप में चैत्र शुक्ला प्रतिपदा से वैक्रमीय सवत्सर के प्रारम्भ और आश्विन शुक्ला प्रतिपदा से उसी सवत्सर के मध्यवर्ष में होती है। इस समय क्रमशः बसत एवं शरद् ऋतु होती है। भक्त अशुभ के नाश एवं शुभ की प्राप्ति के लिए भगवती पराशक्ति नवगौरी और नवदुर्गाओं की पूजन बवरात्रों में कर मनवाछित फल प्राप्त करते हैं।

नवरात्रों में जिन नवदुर्गाओं की पूजा की जाती है उन माताओं के नाम निम्न हैं—

प्रथमे शीलपुत्रीति द्वितीय व्रह्मचारिणी।  
तृतीय चन्द्रघण्टेति कूप्याण्डेति चतुर्थकम्।  
पचम स्कन्दपातेति, पष्ठ कात्यायनीति च।  
सप्तम कालरात्रिश्च महागौरीति चाष्टमम्।  
नवम सिद्धिदात्री च नवदुर्गा प्रकीर्तिता।

### कुञ्जल देवी का कथानक

जैसाकि प्रारम्भ में बताया गया है कुञ्जला देवी का प्राकृद्य

ग्राम डेह<sup>१</sup> म हुआ था। आपके पिताजी का नाम मोहन लाल जी पुरोहित था।<sup>२</sup> पारम्पर से ही वह भक्तिभाव में लीन रहती थी। वहते है उसके जन्म के बाद परिवार उत्तरात्तर समृद्धि की ओर बढ़ने लगा तथा कुछ अलौकिक चमत्कार भी हुए। बालिका साक्षात् देवी स्वरूपा थी। माता-पिता लाड-प्यार से बालिका को 'कुज्जला'<sup>३</sup> कहते थे। बाल सुलभ स्वभाव के अनुसार जहाँ सम वय के अन्य बालक-बालिकाएँ खेलत-कूदते वही देवी कुज्जला धीर-गम्भीर रहती तथा हरदम मातेश्वरी के भाव मे ही दत्त-चित्त रहती थी जो उसके घर के बातावरण मे जन्म से ही विरासत मे मिली थी।

देवी कुज्जला के मुखमण्डल पर सदा अलौकिक छटा छाइ रहती थी। भगवत् भक्ति मे निरन्तर लीन रहने के कारण उसके भक्ति भाव से माता-पिता चित्तित रहने लगे। तत्समय प्रचलित सामाजिक मान्यताओं के आधार पर देवी कुज्जला का विवाह वाल्यकाल म हाना निश्चित हुआ।

कुज्जल देवी नियमित रूप से शिव मंदिर जाती थी।<sup>४</sup>

### कुज्जल-नामकरण

माता-पिता ने देवी का नाम कुज्जल क्यों रखा? इसकी जानकारी तो नहीं हो सकी किन्तु सभव है पृथ्वी से स्वयं पगट होने वाली कुज्जला देवी

<sup>१</sup> कुज्जल देवी का ग्रामक्षेत्र पारीकों के संस्कृताण्या जाशी परिवार म हाना मानत है। (पारीक गोरख वर्ष १ अक २ कुल देवी कुज्जल माता ल सुनी प्रजा पारीक दिनश)। जबकि अन्य के अनुसार इनका प्राप्तटप खातडिया परिवार म भी बताया गया है।

<sup>२</sup> श्री सत्यनारायणजी पारीक मंत्री श्री पारीक कुलान्वी कुज्जल माताजी।

<sup>३</sup> श्री महश जी पारीक खातडिया (ग्राम किकरातिपा जिला सीकर राज) न लखक का जब वह पारीक की कुलान्वियों के दर्शन एवं अध्ययन के लिए गया था तब दिनांक २२ द १९९९ का, बताया कि कुज्जल माता का वर्तमान म जहाँ मनि है उसक पास पहतो शिव मंदिर था एसा उन्हन अपन उन्होंने सुना है। (स्मरण रह कि श्री महशजी इतिहास प्रसिद्ध भक्तमति कर्मती बाई के पिता पग्शुराम जी के बशाजों म स है) उनक उन्होंने के अनुसार कुज्जला देवी वहा शिवजी क जल चढान नियमित रूप स जाती थी तथा अपनी आराध्या माँ भगवती आद्याशति की तम्य हाकर पूजा अर्पना किया करती थी।

के नाम पर ही इसका नाम कुजला रखा गया हो। 'कुजा' शब्द का अर्थ पृथ्वी से उत्पन्न होना होता है। हिन्दू धर्म काण्ड में 'देवी' का अर्थ देते हुए बताया गया है कि अपने उत्पत्ति स्थानों से भी देवी के नाम मिले हैं यथा कुजा (पृथ्वी से उत्पन्न) तथा 'ल' शब्द भी देवी एवं पृथ्वी का सूचक है।<sup>१</sup>

आज से लगभग ४५० वर्ष पहले भक्तमति कर्मेती बाई के पिता परस्राम जी को भी दुर्गा माता ने अपने मूल स्वरूप अष्टभुजा सहित सिंह पर सवार होकर दर्शन दिये थे।<sup>२</sup> जिसका विवरण निम्न प्रकार है—

परस्राम जी की उम्र काफी हो गई थी (शायद ४०-५० साल के लगभग) उस समय तक उनके क्रोई सतान नहीं हुई थी, इस दुख से दुखी होकर वे अपनी कुलदेवी 'कुजल माता' की यात्रा सतान की इच्छा से करने का कठिकद्ध हुए और स्त्री सहित 'जायल नगरी' (मारवाड़) के लिए रवाना हुए। उन्होंने यहा तक प्रतिज्ञा कर ली थी कि या तो माता सतान का वर दे देगी नहीं तो इस शरीर को माताजी के बलि चढ़ा देंगे। चलते-चलते रास्ते में जायल नगरी से इस तरफ कुछ रात रहे परस्राम जी हाथ-मुह धोने को निकले। वे माताजी का गहरा ध्यान लगाये हुए थे। प्रात काल की कुछ लालिमा पूर्व दिशा में झलकन लग गइ थी। आकाश में तारों का प्रकाश हो रहा था, शीतल मद पवन बह रही थी। ऐसे सुदर समय में सामने से एक दीसिमान स्त्री का उन्हे आभास हुआ। दर्शन से चित्त प्रसन्न हुआ। उस प्रकाशमान पूर्ति ने पूछा, 'तू कहा जाता है' परस्राम जी ने अपने मनोरथ को बड़े अर्त स्वर से कहा कि मैं अभागा हूँ मेरे सतान नहीं होती सो अब कुलदेवीजी को अपनी बलि देने जा रहा हूँ। उनकी मर्जी होगी तो मुझे सभागा कर देगी नहीं तो जीकर क्या कहना है? इतना सुनकर उस देवी ने वरदान दिया कि जा तेरे चार पुत्र होंगे' यह सुनकर वे प्रसन्न हुए और अपनी म्हरी का, घर-गहस्थी का विचार करके बड़ी नम्रता से कहा कि इतना वरदान हुआ तो एक कन्या भी होनी चाहिए और वह आप जैसी हो।

<sup>१</sup> हिन्दू धर्म काण्ड ल राजबलि पाण्डु पृ ३३१

<sup>२</sup> उपरात्त पृ ५६३

<sup>३</sup> पारीक महापुरुष—ल गुनाथ प्रमाद तिवाङी उमग, पृ ६९

देवी ने कहा कि यह भी इच्छा पूरी होगी। इस पर परसराम जी ने पूछा कि आप कौन हो और मुझ पर इतनी कृपा कैसे की तो देवी ने कहा 'जिसकी यात्रा करन और जिसको तू अपनी काया बलि चढ़ाने जाता है वह मे ही हूँ। परसरामजी ने पूछा कि यह मैं कैसे जानूँ? इस पर माताजी न सिंहाहिनी अष्टभुजा होमर झाकी दी और कहा कि अब तो विश्वास हो गया? दर्शन करते ही ओर इतना सुनते ही परसराम जी ने गद्याद् होकर देवी की स्तुति करते हुए साष्टग दडवत की और कहा कि आज मेरे धन्य हूँ और मेरा जीवन कृतार्थ हुआ। इस पर देवीजी ने आज्ञा दी कि 'तुझ साक्षात् दर्शन मिल चुके हैं अब घर लौट जा तेरी कामना पूर्ण हो जायेगी।' यह कह देवी जी अन्तर्धान हो गई। परसराम जी ने शीघ्र ही लौटकर यह वृत्तात् अपनी स्त्री से कहा और नित्य कर्म से छुट्टी पाकर अपने घर लौटे। इस वरदान के प्रताप से उनके चार पुत्र और एक कन्या, पाच सतान हुईं। यही कन्या कर्मेती बाई थी।

### नरसहार होने से बचाना एवं देवी ज्याति में विलीन होना

कहते हैं कुञ्जल देवी ने जब विशोरावस्था १२-१३ वर्ष की आयु में प्रवश किया तब उनके हृदय में भक्ति-भाव उत्तरोत्तर प्रबल होने लगा तथा उनकी तजस्विता, गुण, सार्दर्य एवं विदुपिता की चचा चारा ओर फैलने लगी। लड़की सयानी हो गई है, इसके पीले हाथ कर दिये जाव। यह विचार कर कुञ्जल देवी की सगाई दो स्थानों पर हो गई (सगाई करने के सम्बन्ध में अलग-अलग विवरितियाँ प्रचलित हैं। कुछ विद्वानों के अनुसार उनकी सगाई एक स्थान पर गाँव के पण्डित ने जैसा कि उस समय प्रचलित था तथा दूसरे स्थान पर मामा ने तथ कर दी।) अन्य कुछ व्यक्तियों का ऐसा मानना है कि पिता ने सम्बन्ध श्रीगगानगर तय कर दिया, वही दूसरी आर नाई बाड़मेर तय करने आ गया। उन दोनों की आपस में बातचीत नहीं हो सकी।<sup>१</sup> वास्तविकता कुछ भी हो, यह सत्य है कि शादी के निश्चित दिन के एक दिन पूर्व दो बाराते शादी के लिए आ गई। अब देवी कुञ्जला के पिता के समक्ष धर्मसक्ट आ खड़ा हुआ। लड़की के माता-पिता, परिवार एवं ग्रामवासी चितित हुए। दोनों बारात यह तय कर चुकी थी कि जिसमें भुजबल होगा वह लड़की को ले जावेगा। बाई कुञ्जल निश्चित थी। देवी माँ सब ठीक करेगी, खून-खराबा

नहीं होगा। शादी के दिन अनिष्ट वी आशःका लिए पूरा ग्राम भयग्रस्त था। कुञ्जला के माता-पिता धार्मिक प्रवृत्ति के होने के कारण इष्ट देवी दुर्गा के समक्ष बैठकर प्रार्थना करने लगे, इसके अतिरिक्त उनके पास अन्य कोई विकल्प भी नहीं था। कुञ्जल देवी ने सहज भाव से माता-पिता से कहा, ‘आप क्यों चिंता करते हैं, देवी लीला अनन्त है, वह सब ठीक बरेगी, आप व्यर्थ में ही शोक-सताप न करें। यदि आपकी अनुमति हो तो मेरी भी शिव मंदिर में जाकर आद्या शक्ति माँ भगवती की पूजा करें।’ माता-पिता ने सजल नेत्रों से अपनी लाडली को निहारा और स्वीकृति दे दी। अलौकिक छटा बिखेरती देवी कुञ्जला शिव मंदिर की ओर चली। कुञ्जल के भाई का अपनी बहिन के प्रति प्रगाढ़ स्नेह था। वह भी बहिन के पीछे-पीछे गया। गाँव के काँकड़ स्थित (सीमा क्षेत्र) शिव मंदिर था, कुञ्जला देवी ने तन्मय होकर देवी की स्तुति की तथा आर्त स्वर में देवी माँ से प्रार्थना की कि ‘हे मातेश्वरी! मुझे लेकर अकारण ही रक्षपात होने वाला है, हे माँ! तू मुझे अपने में समा ले, हे ‘कु’ (पृथ्वी)! अब विलम्ब न कर।’ भयकर विस्फोट के साथ उसी समय धरती फटी, हवा के बेग-से पेड़ हिलने लगे, ऐसा प्रतीत हुआ मानो भयकर प्रलय होगा। कुञ्जला देवी शनै शनै माँ पृथ्वी में विलीन होने लगी। पृथ्वी उसे अपने अके में लने लगी। पास ही खड़ा भाई हत्यार था और देख रहा था यह अलौकिक दृश्य। जब लाडली बहिन पूर्ण रूप से धरती माता के ऊँचल में समाने लगी तो वह उसे निकालने को दीड़ा, लेकिन तब तक विलम्ब हो चुका था, उसके हाथ आया हवा में लहलहाता देवी के अगवस्त्र चुनड़ी का एक पतला। बहिन ने भाई को कहा ‘भैया शोक मत करो। हमेशा ईश्वराराधना-देवी भक्ति करते रहना।’ कुञ्जल के बिना भाई गाव में लौटा। साथ था बहिन का स्मृति स्वरूप चुनड़ी का पतला। सारी घटना सुनकर गाँव एवं बाराती माता के समाधि-स्थल पर गये। भूमि को नमन किया।\* माता की चूनड़ी को वही विराजमान कर उसकी पूजा-अर्चना की। कालान्तर में वह चूनड़ी का पतला ही मंदिर में पूजा जाने लगा।

\* ठीक इसी प्रकार का वृत्तान्त एवं घटनाक्रम आवरा माता (ग्राम आसावरा पर से भन्सर जिला चित्तौड़गढ़ का है। आवरा माता के विवाह का समय कार्तिक सुनी १९ सम्वत् १९१६ बताया गया है। फर्क है तो कवल इतना कि कुञ्जल की ना बारात आई थीं और आवरा माता की विवाह बारात

## वर्तमान मंदिर निर्माण

चूंकि यह घटना आज से लगभग एक हजार वर्ष पूर्व की है। कुछ समय पूर्व तक माता की केवल गुमटी ही थी। माता का पल्ला समय पाकर नष्ट हो गया अतः सिदूर चर्चित एक तिकोनी देवली जा स्वत ही चबूतरे पर निकल आई बताई, पल्ले के प्रतीकस्वरूप गुमटी में पूजी जाती थी, जो आज भी मंदिर में बताई जाती है। कालान्तर में अनेकानेक भक्तों ने प्रयत्न किया कि माता का सुदर मंदिर निर्मित कराया जावे, किन्तु माता ने किसी को भी मंदिर निर्माण की अनुमति नहीं दी। जिन भक्तों ने मंदिर निर्माण का प्रयत्न किया उनके प्रयत्न एक या दूसरे कारण से असफल होते गये। ऐसा भी सुना गया है कि जब भी कोई भक्त मंदिर निर्माण की कल्पना करता तो माता उसे स्वप्न में ऐसा करने से मना करती और उसकी आज्ञा के विपरीत यदि कोई निर्माण कार्य प्रारम्भ करता तो उसमें विघ्न उत्पन्न हो जाता।

वर्तमान मंदिर निर्माण की भी एक चमत्कारिक घटना है। खातडिया पुणेहित भवरलाल जी, निवासी लाम्बिया जिला पाली का एक दिन मातेश्वरी ने स्वप्न में दर्शन दिये तथा आदेश दिया कि मंदिर निर्माण कराओ। भवरलाल जी तत्समय अस्वस्थ थे, आपने माता से बिनती की, हे मातेश्वरी! न तो मैंग स्वास्थ्य ही ठीक है ओर न ही मेरी ऐसी स्थिति है कि आपका मंदिर आपके स्वरूप के अनुरूप निर्मित कराऊ। मातेश्वरी ने कहा सब ठीक हो जायेगा। माता की असीम अनुकूल्या से जहाँ, भवरलाल जी अतिशीघ्र स्वस्थ हो गय, वहीं मंदिर निर्माण की उपयुक्त व्यवस्था भी हो गई और माघ शुक्ला १३ सामवार सवत् २०३४ तदनुसार दिनांक २० फरवरी १९७८ को मंदिर का निर्माण होकर देवी की प्राण-प्रतिष्ठा समारोहपूर्वक सम्पन्न हो गई। अब प्रतिवर्ष मातेश्वरी के यहाँ माघ शुक्ला १२ का जागरण एवं अगले दिन त्रयोदशी को मेल का आयोनन किया जाता है जिसमें न केवल आसपास के भक्तगण अपितु दूरस्थ प्रदेशों के भक्तगण एवं पारीक बधु आकर माता की पूजा अर्चना करते हैं।

कुञ्जला माता का मंदिर ग्राम डेह में मुठ्य मार्ग पर एक ऊचे टील पर निर्मित है। ग्राम डेह नागोर से लगभग २१ कि.मी. दूर नागो-लाडनू-सुजानगढ़ मार्ग पर स्थित है। मंदिर के नीचे ३६५ (साढ़े छत्तीस) धीया ओरण की

जमीन है। मंदिर की व्यवस्था हेतु फरवरी १९८८ मे आयोजित मेले के अवसर पर 'श्री पारीक कुल देवी कुञ्जल माताजी मंदिर विकास ट्रस्ट' की स्थापना की गई है।

मातेश्वरी की वर्तमान मूर्ति एक हाथ में अमृत कलश लिए है तथा दूसरे हाथ से आशीर्वाद दे रही है।

### भोग

माताजी के मीठा निरामिष भोग लगाता है जिसमें सीरा, लापसी, चूरमा आदि शामिल है।

### मातेश्वरी के अन्य स्थानीय नाम

माता को फैंचरी माता एवं बुहारी माता भी कहते हैं। विवाह के समय (फेरों में) पहनने वाली साड़ी को फैंचरी कहते हैं। माता ने भूमि समाधि लेते समय विवाह के कपड़े धारण कर रखे थे और माता के भाई ने माता के भूमि समाधि लेते समय साड़ी का पल्ता पकड़ा जो उसके हाथ मे रहा और फिर उसी की पूजा होने लगी, अत इस आधार पर इसे फैंचरी माता कहते हैं। माता के बुहारी चढाने से मुस (मस्से) मिट जाते हैं अत इसे बुहारी माता भी कहते हैं।

### आद्याशक्ति दुर्गा के कतिपय मंदिर

आद्याशक्ति जगदम्बा माता के मंदिर देश के प्राय सभी स्थानों पर है जहाँ भक्तजन देवी का स्तुति गान कर मनवाछित फल प्राप्त करते हैं। कतिपय मंदिरों की सूची इस प्रकार है—

- १ गढ़ मुक्तेश्वर
- २ कर्णवास (अनूप शहर, उ प्र )। यहा माता को कल्याणी दवी कहते हैं।
- ३ कुसुमबी (उज्ज्वाल)
- ४ काशी— कालरात्रि दुर्गा, सिद्धिजा दुर्गा व दुर्गाजी
- ५ हीरापुरा (जि छतरपुर, म प्र ) आवर माता दुर्गाजी
- ६ उज्जैन
- ७ देवझारी कुण्ड— टेमरनी, वाया खण्डवा (खण्डवा)

- ८ पूना (पूना से ६ कि मी पहाड़ी पर)।
- ९ बनहाड़ी वाया ढाकोड़ा (नासनोल)
- १० ज्ञानवापी-लोहार्गंग (सीकर राज)
- ११ केशवरायपाटन (बूदी)
- १२ कोशी (शाता दुर्गा- केवल्यपुर-गोवा)
- १३ विजयवाडा (कनक दुर्गा)
- १४ रामेश्वरम्।

मातेश्वरी कुञ्जला की मान्यता प्राय सभी जाति के लागों म है। व माता के यहाँ जात-जड़ले उतारन आत है तथा अपनी कुलदेवी के रूप में इसे पूजते हे।

पारीका के निम्न अवटको की भी यह कुलदेवी है—

१ दुजारचा दुजारा डिजारचा	जोशी
२ सकराणा समराणिया	जोशी
३ लापस्या	जोशी
४ बुढाणा बुढाण्या	जोशी
५ काथडा खातडिया खतारिया	पुरोहित
६ डागी	पुरोहित

Hinduism Discord Server <https://>

गायत्री सहस्रनाम में भी 'केसरी' का सिंहरूपिणी के रूप में नाम आया है—

कसरी कशवनुता कदम्बकुसुमप्रिया ।  
कालिन्दी कालिका काञ्ची कलशोद्धवसस्तुता ॥३३

१५० केसरी-सिंहरूपिणी, १५१ केशवनुता-भगवान् श्री कृष्ण भी जिन्हें प्रणाम करते हैं, वे १५२ कदम्बकुसुमप्रिया कदम्ब के फूल से परम प्रसन्न होने वाली, १५३ कालिन्दी कि कालिन्द-कन्या यमुना-रूपा, श्री कृष्ण की पटरानीरूपा, १५४ कालिका- काली नाम से विद्यात, १५५ काञ्ची- काञ्ची नामक क्षेत्र में जिनकी अधिक पूजा होती है, वे १५६ कलशोद्धवसस्तुता- कलशोद्धव आगस्त्यजी ने जिनकी स्तुति की।

श्रीहरि न समय-समय पर दुष्टों का नाश करने हेतु अवतार लिये हैं। हिरण्यकश्यपु ने घार तपस्या कर भगवान् से यह वर प्राप्त कर लिया कि उसे देवता, असुर, गन्धर्व, यक्ष, नाग, राक्षस न मार सक। तपस्की ऋषि भी ब्रोध में आकर उसे शाप न दे। किसी अस्त्र या शस्त्र वृक्ष या पर्वत से अथवा सूखी या गीली वस्तु से, ऊपर या नीच वही भी उसकी मृत्यु न हो। यही नहीं, उसने यह भी वरदान माणा कि 'न मैं दिन में मरू न रात्रि में, न भीतर न बाहर।' प्रभु स ऐसा वरदान प्राप्त कर वह निरकुश हो गया। भगवान् के भक्तों पर अनेकानेक अत्याचार करने लगा, यहा तक कि अपने पुत्र प्रभु-भक्त प्रह्लाद को मारने के लिए भी उसने अनेकानेक प्रयत्न किये और अतत उसको दिये वर की रक्षा करते हुए श्रीहरि नृसिंह के रूप में खबे में से प्रकट हुए। श्री हरि का उस समय जो स्वरूप था वह आधा शरीर मनुष्य का और आधा सिंह का था। शरीर मेघ के समान था तथा शब्द-गर्जना मेघ के हां समान थी उनका ओज और वेग भी मेघ के ही सदृश थे। श्री हरि के एक हाथ में सुदर्शन-चक्र दूसरे में शख तथा दो हाथों में सिंह के समान नुकीले नाखून थे। सूर्यास्त के समय जब न रात थी न दिन था, उसके महल की देहली पर भगवान् ने अपनी जाघो पर उसे पटक कर अपने नुकीले नाखूनों से उसका पेट चीर कर यमलोक पहुंचा दिया। नृसिंह भगवान् की शक्ति ही नारसिंही शक्ति है तथा नृसिंह भगवान् के अनुरूप ही चक्र, शख एवं नुकीले नाखून उनके आयुध हैं।

मार्कण्डेय पुराण<sup>१</sup> में रत्नबीज-वध के कथानक में आया है कि चड़ और मुड़ नामक दैत्यों के मारे जाने तथा बहुत-सी सेना का सहार हो जाने पर दैत्यों के राजा प्रतापी शुभ्म के मन में बड़ा क्रोध हुआ और उसने दैत्यों की सम्पूर्ण सेना को युद्ध के लिए कूच करने की आज्ञा दी। सहस्रों बड़ी-बड़ी सेनाओं के साथ युद्ध के लिए वह चल पड़ा। उसकी अत्यत भयानक सेना आती देख चण्डिका ने अपने धनुष की टकार से पृथ्वी और आकाश के बीच का भाग गुजा दिया। तदन्तर देवी के सिंह ने बड़े जोर-जोर से दहाड़ना आरम्भ किया, फिर अम्बिका ने घण्टे के शब्द से उस ध्वनि को और भी बढ़ा दिया। धनुष की टकार, सिंह की दहाड़ और घण्टे की ध्वनि से सम्पूर्ण दिशाएं गूज उठी। उस भयकर शब्द से काली ने अपने विकराल मुख को और भी बढ़ा लिया तथा इस प्रकार वे विजयिनी हुई। उस तुमुल-नाद को सुनकर दैत्यों की सेनाओं ने चारों ओर से आकर चण्डिका देवी, सिंह तथा काली देवी को क्रोधपूर्वक घेर लिया। इसी बीच में अमुरों के विनाश तथा देवताओं के अध्युद्य के लिए ब्रह्मा, शिव, कार्तिकिय, विष्णु तथा इन्द्र आदि देवों की शक्तिया, जो अत्यन्त पराक्रमी और बल से सम्पन्न थी, उनके शरीर से निकलकर उन्हीं के रूप में चण्डिका देवी के पास मुड़ गयी। जिस देवता का जैसा रूप, जैसी वेश-भूपा और जैसा वाहन है, ठीक वैसे ही साधनों से सम्पन्न हो उसकी शक्ति अमुरों से युद्ध करने के लिए आई। जिन में ब्रह्माजी, महादेवजी, कार्तिकिय विष्णु, वाराह, इन्द्र शक्ति के साथ-साथ नारसिंही शक्ति भी आई—

नारसिंही नृसिंहस्य विभूति सदृश वपु ।

प्राप्ता तत्र जटाक्षेपक्षिसनक्षत्रसहति ॥२०॥

अर्थात् नारसिंही-शक्ति भी नसिंह के समान शरीर धारण करके वहा आई। उसकी गदन के बालों के झटके से आकाश के तारे बिखर पड़ते थे। भयकर युद्ध हुआ। दैत्य ने घमण्ड में भरकर पहले ही देवी पर बाण, शक्ति और क्रष्णि आदि अस्त्रों की चृष्टि की। तब देवी ने खेल-खेल में ही धनुष की टकार की और उससे छोड़ हुए बड़े-बड़े बाणों द्वारा दैत्यों के चलाये हुए बाण, शूल, शक्ति और फरसों को काट डाला। फिर काली उसके आगे

१८२/हमारी कुलदेवियाँ

आकर शतुआ को शूल के प्रहर से विदीर्घ करने लगी और खट्काग से उनका कचूमर निकालती हुई रणभूमि में विचरने लगी। सभी शक्तियाँ ने दैत्या का अपने-अपने आयुध से सहार करना आरम्भ कर दिया। नारसिंही भी दैत्या का सहार करने लगी।

नर्खर्विदारिताश्चान्यान् भक्षयन्ती महासुरान् ।

नारसिंही चचाराजौ नादापूर्ण-दिगम्बरा ॥३७॥

अर्थात्- नारसिंही भी दूसरे-दूसर महादैत्या को अपने नखों से विदर्घ करके खाती और सिनाद से सभी दिशाओं एव आकाश को गुजाती हुई युद्ध-क्षेत्र में विचरने लगी।

इस प्रकार ब्रोध से भे हुए मातृ-गणों को नाना प्रकार के उपाया से बड़े-बड़े असुरों का मर्दन करते देख दैत्य सैनिक भाग खड़े हुए। उन्हे भागता देख महादैत्य रक्तबीज युद्ध करने को आया। उसके रक्त की बूद पृथ्वी पर पड़त ही उसी के समान शक्तिशाली एक दूसरा महादैत्य पृथ्वी पर पैदा हो जाता। सभी शक्तियों ने अपने-अपने आयुधों से रक्तबीज पर आक्रमण किया किंतु उसके रक्त की बूद से असर्ट्य दैत्य उत्पन्न हो गय तब देवी चण्डिका ने काली से शीघ्रता पूर्वक बहा- चामुण्डे। उम अपना मुख और फैलाओं तथा मेरे शस्त्रपात से गिरने वाले रक्तविदुआ और उनसे उत्पन्न होने वाले महादैत्यों को तुम अपने इस उतावले मुख से खा जाओ। काली को इस प्रकार कह कर चण्डिका ने शूल से रक्तबीज को मारा और काली ने अपने मुख में उसका रक्त ले लिया। भयकर युद्ध के दौरान काली रक्तबीज को बज्र बाण, खट्का तथा क्रष्ण आयुधों से मार डाला।

दैत्य सहार म नारसिंही-शक्ति के रूप मे माँ केसरी ने मानव हितार्थ देव-रक्षार्थ दैत्या का सहार किया।

मार्कण्डेय पुराण<sup>१</sup> मे आया है कि शुभ्रवध के बाद देवताओं ने देवी की स्तुति की तथा देवी के विभिन्न स्वरूपों का गुणगान करते हुए उन्हे नमस्कार किया। इसी ब्रह्म म उहाने देवी की जिसने नारसिंही रूप मे प्रकट होने दैत्या का सहार किया था निम्न प्रकार स्तुति की—

नृसिंहरूपणोग्रेण हनु दैत्यान् कृतोद्यम।  
तैलोक्यग्राणसहित नारायणि नमोऽस्तुते ॥१८॥

अथात् भयमर नृहसिंह रूप से दैत्यों का वध करने वाली तथा प्रिभुवन की रक्षा में सलग्र रहने वाली नारायणी, तुम्ह नमस्कार।

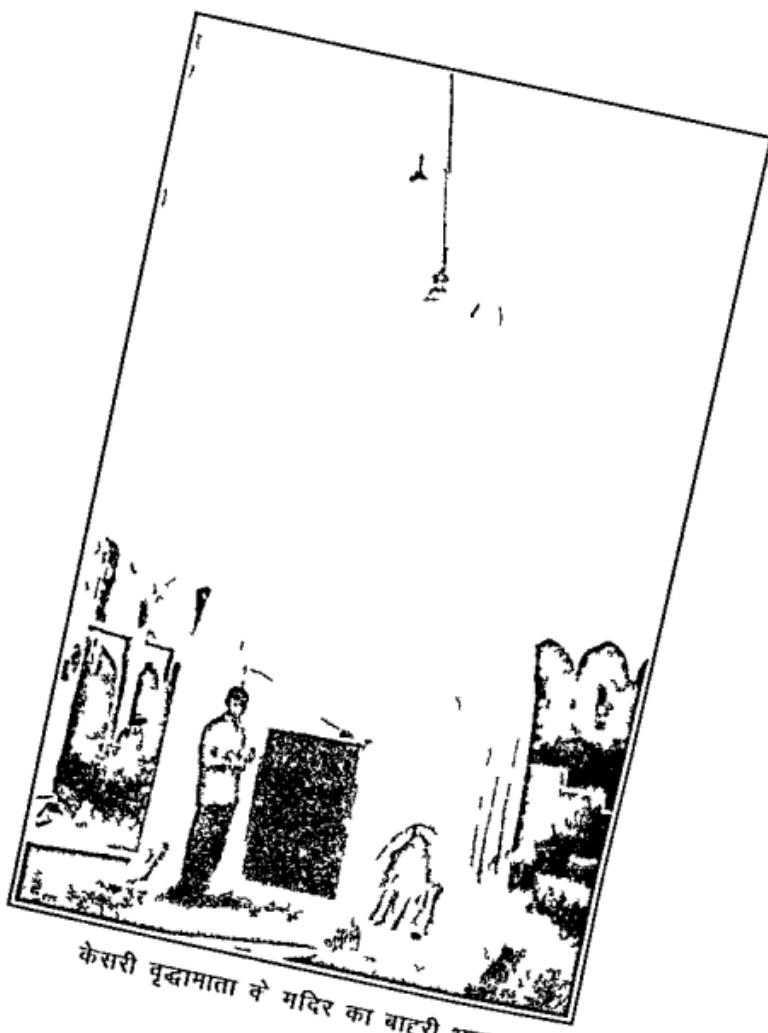
### माता के स्थान

बैगलोर से प्रकाशित पत्र 'पारीक' मे माता का स्थान नागौर जिले मे मेड़ता के पास रिया शेरसिंह (बड़ी रिया) ग्राम मे बताया है। यहा के बुजुर्ग पारीक वन्धु पूसालालजी कथा-व्यास (पारीक) से जानकारी करने पर उन्होंने बताया कि, ग्राम रीया के किले में माता कालिका देवी के रूप मे विराजमान है, जिसे स्थानीय लोग विरदा माता के नाम से मानते है। (शब्द 'विरदा', वरदा, वरदायिनी, जो माता का विशेषण है, का अपभ्रंश है)। माता की चार भुजाओं म शस्त्र है तथा माता की सवारी सिंह पा है, मंदिर हजारा वर्ष पुराना है तथा नवरात्रा मे भक्तगण माता की पूजा-अर्चना करने तथा जात-जहुले उतारने जाते है।

पारीको की शाखा शृंगार (जाशी) अवटक की कुलदेवी केसरी है।



१८४/हमारी कुलदेविया



के सारी वृद्धामाता के मंदिर का बाहरी भाग

## खीर्वजः क्षेमजा माता

आद्या शक्ति भगवती के कल्याणकारी रूप को क्षेमजा कहते हैं। श्री दुर्गा सप्तशती में देवी का स्तोत्र 'देव्या कवचम्' में मार्कण्डेय जी ब्रह्माजी से पूछते हैं कि हे पितामह! इस सप्ताह में मनुष्यों की सब प्रकार से रक्षा करने वाला कोई साधन बताये। उनके ऐसा पूछने पर ब्रह्माजी कहते हैं—

अस्ति गुह्यतम् विप्र सर्व-भूतोपकारम्।  
 देव्यास्तु कवच पुण्य तच्छृणुष्य महामुने॥  
 प्रथम शैलपुत्री च द्वितीय ब्रह्मचारिणी।  
 तृतीय चन्द्रधण्टेति कूप्माण्डेति चतुर्थकम्॥  
 पञ्चम स्कन्दमातेति षष्ठ कात्यायनीति च।  
 सप्तम कालरात्रीति महागौरीति चाष्टमम्॥  
 नवम सिद्धिदात्री च नवदुर्गा प्रकीर्तिता।  
 उक्तान्येतानि नामानि ब्रह्मणैव महात्मना॥

ऐसा साधन तो एक देवी का कवच ही है, जो गोपनीय से भी परम गोपनीय, पवित्र तथा सम्पूर्ण प्राणियों का उपकार करने वाला है। महामुने, उसे श्रवण करो। देवी की नौ मूर्तियाँ हैं, जिन्हें 'नवदुर्गा' कहते हैं। उनके पथकृ-पृथकृ नाम बताये जाते हैं। प्रथम नाम शैलपुत्री है। दूसरी मूर्ति का नाम ब्रह्मचारिणी है। तीसरा स्वरूप चन्द्रधण्टा के नाम से प्रसिद्ध है। चौथी मूर्ति को कूप्माण्डा कहते हैं। पाँचवीं दुर्गा का नाम स्कन्दमाता है। देवी के छठे रूप को कात्यायनी कहते हैं। सातवाँ कालरात्रि और आठवाँ स्वरूप महागौरी के नाम से प्रसिद्ध हैं। नवीं दुर्गा का नाम सिद्धिदात्री है। ये सब नाम सर्वज्ञ महात्मा वेद भगवान् के द्वारा ही प्रतिपादित हुए हैं।

ब्रह्माजी आगे कहते हैं— 'जो मनुष्य अग्नि में जल रहा हो, रणभूमि में शत्रुओं से घिर गया हो, विषम सकट में फस गया हो तथा इस प्रकार भय से आत्मर होकर जो भगवती दुर्गा की शरण में प्राप्त हुए हो, उनका कभी

कोई अमगल नहीं होता। युद्ध के समय सकट म पड़ने पर भी उनके ऊपर कोई विपत्ति नहीं दिखाई देती। उह शोक, दुख और भय की प्राप्ति नहीं होती। जिहोने भक्तिपूर्वक देवी का स्मरण किया है, उनका निश्चय ही अभ्युदय होता है। देवश्वरी! जो तुम्हारा चित्तन करते हैं, उनकी तुम नि सदेह रक्षा करती हो।<sup>१</sup>

उक्त देवी स्तोत्र म आद्या शक्ति की विभिन्न शक्तियों का वर्णन करते हुए बताया गया है कि य देवी शक्तियाँ अपने अपने वाहनों पर आरूढ़ होकर मनुष्य की किस प्रकार हर क्षेत्र मे रक्षा करती हैं। इसी प्रसंग मे क्षेमकरी माता का सदर्भ आया है जिसमे माता से प्रार्थना की गई है—

पूर्णान् सुपथा रक्षन्मार्गे क्षेमकरी तथा।

राजद्वारे महालक्ष्मीर्विजया सर्वत स्थिता॥४१॥

अर्थात् मेरे पथ की सुपथा तथा मार्ग की क्षेमकरी देवी रक्षा करे। राजा के दरबार म महालक्ष्मी रक्षा कर तथा सब ओर व्याप्त रहने वाली विजया देवी सम्पूर्ण भयों से मेरी रक्षा करे।

क्षेमकरी माता का ही नाम शनै-शने लोक भाषा मे क्षेमजा और फिर खीबज हो गया।

मार्कण्डेय पुराण म माता का वर्णन ‘पथ की सुपथा’ तथा ‘मार्ग की रक्षा’ हेतु आया है। यह सकेत मानव के सम्पूर्ण जीवन मार्ग म रक्षा एवं कल्याण के सदर्भ म आया है। हम आद्याशक्ति के आश्रय के बिना नहीं रह सकते। जीवन के कदम-कदम पर वह हमारी रक्षा करती है। वह हमे सन्मार्ग पर ले जाती है।

वही आद्या शक्ति क्षेमकरी माता नवदुर्गाओं मे स एक है। नवदुर्गाओं मे सप्तम कालगति है जो अपने भक्तों को सब प्रकार के कष्ट से मुक्त करती है। अत शुभ करने से इस माता का नाम ‘शुभकरी’ भी है। यह माता विद्युत् सदृश है। माता के स्वरूप का वर्णन निम्न प्रकार किया गया है।<sup>२</sup>

१ श्री दुर्गासप्तशती गीता प्रस गारखपुर पृ २० २१ कल्याण मार्कण्डेय ब्रह्मपुराणक वर्ष २० (१९४७) पृ ८

२ कल्याण-शक्ति उपासना अक वर्ष ६१ (१९८७) पृ ४९१ नवदुर्गा-गीता प्रस गारखपुर।

एकदेणी जपाकणपूरा नग्ना खरास्थिता ।  
तन्म्बाष्टी कर्णिकाकर्णी तैलाभ्यक्त शरीरिणी ॥  
वामपादाल्लसल्लोहलाककण्टक भूपणा ।  
वर्धनमूर्धध्वजा कृष्णा कालरात्रिर्भयङ्करी ॥

सातबी दुग्ना शक्ति का नाम कालरात्रि' हे। इसके शरीर का रंग अधकार की तरह गहग काला है। इनके सिर के केश बिखर हुए हैं। इनके गले में विद्युत्-सदृश चमकीली माला है। इनके तीन नेत्र हैं जो ब्रह्माण्ड की तरह गोल हैं। इन तीनों नेत्रों से विद्युत की ज्योति चमकती रहती है। नासिका से श्वास-प्रश्वास छोड़ने पर हजारों अग्नि की ज्वालाएं निकलती रहती हैं। ये गदहे वीं सवारी करती हैं। ऊपर उठे हुए दाहिने हाथ में चमकती तलवार है। उसके नीचे वाले हाथ में वरमुद्रा है, जिससे भक्तों को अभीष्ट वर देती है। दाये हाथ में जलती हुई मशाल है और उसके नीचे वाले दायें हाथ में अभय मुद्रा है, जिससे अपने सेवकों को अभयदान करती है तथा अपने भक्तों को सब प्रसार के कष्टों से मुक्त करती है। माता सदव शुभ फल ही देने वाली है। अतएव शुभ करने से इसका एक नाम शुभकरी भी है।

माता कालरात्रि दुष्टा का विनाश करने वाली है। दानव, दैत्य, राक्षस, भूत, प्रत आदि इनके स्मरण मात्र से ही भयभीत होकर भाग जाने हैं। ये ग्रहवाधाओं को भी दूर रखने वाली है। इनके उपासकों ने अग्नि-भय, जल-भय, जन्म-भय, शान्ति-भय, रात्रि-भय आदि कभी नहीं हाते। इनकी कृपा से वह सबथा भयमुक्त हो जाता है।

यह माता शुभकरी देवी है। इसकी उपासना से हान वाल शुभ कार्यों की गणना नहीं वीं जा सकती। माता का निर्गता स्मरण और चित्रन भक्ति शुभकारी है। (शुभ अथात् क्षम जा उत्पन्न रखने वाली हान के नारण इसका क्षेमजा भी कहत है)।

### माता का स्थान

क्षेमजा (र्हीवज) माता का मंदिर ग्राम कट्ठोती म है। कट्ठोती डीडवाना से पश्चिम म ३३ मि. मी. तथा नागौर से पूर्व में ६३ मि. मी. दूर है।

माता जा मंदिर एक टील पर अन्नमिति है। एसा माना जाता है कि पश्चीम समय म यहाँ मन्दि शा जा गलाजाता में भूमिगत हो गए ब्रह्मान्

मंदिर मे माता की मूर्ति खम्भे (स्तम्भ) के रूप मे १२५ वर्ष पूर्व प्रगट हुई ऐसा माना जाता है। माता का विश्रह खम्भे पर ही उत्कीण है। यहाँ का इतिहास यह बताता है कि कठौती माता का यह मंदिर १२५ वर्ष पूर्व निर्मित हुआ तथा मंदिर का निर्माण टीला बाबा नामक जाट ने कराया था, ऐसा मंदिर के पुजारी जी एव अन्य भक्तो न बताया।<sup>१</sup>

मंदिर म स्तम्भ पर उत्कीर्ण माता की मूर्ति चतुर्भुजी है। माता के दाहिने हाथो मे प्रिशूल एव खड्ग है तथा बाये हाथा मे कमल एव मुण्डर है। मूर्ति के पीछे पचमुखी सर्प का छत्र है तथा त्रिशूल है (माता की मूर्ति के पीछे सर्प होने से इस माता का स्वरूप 'मनसा माता' के रूप म भी है। विस्तृत विवरण सुरसा माता के चरित्र म दखे)। माता की सवारी सिंह पर है। पास म ही भेरव का स्थान है।

माताजी की मान्यता सभी जाति वालो की है।

माता के वर्तमान मंदिर भा निर्माण सन् १९८२-८३ म माताजी के भक्तो द्वारा कराया गया था। वर्तमान म नवरात्रा मे यहा यज्ञ, अनुष्ठान एव गायत्री जप हो रहे है।

४००-४५० वर्ष पूर्व कठोती ग्राम मे माता के एक अनन्य भक्त एक जोशी जी (पारीक) हुए थे। उह माता का इष्ट था। एक बार उनकी यह प्रबल इच्छा हुई कि माता उन्ह पत्यक्ष दर्शन दे। मनवाछित इच्छा की प्राप्ति हेतु उन्हान इस निमित्त अनुष्ठान स्थिया। अनुष्ठान पूर्ण होन पर भी इनको माता के प्रत्यक्ष दर्शन नही हुए। किन्तु जोशी निराश नही हुए, वे दृढ निश्चयी थे, पुन माता के दर्शनार्थ अनुष्ठान किया। माता भक्त पर प्रसन्न हुई और देवी ने उन्ह चतुर्भुज रूप मे सिंह री सवारी पर प्रगट होकर दर्शन दिये।

पुराने समय की बात है। माता के मंदिर के किवाड साने के थे। एक बार चोर मंदिर म चोरी करने आय। माता के चमत्कार से चोरो को रास्ता नही मिला। देवी ने चारो चोरो के सिर धड स अलग कर दिये तथा उनके सिर माता के गुम्बज पर चुनवा दिये गय। माता के गुम्बज मे चारो ओर उन चोरो के सिरो के प्रतीक आज भी मंदिर के गुम्बज पर लग हुए है।

बहुत पहले माताजी की दो सत सेवा करते थे। उनम से एक का नाम सत रामजी था जिहान जीवित समाधि ली थी। उनकी समाधि माता के मंदिर

<sup>१</sup> माता के दर्शनार्थ लखरु एव रि शाभित एव माहित टिनाक २२ द १९९९ गय।

के पीछे तालाब पर बताई गई। दूसरे भक्त मानगिरी बाबा थे उन्होंने भी जीवित समाधि ली थी। उनकी समाधि का चबूतरा मंदिर प्रागण में है। व माता की भक्ति एक गुफा में करते थे, जो आज भी तहखाने के रूप में मंदिर प्रागण में अवस्थित है।

ऐसी मान्यता है कि माताजी के मंदिर के पीछे स्थित तालाब का पानी यदि गदा हो जाये या पानी में कीड़े पढ़ जाव तो माताजी एवं बाबा के धोक (प्रणाम) देकर जाने पर तालाब का गदा पानी स्वत ही स्वच्छ हो जाता है।

ऐसी भी मान्यता है कि यदि वर्षा न हो तो गाव के चारों ओर दूध की धार से लकीर बनाते हुए परिक्रमा करने पर दैवी कृपा से वारिश हो जाती है।

अभी सन् १९९७ से माता के मंदिर में विधि विधानपूर्वक दुर्गा सप्तशती के पाठ, गायत्री के जप व यज्ञ आसोज के नवरात्रों में नियमित रूप से होने लगे हैं। यह कार्य सूर्यप्रकाश जी जोशी (कापड़ोदा) (जो वर्तमान में कर्नाटक में रहते हे) की प्रेरणा से आरम्भ हुआ है, वे स्वयं नवरात्रों में माताजी के यहाँ आते हैं। सयोगवश दिनाक २२ ६ ९९ को जब लेखक माता के दर्शनार्थ कठौती गया था तो सूर्यप्रकाशजी भी कर्नाटक से एक शादी में भाग लेने हेतु कठौती आये थे। उन्होंने स्वयं जानकारी दी कि माता ने उन्हे कर्नाटक (१९९७) आसोज के नवरात्रों के लगभग १५ दिन पूर्व आदेश दिया कि (ऐसा उन्हे आभास हुआ) माताजी के पास जाओ, वे तुम्हारी कुलदेवी हैं। तब से मैं यहाँ आ रहा हूँ तथा कठौती के पारीकों के साथ एवं अनेक अन्य लोगों के सहयोग से दुर्गाशप्तशती एवं गायत्री के जप एवं विधिविधान से आसोज के नवरात्रों में यज्ञ सम्पन्न कराने में सहभागी होता हूँ।

अभी हाल की एक घटना इस प्रकार बताई गई है— कोटा के रिछपाल जी के परिवार में उनके चचेरे भाई को माताजी ने स्वप्न में दर्शन दिये तथा स्वप्न में ही मंदिर भी दिखाई दिया। उनका एक भाई रेनवाल में रहता है, उन्हें भी स्वप्न में माता ने दर्शन दिये एवं मंदिर दिखाइ दिया। दोनों को एक ही साथ माता एवं मंदिर के स्वप्न में दर्शन हुए (यह परिवार कापड़ोदा जोशी है) दोनों भाई स्वप्न की सत्यता हेतु कठौती आये तथा माता के विग्रह एवं मंदिर को ठीक बैसा ही पाया जैसा उन्हाने स्वप्न में देखा था। वे दोनों माताजी

का दर्शन करके चले गये। उनमे से एक भाई के लड़का नहीं था, उन्हाने माता जी से प्रार्थना की। मॉं की कृपा से उसके लड़का हो गया। अभी १९९८ में पूरा परिवार (लगभग १४० व्यक्ति) माता के यहाँ श्रद्धा सुमन समर्पित करने एवं माता की अक्षुण्ण कृपा दृष्टि बनी रहे, ऐसा आशीर्वाद लेने आया। माता के यहाँ पहले कोई पुजारी नहीं था। बस्ती में स्थित रघुनाथ जी के मंदिर का पुजारी ही सुबह-शाम माताजी के यहाँ धूप-दीप कर जाता था। बाद में किसनाराम जी एवं उनके बाद वर्तमान में रामप्रसाद जी पुजारी को माता की सेवा पूजा करने हेतु नियुक्त किया जो अभी भी बड़ी श्रद्धापूर्वक माता की सेवा पूजा करते हैं। पूजा सामग्री की व्यवस्था माताजी के भक्तों द्वारा ही की जाती है।

भक्तों के ठहरने हेतु यहाँ कोई स्थान नहीं है।

माता के मंदिर के जीर्णोद्धार की योजना उनके भक्तों में विचाराधीन है जिसकी अनुमानित लागत ८ लाख रुपया आकी गई है। जिसमें मंदिर के परकोटा शिखर वा जीर्णोद्धार, यात्रियों के ठहरने का स्थान एवं पानी की टक्की का निर्माण आदि सम्मिलित है।

माताजी का चित्र, माता की मृत्ति के ऊपर जो त्रिशूल है, उस सहित ही लिया जाये, अन्यथा या तो फोटो नहीं आती या फिर वह जल जाती है। ऐसा कई व्यक्तियों के साथ हुआ है। ऐसा स्थानीय लोगों व पुजारी श्री रामप्रसाद जी स्वामी ने बताया।

क्षेमकारी देवी का एक मंदिर<sup>१</sup> इन्द्रगढ़ (कोटा-छूदी) स्टेशन से ५ मील दूरी पर भी है। आवागमन के साधन सुलभ है। यहा देवी का विशाल मंदिर है। नवरात्रों में यहाँ मेला लगता है।

माता का एक मंदिर क्षेमकरी (क्षेमार्या)<sup>२</sup> नाम से बमन्तपुर के पास एक पहाड़ी पर है। यहाँ के लोग इस माता को 'खीमेलमाता' भी कहते हैं। इस मंदिर का निर्माण सत्यदेव नामक व्यक्ति ने वि स ६८२ (ई स ६२५)

<sup>१</sup> बत्याण—तीर्थक वर्ष ३१ (१९५३) पृ २८३

<sup>२</sup> मिगारी गन्य का इतिहास ल डॉ गौरीशंकर हीराचंद आड्डा पृ २८ २९

मे कराया था। इस मंदिर का जीर्णोद्धार कई बार हुआ है। मंदिर के सम्बन्ध में इसका एक लेख पत्थर के ढेर में मिला है जिससे पाया जाता है कि 'यह मंदिर बना उस समय यह प्रदेश वर्मलात राजा के अधिकार मे था।

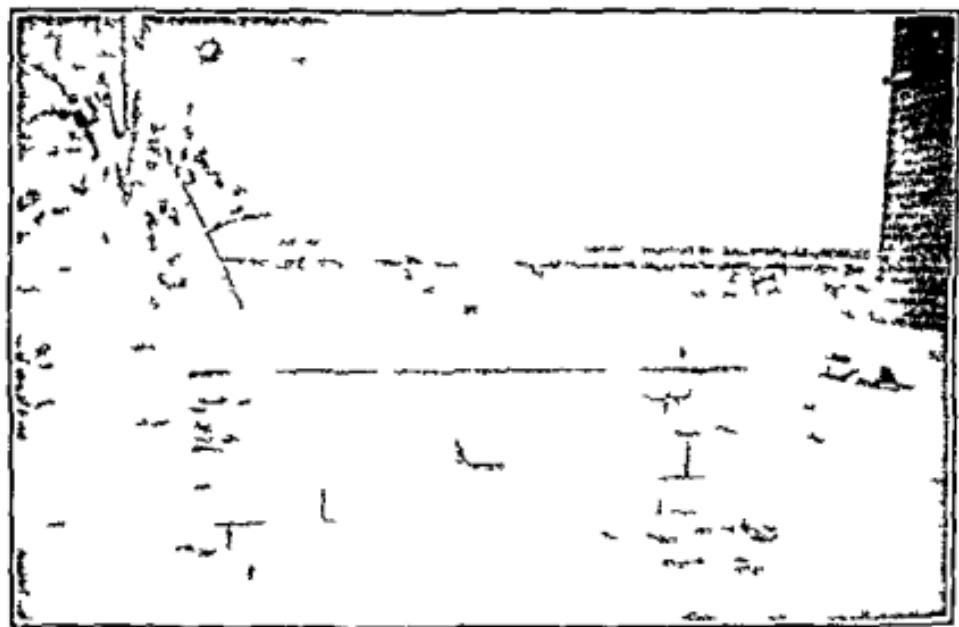
ओसियां (जोधपुर) मे भी सच्चियाय माता के मंदिर मे अन्य माताओं के मंदिरों के साथ-साथ क्षेमकारी माता का भी मंदिर है।

पारीकों के निम्न अवटका की यह कुल देवी है—

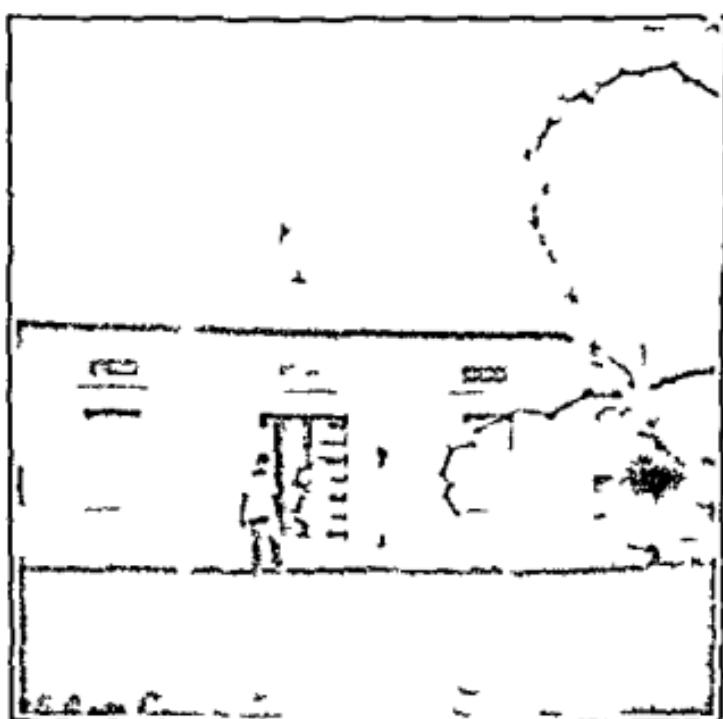
पुनपालेसुरा	जोशी
कापडोदा	जोशी
कठोत्या	द्विवेदी
रतनपुरा	तिवाढी
अलूणों	पाण्ड्या
मुदगल	मिश्र (बोहरा)
भाडा	मिश्र (बोहरा)

□□□

१९२/हमारी कुलदेवियाँ



खीवज/शेगजा माता कठौति जि नागौर  
माता के मंदिर में भक्त द्वारा ली जीवित समाधि स्थल (मानगिरी बाबा)



खीवज/शेगजा माता कठौति जि नागौर  
(नागौर मंदिर का बाहरी दृश्य)

## चामुण्डा माता

शिव पत्नी रुद्राणी के अनेक नाम हैं, यथा देवी, उमा, गौरी, पार्वती, दुर्गा, भवानी, काली, कपलिनी एवं चामुण्डा। दूसरे देवों की देवियों (पत्नियों) के विपरीत इन्हें धार्मिक आचारों में अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। इनको पति के समान स्थान शिव के युगल (अद्वेत) रूप अर्द्धनारीश्वर म प्राप्त होता है, जिसमें दक्षिण भाग शिव का एवं वाम देवी का है। देवी के अनेक नामों एवं गुणों (दयातु, भयानक, क्लूर एवं अदम्य) से यह प्रतीत होता है कि शिव के समान ये भी अनेक देवी शक्तियों के संयोग से बनी हैं।'

**चामुण्डा का स्वरूप**  
चामुण्डा के ध्यान में उसके स्वरूप का दर्शन निम्नानुकूल स्पष्ट में किया जाता है—

काली करालगदना विनिष्क्रान्तासिपाशिन ।  
विचिरखट्यान्नधरा नरमाला विभूषणा ।  
द्वीपिचर्मपरिधाना शुक्रमासाति भैरवा ।  
अतिविस्तारवदना त्रिकालनलनभीषणा ।  
निमग्नारक्तनयना नादापूरितदिमुखा ॥

चामुण्डा प्रेतगा कृष्णा विकृता चाहिभूषणा ।  
द्रष्टाली क्षीणदेहा च गर्ताक्षी कामरूपिणी ॥  
दिव्याहु क्षाम-कुक्षिश्च मुसल चक्रचामरे ।  
अकुरा विप्रती खड़ग दक्षिणे चाथ वामके ॥  
खेट पाश धनुदण्ड कुठार चापि विघ्राती ॥

विकृत आकार वाली चामुण्डा के शरीर का रूप काला है। वे नागों को आभूषण स्पष्ट में धारण करती हैं। उनकी ढाढ़ विशाल है, देह दुबली-पतली है और आखे धसी हुई हैं। वे स्वेच्छानुसार स्पष्ट धारण करने वाली हैं। उनकी

दस भुजाये हैं और कुक्षी क्षीण है। वे प्रेत पर सवार होती हैं। वे दाहिने हाथों में मूसल, चक्र, चामर, अकुश और खड़ग तथा बाये हाथों में ढाल, पाश, धनुप, दण्ड और कुठार धारण करती हैं।<sup>१</sup>

कालिकापुराण में चामुण्डा का तान्त्रिक स्वरूप निम्नोक्त है—

नीलोत्पलदलश्यामा चतुर्वाहु नमन्विता।  
खद्याङ्ग चन्द्रहासञ्ज विश्वति दक्षिणे करे॥  
यामे चर्मकपालञ्ज ऊर्द्धधोभावत पुन।  
दधति मुण्डयालञ्ज व्याघ्रचर्मधराम्बरा॥  
कृशाङ्गी दीर्घदृष्टा च अतिदीर्घातिभीयणा।  
लोलजिह्वा निम्नरक्तनयना नादभैरवी॥  
कहाधवाहना पीनविस्तारश्रवणानना।  
एषा ताराहृयादेवी चामुण्डेति च कथ्यते॥

वाहन चामुण्डा माता का वाहन— यह प्रेतासीन है।

### चण्ड-मुण्ड का वध

चण्ड-मुण्ड के वध के साम्बन्ध में मार्कण्डेय पुराण, मत्स्य पुराण, देवी भागवत, श्री दुर्गामासशती आदि अनेकानेक ग्रन्थों में चण्ड-मुण्ड वध का विस्तृत वर्णन किया गया है, जो इस प्रकार है—

शुभ्म निशुभ्म की आज्ञा से जब चण्ड-मुण्ड नामक राक्षस देवी से युद्ध करने आये तो भगवती को भयकर ड्रोध आया जिससे उसका मुह काला हो गया माथे की भौंहे तन गई। तब भयानक मुखवाली काली देवी तत्त्वार तथा पाश लेकर प्रगट हुई। इसी कानी द्वारा चण्ड-मुण्ड राक्षस का वध करने के कारण नाम चामुण्डा हुआ। देवी भागवत<sup>२</sup> में इसका व्याख्यानक निम्न प्रकार है—

महावली चण्ड और मुण्ड वड़ शूरवीर थे। शुभ्म की उपर्युक्त आज्ञा पाकर वे विशाल सेना को साथ लिये उसी क्षण समरागण में जा धमके। देवताओं का हित-साधन करने वाली भगवती अपदम्बा वहा विराजमान थी। उर्दें आता देखकर महान् पग्नमी चण्ड और मुण्ड शातिपूर्वक उनसे बहने लगे— देवी!

१ कल्पाण— शक्ति उपासना अक्ष वर्ष ६१ (१९८१) पृ ३८

२ कल्पाण— सक्षिप्त श्रीदेवीभागत अक्ष वर्ष ३४ (१९६०) पृ २६३

तुम क्या देवताओं की शक्ति कुण्ठित करने वाले शुभं और इन्द्रविजयी उग्र स्वभाव वाले निशुभं को नहीं जानती? सुन्दरी, तुम इस समय अकेली हो। कबल सिंह तुम्हारी सबारी का काम दे रहा है। दुर्बुद्धे इस स्थिति में भी तुम भव प्रकार की भेनाओं से सम्पन्न शुभं को जीतने की इच्छा कर रही हो? क्या कोई भी स्त्री अथवा पुरुष तुम्हे उत्तम परामर्श देने वाला नहीं मिला? देवता तो तुम्हारा ही विनाश करने के लिए तुम्हे प्रेरित कर रहे हैं। तन्वङ्गी तुम्हें अपने ओर शत्रु पक्ष के बल के विषय में विचार करके ही कार्य करना चाहिए। अठारह भुजाएं होने के कारण जो तुम अभिमान करती हो, वह बिल्कुल व्यर्थ है। शुभं युद्ध में बड़े कुशल है। उन्होंने देवताओं को परास्त कर रखा है। भला, उनके सामने इन व्यर्थ की बहुत-सी भुजाओं से अथवा श्रमदायी आयुध से तुम्हारा कौन-सा प्रयोजन सिद्ध हो सकता है? इस अवसर पर एरावत की सूड काट डालने वाले हाथियों का विदीर्ण करने में कुशल तथा देवताओं को हरा देने वाले महाराज शुभं का मनोरथ पूर्ण करना ही तुम्हारा परम कर्तव्य है। कान्त, तुम व्यर्थ गव करती हो। हमारे प्रिय वचन का अनुमोदन करो। विशाललोचने! यही करने में तुम्हारा हित है। यही कार्य तुम्हारे लिए सुखदायी एवं दुख का नाश करने वाला है। शास्त्र के रहस्य को भलीभांति जानने वाले बुद्धिमान व्यक्ति को चाहिए कि दु यदायी कार्यों को दूर से ही त्याग दे और सुखप्रद कार्यों का सेवन करे। कोयल के समान मीठ वचन बोलने वाली देवी। तुम बड़ी विदुषी हो। शुभं के महान् बल पर दृष्टिपात तो करा। देवताओं का समाज इनके द्वारा कुचल डाला गया है— इसी से इनका प्रशासनीय प्रभुत्व प्रत्यक्ष है। प्रत्यक्ष प्रमाण छोड़कर अनुमान का आश्रय लेना बिल्कुल व्यर्थ है। सदेहास्पद कार्य में विद्वान् पुरुष प्रवृत्त नहीं होते। दैत्यराज शुभं को सग्राम में कोई भी जीत नहीं सकता। वे देवताओं के घोर शत्रु हैं। इसीलिए स्वयं न आकर देवतागण उनके समक्ष तुम्हे प्रेरित कर रहे हैं। ये देवता मीठ वचन बोलते हैं। तुम इनके वाम्जाल में फस गई हो। इनकी शिक्षा के रण-रण में स्वार्थ भरा है। इससे तुम्हें महान् व्लेश भोगना पड़ेगा। स्वार्थवश मित्रता करने वालों को छोड़कर धार्मिक मित्र का ही अवलम्बन करना चाहिए। देवता अत्यन्त स्वार्थी है। मैंने तुमसे यह बिल्कुल सच्ची चात कही है। इस समय महाराज शुभं के हाथ में विजयश्री है। व अद्वित भूमण्डल के स्वामी है। देवताओं पर भी इनका अधिकार है। य बड़े सुन्दर, सुयोग, शूखीर और रसशास्त्र

के विशेषज्ञ है। तुम इनकी सेवा में उपस्थित हो जाओ। महाराज शुभ की आज्ञा से सम्पूर्ण लोकों की सम्पत्ति भोगने का सुअवसर सहज ही तुम्हें प्राप्त होगा। तुम भलीभाति विचार करके इन सुयोग्य स्वामी को पति बनाने का लाभ हाथ से मत जाने दो।'

इस प्रकार चण्ड अपना अभिप्राय व्यक्त कर गया। उसकी बात सुनकर भगवती जगदम्बा मेघ की भाति गम्भीर वाणी में गरज उठी और बोली— और धूर्त, तू यहा से हट जा। क्यों कपटपूर्ण व्यर्थ की बात बक रहा है? विष्णु और शक्ति आदि को छोड़कर मैं दानव शुभ को क्यों पति बनाऊ? मैं किसी को भी पति बनाना नहीं चाहती और न किसी पति से मेरा कोई काम ही है। और, सुन,— सम्पूर्ण जगत् मरा ही शासन मानता है। मैंने असच्च शुभ-निशुभ देखें हैं। इससे पूर्व सेकड़ों दैत्या और दानवों को मैं मृत्यु के घाट उतार चुकी हूँ। प्रत्यक्ष युग में देवताओं और दानवों के बहुतेरे समाज मेरे सामने ही काल के गाल में चले गये, अब भी जा रहे हैं और आगे भी जायेंगे। इस समय दैत्यवश का सहार करने वाला काल यहाँ उपस्थित है। अपने वश की रक्षा करने के लिये तू जो प्रयत्न कर रहा है, यह बिल्कुल व्यर्थ है। महामते! तू वीर धर्म की रक्षा के लिये युद्ध करने में तत्पर हो जा। भावी मृत्यु को कोई हटा नहीं सकता। अतएव महात्मा पुरुषों को चाहिये कि यश की रक्षा में प्रमाद न करें। शुभ और निशुभ बड़े दुष्ट हैं। उनसे तेरा क्या प्रयोजन सिद्ध हो सकता है? तू उत्तम वीर-धर्म का आश्रय लेकर स्वर्ग जाने की चेष्टा कर। शुभ-निशुभ तथा अन्य भी जो तेरे बन्धु-बान्धव हैं, वे अभी थोड़ समय के पश्चात् तेरे अनुगामी बनेंगे। मैं अब क्रमशः सम्पूर्ण दैत्या का सहार कर डालूँगी। मूर्ख! विपाद मत कर। युद्ध करना ही तेरे लिये समुचित है। मेरे हाथ से तेरा वध हो जाने के पश्चात् तेरा भाई भी काल के मुख में जाने वाला है। तदनन्तर शुभ-निशुभ और मदोन्मत्त रक्तबीज भी प्राणों से हाथ धो बैठेंगे। अन्य भी जितन दानव हैं, मैं उन सबका समराङ्गण में वध करूँगी। इसके बाद अपने स्थान पर चली जाऊँगी। तू रह अथवा शीघ्र भाग जा। रहता है, तो तुम्हत अस्त्र हाथ में लेफ़र मेरे साथ लड़ने के लिये तैयार हो जा। क्यों व्यर्थ की बातें बक रहा है? ऐसी बाते तो कायर जनों का ही प्रिय हाती है।'

देवी के यो उत्तेजित करने पर चण्ड और मुण्ड के क्रोध की सीमा न रही। बल के अभिमान मे चूर रहने वाले उन दानवों ने तुरत धनुप टकारना आरम्भ कर दिया। देवी ने भी शख बजाया, जिसकी तुमुल ध्वनि से दसों दिशाएँ गूँज उठी। महाबली सिह भी क्रोध मे भरकर गरज उठा। उस गर्जन से इन्द्र आदि देवताओं, मुनियो, यक्षो, गन्धर्वों, सिद्धों, साध्यों और किन्नरों के हृदय मे प्रसन्नता छा गयी। तदनन्तर देवी का चण्ड और मुण्ड के साथ परस्पर युद्ध आरम्भ हो गया। कायरों को भयभीत करने वाले उस युद्ध मे गदा, तलबार और बाण आदि विविध आयुध चलने लगे। देवी अपने चमचमाते हुए बाणों से चण्ड के तीरों को काटने लगीं। साथ ही उन्होंने सर्पों की तुलना करने वाले बाण चलाने आरम्भ कर दिये। उस समय देवी के बाणों से आकाश इस प्रकार छा गया, मानो वर्षा होने के बाद कृषकों के लिए कष्टप्रद फतिगे चारों ओर फैल गये हों।

अब मुण्ड भी सैनिकों को साथ लेकर युद्धभूमि मे फट पड़ा। उसकी आकृति बड़ी भयकर थी। उसने रोप मे भरकर बाण चलाने आरम्भ कर दिये। महान् बाणजाल देखकर देवी के मन मे क्रोध उत्पन्न हो गया। रोप के कारण उनके मुख की आकृति ऐसी हो गयी, मानों काली घटा हो। उनके केले के फल के समान विशाल नेत्र थे। टेढ़ी भौंह थीं। यो वे काली-वेप में विराजने लगीं। उन्होंने बाध का चर्म पहन रखा था। वे हाथी के चर्म की चादर से सुशोभित थी। उनका वक्ष स्थल नमुण्ड की माला से अलकृत था। उदर ऐसा था मानों बिना जल की बाली हो। खट्टवाग तलबार और पाश धारण करने वाली काली इतनी डारावनी जान पड़ती थी, मानो दूसरी कालगणि का प्रादुर्भाव हो गया हो। उनका विशाल मुख था। उनके द्वारा वे असुर काल के ग्रास बनने लगे। क्रोध मे भरकर काली पराक्रमी असुरों को हाथ मे पकड़ती और उन्हे मुख में डालकर दाँतों से चूर-चूर कर देती। वे घण्टा और सवारों सहित हाथियों को पकड़कर मुख में डाल लेती थी। साथ ही अद्वैहास करने लगती थी। ऐसे ही सारथी सहित घोड़ों और रथों को भी मुख में डालकर वे दाँतों से चबाने लगी। अब चण्ड और मुण्ड अपनी सेना का यो सहार होते देखकर बाणों की अनवरत वृष्टि से काली को ढकने के प्रयास मे लग गये। चण्ड का चक्र सूर्य के समान तेजस्वी था। उसने तुरत देवी पर वह चक्र चला दिया।

वह बार-बार गरजने लगा। उसे गरजते देखकर काली ने एक बाण चला दिया। अब उस बाण के प्रभाव से चण्ड का चक्र, जो सूर्य के समान तेजस्वी और सुदर्शन चक्र की तुलना करने वाला था, टूक-टूक होकर गिर पड़ा। साथ ही तीखे तीरों से काली ने चण्ड पर चोट की। देवी के बाणों से अत्यत व्यथित होने के कारण व मूर्च्छित होकर भूमि पर गिर गया। वह रोप में भर कर काली के ऊपर बाण बरसाने लगा। उसकी बाणवृष्टि बड़ी ही भयकर थी, परन्तु देवी ने ईपिकाश्च का प्रयोग करके क्षण भर में ही सारे बाण काट डाले। फिर अर्द्धचन्द्राकार बाण से मुण्ड पर आघात किया। यद्यपि मुण्ड महान् बलशाली था, फिर भी देवी के इस बाण की चोट को वह सह न सका और तुरन्त ही भूमि पर लेट गया। उस समय दानवी सेना म बड़े जोर से हाहाकार मच गया। आकाश मे रहने वाल सम्पूर्ण देवता शात होकर आनंद मनाने लगे। कुछ ही देर में मूर्च्छा दूर होने पर चण्ड ने एक विशाल गदा दाहिने हाथ मे उठायी और तुरत उससे देवी पर प्रहार किया। देवी ने चण्ड के गदाधात को रोककर बाण-पाश का प्रयोग किया, जिससे वह दानव बध गया। भाई को बधा देख कवच पहने हुए मुण्ड हाथ में दृढ़ शक्ति लेकर आ गया। उसे देखकर देवी ने उसे भी बाधने की व्यवस्था कर दी। अत वह दूसरा भाई भी बध गया। चण्ड और मुण्ड दोनो दानवो को खरहे की भाति गले मे रस्सी डालकर लिय हुए हास्य-विलास करती हुई काली भगवती जगदम्बा के पास आयी। आकर बोली- प्रिये! इन दोना पशुओ को लो। युद्ध मे बड़ी कठिनता से परास्त होने वाले इन दाना दानवा को सग्नामरूपी यज्ञ मे बलि देने के लिये लायी हू।' भगवती जगदम्बा ने देखा चण्ड और मुण्ड काली के प्रयास से उपस्थित थे। उनकी ऐसी दीन-हीन दशा थी, मानों सियार हो। भगवती ने मधुर वचनो म काली से कहा- रणप्रिये! तुम बड़ी विदुपी हो। शीध्र ही देवताओ का कार्य सिद्ध करना तुम्हारा परम कर्तव्य है।'

भगवती जगदम्बा की बात सुनकर काली ने कहा- 'युद्धरूपी यज्ञ बहुत प्रसिद्ध है।

इसमें तलवार खभे का काम देती है। उसी के द्वारा इन का आलम्भन करूगी, ताकि हिसा का रूप भी सामने न आ सके।' यो कहकर काली ने, तलवार से चण्ड और मुण्ड के मस्तक काट डाले। तदनन्तर वे आनन्द म

भरकर उनका रुधिर पीने लगीं। इस प्रकार उन प्रबल दानवों का वध देखकर जगदम्बा प्रसन्नतापूर्वक काली से कहने लगीं- “कालिके! तुमने देवताओं का महान् कार्य सिद्ध किया है। मैं तुम्हे उत्तम वर देती हूँ। चण्ड और मुण्ड का वध करने के कारण अब जगत् में तुम ‘चामुण्डा’ नाम से विख्यात होओगी।”

## मंदिर

माता के मंदिर राजस्थान के अनेकानेक स्थानों पर है, जिनकी गिनती किया जाना सभव नहीं है, तथापि कुछ स्थानों के नाम निम्न प्रकार हैं, जहाँ माता के भव्य, विशाल एवं प्राचीन मंदिर हैं।

अजमेर राजस्थान का हृदयस्थल एवं धार्मिक आस्थाओं का केंद्र जो अरावली की सुरम्य पहाड़ियों से घिरा हुआ है, इन्हीं के मध्य माता चामुण्डा का मंदिर अवस्थित है। इतिहास प्रसिद्ध महाराजा पृथ्वीराज चौहान तृतीय के वशधरों की कुल देवी का यह भव्य मंदिर वि स १०८३ में बनाया गया था। ऐसा कथानक है कि महाराज पृथ्वीराज को माता का आशीर्वाद प्राप्त था। एक दन्त-कथा के अनुसार देवी महाराज की भक्ति से इतनी प्रसन्न हुई की एक बार वह एक सुन्दर स्त्री के रूप में पृथ्वीराज चौहान के साथ-साथ चलने लगीं। राजा के यह पूछने पर कि तुम कौन हो? कहाँ जा रही हो, उक्त स्त्री रूपी माता ने कहा “मैं तुम्हारे साथ तुम्हारे महलों में चलूँगी”

रात्रि का समय था, माता राजा के पीछे-पीछे चलने लगी। पृथ्वीराज तो आगे निकल गये और वह स्त्री एक स्थान पर रुक गई। आगे जाने पर जब पृथ्वीराज ने पीछे मुड़कर देखा तो स्त्री नहीं थी वे पुन देवी की ओर आये तो क्या देखते हैं, एक स्थान पर (जहाँ अभी माता का मंदिर है) स्त्री पापाण रूप में परिवर्तित हो गई और पृथ्वी में समा रही है। महाराजा पृथ्वीराज को यह समझते देर नहीं लगी कि स्त्री रूप में परामाया कुलदेवी चण्डिका ही उनके साथ चल रही थी। भूमिगत होती मूर्ति से पृथ्वीराज ने प्रार्थना की, माता रुक जाओ, माता का आधा शरीर भक्त की आर्त प्रार्थना पर रुक गया तथा वहाँ पर मंदिर का निर्माण कराया। मंदिर में देवी का केवल ढाई फुट का मस्तक ही शेष दिखता है। मंदिर तक जाने के लिए सवा-सौ डेढ़-सौ सीढ़िया है, निर्मल जल का कुण्ड भी है।

पारीका के राव भाटो की पुस्तकों में पारीकों के आवटकों की कुल देवी चामुण्डा का स्थान, जोधपुर किले में प्रतिस्थापित चामुण्डा माता बताई जाती है। यह देवी राठीडों की भी कुल देवी है। चामुण्डा जी की प्रतिमा राव जोधा ने मठौर के चामुण्ड मंदिर से लाकर इस किले में प्रतिष्ठापित कराई थी। “चामुण्डा का मंदिर ईस १८५७ (वि स १९१४) में बारूदखाने के फूट जाने से उड़ गया था। इसलिए महाराजा तरतसिह ने इसका पुनर्निर्माण कराया।”

**पलु- राव-भाटो की पोथियों के अनुसार पलु (सरदार शहर) में भी चामुण्डा का मंदिर है।**

### खण्डेला का चामुण्डा मंदिर

सीकर जिलान्तर्गत खण्डेला में पहाड़ी पर चामुण्डा माता की अति प्राचीन मूर्ति है। ग्राम खण्डेला के पश्चिम में रसेड़ा तालाब के पास अति प्राचीन खण्डेश्वर महादेव का मंदिर है। पहले इसी मंदिर में भगवती चामुण्डा की मूर्ति थी। कालान्तर में जब इस स्थान पर शवदाह होने लगे तो एक रोज माता ने पुजारी को स्वप्न में दर्शन देकर कहा, ‘मुझे यहा दुग्ध आती है। मेरा स्थान पहाड़ी पर बनाओ।’ पुजारी द्वारा आर्थिक स्थिति ठीक नहीं होने की बात जब माता को कही गई तो माता ने आदेश दिया कि प्रात एक टोकरी चूने बत्ती की तथा एक झारी पानी की ले जा और मंदिर निर्माण का कार्य प्रारम्भ कर, मंदिर बन जायेगा। पुजारी ने माता के आदेशानुसार ऐसा ही किया। कहत है, भगवती चामुण्डा की शक्ति से उस एक टोकरी चूने से ही देवी का विशाल मंदिर बन गया। देवी के नित्य दर्शनार्थ अनेकानेक भक्तगण जाते हैं। नवरात्रों में माता के यहा दूर-दूर से भक्तजन जात-जदूले उतारने आते हैं।

- १ बकसर-(जिला उग्राब उ प्र) यहाँ चण्डिका देवी का एक मंदिर है जिसमें देवी की दो मूर्तियाँ हैं। (तीर्थक पृ ९१)
- २ मथुरा-यहा का चामुण्डा मंदिर ५१ शक्ति पीठों में से एक है। ऐसा कुछ लोंगो का मानना है कि यहाँ सती के केश गिरे थे। (तीर्थक पृ ९७)
- ३ महोदय(म प्र)-यहाँ अष्टादश भुजा देवी का मंदिर है जिन्हें लोग छोटी चण्डिका कहत है। (तीर्थक प १२५)

- ४ मुगेर- पूर्वी रेल्वे की एक शाखा जमालपुर से मुगेर जाती है, यहाँ से सीताकुण्ड एवं सीता कुण्ड से लगभग ८ कि मी दूर गगा तट से लगभग २ कि मी पर चण्डी देवी का एक ही पत्थर से बना हुआ अर्ध-गोलाकार मंदिर है। उसमे एक छोटा द्वार है। भीतर दीवार मे चण्डी देवी की मूर्ति बनी है। (तीर्थांक पृ १७१)
- ५ करेडी-इस स्थान से लगभग १५-२० कि मी की दूरी पर एक और उज्जैन की कालिका देवी और दूसरी ओर देवास की भगवती है। देवास की भगवती, उज्जैन की कालिका तथा करेडी भी इन अष्टभुज दर्शन की यात्रा 'त्रिकोण-यात्रा' कही जाती है। क्रमशः ये कौशिकी, कात्यायनी और चण्डिका का स्वरूप मानी जाती है। (तीर्थांक पृ २१७)
- ६ सातमात्रा-कुबेर भडारी से लगभग पाच कि मी दूर यह स्थान नर्मदा के दक्षिण तट पर है। ओकारेश्वर से सभी यात्री प्राय यहाँ नौका से आते हैं, यहाँ सप्तमातृकाओं के मंदिर हैं, जिनमें चामुण्डा मंदिर भी है।
- ७ देवास-देवास के पास एक पहाड़ी पर चामुण्डा देवी का मंदिर है। पास ही एक पर्वतीय गुफा मे भी देवी की विशाल मूर्ति है। (तीर्थांक, प २४२)
- ८ भद्रावती (भाँदक)- वर्धा काजीपेट तीन पर लगभग ९० कि मी दूर भादक स्टेशन है। यह मंदिर भग्रावस्था मे है। देवी की प्रतिमा तथा अन्य अनेक मूर्तियाँ हैं, किन्तु खण्डित हैं। (तीर्थांक पृ २७६)
- ९ सिरसी- बगलोर-पूना लाइन के हबेरी या हुबली स्टेशन पर उतर कर बस से यहा जाना पडता है। हबेरी से यह स्थान लगभग ८०-९० कि मी दूरी पर है। इसे श्रीक्षेत्र कहा जाता है। यहा चामुण्डा देवी का मंदिर है, जो सिद्धपीठ माना जाता है। फाल्गुन शुक्ला सप्तमी को यहा महोत्सव होता है। बड़ा मेला लगता है। धर्मशाला भी है। (तीर्थांक पृ ३१०)
- १० खेइब्रह्मा (गुजरात)- यहा से तीन मील दूर चामुण्डा देवी का मंदिर है। (तीर्थांक- पृ ४२५)
- ११ चाणोद (गुजरात)- यहा चण्ड-मुण्ड का मारने वाली चण्डिका देवी का मंदिर चण्डिकादित्य मंदिर के पास है। (तीर्थांक पृ ४३४)

१२ चामुण्डा- पठानकोट से पपरोला जाने वाली छोटी रेल्वे लाइन पर चामुण्डा स्टेशन मला मे बना है। यहां से लगभग ४-५ कि.मी. पर चामुण्डा देवी का मंदिर है। कागड़ा से भी बस का केवल डेढ़ घंटे का रास्ता है। (नौ देवियों की अमरकथा)

१३ मेसूर (कर्णाटक) में भी चामुण्डा देवी का मंदिर है।

१४ बाणगगा के तट पर भी चामुण्डा देवी का मंदिर है।

पारीका के निम्न अवटकों की चामुण्डा कुल देवी हैं-

१ हलहला (हलहरचा)	तिवाडी
२ भ्रामणा (भ्रमाणा) (भमाणा)	तिवाडी
३ जागलका	जोशी
४ डाबडा	जोशी
५ कायल (कीडल) (बहाल)	पाण्डय



## चतुर्मुखी : चित्रमुखी माता

चतुर्मुखी माता के स्वरूप का वर्णन निम्न प्रकार है<sup>१</sup>-

तत्र ब्राह्मी चतुर्वर्कना पङ्गभुजा हसस्थिता ।  
 पिङ्गला-भूषणोपेता मृगचर्मोत्तरीयका ॥  
 वर सूर शुव धते दक्षद्याहुत्रये क्रमात् ।  
 वामे तु पुस्तक कुण्डी विभूती चाभयकरम् ॥

सप्तमातृकाओं में ब्राह्मी चार मुख और छ भुजाओं से युक्त है। वे हस पर सवार हाती हैं। उनकी अग-काति पीली है। वे आभूषणों से समूलसित और मृगचर्म के उत्तरीय से विभूषित रहती हैं तथा दाहिने भाग के तीनों हाथों में क्रमशः वर-मुद्रा, अक्षसूत्र और शुवा तथा बायें भाग के तीनों हाथों में पुस्तक, कुण्डी और अभय-मुद्रा धारण करती हैं।

असुरों के सहार हेतु देवताओं की शक्तियों का प्राकट्य

असुरों का नाश करने हेतु देवी का रक्तबीज एवं उसके बाद शुभ्म-निशुभ्म से जब युद्ध हुआ तो उस युद्ध में ब्रह्मा आदि समस्त देवताओं की शक्तियाँ भी आ गईं, देवी ने शक्तियों के साथ युद्ध कर रक्तबीज एवं उसके बाद शुभ्म-निशुभ्म का वध किया। अन्य शक्तियों के साथ ब्रह्माणी ने भी युद्ध में भाग लिया, युद्ध का कथानक निम्न प्रकार है-<sup>२</sup>

उस युद्ध में ब्रह्मा आदि समस्त देवताओं की शक्तियाँ भी पधार गयीं। जिस देवता का जैसा रूप, वाहन और भूषण था, उसी के अनुसार रूप, वाहन और भूषण से सम्पन्न होकर उन शक्तियों का आगमन हुआ था। ब्रह्माजी की शक्ति हस पर बैठकर आर्यों। उनके हाथों में अक्षसूत्र और कमण्डलु विराजमान थे। वहाँ पधारी हुई उस शक्ति को 'ब्रह्माणी' कहते हैं। भगवान् विष्णु की

<sup>१</sup> बल्याण शक्ति उपासना अक, वर्ष ६१ (१९८७) पृ ३७

<sup>२</sup> बल्याण सक्षिप्त देवी भागवत वर्ष ३४ (१९६०) पृ २७२ ७५

शक्ति गरुड़ पर चढ़कर आयी। शख, चरू, गदा और पद्म से उनकी भुजाएं सुशोभित थीं। उनका दिव्य विग्रह पीताम्बर से शोभा पा रहा था। भगवान् शम्भु की शक्ति हाथ म विशूल लेकर वृषभपर बैठी हुई पधारी। उनके ललाट पर अर्द्धचक्र चमक रहा था। सप वलय का काम दे रहा था। कातिकियवी की शक्ति कातिकियी उन्ही का रूप धारण किये मयूर पर आरूढ़ हो हाथ में शक्ति लिये दैत्यों से युद्ध करने के लिये बहाँ आयी। इन्ह की शक्ति ऐन्द्री वज्र हाथ में लिये गजराज ऐरावत पर आयी। उनका सुन्दर मुख क्रोध से तमतमा रहा था। वाराहरूप धारण करने वाले भगवान् श्री हरि की शक्ति वारही का वेप बनाकर एक हृष्ट-पुष्ट प्रेत पर बैठी हुई पधारी। भगवान् नृसिंह के समान शरीर धारण करके भगवती नारसिंही का आगमन हुआ। यमराज की भयकर मुस्कान में दण्ड लिये भैसे पर बैठकर युद्धभूमि में आयी। उनका मुख-मण्डल आने का कष्ट स्वीकार किया। यो सम्पूर्ण देवता ही अपनी-अपनी शक्तियों में अपार हर्ष हुआ। देवता भी हर्ष मनाने लगे। दैत्यों के हृदय में आतक आय और भगवती चण्डिका स वहने लगे, देवताओं का कार्य सिद्ध करने के लिये इन दैत्यों का अभी मार डालो, शुभ-निशुभ तथा अन्य जितने भी दानव उपस्थित हैं उन सबको मारकर सारी दानवी सेना तुरत समाप्त कर दी जाय। जगत् में किसी प्रकार का भय न रहे। अपने-अपने तेज से सम्पन्न होकर शक्तिया यहाँ विराजमान हो। देवता लोग यज्ञ में भाग ग्रहण करें। ब्राह्मण यज्ञ में तत्पर हो जाय। चराचर सम्पूर्ण प्राणियों के सामने सुख का अवसर प्राप्त हो। सारे उपद्रव शात हो जायें। मेघ समयानुकूल वर्षा का। खेती कल-फूल से सम्पन्न हो जाय।'

इस प्रकार ससार के शुभचितक भगवान् शम्भु अपना अभिप्राय व्यक्त कर रहे थे। इतने म ही भगवती चण्डिका के शरीर से एव बड़ी विचित्र शक्ति प्रकट हुई। उस अत्यन्त भयकर शक्ति के मुख से ऐसे शब्द निरूप हो रहे थे मानों सेकड़ों गीरदियों एक साथ बाल रही हों। भयकर रूपवाली उस देवी का मुह मुसम्मान से भरा था। उसने भगवान् शम्भु से कहा- 'देवेश्वर! तुम

अभी दानवराज के पास जाओ। कामदेव को भस्म करने वाले शकर। उन देवद्रोही शुम्भ और निशुम्भ को अत्यन्त अभिमान हा गया है। तुम दूत का कार्य सम्पन्न करने के विचार से जाओ और मेरी यह बात उनसे कहा कि 'तुम लोग स्वर्ग छोड़कर शीघ्र ही भाग जाओ। देवता स्वर्ग मे आनदपूर्वक निवास कर। इन्द्र को अपना उत्तम आसन प्राप्त हो। देवता स्वर्ग मे रहन और यज्ञ का भाग पाने के अधिकारी बन। तुम्हें यदि जीने की इच्छा हा तो तुरन्त पाताल में, जहाँ अन्य दानव रहते हैं- चले जाओ और यदि मरना ही अभीष्ट हो तो पूरी शक्ति के साथ लड़ने के लिये तुरत युद्ध भूमि म आ जाओ। मेरी शिवाएँ— ये योगिनियाँ तुम्हारे कच्चे माँस से तप्स हों।'

भगवती चण्डी का उपयुक्त वचन सुनकर भगवान् शकर तुरत दानवराज शुम्भ के पास पहुचे। उस समय शुम्भ अपनी सभा मे बैठा था।

शकरजी ने कहा—राजन्! मे प्रिपुराविनाशक महादेव हू। भगवती जगदम्बा मा दूत बनकर तुम्हारा हित करने के लिये यहाँ आया हू। देवी ने तुमसे कहलवाया है— 'तुम लोग स्वर्ग और भूमण्डल छोड़कर यहाँ से शीघ्र चले जाओ। बलवानो मे श्रेष्ठ जहा रहता हे उस पाताल म तुम्ह चले जाना चाहिये और तुम्हे यदि मरना ही अभीष्ट हो तो अभी सामने आ जाओ। तुम सभी को मै सग्राम म मार डालूगी इसम काइ सदेह नही है।' तुम लोगो का कल्याण करने के विचार से ही श्रीदेवीजी ने यह बात कही ह।

भगवती जगदम्बा का यह वचन अमृत के समान मधुर एव हित से ओतप्रात था। प्रिशूलधारी भगवान् शकर प्रधान दैत्या को यह वचन सुनाकर लोट आय। देवी ने शकर को दूत बनाकर दैत्यो के पास भेजा था। अतएव वे सम्पूर्ण लाको म 'शिवदूती' का नाम से प्रसिद्ध हुई। शकर के मुख से निकल हुए देवी के इस सदेश को दैत्य सहन नही कर सक। वे युद्ध के लिए तुरन्त निकल पड। उहोने ऋच पहन रखे थे। उनमी भुजाएँ शम्भो से सुसज्जित थी। वे तुरन्त युद्ध-भूमि म भगवती जगदम्बा के सामने आ पहुच आर अपने तीखे तीर से उहान देवी पर चाट करना आरम्भ कर दिया। अब कालिमा हाथ मे त्रिशूल, गदा आर शक्ति लेझर दानवो मा मारती हुई विचरने लगी और दानव उनक ग्रास धनन लग। भगवती भ्रत्याणी समरागण म पधारी। महान् पराम्रमी दानवों पा वे भूमण्डलु का जल फक्ती थी, जिससे उनके प्राण प्रयाण

कर जाते थे। 'माहेश्वरी' वृपभ पर बैठी हुई विराजमान थी। उन्होंने अपने वेगशाली प्रिशूल से दानवा को मारकर धराशायी करना आरम्भ कर दिया। 'वेष्णवी' के चक्र और गदा के प्रहार से बहुत-से दानव निष्पाण हो गये। उनके मस्तक छिन्न-भिन्न हो गये। ऐसावत हाथी की सूड से भी दानवा का पर्याप्त क्षति पहुंची। 'वाराही' का सर्वांग क्रोध से तमतमा उठा था। उन्होंने अपने थूथुन और दाँड़ा से सेकड़ा दानवा को मार डाला। 'नारसिंही' अपने तीक्षणधार नखा से बड़े-बड़े दैत्या को फाड़ने के साथ ही उन्हें निगलने भी लगी। उन्हानें बार-बार अद्वृहास करते हुए विचरना आरम्भ कर दिया। 'शिवदूती' के अद्वृहास से ही दैत्य धरती पर गिर जाते थे। 'चामुण्डा' और 'कालिका' उन्हें बड़ी उतावली के साथ खाने में जुट जाती थी। 'कौमारी' का वाहन मोर था। वे समरागण में विराजमान थी। देवताओं के कल्याणार्थ वे तीखे बाणों से शमुआ को मारने लगी। भगवती 'वारुणी' समरागण में पाश लेकर पधारी थी। उस पाश से बाधकर दैत्या को पटक देना, उनका सहज कर्म बन गया था। गिरे हुए दैत्य मूर्च्छित हो कर निष्पाण हो जाते थे।

इस प्रकार मातृगण के प्रयास से दानवा की वह ओजस्विनी विशाल सेना युद्धभूमि में तहस-नहस होकर भाग चली। उस सेनारूपी समुद्र में अब बड़े जोर से रोने और चिल्हाने की आवाज छा गयी। देवता उन देवियों के ऊपर पुष्पा वीर्य करने लगे। रक्तबीज ने सुना दानवों में भय-कर चीत्कार मचा ह ओर देवता बार-बार जय के नारे लगा रहे हैं। साथ ही दखा, दैत्य भाग भी रहे हैं। अत अब वह क्रोध से भर गया। वह महान् बली एव तेजस्वी दैत्य था। देवता गरज रहे थे— यह दखान वह युद्धभूमि में आ डटा। उसके हाथों में आयुध थे। वह रथ पर बैठा था। उसके धनुप से बड़ी विचित्र ध्वनि निकल रही थी। ऋषि के कारण उसकी आँखें लाल हो रही थीं। वह देवी के सामने आ पहुंचा।

उस दानव के शरीर से जब रक्त वीर्य की बूद भूमि पर गिरती थी, तब उस बृद्ध से तुरत दानव उत्पन्न हो जाते थे। उनके रूप और पराक्रम में बिल्कुल समानता रहती थी। भगवान् शक्ति न उसे यह बड़ा ही अद्भुत वर दे दिया था कि तुम्हार रक्त से असल्य महान् परामर्शी दानव उत्पन्न हो जायगा। इस वरदान के अभिमान में भरा हुआ वह दैत्य क्रोधवश देवी को मारने के लिये

युद्ध-भूमि में आ गया। देवी के साथ कालिका भी विद्यमान थी। दैत्य ने देखा, विष्णु की शक्ति वैष्णवी गहड़ पर विराजमान थी। उनके नेत्र कमल के समान सुन्दर हैं। दानव ने शक्ति से उन पर प्रहार किया। वैष्णवी देवी ने गदा से उस शक्ति को रोक लिया। साथ ही दैत्यराज रक्तबीज को चक्र से छोट पहुंचायी। चक्र से छिद जाने के कारण उसके शरीर से रक्त की धारा बह चली, माना वज्र की छोट से आहत हुए पर्वत के शिखर से गेरू की धारा उमड़ चली हो। उस समय जहाँ-जहाँ भी रक्तबीज के शरीर से निकलकर रक्त की बूदे भूमि पर गिरती थीं, वही-वही रक्तबीज के समान ही हजारों राक्षस उत्पन्न हो जाते थे। ऐन्द्रने कुपित होकर उस भयकर दैत्य रक्तबीज को वज्र से मारा। उससे भी रक्त की बूदे बह चलीं और उसके रक्त से असर्व रक्तबीज उत्पन्न हो गये। पराक्रम और आकार में सभी मूल रक्तबीज के समान थे। युद्ध में कभी पीछे न हटने वाले वे दानव आयुध लिए हुए थे। ब्रह्माणी कुपित होकर ब्रह्मण्ड से उन्हें मारने लगी। माहेश्वरी ने त्रिशूल से दानवों को विदीर्ण कर दिया। नारसिंही के नखों की छोट से उस महाअसुर का शरीर छिद गया। वाराही कुपित होकर अपने यूथुर्ना उस राक्षसाधम को मारने लगी और कौमारीने शक्ति से उसकी छाती में प्रहार किया।

अब रक्तबीज ने भी कुपित होकर अपने पैने बाणों से देविया को मारना आरम्भ कर दिया। वह अलग-अलग सम्पूर्ण देवियों को गदा और शक्ति से छोट पहुंचाने लगा। तदनन्तर देवियों ब्रोध में भगकर अपने बाण-पहार से रक्तबीज पर आधात करने में तत्पर हो गयीं। चण्डिका ने अपने तीखे तीरों से दानव के शश काट डाले। साथ ही ब्रोध में भरकर वे अन्य अनेक बाणों से उसे सब और से मारने लगीं। अब रक्तबीज के शरीर से रुधिर की मोटी धार बह चली। उससे उस दानव के समान ही असर्व शूरवीर उत्पन्न हो गये। उम समय रक्त से उत्पन्न हुए रक्तबीजों से पृथ्वी भर-सी गयी। सभी व्यवस वहने, आयुध लिये हुए अद्युत युद्ध करने के लिये लालायित थे। अब उन अग्नित रक्तबीजों ने देवी पर प्रहार करना आरम्भ कर दिया। यह देखकर देवता भयभीत हो उठे। उनके मुखपर उदासी छा गयी। शोक से उनके शरीर दुर्बल होने लगे। सोचने लगे— अब इन असर्व दैत्यों का सहार कैसे होगा? रक्त से उत्पन्न

केवल चण्डिका है तथा काली और कुछ माताएं भी विराजमान हैं, किंतु ये लोग इन सम्पूर्ण दानवों का परास्त कर सके— यह कहना कठिन है। यदि निशुभ आर बलशाली शुभ भी सहसा समरागण में आ जायें, तब तो महान् अनर्थ हो जाने की समभावना है।

इस प्रकार जब देवता भय से घबराकर अत्यन्त चित्तित हो गये, तब भगवती जगदम्बा ने काली से, जिनकी आखेर कमल के समान थी, कहा— ‘चामुण्डे! तुम अपना मुख फैलाकर मेरे शस्त्राघात के द्वारा रक्तबीज के शरीर से निकले हुए रुधिर को पीती जाओ। इस काय में बहुत शीघ्रता करनी चाहिये। अब तुम दानवों का भक्षण करती हुई इच्छानुसार युद्ध-भूमि में विचाग। मैं पेने वाणों, गदाओं तलवारों और मूसलों से इन दैत्यों को मार डालूँगी। विशाललोचने। तुम ऐसे तग से इन दानवों का रुधिर पीती रहा कि अब एक बूद भी पृथ्वी पर न गिरने पाये। इस प्रकार जब तुम सारा रुधिर पीती जाओगी, तब दूसरे दानव उत्पन्न नहीं हो सकेंग। यो करन से इन दैत्यों का शीघ्र नाश हो जायेगा। इमके अतिरिक्त दूसरा कोई उपाय नहीं है। जब मैं इस दैत्य को मारूँ तब तुम इसे तुग्त खा-जाना। शतुरुषार रूपी इस कार्य में यत्नशील बनकर अब इसका सम्पूर्ण रुधिर पी जाना ही तुम्हारा परम कर्तव्य है। इस प्रकार दैत्य-वध करने स्वग का राज्य इन्द्र को देने के पश्चात् हम आनन्दपूर्वक यहाँ से चल देंगी।

भगवती जगदम्बा के या कहने पर प्रचण्ड पराक्रम दिखाने वाली देवी चामुण्डा रक्तबीज के शरीर से निकले हुए समस्त रुधिर को पीने के लिये तत्पर हो गयी। जगदम्बा ने तलवार और मूसल से रक्तबीज को मारना आरम्भ किया और भूखी चण्डिका उसके शरीर के कटे हुए अंगों को खाने लगी। फिर तो रक्तबीज भी मुपित हाकर चण्डिका पर गदा से प्रहार करने लगा। तब भी चण्डिका उसका रुधिर पान करने से विरत न हई। उस दैत्य के रुधिर से उत्पन्न हुए अन्य जितने भी महावली झूर रक्तबीज थे, वे सभी गिरत गये और काली उन सबका रुधिर पीती गयी। या सम्पूर्ण कृत्रिम रक्तबीज तुरत ही चण्डिका ने कलेवा बन गये। जो असली रक्तबीज था, वह भी भयानक चोट खाकर गिर पड़ा। तलवार भी धार स उसके शरीर के भी टुकड़े-टुकड़े हो गये। रक्तबीज महान् भयन्कर दानव था। उसके मर जान पर युद्धभूमि में दूसरे जितने दैत्य

थे, सब भागकर शुभ के पास चले गये। भय से उनमा ऊँलेजा काँप रहा था। उनकी देह रधिर से भीगी हुई थी। उनके अस्त्र पृथ्वीपर गिर गये थे। अचेत जैसे होकर 'हाय, हाय'— पुकारते हुए व्याकुलतापूर्वक वे शुभ के प्रति बोले— 'राजन् वे रक्तबीज भी अम्बिका के हाथ युद्ध मे काम आगये। उनके शरीर से जो रधिर निकलता था, उसे घण्डिका पी जाती थी। जो अन्य शूरवीर दानव थे, उन्हे देवी के वाहन सिंह ने मार डाला। बहुत-से दैत्य काली के ग्रास बन गये। हम लोग युद्ध का वृत्तान्त बतलाने तथा देवी ने समरागण मे कैसी अत्यंत भयानक स्थिति उत्पन्न कर दी हे, यह सूचित करने के लिये आ गय है। महाराज यह देवी दैत्य, दानव, गन्धर्व, असुर, यक्ष, पत्रग, उरण और राक्षस— इन सभी के लिये सर्वथा अजेय है, कोई भी इसे जीत नहीं सकता। महाराज ! इद्राणी प्रभृति अन्य भी बहुत-सी प्रमुख देवियाँ आकर युद्ध मे सम्मिलित हो गयी हैं। सबके पास वाहन है और सबकी भुजाए विविध आयुधों से सुसज्जित है। उत्तम आयुध धारण करने वाली उन देवियों ने सम्पूर्ण दानवी-सेना को समाप्त कर दिया है। राजेन्द्र ! उन्होंने बहुत ही शीघ्र रक्तबीज को धाराशायी का दिया। एक ही देवी दुर्सह थी, फिर इतनी अन्यान्य देवियों का सहयोग मिलने पर तो कहना ही क्या है ? उसके वाहन सिंह मे भी बड़ी अनुपम शक्ति है। सग्राम मे वह राक्षसों को मार डालता है। अत आप मत्रियों के साथ विचार करके जो उचित हो, वही करने की क्षमा कर। हमें तो इसके साथ वैर करना ठीक नहीं दीखता। सधि करने मे ही सुख की आशा प्रतीत होती है। राजन् ! अन्य जितने दैत्य थे, वे सभी सग्राम मे अम्बिका के हाथ मत्यु के घाट उतर गये। चामुण्ड ने उन दैत्यों का मास तक खा डाला। महाराज ! पाताल म चले जाना अथवा अम्बिका के अनुचर बनकर रहना ही ठीक है। अब इसके साथ युद्ध करने मे तो तनिक भी भलाई नहीं दीखती। यह कोई साधारण स्त्री नहीं है। देवताओं का काय सिद्ध करन के लिये स्वयं माया देवी प्रकट होकर पधारी है।'

भागजर आये हुए दैत्यों का यह सत्य बचन सुनकर ही शुभ क्रोध से आठ क्षमाने लगा। मृत्यु का वरण करने की इच्छा रखने वाले उस दैत्य की बुद्धि काल के प्रभाव से कुण्ठित हो गयी थी। उसने उत्तर दिया।

शुभ ने कहा— भय से व्याकुल हुए तुम सब लोग पाताल मे भाग जाओ अथवा उस स्त्री के दाम बनना स्वीकार कर लो। मैं तो अभी उसे

माने के प्रथल म लगता हू। ये देवियाँ भी मृत्यु के ग्रास बनकर रहेंगी। सग्राम में सम्पूर्ण देवताओं को जीतकर मै निष्ठटक राज्य करूगा। एक रुद्री के भय स घजरामर मै पाताल म कैसे चला जाऊँ? रक्तबीज आदि प्रमुख दैत्य मर पापद थे। मर कारण व युद्ध में काम आ गये। उन सबको मरवामर मै अपने प्राण बचाने के लिये पाताल म चला जाऊँ और अपनी विशद् कीर्ति का नाश कर दू यह मुख से नहीं हो सकता। काल की व्यवस्था के अनुसार प्राणियों की मृत्यु विल्कुल निश्चित है। इसी स्थित मै कौन पुण्य अपने दुर्लभ यश का त्याग करेगा? निशुम्भ मै रथ पर बैठकर समरागण म जाऊगा। उस रुद्री को मारकर ही मेरा आना होगा। यदि मार न सका तो लौटना असभव है। वीर! तुम सेना साथ लेकर मर इस कार्य म सहयोग दते रहना। तीखे तीरों स मारकर उम रुद्री को शीघ्र ही मृत्यु के मुख म झाँक देना— यही तुम्हारा परम कर्तव्य है।'

**निशुम्भ बाला—** मै अभी जाता हू। यह दुष्ट काली मेरे हाथ काल का कलंवा बन जायगी, फिर बहुत शीघ्र मै उस अम्बिका को लेकर यहाँ आ जाऊगा। राजेन्द्र! आप एक तुच्छ रुद्री के विषय मै तनिक भी चिता न करे। कहाँ वह साधारण अबला रुद्री और कहाँ मेरी भुजाओं का अमित पराङ्मम, जा सारे विश्व को वश मै करने की शक्ति रखता है। भाई साहब, आप इस बड़ी भारी चिता को छाड़कर सर्वोत्तम राज्यसुख भोगें। उस आदर की पात्र मानिनी को मै अवश्य ही आपके पास ला दूगा। राजन् मेरे रहते हुए आप युद्धभूमि म जायें— यह अनुचित है। मै आपका कार्य सिद्ध करने के लिये समरागण म जाकर विजयश्री प्राप्त करने की चोष्टा करूगा।

इस प्रकार अपने बड़े भाई शुम्भ से कहकर छोटा भाई निशुम्भ जो अपने बल का पर्याप्त अभिमान रखता था, कवच पहनकर एक विशाल रथ पर जा बैठा। उसने साथ मै सेना ले ली। मगलाचार कराकर वह तुरत युद्धभूमि की ओर चल पड़ा। उसकी भुजाएँ आयुधो से अलकृत थी। पार्श्वरक्षक विद्यमान थे। सूत और वदीजन उसका यशोगान कर रहे थे। अत मै शुम्भ-निशुम्भ का भी देवी भगवती व उसकी शक्तियो द्वारा वध कर दिया गया।

### माता के स्थान

जहा हसवाहिनी ब्रह्माणी देवी स्थित है वह महास्थान अविनितिपुरी मे बहुत उत्तम स्थान माना गया है। वे भक्तों की आशा पूर्ण करती है तथा जैसे

माता अपने पुत्र का पालन करती है, उसी प्रकार वह भक्तों का पालन करती है। सब प्रकार की सिद्धि देने वाली उन हस वाहिनी देवी का गध, पुण्य और नैवेद्यों द्वारा पूजन करें।<sup>१</sup>

भवाल—यहाँ माता जी की दो मूर्तियाँ हैं—

(१) कालिका माता, इसे लहण माता भी कहते हैं

(२) ब्रह्मणी माता बूढ़ण माता

मंदिर के पुजारी अम्बरीशमुखी जी हैं।

माताजी का मंदिर पूवाभिमुखी है।

कालिका माता—यह माता चार भुजाधारी है। तलवार, त्रिशूल धारिया व खण्डपर माता के हाथ में हैं। इसके भैरव का नाम काल-भैरव है। इसे लाहण लहण माता भी कहते हैं। (यहाँ की कालिका माता का विस्तृत विवरण कालिका माता के वृत्तान्त में दिया गया)

ब्रह्मणी माता—मंदिर में दूसरी माता ब्रह्मणी माता के रूप में है। यह माता भी चार भुजा धारी है। माता के हाथ में शाख, त्रिशूल, अमृत कलश व वरदहस्त हैं। इनके भैरव का नाम गोरा भैरव है। इसे बूढ़ण माता भी कहते हैं।

ऐसा बताया गया कि यह मंदिर बहुत पुराना है। भवाल ग्राम में स्थित माताओं का प्राकट्य सम्बत् १११९ में हुआ बताया तथा तत्सवधी शिलालेख मंदिर में बताया गया। इस मंदिर का निर्माण वि स ११७० (चैत्रादि११७१) ज्येष्ठबुद्दी १० (इस १११४ ता २८ई) को हुआ जिसका शिलालेख मंदिर में है, जिससे यह अनुमान किया जा सकता है कि यह मंदिर १२ वीं शताब्दी के बाद का निर्मित नहीं है। वि स १३८० माघ बदी ११(इस १३२३ ता २४ दिसम्बर) के लेख से प्रतीत होता है कि इस समय इसका जीर्णोद्धार हुआ होगा। पुन मंदिरों का जीर्णोद्धार सबत् १७०० में जेठ बदी में प्राया गया तत्विषयक शिलालेख मंदिर में है।<sup>२</sup>

<sup>१</sup> १ कल्याण—संभिम स्कदपुण्णाक वर्ष २५ (१९५०) पृ ३९३

जापपुर राज्य का इतिहास व गौरीशक्ति हीराचंद्र अला, प ३५

भवाल मेडता से दक्षिण में २५ कि. मी. की दूरी पर है। मेडता भक्त-शिरोमणी मीराबाई की जन्मस्थली भी है। धर्म और कला के अप्रतिम सौदर्य के अतिरिक्त प्राकृतिक सौदर्य से यहा की छटा निराली है। मंदिर की रमणीयता उसके चारों ओर लहलहाते खेतों से द्विगुणित हो जाती है।

यहाँ चैग्र और आसोज के दानो नवग्राम में मेले भरते हैं तथा दूर-दूर के यात्री माता के दर्शनार्थ आते हैं, जात देते हैं, जङ्गले उतारते हैं।

माता का मंदिर एक डाकू द्वारा बनाया गया था, ऐसी किंवदती है। इसका कथानक इस प्रकार बताया गया कि एक बार डाकू धाढ़ा (डाका) देने जा रहे थे। जाते समय उन्होंने माता से प्रार्थना की कि यदि हम सकुशल डाका डालकर आजायग तो डाके में मिले धन का आधा हिस्सा मंदिर-निर्माण में लगावाएंगे। डाकू जब डाका डालकर पुन लौट रहे थे, तो राजा की फौज उन्हे पकड़ने हेतु पीछे लग गई। सयोगवश माता का मंदिर पास ही था। डाकुओं ने मंदिर में आम्र शरण ले ली। मंदिर के पुजारी अजयपालजी ने डाकुओं से कहा 'बठ जाओ, तुम माता की शरण में आ गये हो, अब सुरक्षित हो।' देवी की कृपा से डाकुओं का रण-रूप एव स्वरूप बदल गया। सभी डाकू बद्ध दिखने लगे। उन सभी के सफेद दाढ़ी, मूँछ हो गई, एस प्रतीत होता था मानो पेट में आत नहीं मुह म दाँत नही। यही नही, डाकुओं के घोड़ों का स्वरूप भी परिवर्तित हो गया। थोड़ी देर बाद राजा के सैनिक मंदिर में आये जहाँ तक डाकुओं के पेरा के खोज आये थे और मंदिर में डाकुओं की तलाश करने लगे। पुजारी जी द्वारा राजा के सैनिकों से पूछन पर कि वे क्या देख रहे हैं, राज सैनिकों ने कहा यहाँ डाकू आये हैं, अजयपाल जी पुजारी ने उपस्थित डाकुओं की ओर इगित कर कहा ये यात्री है इनमें से यदि काई डाकू हो तो उसे ले जाओ। साथ ही उनके घोड़ों की ओर इशारा कर कहा, यदि इनमें कोई घोड़ा डाकुओं का हो तो उसे पहचान लो। उन्ह वहाँ सभी बृद्ध व्यक्ति भक्त यात्रियों के रूप में दिखे तथा कोई घोड़ा भी दिखाई नहीं दिया। डाकुओं एव धाढ़ा का स्वरूप परिवर्तित होने के कारण राजा के सैनिक उन्ह नहीं पहचान सके और लौट गये। राजा के सैनिकों के लाटते ही डाकू एव उनके घाडे अपने मूल स्वरूप में परिवर्तित हो गये।

डाकुओं ने लूट की सम्पूर्ण सम्पत्ति मंदिर निर्माण में लगा दी।

भवाल ग्राम में हाने के कागण इसका नाम भवाल-माता पड़ गया जब कि मंदिर की दो मूर्तियां कालिका एवं ब्रह्माणी के रूप में हैं।

पारीको के अतिरिक्त यह माता ब्राह्मणों, राजपूतों, जैनियों, जाट मधवाल आदि की भी कुल देवी है। वैसे सभी समाज वाले माता के यहाँ मान्यता लेकर आते हैं और जात जड़ले उतारते हैं।

माताजी के पुजारी प्रारम्भ से ही पुरी गोस्वामी है, ऐसा पुजारी जी द्वारा बताया गया।

माता का मंदिर दशनार्थ प्रात् ६ बजे से रात्रि के ८ बजे तक खुला रहता है।

माता की सेवा-पूजा एवं पुजारी जी का योग-क्षेत्र चढ़ाव से होता है।

माता के मंदिर में शिलालेख है। माता जी के मंदिर में बॉई ओर पश्चिम दिशा में शीतला माता की मूर्ति भी प्रतिष्ठित है।

भोग काली माता के चाँदी के प्याले में ढाई प्याले मदिग एवं बकरे की बलि जा भोग लगता है।

ब्रह्माणी माता के मीठा भाग लगता है।

मार्ग माता का मंदिर मेडता-जैतारण रोड पर २५ कि.मी की दूरी पा स्थित है।

माता के चमत्कारों जा एक अन्य कथानक इस प्रकार है, कि भीनासर के एक सेठ जी थे, जिनका नाम प्रतापमल जी था। एक बार मुगल बादशाह मेडता में मेला देखने आया, भीड़ में भूतवश सेठ प्रतापमल जी का पैर बादशाह के चित्र के लग गया। अब तो सेठ की धोर नहीं रही। उस पर जान-लेवा हमला प्रारम्भ हो गया। कष्ट में आदमी अपने इष्ट देव को याद करता है। सेठ ने भी अपनी माता भवाल जो याद किया। भक्त की आर्त पुकार सुनकर माता ने तत्काल सेठ का आततायियों के चगुल में इस प्रकार बचाया कि बादशाह के सेनिकों का कहीं भी सेठ दिखाई नहीं दिया।

जस-नगर निवासी दुर्गाराम जी माली का भी, जो जन्माध थे, माता ने नेत्र ज्याति दी। आजीवन वे माता की भक्ति में लीन रहे।

एक थे रूपाराम जी जाट। गाँव था उनका धनेरा। ५०-५५ की आयु तक कोई सतान नहीं हुई। गाँववालों एव सगे सबधियों के ताने न केवल वही सुनते अपितु उनकी पत्नी को भी स्त्रियाँ बॉझ कहती और कहती 'इस औरत का तो मुह देखन का धम नहीं।' दाना स्त्री पुरुष माताजी की शरण म गये और माता से प्रार्थना की हे मातेश्वरी। या तो हमें मतान दो या फिर हमें मौत दे। माता ने स्वप्न म रूपाराम जी से कहा 'दुखी मत हो, तेरे सतान होगी' प्रात उन्होंने स्वप्न की बात अपनी पत्नी का बताई तथा यह भी निश्चय किया कि सतान होने पर वे माता के श्रीचरणों में अपनी जीभ भेंट करेंगे। देवी कपा से नौ माह पश्चात् उनके लड़का हुआ, अपने निश्चय के अनुसार उहाने कटार से अपनी जीभ मातेश्वरी के अर्पण कर दी। पुन रात्रि को माता ने स्वप्न देकर रूपाराम जी से कहा 'ओरे भक्त! यदि तू मेरे भाले से जीभ काटता तो वह कट-कर तत्काल तेरे मुह मे जुड जाती। मै तेरे निश्चय एव उसकी क्रियान्विति से प्रसन्न हू, आज के सातवें रोज तेरी जीभ पुन जुड जावेगी' और यह देवी का चमत्कार ही था कि सातवें रोज जब रूपारामजी सो रहे थे। यकायक उनके मुह म जीभ आ गई रूपारामजी भी आजन्म माता की भक्ति म लीन रहे।

माता के चमत्कार का एक उदाहरण और है। ओसवाल जाति का एक व्यक्ति विभाजन के समय पाकिस्तान के पार्वतीपुर ग्राम चला गया। वहाँ उसके परिवार के एक लड़के के कोढ स दानों पाँव गल गये। वे पुन मेडता आये और अपनी कुल देवी की शरण ली, माता ने स्वप्न में कहा बताया कि 'अपनी कुल-देवी को छोड़कर जाने का यह परिणाम है,' माता की कपा से लड़के का कोढ शीघ्र ही ठीक हो गया। तबसे यह परिवार मदिर की देखरेख व पुजारी सहित पूजा-अर्चना करता है।

वेसे तो माता के दर्शनार्थ भक्त लोग प्रतिदिन ही आते हैं, कितु चैत्र के नवरात्रों मे एकम् से नवमी तक दूर-दराज के भक्त माता के दर्शनार्थ एव जात जड़ले उतारने आते हैं।

### ब्रह्माणी माता-सोरसन

कोटा जिले के अता-बाग मार्ग पर दक्षिण दिशा की ओर लगभग २०-२२ कि.मी की दूरी पर सोरसन नामक ग्राम म ब्रह्माणी माता का अत्यन्त प्राचीन

एवं चमत्कारी मंदिर है। यह मंदिर लगभग सात सौ वर्ष पुराना है। मंदिर में उपलब्ध दस्तावेजों से ज्ञात होता है कि इस मंदिर के वर्तमान स्वरूप का निर्माण मानजी बोहरा नामक भक्त ने सन्वत् १६२४ से १६४० के मध्य कराया था। मंदिर की विशालता इसी से आँखी जा सकती है कि उस समय मंदिर निर्माण में ४०,७७७ रु तथा सन्वत् १६४१ में ६०,८०० रु व्यय हुआ। मंदिर के चारों ओर पर्कोटा है।

मंदिर में प्रवेश हेतु तीन विशाल द्वार हैं, जिनकी कलात्मकता देखने योग्य है। मंदिर के गर्भ-गृह एवं उसके आगे गुफा में विशाल चट्टान पर माता की प्रतिमा है। यहाँ माता की पीठ की पूजा की जाती है। भक्तों को केवल माता की पीठ ही दिखाई देती है। माता की पीठ पर शृंगार, मुँह की भाति ही किया जाता है। माता की प्रतिमा चमत्कारी है। सिद्ध से माता का प्रतिदिन शृंगार किया जाता है तथा कनर की पत्तिया से माता की पीठ तथा मंदिर को सजाया जाता है। ब्रह्माणी माता को अत्यन्त सात्त्विक देवी माना जाता है, यही कारण है कि यहाँ नारियल बधारना (फोडना) भी वर्जित है। मंदिर में सन्वत् १६२४ से ही अखण्ड-ज्योति जल रही है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पूर्व अखण्ड ज्योति की देखभाल हेतु पाँच सैनिक कोटा राज्य की ओर से तैनात थे, किन्तु सन् १९४८ में इन्हें हटा लिया गया। अब इस कार्य हेतु एक चोकीदार नियुक्त है। मंदिर की देखभाल वर्तमान में पचायत करती है तथा माता के जेवर तहसील में जमा रहते हैं।

### अन्य मूर्तियाँ

मंदिर की गुफा के बाहर दोनों ओर आलियो में अनपूर्णा देवी एवं विघ्नहरण गणपति की मूर्तियाँ हैं। मंदिर के चौक में लोक-देवता काला-गोरजी की प्राचीन मूर्तियाँ स्थापित हैं। इन्हें भोग में दूध चना और भाग अर्पित की जाती है। मंदिर परिसर में गोड ब्राह्मणों की सती-माता का एक चबूतरा है तथा पास ही प्राचीन शिव मंदिर। पास ही कुछ ऊर्जाई पर एक धूणी है, जिसे सिद्ध स्थान माना जाता है तथा यहाँ सत-महात्मा रहते हैं। वि स १७५० में निर्मित एक कलात्मक कुण्ड भी यहाँ है जो प्राचीन स्थापत्य कला की एक अनूठी मिसाल है।

## चमत्कार

ऐसी मान्यता है कि माता के दखार म जाने से ऊपरी रोग एवं भूत-प्रेत वाधा से भी माता मुक्ति दिलाती है, यही कारण है कि दूर-दराज इलाकों से भी श्रद्धालु वाहित फल पाने हतु यहाँ आते हैं।

## माता की पीठ पूजने का कारण

माता की पीठ क्यों पूजी जाती है, इस सम्बन्ध मे एक किंवदती इस प्रकार है कि मानजी बोहरा, जो धार्मिक एवं सात्त्विक प्रकृति के सीधे-सादे व्यक्ति थे, अपने खेत पर कार्य कर, उसकी आय से जितना वन पढ़ता परोपकार करते रहते थे। एक दिन जब उनकी साध्वी पत्नी खेत पर मानजी के लिए भाजन लेन्द्र जा रही थी तो रास्ते में ठोकर लगने से वह गिर पड़ी। वह क्या देखती है कि, लोटे का एक पात्र सोने के पात्र में परिवर्तित हो गया है, वह भागी-भागी अपने पति मानजी के पास गई तथा उन्हे इस चमत्कारी घटना की जानकारी कराई, मानजी तत्काल उस स्थान पर आये जहाँ उन्हें पारस पत्थर मिला। उसी रात माता ने मानजी को दर्शन दकर कहा, इस पारस पत्थर को तुम मेरा ही रूप मानो। जब तक तुम सद् पथ पर चलते हुए परमार्थ के काय करते रहोगे, मैं तुम्हारे घर में रहूँगी।' मानजी हमेशा माता के आदेशानुसार जन कल्याण के कार्य करते रहे, किन्तु होनी कुछ ओर थी, एक रोज उनकी पुत्रवधु के मुह से किसी परोपकारी कार्य हेतु मना करने पर मानजी वा दर्शन दकर माता ने कहा 'अब मे जा रही हूँ' उस समय जाने की मुद्रा म देहली के पास माता की पीठ थी। मानजी ने माता से प्रार्थना की माता, आपकी मुझ पर महती कृपा रही है, मेरी अर्ज सुन। म बद्रीकाश्रम दर्शन करके जब तक न लौटू आप यही विराजे। मानजी तीर्थ यात्रा पर गये किन्तु लौटे नहीं यह मानकर कि माता उनका घर छोड़कर न जावे। दर्शन देते समय मानजी की ओर माता की पीठ थी, अत तब से ही माता की पीठ की पूजन होती है।

## व्यवस्था एवं परम्परायें

१ माता की पूजा गौड ब्राह्मण<sup>इ</sup>  
अनन्य कृपा थी।

पूज खोलरजी फू

२ मंदिर में श्री दुर्गासप्तशती का पाठ करने का अधिकार गुजराती ब्राह्मणों को है।

३ मंदिर में नगरे बजाने का कार्य मीणा के राव-भाटा का है।

ब्रह्माणी माता का एक मंदिर त्रिवेणीधाम (शाहपुरा-जयपुर) में त्रिवेणी नदी के पास ही पहाड़ी पर है। मंदिर बहुत पुराना है।

माता के कतिपय अन्य स्थान निम्न स्थानों पर भी हैं—  
आकारेश्वर।

ब्रह्माणी माता के निम्न स्थानों का वर्णन फलनीय है—

१ ब्रह्माणी (भादवा माता)— भादवा ग्राम (नीमच के पास) में माता का मंदिर है। एक चबूतरे पर माता की सात मृतिया है, जिन पर सिन्दूर चर्चित है। पास ही एक बावड़ी है। ब्रह्माणी के इस मंदिर को भादवा ग्राम में होने से भादवा माता भी कहते हैं। ऐसी मान्यता है कि शीतला माता का प्रकोप होने पर यदि व्यक्ति बावड़ी में स्नान कर, माता की पूजा-अर्चना करे, तो वह स्वस्थ हो जाता है। शीतला प्रकोप के अतिरिक्त अन्य रोगों के रागी भी माता की शण में आते हैं तथा रोग मुक्ति तक यहाँ रहते हैं। यात्रियों के लिए धर्मशालाएँ हैं। यहाँ चैत्र-बैशाख माह में मेला लगता है।

२ पल्लू माताजी का मंदिर— पुराने समय में चन्द्रवशी राजपूत गजपत नामक गजा राज करता था, जिसकी राजधानी आबू थी। उसके नौ पुत्र थे व बड़े पुत्र का नाम कूलर था। वहाँ एक बार ऋषि मार्कण्डेय पथरे। राजकुमार कूलर ने उनमें बहुत सेवा की और उनके आदेशों का सदा पालन किया। इससे मुनि बड़े प्रसन्न हुए और सिर पर हाथ रखकर उसे देवी माता के मनों का उच्चारण बताया तथा आराधना करने को कहा। कहीं तपस्या के कारण मा जगदम्बा ने प्रगट होकर राजकुमार से वर माणने को कहा तो राजकुमार कूलर ने कहा कि 'मा'! मुझे अपने पिताजी से अलग एक राज्य चाहिए। तब जगन्नामनी ने प्रसन्न होकर 'तथास्तु' कहा और राजकुमार का साथ लेकर युद्ध भूमि में लाकर किले की नींव गाड़ दी और कहा कि जब धन की आवश्यकता हो तो मा के लक्ष्मी रूप का ध्यान करना व युद्ध का काम पड़े तो महाकाली का ध्यान लगाना, इस प्रकार स्मरण करने पर मैं तुम्हारी सहायता व रक्षा करूँगी।

तब देवी के भक्त राजकुमार ने वहा एक दुर्ग बनवाना प्रारम्भ किया जो चौरस था और ८४ बीघा क्षेत्र में फैला था। उसम चार मुए व एक बावड़ी थी, जिसके पास मे किले से बाहर निकलन के लिए एक सुरंग थी। किले मे एक सुन्दर महल बनवाया गया, किले के चार दरवाजे थे जिन पर चार प्रहरी रक्षक के तोर पर रहते थे। इनमे पूर्वी द्वार पर सार्दूला नामक वीर तैनात था। किले के मध्य म महाकाली और महालक्ष्मी का मंदिर बनवाया जिसम दोनो माताओ की सुन्दर मूर्तिया स्थापित की गई।

कुछ समय बाद राजा कूलर का एक अन्य राजा फूलजी जो फूलडा राज्य का शासक था से युद्ध छिड गया। फूलडा के राजा ने कूलरगढ पर सात बार आक्रमण किया पर देवी की कृपा से उसे सदा परास्त ही हाना पड़ा। अन्त म उस राजा के ज्येष्ठ पुत्र ने जिसे लाखा फुलाणी कहते है और वह सूरतगढ नगर के समीप रामहल नामक स्थान का राजा था, उसने अपने पिता को मरते समय वचन दिया कि वह कूलरगढ को अवश्य जीतेगा। लाखा ने १२ वर्ष भगवान शिवजी की तपस्या की और विजय का वर प्राप्त करके कूलर पर विजय प्राप्त कर ली। देवी ने शिवभक्त के विरुद्ध सहायता करने से मना कर दिया। युद्ध बड़ा भयकर हुआ। द्वारपाल शार्दूल ने बड़ी वीरता दिखाई पर वह भी वीरगति को प्राप्त हो गया। इस दुर्ग के तत्कालीन किसी राजा की महारानी का नाम पल्ल था इसी कारण बाद म नगर भी पल्लू के नाम से विद्यात हो गया। उक्त युद्ध म किला व नगर सब नष्ट हो गया था।

इसके बाद बीकानेर के पास गीगासर नाम के एक चान्द्रवशी राजपूत वश मे बाघजी नामक ठाकुर के भीमाजी नामक पुत्र का जन्म हुआ जो बड़ा धार्मिक व गौ-सवक था। जब अकाल पड़ा तो वह अपने पशुओ को चागने प्राचीन कूलर स्थान की आर गया। उसे भी मा दुर्गा का इष्ट था। उस क्षेत्र मे जान पर मा ने दर्शन दिय और माता मूर्ति के रूप मे प्रगट हो गई। उस दिन आसोज सुदी अष्टमी, शनिवार विक्रम सवत १३६५ का दिन बतलाते है। भोजाजी ने वहा अपना निवास बना लिया और मा ने कहा, कि तुम मंदिर बनाओ, जो चढाव का प्रसाद कपड़ा, जेवर, रूपये-पेसे भेट के रूप मे आएं उनस तुम्हारे परिवार का पोषण होगा। अत माता की मूर्ति को स्थापित कर मंदिर बनवाया गया। उसी समय द्वारपाल शार्दूला न भी जो दैत्य

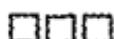
योनि में था प्रकट होकर मा के दर्शन किये और बिनती की कि उसका भी उद्घार करो तो मा ने उसे भी वर दिया कि उसकी भी वहा पूजा होगी। अत बाहर उसकी भी मूर्ति स्थापित हो गई। भौजा का परिवार वहा आबाद होकर मंदिर की पूजा करने लगा और पल्लू काट की मा का पुन दूर-दूर तक नाम हो गया। कुछ समय बाद वहा एक और मूर्ति प्रणाट हा गइ जो सरस्वती की थी। यह आज से ३५० वर्ष पूर्व हुई। अब दोनो मूर्तियों की मंदिर के मुख्य स्थान पर स्थापना की हुई है और बाहर एक काली माता की मूर्ति स्थापित हुई। इस मंदिर म लक्ष्मी माता जिसे द्रव्याणी कहते हैं, सरस्वती माता जो छोटी द्रव्याणी कहलाती है, वह एक महाकाली की मूर्ति है।<sup>१</sup>

वर्तमान में मंदिर का जीर्णोद्धार होने के बाद यात्रियों की सख्त्या म वृद्धि हुई है। मा की कृपा से कुछ चमत्कार भी हुए हैं। किमी नेत्रहीन को नेत्र प्राप्त हुए तो एक भक्त महिला के तीसरी मंजिल से गिरने पर भी मा न दृढ भक्ति के कारण उसकी रक्षा की।

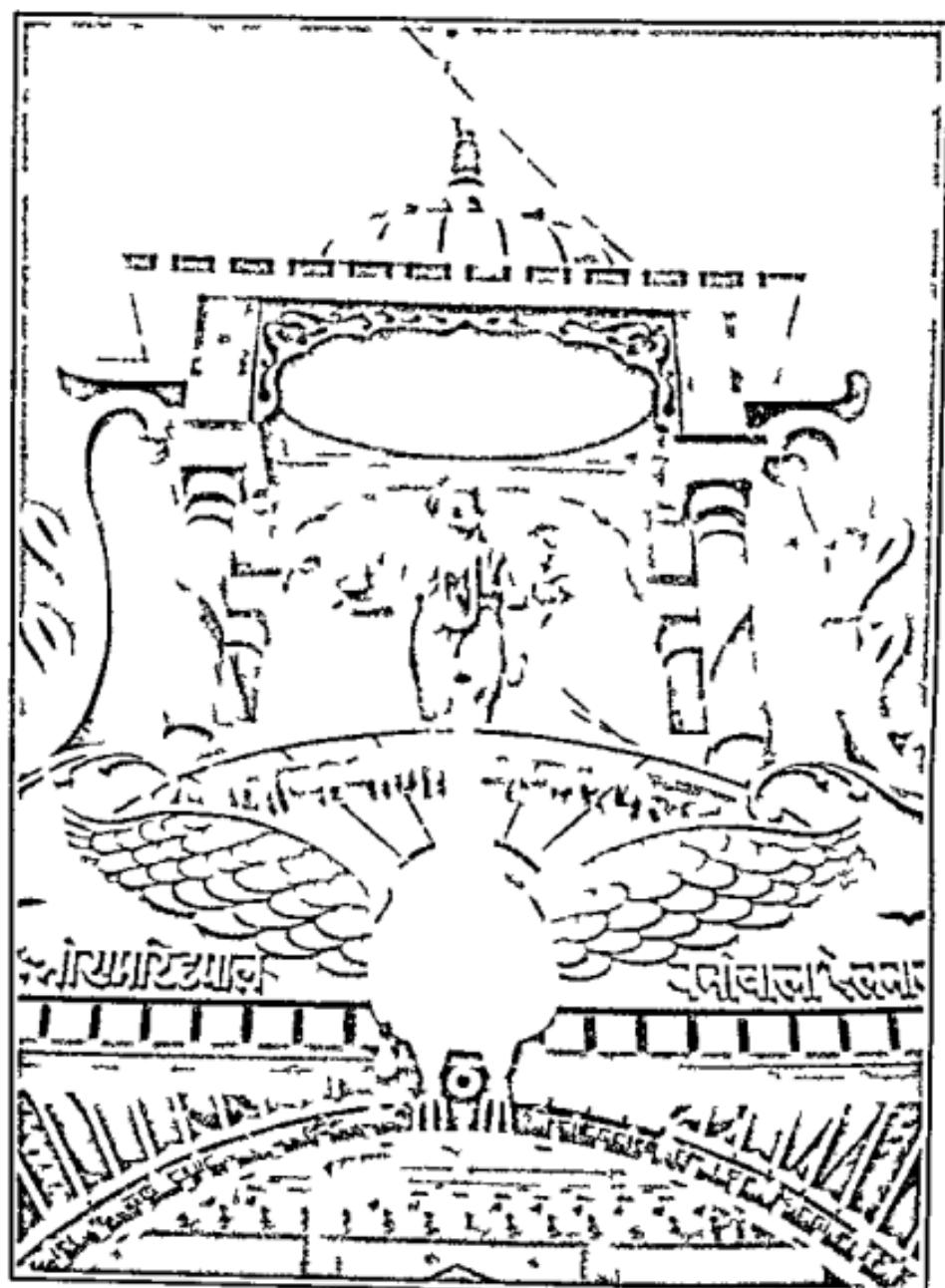
पल्लू पूर्व में ग्राम पचायत थी और इसके नीच चार पाच छोटे-छोटे ग्राम थे व पटवार क्षेत्र था, पर हनुमानगढ जिला व रावतसर तहसील बनने के साथ ही पल्लू मे उप-तहसील कायम कर दी गई। यात्रियों के ठहसे के लिए कई धर्मशालाए बन गई है व अभी निर्माण काय चल रहा है। पल्लू जाने के लिए हनुमानगढ, रावतसर व सरदारशहर तथा नोहा से पक्की सड़क है तथा बस सेवा ओर जीपों का नियमित साधन है।

पारीको के निम्न अवटका की यह कुलदेवी है—

१ मलगोत मलगोता	मिश्र (बोहरा, बहुगा)
२ कस्मीजाल	तिवाडी
३ कीलणावा किलणवा	■■■■■ उपाधिष्ठाप



<sup>१</sup> पन् चित माताओं का वर्णन श्री रघुमाधरायजी शर्मा (पारीक), सेवानिवृत्त आर ए.एस., ४५, पचवटी, अलवर (राज.) द्वाय प्रियत।



पल्लू (सरदार शहर) स्थित माता के मंदिर के मुख्यद्वार का चित्र

# जाखणः यक्षिणी माता

सामान्यत यक्षिणी को धन की देवी, लक्ष्मी के रूप में माना जाता है। 'दीपावली का उत्सव पाँच दिन तक मनाया जाता है जिसमें पृथक्-पृथक् कृत्य होते हैं। यदि इस उत्सव के किसी एक कर्त्य पर विशेष बल दिया जाता है तो उस यक्षरात्रि (वात्सायन कामसूत्र, १/४/४२) की सज्जाये प्राप्त हो गयी है।'<sup>१</sup> धनाध्यक्ष कुबेर का सेनापति होने के कारण भारतीय रिंजर्व बैंक के भवन पर यक्ष एवं यक्षिणी की प्रतिमा स्थापित की गयी है। हिन्दू धर्मकोष<sup>२</sup> के अनुसार 'यक्ष एक अर्थ-देवयोनि है। यक्ष का उल्लेख ऋग्वेद म हुआ है। उसका अर्थ है 'जादू की शक्ति'। अतएव सभवत यक्ष का अर्थ जादू की शक्ति वाला होगा और निस्सदेह उसका अर्थ यक्षिणी है। (यक्ष की शक्ति यक्षिणी है) अथर्ववेद<sup>३</sup> में भी यक्ष का सदर्भ आया है यथा—

पुण्डरीक नवद्वार त्रिभिर्गुणभिरावृतम् ।  
तस्मिन् यद् यक्ष मात्मन्वत् तद वै ब्रह्मविदो विदु ॥  
(अथर्ववेद १० ८ ४३)

अर्थात् तीनो गुणो (मन, प्राण और वाक् रूप अवयवो) से आवृत, स्तुत्य, जरियावाला, पग्म धाम रूप यह पुण्डरीक है। इस पुण्डरीक में जो आत्मन्वत् यक्ष (पूजनीय देव) है, ब्रह्मवेत्ता उसी की अनुभूति करते हैं। सत्च, सज् और तम नाम के तीन गुणों से आवत, नौ द्वारो वाला यह पुण्डरीक जन्म, अस्तित्व, वद्धि आदि भावो वाला व्यष्टि देह है, इसमें आत्मन्वत् यक्ष-पञ्च आत्मरूप वन्दनीय देव है। ज्ञानीजन उसे ब्रह्म जानते हैं।

यक्ष की शक्ति यक्षिणी कही गई है। यहाँ यक्षिणी का कुलदेवी के रूप में पूजित होने का प्रसग है। यक्ष के रूप में आद्याशक्ति भगवती ने देवताओं

<sup>१</sup> धर्मशास्त्र का इतिहास, चतुर्थ भाग लेखक- महामहोपाध्याय डॉ पाण्डुराम वामन कांगे, पृ ७३

<sup>२</sup> हिन्दू धर्मकोष, लखक- डॉ राजशत्ति पाण्डेय पृ ५३०

<sup>३</sup> राजस्थान प्रिका जयपुर दिनांक ७ जून १९९९ अथर्ववेद दयानद भाष्य, प २२५

का गर्व मर्दन किया उसका वर्णन श्री देवीभागवत<sup>१</sup> में आया है जिसका कथानक इस प्रकार है—

पूर्व समय की बात है, मदाभिमानी दैत्य देवताओं के साथ युद्ध करने लगे। उनका अत्यन्त विस्मयकारक युद्ध सौ वर्षों तक चलता रहा। विविध शस्त्रों का प्रहार तथा अनेक प्रकार की मायाओं का विचित्र प्रयोग किया जा रहा था। उस समय उन देवताओं और दैत्यों का वह युद्ध ऐसा जान पड़ता था मानो जगत् के लिए प्रलय की घड़ी आ गयी। उस समय भगवती पराशक्ति की कृपा से देवताओं द्वारा सग्राम में दानवों की हार हो गयी। वे भूतोंक और स्वर्ग लोक छोड़कर पाताल में चले गये। तब देवताओं के मन में अपार हप हुआ। साथ ही वे मोह के कारण विजय मद में चूर होकर चारों ओर परस्पर अपने पराक्रम का बखान करने लगे।

वे कहने लगे— ‘अहो! हमारी विजय क्यों न हो? क्योंकि हमारी महिमा सर्वोत्तम जो ठहरी। कहा ये पराक्रमहीन मूर्ख दैत्य और कहाँ सृष्टि, स्थिति आग सहार करने वाले हम परम यशस्वी देवता। फिर हमारे सामने इन पापमर दैत्यों की कौन-सी बात।’ पराशक्ति के प्रभाव को न जानने के कारण उस समय देवताओं में इस प्रकार का मोह छा गया था। तब उन देवताओं पर अनुग्रह करने के लिए दयामयी भगवती जगदम्बा यक्ष के रूप में प्रगट हुई। उनका विग्रह करोड़ों सूर्यों के समान प्रकाशमान था। उनमें शीतलता इतनी थी मानो करोड़ों चन्द्रमा हो। करोड़ों बिजलियों के समान प्रकाशमान उनका श्रीविग्रह हस्त-चरण आदि इन्द्रियों से रहित था। पहले कभी न देखे हुए उस परम सुन्दर तेज को देखकर देवताओं के आश्चर्य की सीमा न रही। वे परस्पर कहन लगे, यह क्या है? यह क्या है? यह देवताओं की चेष्टा है या कोई बलवती माया है? यदि देवताओं को आश्चर्य में डालने वाली माया है तो यह किसके द्वारा रची गई है? इस प्रकार की कल्पना करके वे सभी देवता उस समय परस्पर अपना उत्तम विचार प्रकट करने लगे। उन्हने कहा— ‘इस यक्ष के पास जाकर पूछना चाहिए कि तुम कौन हो? उसके बलाबल का ज्ञान होने के पश्चात् ही कुछ करना चाहिए।’ या निश्चित विचार करके देवराज इन्द्र ने अग्नि का बुलाया और कहा— ‘अग्निदेव! तुम जाओ, क्योंकि तुम्हे

हम लोगों का मुह कहा गया है, वहा जाकर यह जानने का यत्न करो कि यह यक्ष कौन है ?' महामाता इन्द्र के मुख से अपने पराक्रमगर्भित वचन सुनकर अग्निदेव शीघ्रतापूर्वक वहाँ से उठे और यक्ष के पास पहुँच गये। तब यक्ष ने अग्नि से पूछा— 'अजी, तुम कौन हो और तुमसे कौन-सा पराक्रम है, तुम यह सब मुझे बतलाओ ?' इस पर अग्नि देव ने कहा— 'मैं अग्निदेव हूँ तथा मेरा नाम जातवेद भी है। अखिल विश्व को जला डालने की मुद्रामें शक्ति है।' अग्नि के यो कहने पर उस परम तेजस्वी यक्ष ने उनके सामने एक तृण रख दिया और कहा— 'यदि विश्व का भस्म कर डालने की शक्ति तुममें है तो इस तृण को जला दो।' तब अग्निदेव ने अपनी मम्पूण शक्ति लगाकर उस तृण को भस्म करने का यत्न किया, परन्तु उसे वे जला नहीं सके, अत लज्जित होकर वे देवताओं के पास लौट गये। उनके पूछने पर अग्नि ने वहाँ का पूर्ण वृत्तान्त कह सुनाया, साथ ही कहा कि 'देवताओं ! सर्वेषां बनने का यह हम लोगों का अभिमान सर्वथा व्यर्थ है।' इसके बाद इन्द्र ने वायुदेव को बुलाकर उनसे कहा— 'वायो ! तुममे यह सारा जगत् ओत-प्रोत है, तुम्हारी चेष्टा से ही मसार सचेष्ट बना हुआ है। तुम प्राण रूप होकर अखिल प्राणियों के शरीर में सम्पूर्ण शक्तियाँ का सचार करते हो। तुम्हीं जाकर पता लगाओ कि यह यक्ष कौन है ? इम परम तेजस्वी यक्ष को जानने के लिए दूसरा कोई भी समर्थ नहीं हो सकता।' इन्द्र की गुण और गैरव से गुम्फित यह बात मुनकर वायु के मन में अभिमान का पार न रहा। वे तुम्हन द्वारा यक्ष के समीप गये, वायु को देखकर यक्ष ने मधुर वाणी से कहा— 'तुम कौन हो और तुममें कौन-सी शक्ति है ? मेरे मामन सब बताने की कृपा करो।' उस यक्ष का वचन सुनकर वायु ने अभिमान के साथ कहा— 'मैं मातरिश्वा हूँ। मुझे लोग बायुदेव भी कहते हैं। सबका सचालन और ग्रहण करने के लिए मुझमें असीम शक्ति है। मरीं चष्टा से ही समस्त जगत् के सब प्रकार के व्यापार चलते हैं।'

वायु की उपर्युक्त वाणी सुनकर परम तेजस्वी यक्ष ने उनसे कहा— 'तुम्हारे सामने यह तृण पड़ा हुआ है, इसे अपनी इच्छा के अनुसार चला दो और यदि इस नहीं चला सकते तो अभिमान त्याग कर लज्जित हो, इन्द्र के पास लौट जाओ।' वायु ने उच्चन उच्चन करके आगे बढ़ाया और उसके उड़ाने को उड़ान में लग गये। परन्तु उड़ना तो दूर रहा, वे उस तृण को अपने स्थान

से जरा-सा भी हिला नहीं सके। तब तो वे लज्जित होकर अभिमान का त्याग करके देवताआ के पास लौट गये। वहाँ उन्होंने गर्व को दूर करने वाली सारी वात उनको कह सुनायी ओर इस प्रकार रहा— 'हम लाग गये। हम लोग यक्ष को जानने में असमर्थ हैं। हम लोग व्यर्थ ही अभिमान में भूले हुए हैं। वह यक्ष बड़ा ही अलौटिक प्रतीत हो रहा है। इसमा तेज असह्य है।' तब सम्पूर्ण देवताआ ने इन्द्र से कहा— 'देवराज! आप हम लागा के स्वामी हैं, अत यक्ष के सम्बन्ध में पूरी जानकारी प्राप्त करने के लिए आप ही प्रयत्न कीजिए।' यह सुनकर इन्द्र बड़े अभिमान से यक्ष के पास गये। वे उसके पास पहुँचे ही थे कि वह तेजस्वी यक्ष उसी क्षण अन्तर्धान हो गया। अब देवराज इन्द्र के मन में लज्जा की सीमा न रही। यक्ष ने उनसे बात तक नहीं की, इससे इन्द्र बड़ी ही आत्मगत्तानि का अनुभव करने लगे। उन्होंने सोचा, अब मुझे देवताआ के समाज में लौटकर नहीं जाना चाहिए, क्योंकि वहाँ जाने पर मुझे देवताआ के सामने अपनी हीनता प्रकट करनी पड़ेगी।' इस प्रकार कई विचार करने के पश्चात् देवराज इन्द्र अपना अभिमान त्यागकर वही जिनका ऐसा चरित्र है, उन पाँग देवताआ के शरणागत हो गय। उसी समय यह आकाशवाणी हुई— 'सहस्राक्ष! तुम मायाबीज का जप आरम्भ करो, तब सुखी हो सकोगे।' इन्द्र ने परात्पर मायाबीज का जप आरम्भ कर दिया। आखिं मूँदकर देवी का ध्यान झरते हुए वे निराहार रहकर जप करते रहे।

तदननर एवं दिन चेत्र मास के शुक्ल पक्ष में नवमी तिथि के अवसर पर मध्याह्नमाल में उसी स्थल पर सहस्रा एक महान् तेज प्रगट हो गया। उस तेज पुञ्ज के मध्य में नृतन यौवन से सम्पन्न एक देवी प्रगट हो गई। उनकी कान्ति ऐसी थी माना जपा-कुसुम हो। प्रात वालीन सूर्य के समान अरुण कान्ति से वह शोभा पा रही थी। द्वितीया के चद्रमा उनके मुकुट में विद्यमान थे। वे वर, पाश, अकुश और अभयमुद्रा धारण किये हुए थी। उनके सभी अग अत्यन्त मनोहर थे। बोमल लता की भौति शोभा पाने वाली वे भगवती शिवा थी। भक्तों के लिए वे भगवती जगदम्बा कल्पवृक्ष हैं। अनेक प्रकार के भूषण उनकी शाभा बढ़ा रहे थे। तीन नेत्र वाली वे देवी अपनी वेणी में चमेली की माला धारण करने के बारण अत्यन्त शोभा पा रही थी। उनकी चारों दिशाओं में वेद मूर्तिमान् होकर उनमा यशोगान कर रहे थे। उन्होंने अपने दाँतों नी

आभा से वहाँ की भूमि को इस प्रकार उज्ज्वल बना दिया था मानो पदानग विछा हो। उनका प्रसन्नमुख करोड़ों कामदेवों के समान सुन्दर था। वे लाल रंग के वस्त्र पहने थीं और उनका श्रीविग्रह रत्तचदन से चर्चित था। वे हिमालय पर प्रगट होने वाली 'उमा' नाम से विख्यात कल्याणस्वरूपिणी भगवती जगदम्बा थी। विना ही कारण कस्णामयी वे देवी सम्पूर्ण कारणों की भी कारण हैं। उनके दर्शन करते ही इन्द्र का अन्त करण प्रेम से गदगद हो गया। उनकी आँखों में प्रेमाश्रु और शरीर में रोमाच हो आया। भगवती जगदीश्वरी के चरणों में दण्ड की भाँति पड़कर उन्होंने प्रणाम किया। अनेक प्रकार के स्तोत्रों द्वारा भगवती की स्तुति की। इसके बाद भक्तिपूर्ण-प्रिनग्र चित्त से सिर झुकाये हुए उन्होंने प्रसन्नतापूर्वक देवी के प्रति कहा—

'परम शोभा पाने वाली देवी! यह यक्ष कौन था और यह क्यों प्रगट हुआ था? यह सब रहस्य बतलाने की कृपा फरें।' इन्द्र की बात सुनकर दया की समुद्र वह देवी कहने लगी— प्रकृति आदि सम्पूर्ण ऊरणों का भी कारण यह मेरा ही रूप ब्रह्म है। यह माया का अधिष्ठान, सबका साक्षी तथा निरामय है। सम्पूर्ण वेद और तप जिस पद का क्रमशः वर्णन करते एवं लक्ष्य कराते हैं तथा जिसकी प्राप्ति की इच्छा से ब्रह्मचर्य का पालन किया जाता है, वही पद सभेष मेरे तुम्हे बतलाती हैं। उसी को 'अँ' यह एक अक्षर वाला ब्रह्म कहते हैं। वही 'हीं' रूप भी है। देवेश्वर! 'अँ' और 'हीं' ये दो मेरे मुट्य बीज मत्र हैं। इन्हीं दो भाग से सम्पन्न होकर मैं अखिल जगत् की सष्टि करती हूँ। इसी का एक भाग 'सच्चिदानन्द ब्रह्म' नाम से विख्यात है और दूसरे भाग को माया प्रकृति कहते हैं। वह माया ही पराशक्ति है और अखिल जगत् पर प्रभुत्व रखने वाली वह शक्तिशालिनी देवी मैं ही हूँ। चन्द्रमा की चाँदनी की भाँति यह माया प्रकृति अभिन्न रूप से सदा मुझमें विगजमान रहती है। सुरोत्तम! यह मेरी माया साम्यावस्थातिमका है। प्रलय काल म सम्पूर्ण जगत् इसमें लीन हो जाता है और प्राणियों के कर्म परिपाकवश वही अव्यक्तरूपिणी माया पुन व्यक्तरूप धारण कर लेती है। जो अन्तर्मुखी है, उसे 'माया' या 'योगमाया' आदि नामों से व्यवहृत करते हैं और जो वहिर्मुखी माया है उसे तम (अविद्या) कहते हैं। तमारूपिणी उम वहिर्मुखी माया से ही इस प्राणि-जगत् की सष्टि होती है। सुरश्रेष्ठ! सष्टि वे आदि म वही रजागुण रूप से विराजती हैं।

‘ब्रह्मा विष्णु और महेश्वा’— ये त्रिगुणात्मक कहे गये ह। रजोगुण की अधिकता से ब्रह्मा, सत्त्वगुण अधिक होने पर विष्णु और तमोगुण अधिक होने से रुद्र के नाम से प्रसिद्ध होते हे। स्थूल देह वाले ब्रह्मा कहलाते हैं, सूक्ष्म शरीर वाले को विष्णु कहा गया है और काण-देहधारी रुद्र कहलाते हैं और इन तीनों से परे एक चतुर्थ रूप धारण करने वाली मे ही हूँ। जिसे साम्यावस्था कहते हे, वह सर्वान्तर्यामी रूप मेरा ही है। इसके ऊपर जो परब्रह्म रूप है, वह भी मेरा ही निराकार रूप है। निर्गुण और सगुण मेरे दो प्रकार के रूप कहे जाते हैं। माया (शक्ति) रहित निर्गुण और माया (शक्ति) युक्त सगुण। वही मे सम्पूर्ण जगत् की सृष्टि करके उसके भीतर भली-भाँति प्रविष्ट हा निरन्तर जीवों परे कम और शास्त्र के अनुसार प्रेरणा करती रहती हूँ। ब्रह्मा, विष्णु और काणात्मक रुद्र का मेरा द्वारा ही सृष्टि, स्थिति और प्रलय करने के लिए प्रेरणा प्राप्त होती है। पवन मेरे भय से प्रवाहित होता है, मेरा भय मानकर सूर्य आकाश मे गमन करता है। उसी प्रकार इन्द्र, अग्नि और यम मुझसे भयभीत रहने ही अपने-अपने कर्तव्य का सम्पादन करते हैं, क्याकि मे सर्वोत्तमा सर्वशक्तिमती हूँ। मेरी कृपा से ही तुम लोगों को सब प्रकार से विजय प्राप्त हुई है। तुम सभी काठ की पुतली के समान हो और मे सबको नचाने वाली हूँ। मे कभी तुम देवताओं की विजय कराती हूँ और कभी दैत्यों की। मे स्वतंत्र हूँ। अपनी इच्छा के अनुसार यह सब करती रहती हूँ, परन्तु उनके प्रारब्ध पर मेरा ध्यान अवश्य रहता है। तुम लोग अभिमानवश मुद्द सर्वात्मिका माया-शक्ति को भूल गय थे। तुम्हारी बुद्धि अहकार से आवत्त हो गयी थी। दुस्तर माया की तुम पा गहरी छाप पड़ चुकी थी। अत तुम पर अनुग्रह करने के लिए मेरा ही अनुत्तम तेज सहसा यक्ष रूप मे प्रगट हुआ था। वस्तुत वह मेरा ही रूप था। अब इसके बाद तुम लोग सब प्रकार से अपने अभिमान का परित्याग करके सच्चिदानन्द स्वरूपिणी मुझ देवी के ही शरणागत हो जाओ।’

इस प्रकार कहकर मूलप्रकृति एव ईश्वरी नाम से सुप्रमिद्ध भगवती महादेवी देवताओं के द्वारा भक्तिपूर्वक सुपूजित होकर उसी क्षण अन्तर्धान हो गयी। तदन्तर सम्पूर्ण देवता अपने अभिमान का परित्याग करके भगवती जगदम्बा के सर्वोत्तम चरण-कमला की सब प्रभार से आराधना करने लग। उन सबने नियमपूर्वक भगवती की नित्य उपासना प्रारम्भ कर दी।

इस प्रकार आद्याशक्ति शिवा, उमा ही कुलदेवी के रूप में यक्षिणी नाम से पूजित है।

पारीकों के कुलगुरु रावों की पोथियों में यक्षिणी अर्थात् जाखण माता के दो स्थान बताये गये हैं—<sup>१</sup>

१ पहला मुख्य स्थान भीलवाड़ा जिलान्तर्गत माण्डल।

२ उपस्थान नानौर जिलान्तर्गत रैन।

**माण्डल**— यह स्थान जयपुर-भीलवाड़ा-आसीद-व्यावर सङ्क मार्ग पर है। भीलवाड़ा से १४ कि. मी. दूर माण्डल कस्ब के बाहर पहाड़ी के शिखर पर माता का मंदिर है। इस स्थान को मिनारा कहते हैं।

यक्षिणी माता की यहाँ भव्य मूर्ति है। यह मूर्ति शिव और शक्ति के रूप में है।<sup>२</sup> शिव और शक्ति दोनों एक ही पापाण में निर्मित दो मूर्तियों में है। धड़ के नीचे ऊंचा भाग एक है जबकि धड़ के ऊपर दो मुखारबिन्द हैं एक शिव का व दूसरा शक्ति का। शिव के बाई ओर शक्ति है। यह मंदिर छठी शताब्दी से भी पूर्व का बताया गया। इसे तात्रिकों का मुख्य स्थान माना जाता था। मंदिर की वर्तमान मूर्ति सबत् १६०० के आसपास की है। मंदिर के गर्भगृह में ही तीन खण्डित मूर्तियाँ हैं।

ऐसा माना जाता है कि महमूद गजनी ने जब सोमनाथ पर हमला किया था तब वह इधर से ही गया था तथा उसने मंदिर विघ्वस किया था बाद में वगडावतों ने इसका जीर्णोद्धार कराया। माता की मूर्तियों को अलाउद्दीन खिलजी के समय में खण्डित किया गया ऐसा माता के भक्त श्री शिवशक्ति जी श्रोत्रिय (सेवानिवृत निरीक्षक, शिक्षा विभाग एव आनन्दीलाल जी तिवाड़ी) ने बताया। इसके बाद माता की मूर्तियों को औरंगजेब के समय में तोड़ा गया। औरंगजेब की यात्रा का विवरण करते हुए निकालो मानूची<sup>३</sup> ने लिखा है कि

१ लखनऊ दिनांक ३१ जनवरी १९९९ का अपनी धर्मपत्नी श्रीमती सुशीला तिवाड़ी, पौत्र चि माहित व राहित के साथ माता के दर्शनार्थ एव अप्ययनार्थ माण्डल गया तथा दिनांक २२.६.१९९९ का पौत्र चि शाभित व माहित के साथ रैन गया।

२ ए श्री कब्बलाल पाशार के अनुसार— श्री यक्षणी जगतम्बा ना बहिना की जाड़ी सुन्दर प्रतिमा है। साक्षात् दवी है। अखण्ड राष्ट्र ज्याति पात्रिक, १६ फरवरी १९८८, पृ ३— इस मॉर्टर, \* में यथा और यक्षिणी दोनों विग्रह एक ही पापाण पर खुट हुए हैं। भीलवाड़ा दर्शन प्राइम पब्लिकशन्स भीलवाड़ा, पृ ८०-८२

३ स्टारिया डा भोगार अर्थात् मुगल इडिया १६५३ १७०८ भाग दा ल निकालो मानूची अनुवादक व सम्पादक विलियम इरविन की टीप क्र २६२ पृ २२५

१७ जनवरी १६८० को ओरंगजेब ने माण्डल से प्रस्थान किया व देवारी में पड़ाब किया। टीप क्रमाक २६३ के अनुसार राणा सागर के किनारे तीन मंदिर ध्वस्त किय गये। हसन अली खा ने बादशाह को सूचित किया कि उदयपुर शहर व पास के स्थानों पर १७३ मंदिरों को ध्वस्त किया गया तथा बादशाह के आदेश से ६३ मंदिर चित्तौड़ में गिराये गये। सर एच एम इलियट<sup>१</sup> के अनुसार सन् १६७९ म हसन अली खा ने औरंगजेब को सूचित किया कि उदयपुर तथा पास के जिलों के १२२ मंदिरों को ध्वस्त किया गया। सभव है इसी शखला मे इस मंदिर की मूर्तियाँ भी खण्डित की गई हा।

माताजी के मंदिर के निर्माण के सम्बन्ध मे ऐसा माना जाता है कि माण्डूराव जी ने माण्डल बसाया था। उन्होने एक तालाब का निर्माण कराया था जो ६ कि मी लम्बा व २५ कि मी चौड़ा है। उन्ही के द्वारा माताजी के मंदिर का निर्माण भी कराया गया था। इसके अतिरिक्त ३२ खम्भों की एक छतरी का भी निर्माण कराया गया था।

माताजी का मंदिर पहाड़ी के शिखर पर है। पहले मंदिर तक जाने का कोई सुगम रास्ता नहीं था। माता के दर्शनार्थ पहाड़ी के ऊबड़-खाबड़ रास्ते से जाना पड़ता था। लगभग सो वर्ष पूर्व इसी कस्बे (माण्डल) की निवासिनी हणामी बाई ने जो महाराष्ट्र मे बस गई थी, उन्होने माता के मंदिर तक जाने के लिए सीढिया का निर्माण कराया जिससे भक्तों को मंदिर तक जाने में अत्यन्त सुविधा हो गई। मंदिर तक जाने के लिए ९२ सीढियाँ हैं जिनमे से ८२ सीढियाँ पहले व १० सीढियाँ बाद मे बनाई गईं। माता के मंदिर से सटा हुआ पहाड़ी पर मण्डलेश्वर महादेव का प्राचीन मंदिर है जहाँ जाने के लिए ३२ सीढियाँ और है। इस स्थान को मिनारा कहते हैं। ऐसा कहा जाता है कि मंदिर के शिखर पर दीपक जलाकर चित्तौड़गढ़ के किले को सामरिक सदेश भेजे जाते थे। ऐसा भी माना जाता है कि मिनारा (शिव मंदिर) से चित्तौड़गढ़ किले तक जाने के लिए सुरेण भी थी।

मंदिर के गर्भगृह म एक खम्बे पर शिलालेख उत्कीर्ण है। इस शिलालेप पर राणा पोत दिये जाने से पढ़ा नहीं जाता तथापि शिलालेख में सवत् १६९९ (१६०१) लिखा हुआ प्रतीत होता है और इसी समय महाराणा से युद्ध के समय अम्बर के शासनकाल मे नवीन मूर्तिया की स्थापना हुई बताई।

<sup>१</sup> दी हिस्ती औक इंडिया भाग सात स सर एच एम इलियट सम्पादक प्रा जान छाउसन  
पृ १८८

माता की सेवा पूजा प्रारम्भ से ही फूलरे माली जाति के व्यक्ति द्वारा की जाती है। मंदिर के पुजारी को यहाँ भोपा कहते हैं। वर्तमान में मंदिर के पुजारी माणूजी माली है। उन्होंने बताया कि प्रारम्भ से ही उनके पूर्वज इस मंदिर की सेवा करते आये हैं। इनके पास अपने पूर्वजों का वशवृक्ष नहीं है तथापि इनका कहना है कि उनके पितृंस्त्री रुपानी एवं दादाजी देवीलाल जी चमत्कारी भोपा थे।

माताजी के योग-क्षेम एवं पूजा-अर्चना के लिए कोई कृषि भूमि या अन्य कोई साधन नहीं है।

माताजी के शाकाहारी भोग विशेषत नारियल का भोग लगता है।

मंदिर में गत पच्चीस वर्षों से आसोज के नवरात्रों में शतचण्डी के पाठ होते हैं तथा लगभग गत सौ वर्षों से प्रति रविवार को रात्रि जागरण होता है।

मंदिर में नवरात्रों के अवसर पर महाराष्ट्र के लाटूर कस्बे से एक पारीक परिवार नियमित रूप से माता के दर्शनार्थ आता है। उनके द्वारा दिये गये अशदान से श्री आनन्दीलाल जी तिवाडी ने जिन्हे वे अशदान देते हैं/ भेजते हैं, मंदिर परिसर में एक टकी का निर्माण, एक कमरे का जीर्णोद्धार तथा पहाड़ी की तलहटी में जहाँ सीढ़ियाँ प्रारम्भ होती हैं, सामान रखने हेतु एक कमरे का निर्माण कराया है।

भावी योजना यह है कि मंदिर में जो यज्ञकुण्ड स्थान है वह स्थान अब काफी छोटा पड़ता है, नवरात्रों में यज्ञ के समय स्थान की कमी से काफी परेशानी होती है अत आर सी सी की छत डलबाऊर यज्ञ हेतु पर्याप्त स्थान बनाया जाये।

मंदिर परिसर में माण्डल ग्राम को पेयजल उपलब्ध कराने हेतु एक विशाल टकी बनी हुई है।

महाराणा समरसिंह को यक्षणी माता का आशीर्वाद<sup>१</sup> माण्डल निवासी पंचवलत्ताल पाराशर ने मीनारे के इतिहास से जुड़ी घटनाओं के बारे में बताया कि ग्यारहवीं शताब्दी में भीलवाड़ की राजगद्दी पर चित्तौड़गढ़ में श्री समरसिंहजी रावत थे और दिल्ली के सिहासन पर पृथ्वीराज चौहान

<sup>१</sup> अखण्ड राष्ट्र ज्याति पादिक १६ फरवरी १९८८ त पंचवलत्ताल पाराशर, पृ ३  
माण्डल भीलवाड़ा दर्शन प्रभाशक- प्राइम पब्लिकशान्स भीलवाड़ा पृ ८१-८२

(तृतीय) थे जिनकी अपनी राजधारी अजमेर के तारागढ़ किले में थी। भारतवर्ष पर वाहरी शक्तिया द्वारा यवनों ने कई बार आक्रमण किये और कई क्षेत्रों पर कब्जा भी कर लिया था। जब विक्रम सम्वत् ११९९ में मोहम्मद गोरी ने फिर आक्रमण किया ओर पजाब में भटिण्डा के पास तराईन के मैदान में युद्ध किया था, उस वक्त चौहान ने मेवाड़ के राणा को भी युद्ध में सहायता के लिए बुलाया था। जब चित्तोडगढ़ से राणा ने अपनी सेना लेकर कूच किया तो प्रथम पडाव माडल में इसी पहाड़ी के पास ही डाला था और रावल समरसिंह ने पहाड़ी पर यक्षिणी जगदम्बा के दर्शन किये। जगदम्बा के पुजारी सिद्ध पुरुष निर्भयरामजी ने राणा को युद्ध में विजय हासिल करने का आशीर्वाद दिया। तराईन के युद्ध में पृथ्वीराज चौहान की विजय हुई। गोरी को कैद कर लिया। उस विजय की खुशी में अपनी बहन का विवाह राव समरसिंहजी से कर दिया। विजय उत्सव के बाद महाराणा को ऊचाई में बहुत-सा धन दिया और महाराणा का पद देकर विदा किया।

महाराणा ने अपनी सेना के साथ वापस लौटते वक्त भी आखिरी पडाव माडल में ही रिया और फिर उसी पहाड़ी पर अपनी महारानी के साथ जगदम्बा यक्षिणी के दर्शन किये। यक्षिणी माता जिस चबूतरे पर थी उस स्थान को मंदिर का रूप दिया और अपनी जीत की खुशी में मंदिर के पीछे पहाड़ी की छोटी पर एक मीनार बनवाई जो आज माडल के मीदारे के नाम से पसिद्ध है।

जिस स्थान पर मीदारे का निर्माण किया उसकी सुरक्षा हेतु पहले एक चबूतरा बनाया, उसके मध्य से कुछ दक्षिण की तरफ यह मीदारा अष्टकोण आकार का पाच खण्ड में बनवाया जिसकी ऊचाई ६५ फुट है। प्रत्येक खण्ड में हवा और रोशनी हेतु आमने-सामने छाटी-छोटी खिड़कियां और गाल मोखे बने हे। मीदारे की ऊल चौडाई वर्गाकार में ७२ फुट है। इस पर चढ़ने के लिए भीतर की तरफ सीढ़िया नहीं है। मीदारे के ठेठ ऊपर गोल गुम्बज के मध्य में रोशनी करने का अच्छा स्थान है।

मुगल काल में मुगल सम्प्राट अकबर ने जब चित्तोडगढ़ पर चढ़ाई की थी तब उसकी सेना का पडाव भी इसी पहाड़ी के आसपास ही था। यहाँ से सना युद्ध के लिए हल्तीघाटी तक जाती और वापस विश्राम हेतु यहा आ जाती। उस वक्त इस मीदार के ऊपरी गुम्बद में रोशनी कर दी जाती थी जिससे ,

दूर-दूर तक यह मालूम हो जाता था कि सेना का पड़ाब यहां पर है। मींदारे के ऊपर की रोशनी दूर तक चारों तरफ फैलती थी जिससे सेना को अपनी खेमे में अलग से रोशनी नहीं करनी पड़ती थी। अतीत का वही प्रकाश स्तम्भ आज भी शाम होते ही विद्युत प्रकाश से चमक उठता है।

**रैन जि नागौर स्थित जाखण माता (यक्षिणी माता)**— नागौर जिलान्तर्गत मेडता तहसील में स्थित रैन एक प्राचीन कस्बा है। यह स्थान उत्तरी रेल्वे का एक स्टेशन है जो मकराना-डेगाना-मेडता रेल्वे लाइन पर है। सड़क मार्ग से भी यहाँ आने के सुगम साधन है। मेडता सिटी-डेगाना सड़क मार्ग से यहाँ आया जा सकता है।

रैन ग्राम के बाहर तालाब के किनारे जाखण माता (यक्षिणी) का मंदिर अवस्थित है। देवी स्वरूपा माता चतुर्भुजी है। माता के दाहिने हाथों में खद्ग एवं मुण्डर है तथा बाये हाथ में ढाल एवं फरसा है। माता की सवारी सिंह पर है। मूर्ति खण्डित है। चेहरे का नाक एवं एक भुजा खड़ित की गई है।

माता के मंदिर के पास ही भैरव एवं गणेश जी की प्रतिमाय हैं। भैरव की मूर्ति के पास श्वान प्रतिमा भी है।

माता के मंदिर में एक शिलालेख भी है जो पढ़ने में नहीं आया, यह मंदिर काफी पुराना बताया गया। मंदिर के सामने लाखा तालाब है।

छोटे एवं जीर्ण-शीर्ण मंदिर का जीर्णोद्धार एवं नवनिर्माण माता के भक्त एवं अभिहोत्री तिवाड़ी ओमप्रकाश जी रामावतार जी<sup>१</sup> पुत्र श्री बल्लभ जी पौत्र झूमरलाल जी द्वारा कराया जा रहा है जिनकी यह कुलदेवी है। मंदिर के जीर्णोद्धार के अतिरिक्त यात्रियों के ठहरने के लिए दो कमरे, रसोई, परिक्षमा एवं शौचालय का निर्माण कार्य, जब लेखक वहाँ गया (२२ दि १९९९) प्रगति पर था। निर्माण कार्य की देखरेख कर रहे श्रवणकुमार जी पारीक ने बताया कि जीर्णोद्धार एवं निर्माण कार्य पर लगभग ढाई लाख रुपये व्यय होने का

<sup>१</sup> यह परिवार शखवास मूण्डवा जिला नागौर का रहने वाला है तथा वर्तमान में सूरत में कपड़े का व्यापार करते हैं। निर्माण कार्य इनके नविहाल (रैन निवासी) श्रवण कुमार जी पारीक देख रहे हैं। रैन में पारीकों का ऐसा कोई परिवार नहीं रहता जिसकी यह कुलदेवी है।

अनुमान है। माता के सम्बन्ध मे एक घटना इस प्रकार बताई गई कि मंदिर मे एक बार चोर आये। चोरी के बाद जब वे वापस जाने लगे तो वे तलवार चलाते जा रहे थे, (सभवत उनको किसी ने पीछा किया हो) चोरों के हाथ यथावत ऊपर ही रह गये।

पारीको के निम्न अवटको की यह कुलदेवी है—

१ कोथल्या कोथलिया	पाण्डिया
२ पोम	पाण्डिया
३ हौडिला हुण्डिला	तिवाड़ी
४ पचोली	तिवाड़ी
५ सतमुण्डा सतमुडा	तिवाड़ी
६ अस्त्रिहोत्री अगन्योत्यर अगनोत्री	तिवाड़ी
७ कौशिक भट्ट	व्यास ठोस्ट्रिल
८ मुण्डक्या (मुण्डक)	व्यास
९ तामडा तानणिया तावणा	बोहरा (मिश्र)

## जीणः जयन्ती माता

### स्थिति

सीकर जिला मुख्यालय से लगभग ३५ कि.मी. दक्षिण-पूर्व कोण म, गोरियाँ (रीगस जक्शन से चौथा रेल्वे स्टेशन) से पश्चिम-दक्षिण दिशा की ओर लगभग १४ कि.मी. पश्चिम की ओर तथा रेवासा से दक्षिण की ओर १० कि.मी. दूर तीन ओर से गिरिमालाओं की श्रेणियों के मध्य एक पहाड़ी चोटी के पूर्वीय ढलान के नीचे, अरण्य जिसे स्थानीय भाषा मे ओरण कहते हैं तथा उसके एक ओर सघन ऊचे-ऊचे वक्ष आच्छादित हैं, शक्ति स्वरूपा भगवती जीण माता का मंदिर अवस्थित है। भगवती शक्तिस्वरूपा जीण माता का यह मंदिर जागृत सिद्धपीठ है। जीण माता के पास ही ओरण के पूर्व मे स्यलू सागर नामक खारे पानी (नमक) की झील है।

माता का मंदिर, जो जागृत शक्तिपीठ है, आठबीं शताब्दी के लगभग बना था। उस समय यहा प्रतिहार सप्तांशो का शासन था। मंदिर का मुख्य द्वार पूर्वाभिमुखी है तथा माता के निज-मंदिर का द्वार पश्चिम की ओर देखता हुआ है। मंदिर का सभा-मण्डप चौबीस स्तम्भों पर आधारित है। अनेक बार जीर्णोद्धार के बावजूद सभा-मण्डप अपनी प्रारम्भिक स्थिति मे यथावत् है। सभा-मण्डप के स्तम्भों मे उत्कीर्ण स्तम्भ-लेख, जो विभिन्न विषयों से सम्बन्धित है, मे संवत् १०२९, ११६२, ११९६, १२३०, १३४६, १३८२, १५२०, १६१९ अकित है।

### मूर्ति

जीण माता की आदमकद मूर्ति अष्टभुजायुक्त है। मंदिर के पुजारीजी ने माता के आयुध खड्ग, भाला, आरती की थाली, माला, चक्र, कृपाण, शूल व नाग बताये जिसके शृंगार की महिमा शब्दों मे वर्णित नहीं की जा सकती। ‘विद्वानों का मानना है कि पूर्वकाल मे इस देवी (मंदिर मे प्रतिष्ठापित) का मूल नाम जयन्ती महाचण्डी महिपासुर नाशिनी था। मूर्ति का स्वरूप महिपासुर

का वध करते हुए तथा भगवती का वाहन सिंह महिषासुर की पीठ को खा रहा है।<sup>१</sup> जिसका ही विकृत नाम जीण हो गया।<sup>२</sup> यह स्थान देवी जीण माता, जो जयन्ती देवी नाम से भी जानी जाती है, का माना जाता है।<sup>३</sup>

### भोग

माता की मान्यता शाकाहारी एव सामिष दोनों ही प्रकार के भक्तों की है। माता के ढाई प्याले मदिरा का भोग नित्य लगाया जाता है। माता के मेले के समय भक्तों द्वारा मदिरा का भोग एक से अधिक बार भी लगाया जाता है। वर्तमान में बलि देन हेतु बकरे आदि की मदिर म वास्तविक रूप से बलि नहीं चढाई जाती अपितु केवल रस्म ही अदा की जाती है। शाकाहारी भक्तगण माता के मीठा भोग यथा पूखे-पापड़ी, सीरा, लापसी, चूरमा व नारियल, मखान, पताशे आदि का भोग लगाते हैं।

### शिलालेख

विभिन्न समयों में मदिर के प्रागण में निर्माण कार्य होते रहने के कारण (मदिर का) मूल स्वरूप लुप्त हो गया, केवल मण्डप एव गर्भगृह मात्र अपने मूल रूप म शेष है।<sup>४</sup> प झावरमल्ल शर्मा एव विद्वानों के अनुसार<sup>५</sup> वि स १०२९ का स्तम्भ खेमराज का है जिसने अपना मस्तक काट कर देवी को छढ़ा दिया था।

वि स ११६२ का स्तम्भ-लेख महाराजा पृथ्वीराज चोहान (प्रथम) के शासनकाल का है जिसमें मोहिल के पुत्र हठड द्वारा मदिर के जीर्णोद्धार का उल्लेख है।

वि स ११९६ के दो स्तम्भ-लेख परम भट्टारक महाराजाधिराज अर्णोराज के शासनकाल के हैं जिनके अनुसार इनके शासनकाल में दो बार मदिर के जीर्णोद्धार कार्य हुए।

<sup>१</sup> माता का यह वृत्तान्त लखक का जब वह माताजी के दर्शनार्थ एव अध्ययनार्थ दिनाक २३ व १९ का गया तब माता के पुजारी मातादीनजी पाराशर न बताया।

<sup>२</sup> मह भारती अक्टूबर १९५५ पृ ६ सदर्भ- शाखावाटी के शिलालेख ल सुरजनसिंह शाखावत पृ ४८

<sup>३</sup> राजस्थान जिला गजटियर सीकर सम्पा सावित्री गुप्ता पृ ४७२

<sup>४</sup> शाखावाटी का इतिहास- ल रत्नलाल मिठा पृ ३००

<sup>५</sup> शाखावाटी के रितालेख- ल सुरजनसिंह शाखावत पृ ५०

वि स १२३० का स्तम्भ-लेख भी मंदिर के जीर्णोद्धार से सम्बन्धित ही है। यह जीर्णोद्धार परम भट्टारक महागजाधिराज सामेश्वर के राज्य में उदयराज के पुत्र अल्हण द्वारा सभा मण्डप की मरम्मत कराने का है।

उपरोक्त पाचा लेख चौहान राजाओं के शासनकाल के हैं। इनके अतिरिक्त—

वि स १३४६ का स्तम्भ-लेख चौधरी जेहड के पुत्र राणा आसिदत्त द्वारा मंदिर के जीर्णोद्धार का है।

वि स १३८२ का स्तम्भ-लेख चैत्रसुदी ६ सामवार का है जिसके अनुसार महमदसाही के राज्य में लोटाणी ठाकुर देपति के पुत्र श्री बीच्छा ने जीण माता के देहर के जीर्णोद्धार कराया।

वि म १५२० का आठवा स्तम्भ-लेख भादवा सुदी २ सामवार का है। इसके अनुसार माणिक भण्डारी के बशज ईसरदास के पुत्र जेलहण द्वारा देवी को प्रणाम किये जाने का उल्लेख है। माणिक भण्डारी माथुर कायस्थों की खाँप है।

असाढ़ सुदी १५ सामवार सवत् १६९९ का एक लेख है जिसमें जीण माता के मंदिर के जीर्णोद्धार का वर्णन है।<sup>१</sup>

मंदिर का निर्माण मोहित के पुत्र हठड ने कराया था। मंदिर की छतों, दीवारों एवं स्तम्भों पर बौद्ध तात्रिकों तथा वाममार्गियों की तपस्या और साधना में सम्बन्धित अनेक निर्विसन पापाण प्रतिमाये बनी हुई हैं जिससे यह प्रतीत होता है कि सभवत् पूर्व में यह स्थान तात्रिकों एवं वाममार्गियों का साधना स्थल रहा हो। मंदिर की दीवार पर तात्रिकों और वाममार्गियों की मूर्तियां लगी हुई हैं।<sup>२</sup> आज भी यह तात्रिकों का शक्तिपीठ है।

### जीण<sup>३</sup> माता का प्राकट्य

जीण माता का प्राकट्य चूरू के पास धाधू ग्राम में चौहान राजपूतों के यहा हुआ था। जीण के भाइ हर्ष और जीण का समय दसवीं

<sup>१</sup> यादू क श्याम बाबा का इतिहास—ल प झावरमल्ल शर्मा प श्यामसुदर शर्मा पृ १२१

<sup>२</sup> यादू क श्याम बाबा का इतिहास ल प झावरमल्ल शर्मा प श्यामसुदर शर्मा, पृ ११९

<sup>३</sup> लाक गीत म जीण का मूल नाम जीवणी दिया है।

शताब्दी विक्रमी का अत और विक्रमी ग्यारहवी शताब्दी का प्रारम्भिक काल माना जाता है। ऐसी किंवदन्ती है कि जीण का अपनी भोजाई से तकरार होने पर वह घर छोड़कर चली गई। रास्ते में भाई मिला तथा उसके काफी समझाने-बुझाने एवं अनुनय-विनय करने पर भी वह वापस घर जाने को तैयार नहीं हुई तथा वर्तमान मंदिर स्थल पर जयन्ती महाचढ़ी महियासुर मर्दिनी दुर्गा की कठोर तपस्या करके स्वयं दुर्गा स्वरूप हो गई। भाई हर्ष, बहन के वापस घर न लौटने पर, बहिन के साथ जीण के स्थान से उत्तर की ओर १५ कि.मी. दूर पहाड़ पर तपस्या करने लगा तथा हर्षनाथ भैरू के नाम से जगत्प्रसिद्ध हो गया। इस प्रकार दोनों भाई-बहिनों ने अलग-अलग पर्वत शिखरों पर कठोर तपस्या की। उनके कठार तप से यह सम्पूर्ण क्षेत्र दिव्य प्रभाव से आलोकित हो गया। उनके सहज चमत्कारों की एक लम्बी कहानी है। आज भी असख्य नर-नारी उन्हे पूजते हैं, भक्तों की मनोकामना पूरी होती है। भाई-बहिन की अनूठी, पुनीत प्रेम गाथा भक्तगण बड़ी तन्मयता से सुनते-सुनाते हैं। माता का आशीर्वाद प्राप्त करते हैं, मनौती मागते हैं और वाढ़ित फल पाते हैं। आज भी माता के अलौकिक चमत्कार देखे जाते हैं। जनमानस की अगाध श्रद्धा और निष्ठा इस बात का अकाट्य व जीवन्त प्रमाण है कि देवी हर भक्त की मनोकामना पूर्ण करती है।

जीण माता के सम्बन्ध में जनश्रुति के आधार पर जो अन्य आठ्यान एवं कथानक प्रचलित है उनका सक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार है—

जैसाकि पूर्व में कहा गया है जीण का जन्म चौहान राजपृतों के यहा चूरू के पास धाधू ग्राम में हुआ था। इनके माता-पिता की मृत्यु इनके बालपन में ही हो गई थी। इनके बड़े भाई का नाम हप था। मृत्यु के समय हर्ष ने अपनी माता को यह वचन दिया था कि वह जीण को आजीवन किसी भी प्रकार का कष्ट नहीं होने देगा। बालान्तर में हर्ष की शादी हो गई किन्तु जीण के एवं उसकी भावज के आत्मिक प्रेम उत्पन्न नहीं हुआ। कुछ का जनश्रुति के आधार पर ऐसा मानना है कि जीण पर उसकी भावज ने चारित्रिक आक्षेप किय॑ जिससे व्यथित हामर वह घर छोड़ गई। यह भी किंवदन्ती है कि वह जीण को ताने दती रहती थी। एक अन्य लाकांकि यह है कि ननद

(जीण) व भावज में इस बात की शर्त लग गई कि हर्ष का स्नेह एवं प्यार उसकी वहिन पर अधिक है या पत्नी पर। शर्त के अनुसार यह तय रहा कि पनघट से पानी भरकर जब दोनों ननद-भोजाई घर में आवे तथा घर में जिसका घडा पहले हर्ष उतारे उसके प्रति ही हर्ष का अधिक प्यार माना जावे। एक दिन जब दोनों ननद-भोजाई पनघट से पानी लेकर घर आई तो हर्ष ने सहज भाव से पहले अपनी पत्नी का घडा उसके सिर से उतार दिया, इससे जीण के हृदय में यह बात बैठ गई कि भाई का प्रेम मेरी अपेक्षा अपनी पत्नी पर अधिक है और इसी कारण वह घर छोड़कर चली गई। फिर तो भाई के आग्रह, अनुनय-विनय आदि को दरकिनार कर वह जनेश्वरी महाचण्डी महिपासुरमर्दिनी मा दुर्गा की तपस्या में लीन हो गई।

भाई और बहिन का वडा सवेदनशील एवं भावात्मक स्नेह होता है, किन्तु कई बार यह सुखद सम्बन्ध अचानक व्यथा का सागर बन जाता है। लोकगीतों में जीण एवं हर्ष के जो सवाद हुए थे उनमें जीण के उलाहने एवं भाई द्वारा उसे मनाये जाने का प्रयत्न, एक ऐसा जीवन्त दृश्य उपस्थित करता है जिसे सुनने वाले मत्र-मुख एवं भाव विभोर हो जाते हैं।

### अन्य पूजा स्थल

माता के मंदिर के पास अन्य अनेकानेक पूजा स्थल हैं जिनमें से कतिपय का विवरण निम्न प्रकार है—

भवरा की रानी माता का मंदिर सभामण्डप की पीठ पर पूर्व की ओर भवरा की रानी माता का मंदिर पहाड़ के नीचे घाटी में ही है जहां पर जगदेव पंचार का पीतल का सिर और ककाली का चित्र है। माता के दर्शन हेतु मुख्य मंदिर से ही पीछे की ओर सीढ़िया उतर कर जाना पड़ता है।

एक महात्मा 'माला बाबा', जो पुजारियों का चमत्कारी पूर्वज था, की तप स्थली जो मंदिर के पश्चिम की ओर है जिसको महात्मा का 'धूणा' कहते हैं।

माता के निज मंदिर के दक्षिण की ओर चौक में लाकडा भैरव-शिव की मूर्ति स्थापित है।

माता के मंदिर के दक्षिणी ओर कुण्ड (जलाशय) और नवनिर्मित शिवालय है।

मंदिर के दक्षिण की ओर पहाड़ की चोटी पर काजल शिखर मंदिर है।

जीण माता के भाई हर्षनाथ भैरव का मंदिर उत्तर की ओर लगभग ९ कि.मी. की दूरी पर पहाड़ी पर स्थित है।

सीकर, खण्डेला आदि के सामन्तों द्वारा निर्मित भवन भी हैं।

### जगप्रसिद्ध कतिपय चमत्कार

साधारण मानवी के रूप में जन्म लेकर, आजन्म ब्रह्मचर्य का पालन करके जीण देवी ने दुर्गा का रूप ग्रहण करके देवत्व प्राप्त किया और आज वही जन-जन की आराध्य देवी है।

दिल्ली का बादशाह और गजेब जब अनेक मंदिरों की मूर्तियों को तोड़ता हुआ जीण माता की ओर आया तो देवी ने मुगल सेना पर जहरीले भवरों (बड़ी मक्खिया) द्वारा आक्रमण करवाया, फलत मुगल सेना अपने प्राण लेकर भागी। बादशाह द्वारा माफी मार्गी गई एवं उसने यह प्रतिज्ञा की कि भविष्य में वह ऐसी गलती नहीं करेगा तथा श्रद्धास्वरूप सवामन तेल प्रतिमाह भेजने का सकल्प भी किया।<sup>१</sup> पहले यह तेल दिल्ली से आता था बाद में जयपुर से माता के यहाँ तेल भिजवाने की व्यवस्था की गई। उसने देवी को स्वर्ण-छत्र भी चढ़ाया।<sup>२</sup>

मंदिर में दो अखण्ड दीपों की ज्योति है जिनमें एक घी का व दूसरा तेल का है। इस दीपक ज्योति की व्यवस्था दिल्ली के चौहान राजा ने आरम्भ की थी।<sup>३</sup>

'एक किवदन्ती यह प्रचलित है कि औरंगजेब को कुष रोग हो गया था। उसने रोग निरावण हो जाने पर स्वर्ण छत्र चढ़ाना बौला था सो वह छत्र आज भी मंदिर में विद्यमान है।'<sup>४</sup>

<sup>१</sup> कल्याण- शति उपासना अक वर्ष ६६ (१९८७) पृ ४१२ ३

<sup>२</sup> कल्याण- तीर्थीक वर्ष ३१ (१९५७) पृ २८१

<sup>३</sup> जीण अमृत वर्षा पृ १

<sup>४</sup> श्री जीण पूजन सुनि भजन इतिहास- भक्त रुद्रमल सत्सगी पृ ११-१२

## पुजारी परम्परा

माता की पूजा पाराशर गोत्र के ब्राह्मण व कुछ हिस्से में साभरिया खाप के चौहान राजपूत करते हैं। विशेष भोग राजपूत चढ़ाते हैं। मंदिर में भक्तों द्वारा चढ़ाई गई भैंट व आय हिस्सानुसार उक्त पाराशर ब्राह्मण व साभरीया राजपूत लेते हैं।

### मेले

मंदिर में दोनों नवरात्रों के समय विशाल मेले भरते हैं। आसोज सुदी के नवरात्रों में सप्तमी एवं अष्टमी को तथा चैत्र के नवरात्रों में पचमी से नवमी तक विशेष रूप से अधिक सख्त्या में यात्री आते हैं— मेला भरता है। इस अवधि में देश-विदेश के हजारों भक्त माता के दर्शनार्थ आते हैं, अपनी मनोकामना सिद्धि की प्रार्थना करते हैं तथा जात-जड़ूले उतारते हैं।

### आवागमन के साधन

जयपुर-सीकर के मध्य गोरिया रेल्वे स्टेशन से माता के यहा जाते हैं। जयपुर-सीकर राष्ट्रीय मार्ग से माता के मंदिर को गोरिया स्टेशन के पास से पश्चिम-दक्षिण दिशा को माता के मंदिर जाने के लिए पक्की डामर की सड़क बनी हुई है। सीकर से जीण माता के मंदिर तक दिन में दो बार नियमित बसें चलती हैं। चैत्र एवं आसोज के नवरात्रों में, राज्य सरकार द्वारा विशेष बसें चलाई जाती हैं। ये विशेष बसें, जयपुर, रींगस, सीकर, दातारामगढ़ आदि स्थानों से जीण माता के मंदिर तक चलती हैं।

### यात्रियों की सुविधा के साधन

मंदिर-परिधि एवं आसपास भक्त यात्रियों के ठहरने के लिए तिबरे व धर्मशालाएँ बनी हुई हैं। बर्तन, पानी, रोशनी आदि के प्रबन्ध हेतु एक प्रबन्धकारिणी समिति सबत् २००३ से बनी हुई है जो यात्रियों को यह सामान नि शुल्क उपलब्ध कराती है। यात्रियों द्वारा चदा देना उनकी श्रद्धा पर निर्भर है। चढ़ावे की राशि पुजारी लेते हैं।

मेले के समय यात्रियों के भोजन आदि की व्यवस्था अस्थाई ढाबों द्वारा होती है।

## लोकगीतों में जीणमाता व हर्ष का सवाद

इतिहास के स्रोतों को दृढ़ने में लोकगीतों का महत्त्वपूर्ण स्थान है। पुराने समय में जब किसी महत्त्वपूर्ण घटना को लिपिबद्ध करने के साधन नहीं हुआ करते थे, तो ऐसी घटनाये, कथा के रूप में जीवन्त रखी जाती थी। लोक-कवि उन्हें अपने शब्दों में पिरोकर गाते, उनके गीत जन-जन के कण्ठों से स्वर लहरिया बिखेरत और इस प्रकार लोकगीतों के माध्यम से इतिहास सुरक्षित रहता। इसी प्रकार जीण माता के गृह-त्याग की घटना का विवरण किसी अज्ञात लोक-कवि ने अपने सशक्त शब्दों में आबद्ध किया है जो वह आज भी बड़ी तमयता से गाया जाता है।

बहिन और भाई का अविचल स्नेह प्रकृति की देन है, किन्तु जब उस प्रेम में ग्रहण लग जाये तब कितनी पीड़ा होती है। बहिन को, विशेषत उस परिस्थिति में जब उसके मा-बाप न हों और सब कुछ उसका भाई ही हो। अपनी भावज के ताना से दुखी होकर जब जीण अपना घर छोड़ कर जाती है, रास्ते में उसका भाई मिलता है, वह उसे वापस घर चलने को कहता है किन्तु वह नहीं मानती। इस लोकगीत के माध्यम से बहिन-भाई के सवाद में जो तथ्य उभरकर आये है, वे सामाजिक परिवेक्ष्य में यदि आज भी हम देखें, तो पारिवारिक श्रृंखला की कड़ी को बिखेरने का मूलस्रोत दिव्यरिति कराते हैं। (प्रमुत सवाद कुछ सशोधनों के साथ श्री जीण माताजी—लेखक, प्रकाशक, सग्रहकर्ता—श्री रूडमल शर्मा) के सरलन से साभार दिया गया है।

श्री जीण माता व हर्ष का लोक-गीत

जीण-हर्ष सवाद के रूप में<sup>१</sup>

जीण— हरसा धीर म्हारा रै।

घर तो धाधू म जलम्या दो जणा।

हरस वडी और छोटी जीण।

जामण रा रै जाया। अपणी माता के रै जलम्या दो जणा॥

हरसा धीर म्हारा रै। माय-बावल खास्या मेरा राम॥

<sup>१</sup> हर्ष और जीण का संग्रह बन्ते ही आमारवागी के झदगुरु केन्द्र से प्रमारित हुआ है।

जामण रा रे जाया। जामण रो जायो रे भावज खौसियो॥  
 हरसा बीर म्हारा रे। म्हारो कोई कुल में साथी नाय॥  
 जमण रा रे जाया। अम्बर तो पटकी रे धरती साभळी॥  
 हरसा बीर म्हारे रे। जे म्हारी होती जुग मे माय॥  
 जामण रा रे जाया। अकल कवारी रे नाय विडारती॥  
 हरसा भाई म्हारा रे। कुण पूछे नैणा हदो नीर॥  
 म्हारी मा रा रे जाया। कुण रे सिल्लावे बळतो हीवङ्गो॥  
 हरसा भाई म्हारा रे। कुण केरे सिर पर म्हारे हाथ॥  
 जामण रा रे जाया। कुण बुचकार रे मीठा बोळङ्गा॥  
 हरसा भाई म्हारा रे। कुण बूझे मा विन मनडे री बात॥  
 ओदय रा रे साथी। कुण रे सवारे बिखर्या केसङ्गा॥  
 हरसा बीर म्हारा रे। जै दिन मरणी म्हारी माय॥  
 सीर पीहर रो वै दिन ऊठायो। हरसा भाई म्हारा रे॥  
 भर भर आवै दोन्यू नैण। म्हारी मा रा रे जाया॥  
 छिन छिन आवे रे माय रा भाळणा। हरसा बीर म्हारा रे॥  
 मन रो बाघ्योङ्गे धीरज ना बधे। म्हारी मा रा रे जाया॥  
 उझलै छै समदरियै री पाल। म्हारी मा रा रे जाया॥  
 गैरी तो गैरी रे झाला उठर्यी। हरसा बीर म्हारा रे॥  
 जै म्हारो जीतो हुतो बाप, जामण रा रे जाया॥  
 अकल कुवारी नै कदेयन काढतो। हरसा बीर म्हारा रे॥  
 करतो बो अबङ्गा-सबङ्गा लाङ, जामण रा रे जाया॥  
 सार तो करतो छिन छिन धीव री। हरसा बीर म्हारा रे॥  
 राव गढा रे करतो व्याव। जामण रा जाया॥  
 दुलङ्गो तो तिलङ्गी दे रे तो दातङ्गी। हरसा बीर म्हारा रे॥  
 करता खैचतो, सोर पचास, म्हारी मा रा रे जाया॥

(२) हसती तो घुडला रे देता घूमता, हरसा बीर म्हारा रे।

मा बाबल आवै म्हानै याद, नैणा चौमासो दिरदिर लागर्यो।

हरसा भाई म्हारा रे, तै भल राट्यो म्हारो मान।

जामण रा रे जाया, आछी ओढायी रे सुरगी चूनङ्गी।

हरसा वीर म्हारा रे, रिपिया सू लागे प्यारो व्याज।  
जामण रा रे जाया, बाबल सू प्यारी लागे ढीकरी।  
हरसा वीर म्हारा रे, मायड सू प्यारी लागे सास।  
जामण रा रे जाया, वैनड सू प्यारी लागी घर री नार।  
हरसा वीर म्हारा रे, कै थारे पाती मागती ?  
जामण रा रे जाया, कै लेती आधो राज बटाय।  
हरसा वीर म्हारा रे, की विध पिड़ारी रे छोटी भाण मै।  
जामणा रा रे जाया, कै तो मै लेती धरम री चूनडी।  
हरसा वीर म्हारा रे, कै तो मै लेती कुटको रे काचली।  
जामण रा रे जाया, देतो तो ले लेती धरस की चूनडी।  
हरसा वीर म्हारा रे, देतो तो लेती कुटको रे काचली।  
जामण रा रे जाया, देतो तो लेती पगा री मोचडी।  
हरसावीर म्हारा रे, भावजडी हूज्यो कधलै री छिबकलो।  
म्हारा मा रा रे जाया, अकन कबारी नै वोल्या रे बोलणा॥

## (३) हरस- जीण म्हारी बाई ओ।

मुड मुड तू पाढी घर नै चाल, जामण री ओ जायी।  
ऊभो यो हरसो करे ओ मनावणा।  
काकड़ियै ढलता हरसो नावइयो॥  
आडै फिर दीनी छी अडबार, जामण री ओ जायी।  
न्होरा तो काढै ऊभो हरसो वीर, जीण म्हारी बाई ऐ।

## (४) जीण- हरसा वीर म्हारा रे।

म्हारे फरया तू मत ना आव, म्हारी मा रे जाया।  
म्हारे आगे मत ना दे अडबार, हरसा वीर म्हारा रे।  
था री मनायी जीवण ना मानै, म्हारी मा रा रे जाया।  
मनै मनासी बामण बाणिया, हरसा वीर म्हारा रे।  
घणी मनासी नानी जात, जामण रा' रे जाया।  
बेटी मनासी रे हाडै राव री, हरसा वीर म्हारा रे।  
मनै तो मनासी रे राजा राव, जामण रा' रे जाया।  
मनै तो मनासी दिल्ली रो बादशाह, हरसा वीर म्हारा रे।

(५) हरस- जीण म्हारी बाई अे, उजला रधाद्यु अे तने बूरा भात।

जामण री अे जायी, हसिया ये मूगा री रधाद्यु तूने दाळ।

जीण म्हारी बाई अे, फलका पोवाद्यु अे तने मूण का।

जामण री अे जायी, तीवण तळवाद्यु तीस-बतीस।

जीण म्हारी बाई अे, खीर रधाद्यु अे बाखडै दूध री।

(६) जीण- हरसा वीर म्हारा रै।

भावज जीमैली रै थारा बूरा भात, जामण रा' रै जाया।

भावज जीमैली भूग केरी दाळ, हरसा वीर म्हारा रै।

घीरत घालजे माय भूरी भेस रो, जामण रा' रै जाया।

तीवण जिमाजे तीस बतीस, म्हारी मा रा' रै जाया।

खीर जिमाजे बाखडै दूध री, हरसा वीर म्हारा रै।

(७) हरस- जीण म्हारी बाई अे।

चोकी ढळवाद्यु अे रतन जडाव री। म्हारी मा री' अे जायी।

ऊपर लगवाद्यु सुवरण थाल, जीण म्हारी बाई अे।

ऊचो सो घालद्यु तनै बैसणो, म्हारी मा री' अे जायी।

बैन उ भाई जीमण जीमा साथ मे, जीण म्हारी बाई अे।

बिच बिच बदला अे बाल्या गासिया।

म्हारी मा री अे जायी।

(८) जीण- हरसा वीर म्हारा रै।

जे ओज्यु जलमग्या एक माय रे, म्हारी मा रे जाया।

जद रे जीमाला भैला बैठ क, हरसा वीर म्हारा रे।

जद रे बदलाला बिच बिच गासिया, म्हारी मा रा रे जाया।

(९) हरस- जीण म्हारी बाई, अे अस्सी अें कल्या रो सिमाद्यु घाघरो।

म्हारी मा, री अे जायी।

अ' र मगवाद्यु थानै दिखणी चीर।

जीण म्हारी बाई अै, मोत्या जडाद्यु अे थारी मोचडी।

म्हारी मारी अे जायी, रतन जडाद्यु अे थारी राखडी।

जीण म्हारी बाई अै, हीपा जडाद्यु थासे हस।

म्हारी मा री औ जायी।  
बिछिया घडाद्यू अे बाई तनै बाजणा।

(१०) जीण— हरसा बीर म्हारा रे।

भावज पहरेली थारो घाघरो, म्हारी मा, रा' रे जाया।  
भावज औढेली दिखणी चीर, हरसा, बीर म्हारा रे।  
भावज ही पहरेली, मोत्या जड़ी मोजड़ी।  
म्हारी मा रा' रे जाया।  
भावज रे ही सौवे जडाऊ राखड़ी, हरसा बीर म्हारा रे।  
भावज रे आपै नोसर हार, म्हारा जामण रा' रे जाया।  
भावज रे राचै रे बिछिया बाजणा हरसा बीर म्हारा रे।

(११) हरस— जीण म्हारी बाई अे।

अतरी करडाई मत ना धार, जामण री अे जायी।  
मान क्होडी पाढ़ी घरै चाल, जीण म्हारी अे।

(१२) जीण— हरसा भाई म्हारा रे।

आकडा रे लागै भला मतीरा, म्हारी मा रा' रे जाया।  
फोगा रे लागे रे चायी काकडी, हरसा बीर म्हारा रे।  
खेजडिया रे लागै रे चाया बोर, जामण रा' रे जाया।  
झाड्या रे लागै चायी सागरी, हरसा बीर म्हारा रे।  
पीपल रे लागे चाये आम, जामण रा' रे जाया।  
आम्बा रे लागे चायी पीपली, हरसा बीर म्हारा रे।  
फिरज्या कुदरत रा साचल नेम, जामण रा' रे जाया।  
जीण आयोडी रे पाढ़ी ना फिरे, हरसा बीर म्हारा रे।  
शिखर चढयोडी सूरज मुड मुड जाय, जामण रा' रे जाया।  
समंदर सू नदीया पाढ़ी आय, जामण रा' रे जाया।  
जमपुर गयोडा रे भवरा मुड चले, हरसा बीर म्हारा रे।  
बादल री रे बूदा पाढ़ी घिर घिर जाय, जामण रा' रे जाया।

(१३) हरस— जीण म्हारी बाई अे।

कद तनै काढी भावज गाळ, म्हारी जामण री जायी।  
कद तनै दीन्या भावज ओळमा जीण म्हारी बाई अे।

(१४) जीण— हरसा बीर म्हारा रे।

नित उठ काढै भावज गाळ, जामण रा' रै जाया।  
नितकी तो बोले रे अवडा बोलणा, हरसा बीर म्हारा रे।  
नणद भोजाई सरवर म्हे गया, जामण रा' रै जाया।  
सात सहेल्या म्हारै साथ मे, हरसा बीर म्हारा रे।  
सरवर पर बोल्या रे भावज बोलणा, जामण रा' रै जाया।  
अवडी तो सबडी रै दीनी गाल, हरसा बीर म्हारा रे।  
तन मन मे लागी रे म्हरे लाय, जामण रा' रै जाया।  
नैणा मै हिंवडे री नदिया नीसरी, हरसा बीर म्हारा रे।  
करु अे तो लागै कुल रे दाग, जामण रा' रै जाया।  
जीवू तो जाळै भाव जीवती, हरसा बीर म्हारा रे।  
सोगन मै खायी सरवर पाळ पर, जामण रा' रै जाया।  
आङ्डो तो लीन्या रे सूरज देवता, हरसा बीर म्हारा रे।  
भावज रो चाहूयौ कळक उतारस्यू, जामण रै जाया।  
जाय तो बसू मै बन खड-झारा, हरसा बीर म्हारा रे।  
हर सू लगास्यू रै वारा लोय, जामण रा' रै जाया।  
जीताजी रैस्यू रै जग मै ऊजळी, हरसा बीर म्हारा रे।

(१५) हरस— जीण म्हारी बाई ऐ, नाकै खिणाद्यू अे थारो ओसरो।

म्हारी जामण री जायी, नाकै खिणाद्यू अे सरवर ताल।  
जीण म्हारी बाई अे, क्वै ता खिणाद्यू अे मोवन-बावडी।  
म्हारी जामण री जायी म्हारी बाई अे।

(१६) जीण— हरसा बीर म्हारा रे।

क्या नै खिणा दै सरवर ताळ, जामण रा' रै जाया।  
क्या नै चुणादे न्यारो ओसरो हरसा भाई म्हारा रे।  
धायी हू थारी रै मोवन बावडी, जामण रा' रै जाया।

अेके ओदर म ही दोन्यू लोटिया, हरसा भाई म्हारा रे।  
 अेके मानड रा चूख्यो दूध, म्हारा मा, रा' रे जाया।  
 अेके पालणियै रे दोन्यू झूलिया हरसा बीर म्हारा रे।  
 अेके आगणिये दोन्यू खेलिया म्हारा मा रा' रे जाया।  
 ओ के बाटकिये पिये दोन्या दूध, हरसा बीर म्हारा रे।  
 ओ के थालकडी मे सागै जीमिया, म्हारा मा रा' रे जाया।  
 बैन उ भाई री, गाढो नेह हरसा बीर म्हारा रे।  
 पर घर री आयेडी नहो तोडियो, जामण रा' रे जाया।

(१७) हरस- जीण म्हारी बाई ओ।

अतरी निसासी ओ बैनड ना हुवै, जामण री ओ जायी।  
 हरसो ता चालै थार साथ, जीण म्हारी बाई ओ।  
 चाल बासेला ओ बनखड झूगरा, जामण री ओ जायी।

(१८) जीण- हरसा बीर म्हारा रे।

किण रे भरोसे थारो राज, जामण रा रे जाया।  
 कुण तो स्ख्वालै रे पिरजा बापडी, हरसा बीर म्हारा रे।

(१९) हरस- जीण म्हारी बाई ओ,

राम कै भरोसे म्हारो राज, जामण री ओ जायी।  
 वो ही स्ख्वालै पिरजा बापडी, जीण म्हारी बाई ओ।

(२०) जीण- हरसा बीर म्हारा रे

मुड मुड तू पाळो घर नै जाव, जामण रा' रे जाया।  
 भावज ता बिलखै रे कुल में ओकली, हरसा बीर म्हारा रे।

(२१) हरस- जीण म्हारी बाई ओ, भावज थारी जासी ओ अपणे बापकै।

जामण री ओ जायी, वा' रैसी भावजडया रे बीच।  
 जीण म्हारी वाइ ओ, भाया रे सहोर ओ ऊमर काढसी।  
 जामण री ओ जायी, जीण म्हारी बाई ओ।

(२२) जीण- हरसा भाई म्हाग रे।

किसी विधि चालै कुल रा नाव, जामण रा रे जाया।  
 वश वधे ना अपणे वापरो, हरसा बीर म्हारा रे।

(२३) हरस- जीण म्हारी बाई आे।

अमर हुवेलो यो कुल रो नाव, जामण री' आे जायी।  
कीरत तो वधैली ये'माय र' बाप री जीण म्हारी बाई आे।

(२४) जीण- हरसा बीर म्हारा रै।

दुनिया काडैली मने गाळ, जामण रा' रै जाया।  
जुग मे बाजूली रै कुळ विणासणी भाई म्हारा रै।

(२५) हरस- जीण म्हारी बाई आे,

कुटम कबीलो दैलो धोक, जामण री आे जायी।  
दुनिया तो आसी आे थारै जातरी, जीण म्हारी बाई आे।  
जुग मे बाजाला आे साचा देव, जामण री' आे जायी।  
सीस झुकासी आे राजा-बादस्या जीण म्हारी बाई आे।

(२६) जीण- हरसा बीर म्हारा रै, भोत दूखेलो रे घर रो छोडबो।

जामण ग रे जाया, घणूरे दूखेलो तजबो मोह।  
हरसा बीर म्हारा रे, भावज ऊङीकै पाढो तू फिर जाव।  
जामण रा रे जाया, हरसा बीर म्हारा रै।

(२७) हरस- जीण म्हारी बाई आे।

भोत सुखेलो आे घरा रो छोडबो, म्हारी मा री' आे जायी।  
घणू आे सुखेलो तजिबो मोह, जीण म्हारी आे।  
हरसा रा वायक पाढा ना फिरै, म्हारी मा' री आे जायी।  
चालूला थारै पगल्या रै लार, जीण म्हारी बाई आे।  
धृणो तो तापूलो बनखण्ड ढूगरा, म्हारी मा री जायी।

(२८) जीण- हरसा बीर म्हारा रे।

भोत दुहेलो रै जुग मं जोग, जामण रा' रै जाया।  
बैनउ रे वचना सू पाढी तू फिर ना, हरसा बीर म्हारा रे।

(२९) हरस- जीण म्हारी बाई आे।

पैला तू मैले पाढो भा न्ह पाव, जामण री' आे जायी।

(३०) जीण— हरसा बीर म्हारा रे।

सन्ना रा भर ज्याय गहग धाव, जामण रा' रे जाया।

बोली रा धावज ना भै, हरसा बीर म्हारा रे।

फाट्या दूधा रा' रे जावण ना लै, जामण रा' रे जाया।

फाट्योडा मन मिलबा रा नाय, हरसा भाइ म्हारा रे।

उझात्योडा समदर रे बीरा ना ढै, जामण रा रे जाया।

(३१) हरस— जीण म्हारी बाई अे, मरती तो बेल्या जामण यू कह्यो।  
म्हारी जामण औ जायी, जीण म्हारी बाई अे।

मृत्यु शैव्या पर माता द्वारा हरस को कहे गये वचन  
ओदर ग' रे लोट्या।

अटक्यो छे गाडग मारी जीव, हरसा लाल म्हाग रे।

जीवण री' रे चित्या कुण करै हरसा म्हारा बाला रे।

कुण तो गूथे लो वाई रा सीस ओदरा रे लोट्या।

कुण तो माडली हाथा राचणी, हरमा वेटा म्हाग रे।

किण न कैवैली वाई माय ओदा रा' रे लोट्या।

किण सु रूसैली रे जीवन रूसणा हरसा बाला म्हारा रे।

कुण तो करेती रे जीवण रा मनावणा, हरसा लाल म्हारा रे।

आवेली नितनी वार-तीवार, ओदर ग लोट्या।

खूणा मे बङ बङ रोवैली जीवणी, हरसा बाला म्हारा रे।

आवेला सावणिर्यारी तीज, आदरा रे जाया

जुण मे सिजारा रे वाई रा कुण फ्र हरसा वेटा म्हारा रे।

हरस का माता को वचन

म्हारी रात देई माता अ।

मत ना मेरी अे मत ना फ्र जीवण केरा सोच।

म्हारी मावङ ऐ तुल मै वाई रा औ चिता हू करू।

मत ना म्हारी माता अे, मत ना कर जीवण वाई रा साच।

म्हारी रातादइ माता अे रूसी वाई रा करू मै मनावणा।

मत ना म्हारी माता अे मतना कर जीण वाई ग मोच।

म्हारी माता रातादइ अ तीज सिनारा वाई रा हू करू।

(३४) माता- हरस समरथ मोबी रे।

बाई री सभलावण दीनी सूप, म्हारा समरण मोबी रे।

बाई रै माथे छिया तू राखजे, हरसा म्हारा मोबी रे।

जे तू राखैलो पेटे पाप, ओदर रा' रे लोट्या।

दरगा मै दाबण गिरियो तू वैण, हरसा म्हारा मोबी रे।

(३५) हरस- जीण म्हारी बाई अे, हिवडा मै मडारया माय रा कौल।

म्हारी जामणरी अे जायी, सपनै नहीं भूलू अे बाभोलावण।

जीण म्हारी बाइ अे, मरता तो घिरता बाबल यू कहयो।

म्हारी जामण औ जायी, जीण म्हारी बाई अे।

पिता द्वारा हरस को जीण की देख-रेख हेतु कहा गया वचन

पिता- म्हारा मोबी रे बेटा, लाई तो छोड़ी रे भोली चिडकली।

हरसा बेटा म्हारा रे, हेलो हू देय जीमावता साथ।

म्हारा समरथ बेटा रे, साझ सुवारी लेतो बारण।

हरसा मोबा म्हारा रे, होवेली साझ-सुवारी नित बारण।

म्हारा समरथ जाया रे, सिरावण बेला ऊभी कूकसी।

हरसा म्हारा बाला रे, आवैली पर घर केरी घाव।

म्हारा समरथ बेटा रे, भोली लाडी ने रे फोडा घालस

हरस का पिता को आश्वासन

हरस- मत ना म्हारा बाबल ओ, मत ना करो थे बा<sup>क्का</sup> राप।

म्हारा जलबल जामी ओ मत ना करो थे जीवण केरो सोच।

म्हारा जलबल जामी ओ हाथा हथैत्या में रे राखू चिडकली।

मत ना म्हारा बाबल ओ।

मत ना करो थे बेनड म्हारी रे सोच।

म्हारा जलबल जामी ओ, खावो अर खेलो बाईजी आगणै।

मत ना करो बाबल ओ।

मत ना करो थे बाई जीण रे सोच।

म्हारा जलबल जामीओ, पर घररी आई नैहो राखू पीर मै।

## (३८) हरस- जीण म्हारी बाई अे।

मरते बाबल सू करिया कोल, जामण री अे जायी।  
जिस विध बादल रा अे बाचाबीसरू, जीण म्हारी बाई ऐ।  
जाऊलो औक दिन दरगाह माय, म्हारी मा री जायी।  
मा बाबल बूझे औ धारी बारता, जीण म्हारी बाई अे।  
मुखडो दिखाऊ क्यू कर जाय, म्हारी मा, री जायी अे।  
कायी बतास्यू अे, माय रै बाप नै, जीण म्हारी बाई अे।  
चिरमी ज्यू छोडू राज र पाट, जामण री अे जायी।  
भावज धारी छोडू अे पीहर झूरती जीण म्हारी बाई अे।  
जीवतडो विचदू अे तै सू नाय, जामण री अे जायी।  
मौत बिछाबो अे ते सू घालसी, जीण म्हारी बाई अे।

## (३९) जीण- हरसा बीर म्हारा रे।

हरि री ओ कला सू उतरया दो जणा।  
म्हारी मा, रा' रै जाया।  
औक तो हरसा दूजी जीवणी, हरसा बीर म्हारा रै।  
हरि रा कला मरै पाछा जाय मिलै, म्हारी मा, रा' रै जाया।  
हरसनाथ भैरू रै, चाल बसाला रै बनखण्ड ढूगरा।  
हरसा बीर म्हारा रै अबड तो छैबड धूणी धात।  
म्हारी मा, र' रै जाया लोय तो मिलवा हर री लोय मे।  
हरसा बीर म्हारा रे, दरगाह मे माडया रै विधाता आक।  
जामण रा' रै जाया, जोग लिख्योडो रै भल भल साभल।  
जीण जुग ब्हाली अ, लागे तो आगे भवानी जाय।  
जुग तारण औ माता, लारा तो हगसो ऊतावला।  
जुग जीवण माता औ, छिन मै तो पुजी अ सिद्धर र गोरवे।  
जुग तारण औ माता, धरती रो लीनी रै पानी खींच।  
जीण जुग माता औ, दो तो पगा सू अे पूणी बनखडा।  
जुग तारण औ, माता टग टग पहाडा भवानी चढ गयी।  
कलजुग री भवानी औ बैठी है चोटी उपर जाय।

कलजुग री औ देवी, थरहर तो थरहर छूगर कापिया।  
 जीण जुण बाली औ, ढाई तो आखर हरस सू यू कह्या।  
 जामण रा' रै जाया, सामै तै बैठया लागै पाप।  
 हरसा बीर म्हाग रे, छैकङ्ग देय बैठा रै फैरा पीउड़ी।  
 म्हाग जामण जाया रे, हरसा बीर म्हारा रे।

### जीण जयन्ती माता के अन्य मंदिर

जयपुर — जयपुर स्थित रामगंज बाजार में जीण माता के खुरे पर जीण माता का मंदिर है।

बल्ला — हबीबगंज रेलवे लाइन (बागलादेश) पर सेराहडी (श्रीहट्ट) स्टेशन है। उससे आगे कम्पनीगंज से पूर्व जयतीपुर ग्राम है। यहाँ जयन्ती देवी का मंदिर है। पहले यहाँ बहुत यात्री जाते थे। (यह विवरण पहले का है, अब मंदिर की क्या स्थिति है, कहा नहीं जा सकता)।

आसाम मे शिलाग से दूर जयन्ती पर्वत पर बाऊभाग ग्राम मे जयन्ती माता का मंदिर है। तत्रचूडामणि ग्रन्थ के अनुसार यहाँ माता की बामजघा गिरी थी। यह ५१ शक्तिपीठों मे से एक शक्तिपीठ है।

पारीका के निम्न अवटकों बीं यह कुलदेवी है—

पुलसाण्या	पलसाण्या	जोशी
आलमग		जोशी
डसाना (डसाण्या)		जोशी
लडणधा		जोशी
कामला कमला कमला		जोशी
भाकला बाकला बेकला		जोशी
दुजारच्चा दुजाग दिजारच्चा		जाशी
बभोरच्चा भभारच्चा		जोशी
दुईवाल (दुहीवाल)		उपाध्याय
बुसाट कुसट्टा बुस्तलट्टा		उपाध्याय

भरगोडा भरडोदा	उपाध्याय
शाडिल्य साडल साडिल साण्डल्या	उपाध्याय
जोडोदा जारोदा	उपाध्याय
बुराट (बराट)	तिवाडी
सुचगा	तिवाडी
सुरेडा	पुरोहित

□□□

## तारा माता

भगवती तारा परमशक्ति स्वरूपा है। महामाया, सतस ससार की रक्षा करने के लिए जब उत्सुक हुई तो उसने काली, तारा आदि दस स्पृष्ट धारण किया। इन दस विद्याओं के नाम हैं— काली, तारा, पोडशी, भुवनेश्वरी, भैरवी, छिन्नमस्ता, धूमवती, बगला, मातगी व कमालात्मिका\*। भक्त किसी भी स्वरूप की उपासना, भक्ति को, उसके लिए अपने इष्ट का स्थान सर्वोपरि होता है। आदि शक्ति तो दुर्गा ही है, अन्य शक्तियाँ तो उसकी विभूतियाँ हैं।

‘वह विश्व की जननी है, ससार का मूल है। उसी से विश्व के स्रष्टा ब्रह्मा, शासक विष्णु और नाशक शूद्र का प्रादुर्भाव हुआ है। उसे महामाया कहत है। वेद उस आदि शक्ति बतलाते हैं—

ब्रह्मतरो जय तारिणि मुक्त, ब्रह्मविष्णुशिव - शाखा - युक्ते।

माक्षफलम् फलमद्वृतसरस नित्यानन्दमय कुरु कुरु मम॥

‘सप्तशती-चण्डीपाठ’ में यह लिखा है कि जब कभी देखता शत्रुआ से पीड़ित होते हैं वह उनके बीच प्रगाट होती है। उसका नाम ‘खर्वा’ है। क्योंकि वह एक फल म, केवल देखने मात्र से शत्रुआ के गर्व का खर्व कर देती है। प्रत्यय के समय वह बहुत ही विस्त्रित स्पृष्ट धारण करती है। उस समय वह ‘काली’ रूप म होती है— अत्यन्त विमर्शल काला रूप। सिर पर जटाए हैं, जिसमें भयानक सप लिपट हुए हैं— इस सप म वह महामाया दुर्गा, स्वर्ण, मर्त्य और पाताललालक वा सहार मरती है, माथ हा साथ भक्तों की विपदा को भी भस्म कर देती है।’

इसके महत्व का विवरण मगते हुए तत्त्व-ग्रन्थों में कहा है कि बिना ध्यान जप, पूजा, बलि, अप्यास, भूतशुद्धि, देहदण्ड, क्लेश के उठाये ही

\* शक्ति उपासना के विशाल धर्म में इस भगविद्याओं की उपसनाओं में तारा द्वी का नाम प्रमुख है।

इसकी सिद्धि शीघ्र ही प्राप्त हो जाती है। इसी से इसे सर्वसिद्धियों में सर्वोत्तम स्थान प्राप्त है। इतनी सरलता भला किस देवता की आराधना में प्राप्त होगी? सरलता और बधन मुक्ति की हद है। एस निष्कण्टक सुषप्रद मार्ग पर भला कौन न चलना चाहेगा?

शास्त्र में ऐसा उल्लेख आता है कि प्राचीन काल में जब देवताओं और राक्षसों में युद्ध हुआ तो इन्द्र ने बलवृद्धि, यशवृद्धि एवं विजय के लिए भगवती तारा का पूजन कर उनसे शत्रुनाश की प्रार्थना की थी। तारा शक्ति सर्वत्र व्याप्त है, तथापि इसे विभिन्न नामों यथा तारिणी तरला, त्रिरूपा, तरणी नामों से भी जाना जाता है। तारा को उग्रतारा भी कहते हैं। भारतवर्ष में सर्वप्रथम महर्षि वशिष्ठ ने तारा की उपासना की इसलिए तारा को 'वशिष्ठाराधिता तारा' भी कहा जाता है।

ब्रह्माण्डपुराण के ललितोपाल्यान में जो तारा का वर्णन दिया है उससे स्पष्ट प्रतीत होता है कि यह भगवती मुख्यतया जलोघ या जलाप्लावजन्य दुखों का नाश करने वाली है। अर्थात् तारा भगवती मानस नाभक महाशाल स्थित एक अमृतवापिका के द्वार की रक्षा करती है, वहा बिना नौका और तारा की आज्ञा के कोई नहीं जा सकता। वहीं तारा की अनेक परिचायिकाएँ रहती हैं, जो इस वापी के आग-पार जाती रहती है। वे भगवती का यशोगान करती हैं, नाचती हैं और प्रसन्न रहती हैं। तरण-शक्तिया का और तारा का मिलाप बहुत ही सुन्दर है और ताराम्बा ही जलोघजन्य दुख दूर करने में समर्थ है। इसने आगे कुम्कुल्ला का वर्णन आता है। उसको नैऋत्यवरी कहा गया है और उसके ध्यान में उसके हाथ में 'अदित्र' या डाढ़ (चप्पे) दिये गये हैं। बौद्ध शास्त्र में कुम्कुल्ला को तारा का रूपान्तर कहा गया है। इन दोनों वर्णनों से तारा का जलयात्रा से स्पष्ट सम्बन्ध दीख पड़ता है। कन्हेरी में जो तारा की मूर्ति है उसमें तो जहाज भी बना हुआ है।'

तारा शब्द का शाब्दिक अर्थ है तारण करने वाली एवं अज्ञानरूपी अधकार से ज्ञान के प्रकाश में आने वाली।

तारकत्वात् सदा तारा सुखमोक्ष - प्रदायिनि ।  
उग्रतापात्तारिणी यस्मादुग्रतारा प्रकीर्तिंता ॥

जो हमेशा रक्षा करती है, दुख से उबारती है इसलिए तारा कहलाती है। कठोर कर्ण से तारती है इसलिए इसे उग्रतारा कहते हैं।<sup>१</sup> तारा शक्ति ही वाग्ब्रह्मस्वरूप, सकल विद्याधिष्ठात्री है।

‘इय सा मोक्षमाणानामजिह्वा राजपद्धति’ अर्थात् यही वाक् शक्ति मोक्ष चाहने वालों के लिए अकुटिल सीधा सरल मार्ग है।

देवी तारा की उपासना विद्या प्राप्ति के लिए भी की जाती है।<sup>२</sup> लीलया ‘वाक्प्रदा चेति तेन लीलसरस्वती’ सहज ही में जिसकी आराधना से विद्या प्राप्त हो जाय उसे लीलसरस्वती कहते हैं।<sup>३</sup>

भगवती तारा के तीन रूप बताये गये हैं। तारा, एकजटा और नीलसरस्वती।

तारा शक्ति भी दुर्गा शक्ति का ही रूप है। तारा और काली यद्यपि एक हैं तथापि तारा की स्थिति का विश्लेषण इस प्रकार किया जा सकता है— सम्पूर्ण विश्व में व्याप्त जल से निकले एक श्वेत कमल पर विराजमान है। उनकी नील रंग की आकृति नील कमलों की भाँति तीन नेत्र तथा हाथ में कैची, कपाल, नीलकमल और खद्ग है। कुण्डल, हार, कगन आदि से वे प्रिभूषित हैं। सर्प से वेष्टित एक पीली जटा वाली, सिर पर ‘अक्षाभ्य’ (शिव) धारण किये हुए हैं, अर्थात् जल से निकले हुए कमल पर स्थित तारा जलभय से मुक्त रखती है अर्थात् जल की बाढ़ या ‘तूफान’ में तारा का स्मरण करके प्राणी विपत्तिया में उभर जाता है। वे उग्रतारा हैं, पर भक्तों पर कपा करने के लिए उनकी तत्परता अमोघ है। इस कारण से वे महा करुणामयी हैं। आगमोक्त दस महाविद्याओं में उग्रतारा का द्वितीय स्थान है।

आगमो में शक्ति की उपासना प्रसंग में ‘चीनावार आदि कई तन्त्रो में लिखा है कि वसिष्ठ देव ने चीन देश में जाकर दुद्र के उपदेश से तारा का दर्शन किया था। कुलालिकामनाय या कुञ्जिकामत तन्त्र में भगवान् शक्ति भगवती को आदेश देते हैं कि—

<sup>१</sup> हनुमुद्यकाश पृ. ३३१

<sup>२</sup> जगत्काल पृ. ३३१

<sup>३</sup> उपरात्र, पृ. ३३१

गच्छ त्वं भारते वर्ये अधिकाराय सर्वतः ।  
 पीठोपपीठ - क्षेत्रेषु कुरु सृष्टिरनेकथा ॥  
 गच्छ त्वं भारतेवर्ये कुरु सृष्टित्वमीदशा ।  
 पञ्चवेदा पञ्चैव यागिन् पीठपञ्चकम् ॥  
 एतानि भारतवर्ये यावतु पीठा स्थाप्यते ।  
 तावत् न मे त्वया सार्थं सङ्गमश्च प्रजायते ॥'

'हे ददि ! सर्वत्र अधिकारार्थं भारतवर्य में जाओ। पीठ, उपपीठ और क्षेत्रों में बहुतों की सृष्टि करो। भारतवर्य में जाओ। वहाँ पाचवेद, पाच योगी और पाच पीठा की सृष्टि करो। जब तक पीठादि प्रतिष्ठित नहीं हो जाते, तब तक तुम्हारे साथ मेरा सगम नहीं होगा।'

इससे ज्ञात होता है कि भारतवर्य में वामाचार बाहर से आया है। यह भी स्पष्ट होता है कि चीन के शास्त्र तारा के उपासक थे और तारा की उपासना भारत में चीन से आयी। नेपाली बौद्धों के 'साधन-माला-तन्त्र' में एक-जटा-साधन' प्रसग में लिखा है—

आर्यनागार्जुनपादैभौंटि समुद्धृता इति'

अर्थात् एकजटा नामी तारादेवी विभिन्न मूर्ति महायान-मत के प्रतिष्ठाता आर्य नागार्जुन भोट (तिब्बत) देश से उद्धार करके लाये थे। 'स्वतन्त्र तन्त्र' में लिखा है—

मेरो पश्चिम कूले तु चोलनाख्यो हृदो महान् ।  
 तत्र जज्ञे स्वय तारा देवी नीलसरस्वती ॥'

(हिन्दुत्व- रामदास गीड-पृ ७१८-७१९)

स्वतन्त्र-तन्त्र के अनुसार तारा का प्रादुर्भाव मेरु पर्वत के पश्चिम भाग में (लद्धाख के आसपास) 'चोलना' नाम की नदी या चालन सरोवर के तट पर हुआ था। ऐसा स्वतन्त्र तन्त्र में वर्णित है—

मेरो पश्चिमकूल नु चालनाख्यो हृदा महान् ।  
 तत्र जज्ञे स्वय तारा देवी नीलसरस्वती ॥

अर्थात् तारा मेरु-पर्वत के पश्चिम में उत्पन्न हुई। इस आधार पर कहा जा सकता है कि इसकी उपासना का प्रारम्भ लद्धाख के आसपास कही हुआ होगा।

“यह धर्मस्ती हुई अग्नि की प्रखर ज्वाला म गहती है। उसके शरीर का गठन दृढ़ तथा अत्यन्त हृष्ट-पुष्ट है। शब्द की गर्दन पर उसका बाथा पैर, टांगों पर दाहिना पैर सुस्थित है। यह सुस्थिर और मौन होकर खड़ी है। इसी रूप म वह भक्तों के कए, विपदा, शाक, चिन्ता का दण करती है— दुख और विपदाएँ अर्थात् आध्यात्मिक, आधिदैविक और आदिभौतिक ताप मनुष्यों को अग्नि की ऊँग लपटों के समान वरावर जलाया करते हैं। यह सभी मानते हैं कि विपदाओं म पड़कर मनुष्य अपने कर्तव्य-धर्म का सम्बन्ध पालन नहीं कर सकता। यदि विपदाओं से छुटकारा नहीं हुआ तो मनुष्य अशक्त हो जाता है। अतः यह परम आवश्यक है कि उनसे छुटकारा पाया जाय। जब ये तीनों प्रभार के दु ख मनुष्य पर भयानक स्प से आक्रमण करते हैं, तब उनसे देवी-देवता बचा नहीं सकत। ऐसे समय में जगदम्बा ‘तारा’ रूप में मनुष्य की रक्षा करती है। इसी हेतु उसके इस रूप को ‘भगवती’ विपद् विदारिणी कहा गया है।”

विहार के सहरसा स्टेशन के पास पसिद्ध बनगा महिपि' ग्राम के समीप उत्तरारा का सिंडपीठ है। कहते हैं कि सती देह का नेत्र भाग यहा गिरा था। यहा एक यत्र पर ताग, जटा तथा नील-मण्डपीठी की तीनों मूर्तियां एक साथ हैं। इसके अतिरिक्त दुर्गा, काली, प्रियंका-सुन्दरी, तारकेश्वरी तथा तारामाथ की भी मूर्तियां हैं। कहते हैं महिपि वसिष्ठ न मुख्यतः यही तारा की उपासना से सिद्धि प्राप्त की थी।

इसी प्रकार पश्चिमी बगाल के ‘गमपुर हाट’ रेल्वे स्टेशन से पाच कि. मी. की दूरी पर भी ‘तारा पीठ’ नाम का एक शक्तिशाली पीठ है। यह स्थान शमशानों में विद्यमान है, किन्तु अब यहा बाजार बन गये हैं। धर्मशालाये बनती जा रही है। फिर भी मंदिर की प्राचीनता अक्षुण्ण है। यहा की मूर्ति चमत्कारिक है। मूलरूप से प्रतिमा के दो हाथ हैं। भगवती वी गोद में शिव स्तनपान कर रही है।

काशी में भूत-भावन वाला ‘विश्वनाथ’ काशी के मणिकणिकाघाट पर मरने वाला के कान में ‘तारक’ मन्त्र देते हैं। यह तारक मन्त्र ‘राम’ शब्द है—राम नाम। उपनिषद्, वाल्मीकि व्यासादि संलेक्षण तुलसीदास तक ‘राम-नाम’ को ही ‘तारक’-तारण करने वाला मन्त्र कहा है। शक्ति-उपासना-प्रधान इस

देश मे 'सीता-राम' के नाम कण्ठ-कण्ठ मे, जिह्वा-जिह्वा पर विराजमान है। यह 'राम नाम' तारक मन्त्र होने से इसमे गुप्त रूप से 'तारा' ही विद्यमान है। यथा- 'सीतागम' के बीच सीता का 'ता' और राम का 'रा' मे ताग (तारिणीशक्ति) विद्यमान है। इसीलिए किसी प्राचीन गाथा मे कहा गया है कि 'अद्य मे तारिणी तारा राम रूपा भविष्यति।'

मखदूमपुर गया स्टेशन (गया-पटना लाइन पर) से लगभग १२-१३ कि मी दूर भगवती तारा का मंदिर है। काश्यप मुनि ने यहा तपस्या कर देवीमूर्ति की स्थापना की थी।

चण्डीपुर ग्राम (हावड़ा-म्यूल रेल्वे लाइन पर रामपुर स्टेशन से लगभग १२ १३ कि मी पहले) तारा देवी का मंदिर है। इसे मिद्धपीठ माना गया है।

### माता की पूजा

जगज्जननी जगदम्बा की पूजा तीन प्रकार की है— सात्त्विक पूजा, राजस् पूजा और तामस पूजा। इनमे से कामना रहित सात्त्विक-भाव की पूजा सत्त्वगुण से होती है। इसके लिए न चिन्ता ही करनी चाहिए और न उसकी आवश्यकता ही है। भक्त अपनी सारी इच्छा भगवती की इच्छा मे लय कर देता है, अत फल की प्राप्ति भी भगवती की इच्छा पर ही निर्भर है। सर्वोत्तम पूजा यही है। राजसिक पूजा मे भिन-भिन प्रकार की बुराइयाँ और दुर्गण आ जाते हैं, जिससे ससार का अहित होता है। बहुत से लोग उपासना का मूल-तत्व न समझ सकन के कारण आसक्तिपूर्वक मत्स्य, मास, मदिरा आदि का सेवन करते हैं। साधन तो करते हैं, सासारिक सुख भोग का और समझते हैं कि देवी की उपासना करत है। यह तामसिक उपासना है और इसका समर्थन शास्त्रों मे नहीं किया गया है।'

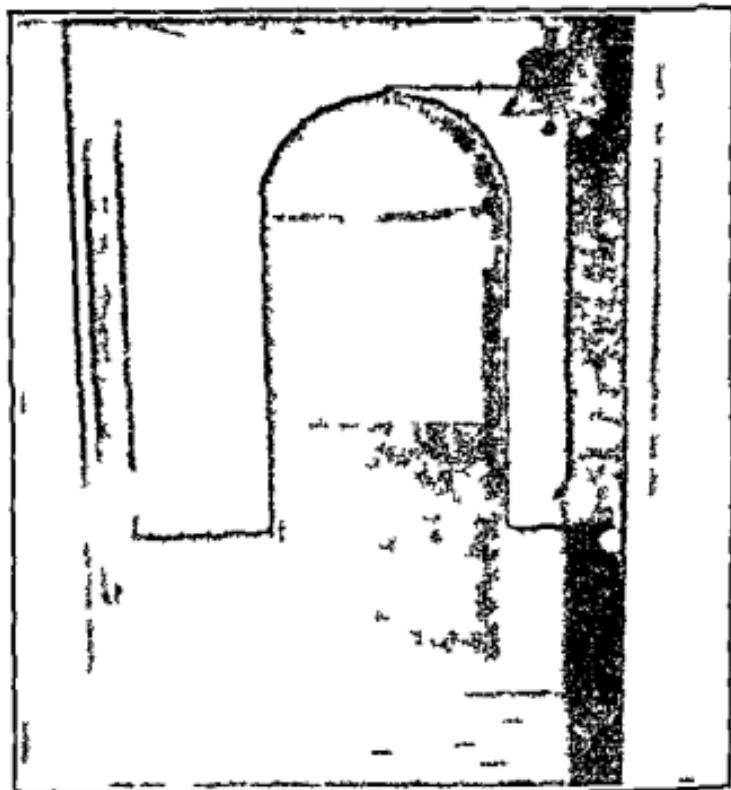
'देवी की उपासना के लिए दिव्य पदार्थ ही सर्वथा उपयुक्त है, न कि सासारिक पदार्थ। इसके अतिरिक्त यह कहने की आवश्यकता नहीं कि जिन पदार्थों ने हम सासारिक जीव, धृष्णा और अन्य वी दृष्टि से देखते हैं वे देवता की उपासना ने लिए कभी उपयुक्त नहीं हो सकते। वे पदार्थ देवता की पूजा मे चढ़ाने ने लिए सर्वथा अनुपयुक्त है।'

भारतवर्ष के अतिरिक्त अन्य देशों यथा चान तिव्वत लगाख आदि क्षेत्रों में भा तारा की उपासना प्रचलित है। वहाँ भी इसकी पूजा की जाती है।

### कुलदेवी

पारीका के पदमाणियाँ (जाशी) अवटक की कुलदेवी\* तारा है।

\* इह विद्वान् पदमाणियाँ अवटक की कुलदेवी ग्रिमुर मुन्दरी भी बताते हैं।



उग्रतारा माता का विग्रह – गुवाहाटी (आसाम)



उग्रतारा (गुवाहाटी आसाम) के मंदिर का बाह्य दृश्य

## त्रिपुर सुन्दरी : त्रिपुरा : तिपराय माता

त्रिपुर-सुन्दरी का शक्ति सम्प्रदाय में असाधारण महत्व सर्वविदित है। इसी नाम पर सुविदित स्वयं त्रिपुरा राज्य है। त्रिपुरा से लगभग डेढ़ मील दूर पर्वत पर राजराजेश्वरी त्रिपुरसुन्दरी देवी का भव्य मंदिर है। कहा जाता है कि सती की मृत देह के अङ्ग भगवान् विष्णु के सुदर्शन-चक्र द्वारा खण्ड-खण्ड करने पर विभिन्न स्थानों पर गिरे थे उनसे इस्यावन (कहीं कहीं बावन शक्तिपीठों का भी उल्लेख है) शक्तिपीठ घने। अब और आभूषणादि से जो पीठ बने उनमें से यह भी अन्यतम है।<sup>१</sup>

माता का दक्षिणपाद यहा गिरा था। यहा देवी त्रिपुर-सुन्दरी और शिव, त्रिपुरेश कहे जाते हैं। त्रिपुरा राज्य के राधाकिशोरपुरा ग्राम से ढाई किलोमीटर दूर पूर्व-दक्षिण के कोण पर पूर्व पर्वत के ऊपर यह शक्तिपीठ स्थित है।<sup>२</sup>

माता त्रिपुर-सुन्दरी भगवान शिव की पत्नी है। यह जगदम्बा महाशक्ति का ही एक रूप है।<sup>३</sup>

### त्रिपुर-सुन्दरी का स्वरूप

माया शक्ति का आश्रयण कर वे ही त्रिपुर-सुन्दरी भुवनेश्वरी, विष्णु, शिव, कृष्ण, राम, गणपति, सूर्य आदि रूपों में व्यक्त होती है। स्थूल, सूक्ष्म, कारणरूप त्रिपुर (तीन देहो) के भीतर रहने वाली सर्वसक्षिणी-चिति ही त्रिपुर-सुन्दरी कहलाती है।

### त्रिपुर-सुन्दरी<sup>४</sup>

महाशक्ति 'त्रिपुरा' त्रिपुर महादेव की स्वरूपा शक्ति है। कालिका पुराण के अनुसार शिवजी की भार्या त्रिपुरा श्रीचक्र की परम नायिका है। परम शिव

<sup>१</sup> कल्याण—शक्ति उपासना अक वर्ष ६१ (१९८७) पृ ४०२

<sup>२</sup> उपराज्ञ, पृ ३७

<sup>३</sup> हिन्दू धर्मकाण द्वा राजदत्त पाण्डय पृ ३०६

<sup>४</sup> कल्याण—शक्ति उपासना अक वर्ष ६१ (१९८७) पृ २६४

इन्हीं के सहयोग से सूक्ष्म-सूक्ष्म और स्थूल स्थूलों में भासते हैं। प्रिपुर भैरवी महात्रिपुरसुन्दरी की रथवाहिनी है, ऐसा उत्तेष्ठ मिलता है।

### श्री चक्र

प्राय सभी दविया के मदिर में विशेषत प्रिपुर-सुन्दरी के मदिर में श्रीचक्र का पूजन होता है, जिसका विवरण इस प्रकार है<sup>१</sup>—

यह ससार शक्ति का ही माय है। उसमा आविर्भाव होने पर तीना जगत् (इच्छा, ज्ञान और क्रिया-जन्य) उत्पन्न होते हैं और उसका तिराभाव होने पर उनका अभाव हो जाता है, इसलिए उसी शक्ति का चिन्तन करना चाहिए।

शक्तिजात हि ससार तस्मिन् सति जगत्क्षयम्।  
तस्मिन् क्षीण जगत् क्षीण तच्चिकित्स्य प्रयत्नत ॥

इच्छा, ज्ञान और क्रिया अथवा नाद, विन्दु और कला इन तीनों में आविर्भूत शक्ति ही प्रिपुरा है। प्रिपुरा ही प्रिपुरा-बाला, प्रिपुर-सुन्दरी और प्रिपुर भैरवी इन तीनों रूपों का सामृहिक नाम है। इन्हीं तीनों से जगत् में विविध प्रिदेवा (ब्रह्मा विष्णु, महेश) तीनों प्रकार की अग्नि (गार्हपत्य, आह्वनीय दक्षिणा), तीनों शक्तियों (महासरस्वती, महालक्ष्मी, महामाती), (ब्राह्मी, वैष्णवी, माहेश्वरी) तीनों लाकों (भू, भुव, स्व) स्वर्ग, मृत्यु पाताल, तीनों स्वर (मन्द, तार, प्लूत, उदात्त अनुदात्त, समाहार अथवा हस्व, दीर्घ प्लूत) तीनों वर्ण (अ,उ,म) गायत्री, गगा, विष्णुपदी यह प्रिपदी, हृदय, भूमध्य और शिर ये प्रिपुष्का प्रिब्रह्म अर्थात् तीनों वद, जो भी तीन की सत्या से परिमित हैं वे सब प्रिपुरा से अन्वित हैं—

देवाना प्रितय त्रयी हृतभुजा शक्तिरय प्रिस्वराम्  
त्रैलोक्य प्रिपदी प्रिपुष्करमथ प्रिप्रद्वयर्णस्त्रय ।  
यत्क्षिचिज्जगति त्रिधा नियमित वस्तुत्रिवर्गादिक  
तत्सव प्रिपुरेति नाम भगवत्यन्वेति ते तत्त्वत ॥  
(लघुस्तव, १६)

यह महाशक्ति मूल रूप से समष्टिगत अव्यक्त चेतन्य की चित् शक्ति है, अत सब भूतों के चित्तों में भी नाना वृत्ति-रूप से निवास करती है, यथा—

<sup>१</sup> श्री ललितासहस्रनामस्तान्त्रम् भूमिका—गापालनारायण बहुरा, पृ VIII XII

विष्णुमाया, चेतना, बुद्धि, निद्रा, क्षुधा, छाया, तृणा, शान्ति, जाति, लज्जा, क्षान्ति, श्रद्धा, कान्ति, लक्ष्मी, दया, दीप्ति, पुष्टि, ध्रान्ति आदि। आराधक अपनी भावना के अनुसार दुर्गा, महाकाली, महासरस्वती, महालक्ष्मी, अन्नपूर्णा आदि नामों से उसकी उपासना करते हैं।

सबेदन से पूर्व की अवस्था परमज्ञान की अवस्था होती है। वह 'परासवित्' कहलाती है। सबेदन अथवा स्पन्दन के अनन्तर होने वाले प्रपञ्च (जगत्) के ज्ञान के आधार पर वह 'सवित्' विविध कलाओं के रूप में व्यक्त होती है। (सौभाग्य रत्नाकर)

आद्या महाशक्ति अगाध और अपार सौन्दर्य राशि की भी स्वामिनी है। वे त्रिपुर की अधिष्ठात्री हैं। इसलिए महात्रिपुरसुन्दरी कही जाती है। ललिता सुन्दरी का ही पर्यायवाची है। ललिता, परा, परमभट्टारिका आदि नामों से पूजित चरण सौन्दर्य रूपिणी माता को श्रीचक्र से व्यक्त किया जाता है और इसकी आराधना को श्रीविद्या कहते हैं। श्री शब्द का अर्थ सामान्यतया 'लभ्मी' लिया जाता है, परन्तु 'श्री' तो उस परम-आद्या महाशक्ति का वाचक है जो श्रीचक्र में निवास करती है। इसी के माध्यम से श्रीतत्त्व का चिन्तन किया जाता है।

सामान्यतया श्रीचक्र पट्टकोण के रूप में बनाया जाता है। दो त्रिभुज एक दूसरे को काटते हुए इस तरह बनाये जाते हैं कि एक का शीर्ष ऊपर होता है और दूसरे का नीचे, एक की आधार रेखा दूसरे की बगल वाली रेखा के मध्य-बिन्दुओं में होकर निकलती है। दोनों त्रिभुजों के बीच की जगह में दोनों (त्रिभुजों) का छूता एक वृत्त (गाला) बनाते हैं जिसके केन्द्र में बिन्दु रहता है जो प्रकाश बिन्दु कहलाता है। यह शिवतत्त्व के अनुप्रवेश पर बनता है और धेने वाले वृत्त को नाद (अथवा शक्ति) का प्रतीक माना जाता है। इस प्रकार ये नाद और बिन्दु की स्थिति दर्शाते हैं। ऊपर से आने वाला अधोमुखी शीर्षक त्रिभुज शक्ति का और नीचे से आने वाला ऊर्ध्वमुख त्रिभुज शिव का प्रतीक है। शक्ति का वर्ण लाल और शिव का श्वेत माना गया है। लाल सोम है और श्वेत अग्नि, इन दाना कलाओं से ही सहित होती है। 'अग्रीपोमात्मक जगत्'। यह चित्र ही श्री, परा ललिता और त्रिपुरसुन्दरी के प्रतीक रूप में

यह तो हुआ सरल श्रीचक्र, इसका विद्यध रूप कुछ जटिल होता है। उसम पहले एक वृत्त खींचते है। उसमे नौ त्रिभुज एक दूसर को काटते हुए बनाए जाते है। इनम महात्रिपुरसुन्दरी अपने नौ रूपो मे निवास करती है। इनके नाम श्री अथवा त्रिपुरसुन्दरी के पर्यायवाची रूपा म इस प्रकार दिये गये हैं— त्रिपुरा, त्रिपुरेशी, त्रिपुरमालिनी, त्रिपुरसुन्दरी, त्रिपुरवासिनी, त्रिपुरथ्री, त्रिपुरसिद्धा और महात्रिपुरसुन्दरी। ये नौ त्रिभुज नौ योनियो के प्रतीक है। वृत्त को एक आठ कमल दल बाला बलय धेरता है, जो विविध द्वीपो के प्रतीक है, फिर उसके चारा ओर एक सोलह कमलदल बाला बलय होता है। अष्टदल कमल और पोडशदल कमल बाले बलयो के बीच मे आठ रिक्त स्थान छूट जाते है, जो सप्त सागर और एक व्योम का सूचन करते है। पोडशदल कमल बाले बलय के सोलह भाग चन्द्रमा की पद्रह कलाओं तथा एक शाश्वत कला के घोतक है। इसको 'सदा' भी कहते है। दूसरे बलय के बाहर की ओर तीन गुण खींचे जाते है जो सत्त्व, रज और तम गुणो को बताने वाले है। इस प्रकार यह श्रीचक्र मूल शक्ति महात्रिपुरसुन्दरी के नौ योनि-विग्रहो, देश-खण्डो, काल विभागो और गुणो को व्यक्त करने वाला होता है।

सालह कलाओ और आदिकला सहित महात्रिपुर-भैरवी 'पोडशी' कहलाती है वह उसका सर्वोपरि रूप है। वही 'परम शिव' की प्रिया और स्वामिनी बनकर मणिद्वीप मे विराजती है। वही 'सदा' कला ललिता नाम से भी प्रसिद्ध है।

वृत्त की परिधि गतिशील काल का प्रतीक है। इसकी आदि बिन्दु और अतिम बिन्दु अर्थात् आदिकाल और पोडशी अर्थात् महात्रिपुरसुन्दरी एक ही है। दोनो ही महिमा-मम्पन्न है। वही ललिता है। पाडश नित्याआ के नाम इस प्रकार है— महात्रिपुरसुन्दरी, कामेश्वरी, भगमालिनी, नित्यक्लिन्ना, भेरुण्डा, वहिवासिनी, महाविद्येश्वरी, दृती, त्वरिता, कुलसुन्दरी, नीत्यपत्ताका, विजया, सर्वमगला ज्वालामालिनी, चित्रा और पोडशी।

श्रीचक्रप्राय स्वर्ण, रजत अथवा ताम्रपत्रो पर बनाया जाता है। सामान्य-जन इसको स्फटिक, प्रस्तर-खण्ड या भूर्ज-पत्र पर भा आलखित कर लेते है। वामकैश्वर तत्र म कहा गया है कि नौ त्रिभुज नौ आवरणा के प्रतीक है। पाच त्रिभुजो के शीर्ष ऊपर की ओर और चार के नीचे की ओर होते है। इसको सष्टिक्रम-चक्र

कहते हैं। यदि इस चक्र को उलटा रखा जाय तो वह सहारकम-चक्र बन जाता है।

ऊपर से देखने पर श्रीचक्र में बिन्दु, त्रिकोण कोण, पटल या दल तथा वृत्त दिखाई देते हैं। वृत्तों को मेखला और तीन समानान्तर रेखाओं से बने समकोण चतुर्भुजों को भूपुर कहते हैं। दो रेखाओं के मिलन स्थल को सन्धि और जहा तीन रेखाएँ मिलती हैं वह 'मर्म' रुहा जाता है। ध्यान से देखने पर ज्ञात होगा कि यह चक्र नौ भागों में विभक्त होता है। जिनको आवरण कहते हैं। इनमें ही परमा-शक्ति के निर्वाण-चैतन्य से जगत् की उत्पत्ति होती है। यों सच्चिदानन्दरूपिणी महाशक्ति का सूक्ष्म स्वरूप नामरूपात्मक स्वरूप में नौ अवतरणों में प्रकट होता है, जिनसे पूर्ण श्रीचक्र की रचना सम्भव होती है। ये आवरण महाशक्ति को उद्भासित ही नहीं आवृत भी करते हैं। श्रीचक्र के नौ भागों के नाम ये हैं— १ बिन्दु (मध्य में) २ त्रिकोण, ३ त्रिकोण को घेरता हुआ अष्टकोण चक्र, ४ अष्टकोण चक्र के चारों ओर दश कोणों वाला अन्तर्दशार चक्र, ५ अन्तर्दशार चक्र को घेरे हुए पुन दश कोणों वाला बहिर्दशार चक्र, ६ इसको घेरता हुआ चतुर्दशकोणात्मक चतुर्दशार चक्र, ७ इसके चारों ओर पोडशादल पद्म वत्त होता है और इसके बाहर की ओर तीन वृत्त होते हैं, जिनको मेखलाप्रय कहा गया है, ९ 'तीन समानान्तर रेखाओं से बना समकोण जिसकी प्रत्येक दिशा में द्वार बना होता है। इसको भूपुर कहते हैं।

यही श्रीचक्र नौ आवरणों एवं उपागो सहित सम्पूर्ण जगत् का द्योतक है। यही ब्रह्माण्ड, जीव और मातृका सहित श्रीललिता महाशक्ति के स्वरूप का प्रतीक है। पाच अधोशीर्ष त्रिकोण शक्ति को और चार ऊर्ध्वशीर्ष त्रिकोण शिव को बताते हुए 'शिव शस्त्र्या युत्तो' स्वरूप को व्यक्त करते हैं।

समयाचार मत के अनुसार चक्र के मध्य में स्थित बिन्दु के चारों ओर का वृत्त बैन्दव स्थान कहलाता है। यह बिन्दु चक्र में किसी भी रेखा, त्रिकोण अथवा कोष्ठक से सम्बद्ध नहीं है। यही चित्कला या श्रीललिता का अधिष्ठान है। अब त्रिकोणे को लीजिए। प्रथम त्रिकोण आजाचक्र है अष्टकोण विशुद्ध चक्र है, अन्तर्दशार चक्र अनाहतचक्र का द्योतक है, बहिर्दशागचक्र मणिपूरक

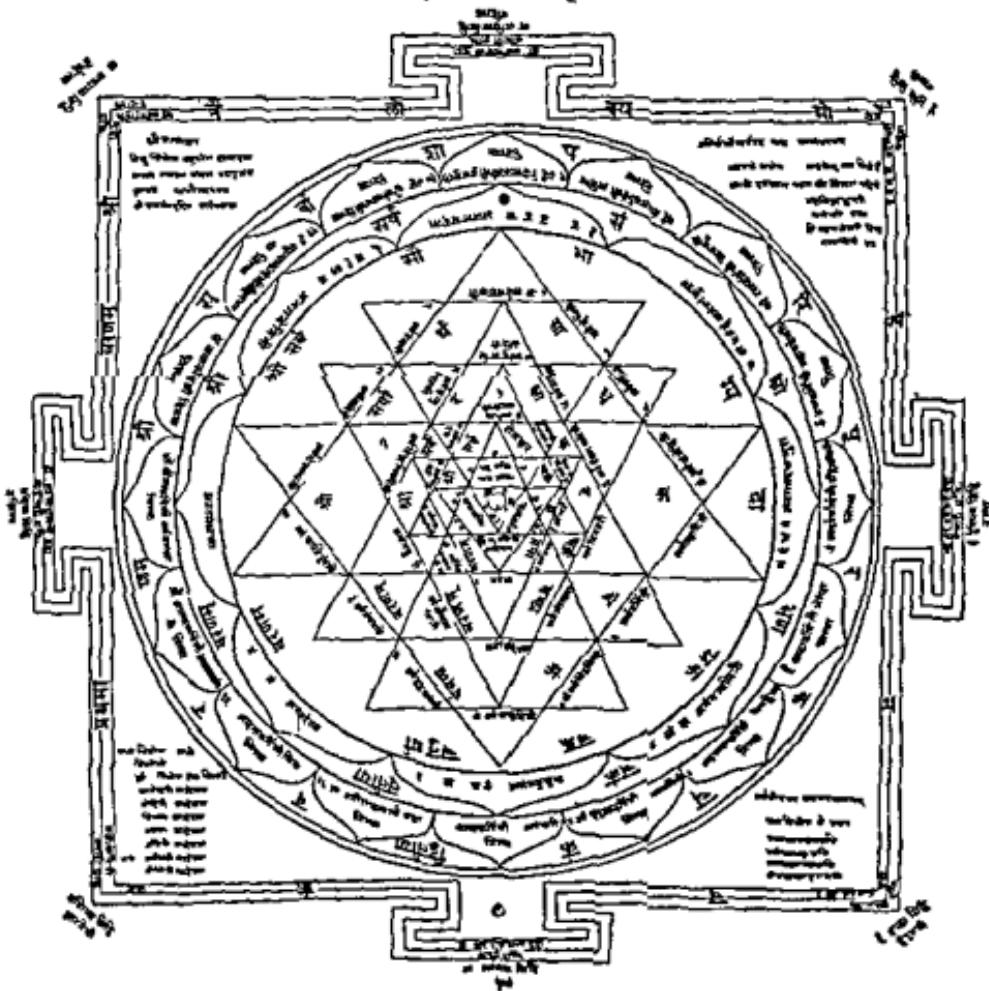
को ओर चतुर्दशाचक्र स्वाधिष्ठानचक्र को सूचित करते हैं। भूपुर मूलाधार का प्रतीक है। इसके चारों द्वार वेदा के सूचक हैं। यह नवावरण चक्र शब्द और नाद की चतुर्दशाओं— परा, पश्यन्ती, मध्यमा और वैखरी तथा जीव की चारों अवस्थाओं— जागृत्, स्वप्न, सुषुप्ति और तुरीय एवं अन्त स्थित चित् प्रकाश का भी द्योतक है। सबसे भीतर बिन्दु को धेरे हुए त्रिकोण का शीर्ष, नीचे की ओर होता है। इसको शक्तिचक्र कहते हैं। यही चित् शक्ति का विमर्शशक्ति के रूप में सहित के लिए उन्मुख हाना दर्शाता है। इसके तीनों शीर्ष इच्छा, ज्ञान और क्रिया शक्ति को बतलाते हैं। यह त्रिकोण ही नाम रूपात्मक जगत् का उत्पत्ति स्थान कहा गया है तथा यही परा वाक् का स्थान है, जो पश्यन्ती, मध्यमा और वैखरी वाणी तथा मातृकाआ को जन्म देता है। शेष सातो आवरण इन्हीं 'प्रकाश' और 'विमर्श' शक्तियों से आलोकित होते हैं। यह सम्बर्णात्मक त्रिकोण प्रिपुटी भी कहलाता है अथात् इसमें ज्ञाता, ज्ञात और ज्ञान का समावेश रहता है, इसी को 'कामकला' कहते हैं। यह चन्द्रमण्डल को द्यातित करता है और सुषुप्ति-अवस्था का प्रतीक है। उक्त दोनों आवरणों से रुद्रग्रन्थि भी सम्बद्ध है। अष्टकोण चक्र पश्यन्ती-वाक् का प्रतीक है। अन्तर्दशार और बहिदशार आवरण भी उक्त बिन्दु और त्रिकोण आवरणों के रश्मि-समूह से प्रकाशित होते हैं ओर जीव की स्वप्नावस्था के पतीक हैं। सूर्यमण्डल और विष्णु ग्रन्थि इनसे ऊपर अवस्थित हैं। ये मध्यमा-वाक् के भी प्रतीक हैं और शरीर में 'अनाहत' तथा मणिपूरक-चक्रों का प्रतिनिधित्व करते हैं। चतुर्दशाचक्र ही स्वाधिष्ठानचक्र है और वैखरी-वाक् तथा पञ्चाशत् (५०) वर्णों को प्रकट करता है। भूपुर ही मूलाधार है जहा चित् शक्ति का आवरण पूरा होकर बिन्दु अथवा सहस्रार कुण्डलिनी मूलाधार के रूप में स्वाधिष्ठान सहित अवस्थित रहता है। यह जीव की जागृत्-अवस्था, अग्निमण्डल और ब्रह्म-ग्रन्थि को द्यातिक करता है। अष्ट-दल-कमल तथा पोडश-दल-कमल एवं बाहरी वज्र प्रकाशाश और शेष पाच विमर्शशि है। समयाचार के अनुसार यही श्रीवर्क का सक्षिप्त विवरण है।

### आयुध

प्रिपुर-सुन्दरी माता चतुर्भुजी है। इनके हाथों में पाश, अकुश, ईख का धनुष और पुष्पवाण है। माता कमल पर निवास भरती है।

कल्याण

## ॥ श्रीयन्तम् ॥



## श्रीविद्या ही त्रिपुरा<sup>१</sup>

श्री कामराज विद्या की अधिष्ठात्री 'श्रीविद्या' का ही नामान्तर 'त्रिपुरा' है। पि = प्रिमूतिया से पुरा पुरातन होने से 'त्रिपुरा' अथात् गुणत्रयातीता। प्रिणुणनियन्ता शक्ति। गौडपादीय सूत्र में भी कहा है— 'तत्त्वत्रयण भिदा'। 'त्रिपुरार्णव' में 'त्रिपुरा' शब्द की प्रकारान्तर से निरुक्ति की है— तीन नाड़िया, इडा, पिङ्गला, सुषुम्ना ही त्रिपुरा है। वह मन, बुद्धि और चित्तरूपी तीन पुरों में निवास करने वाली शक्ति है, अतः 'त्रिपुरा' कही जाता है।

ग्रन्थान्तर में आर भी प्रकारान्तरों से 'त्रिपुरा' शब्द की निरुक्ति कही है— 'त्रिमूर्ति' (ब्रह्मा विष्णु, महेश) की जननी होने से 'प्रयी' (ऋक्, यजु साम) मध्यी होने से या महाप्रलय में प्रिलोकी को अपने में लीन करने से जगदम्बा 'श्रीविद्या' का त्रिपुरा नाम प्रसिद्ध हुआ।

'सम्मत पद्धति' तथा 'वामकेश्वर-तन्त्र' में त्रिपुरा का स्वरूप इस प्रकार कहा गया है— ब्रह्मा, विष्णु ईशरूपिणी 'श्रीविद्या' के ही ज्ञान-शक्ति क्रिया-शक्ति और इच्छा-शक्ति— ये तीन स्वरूप हैं। इच्छा-शक्ति उसमा शिरोभाग है ज्ञानशक्ति मध्यभाग तथा क्रियाशक्ति अधोभाग है। इस पकार उसमा रूप शक्तित्रयात्मक होन से ही वह 'त्रिपुरा' कही जाती है।

## त्रिपुरा

कालिकापुराण ६२वा अध्याय-

त्रीन् धर्मार्थकामान् पुरति ददासीति,  
पुर अग्रगमने अत्र अग्र दाने॥

तन्त्र-मन्त्र ध्यानिका— यथा—

शृणुत त्रिपुरामूर्ति कामाख्यास्तु पूजनम्।  
एतस्या मूलमन्त्रस्तु पूर्वमुत्तर-तन्त्रके॥  
सुवयोरिष्टकया सम्यक् क्रमात् प्रतिपादितम्।  
वाङ्मय कामराजन्तु डामरेश्वेति तत्त्वयम्॥

<sup>१</sup> कल्याण-शक्तिउपासना अक वर्ष ६१ (१९८७) पृ २३८

सर्वधर्मर्थकामादि साधन कुण्डलीयकम्।  
 त्रीन् यस्मात् पुरता ददयात् दुर्गा ध्याना न्महेश्वरी ॥  
 त्रिपुरेति तत् ख्याता कामाख्या कामपूर्णिणी ।  
 तस्यास्तु स्नायन याद्क कामाख्याया प्रकीर्तितम् ॥  
 तेनैव स्थापन कुर्यात् मूलभन्वेण साधक ।  
 ग्रिकोण मण्डल चास्यास्त्रिपुरन्तु त्रिरेखकम् ॥  
 मन्त्रस्तु त्र्यक्षर ज्ञेय तथा स्पष्टय पुन ।  
 त्रिविधा कुण्डली शक्तिस्त्रिदेवानां च सृष्टय ॥  
 सर्वे भय त्रय यस्मात् तस्मात् त्रिपुरा मता ॥  
 दहन प्लवन कृत्वा आदया मूर्ति विचिन्तयेत् ।  
 त्रिधावत्याथ हृदये ता मूर्ति शृणु भैरव ॥  
 सिन्दूरपुञ्ज-सकाशा त्रिनग्रान्तु चतुर्भुजाम् ।  
 वामाद्वेषं पुष्पकोदण्ड धृत्वाथ पुस्तक तथा ।  
 दक्षिणोद्वेषं पञ्चवाणानक्षमाला दधात्यथ ॥  
 चतुणा कुण्पानान्तु पृष्ठैन्य कुण्पान्तरम् ।  
 निधाय तस्य पृष्ठे तु समपादेन सस्थिताम् ॥  
 जटाजूटाद्वचन्द्रेस्तु समावद्धशिरोस्हाम् ।  
 सर्वालङ्कार-सम्पूर्णा सवाद्वसुन्दरी शुभाम् ॥  
 सर्वेद्रविण-सदोहा सर्वलक्षणसयुताम् ।  
 एवन्तु प्रथम ध्यात्वा त्रिधात्मानं चिन्तयेत् ॥  
 तृतीय रूप भी वैसा ही है, यानि मुद्रा का चिन्तन करत है—  
 वधूकपुष्पसकाशा जटाजूटेन्दुमडिताम्  
 सर्वलक्षण-सम्पूर्णा सर्वालकारयिताम् ।  
 उदचप्रविष्टि पुरस्थवस्त्रा पदमपयक सम्यिताम् ॥  
 मुक्ता-रक्तावलीयुक्ता पीनोत्रतपयाधराम् ।  
 वलीविभज्ञा चतुरामसिनामोदमोदिताम् ॥

नेत्राहादकर्णं शुद्धा क्षोभिणीं जगता तथा।  
 त्रिनेत्रा योगनिद्रा यामीपद्मास समायुताम्॥  
 नवयोवनं सम्प्रगा मृणालाभं चतुर्भुजाम्।  
 वामोद्द्वं पुस्तकं धत्ते अक्षमालान्तु दक्षिणे॥  
 वामनाभयदा दर्वीं दक्षिणाधावरप्रदाम्।  
 प्रसुवद्रक्तसूर्याभा शिरोमालान्तु विभ्रतीम्।  
 आपादलम्बिणीं कल्पद्रुममासादय सस्थिताम्॥

### त्रिपुर-सुन्दरी के स्थान

राजस्थान में भगवती त्रिपुर-सुन्दरी का भव्य मंदिर बासवाडा जिले के तलवाडा' ग्राम के पास स्थित महलय उमराई' ग्राम के पास स्थित जगल में है। तलवाडा बासवाडा से १८ कि.मी. दूर है। मंदिर की प्राचीनता के सम्बन्ध में यद्यपि अभी तक कोई प्रमाण नहीं मिला है तथापि माता के मंदिर के पास उत्तर दिशा की ओर महाराजा कनिष्ठ के समय का एक शिवलिंग है, अत यह अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है कि माता का यह मंदिर समाट कनिष्ठ के समय के पूर्व का है।

उपलब्ध शिलालेखों के अनुसार माता के मंदिर का जीर्णोद्धार आज से लगभग १०० वर्ष पूर्व से १५७ मे पाताभाई चादाभाई लुहार, जो पाचाल जाति के थे, द्वारा कराया गया था। मंदिर के पास ही लोट की खान थी। पाचाल जाति के लोग इसी खान से लाहा निकालते थे। पाताभाई चादाभाई द्वारा मंदिर के जीर्णोद्धार के सम्बन्ध में एक किवदन्ती यह भी है कि एक बार माता त्रिपुर-सुन्दरी एक वद्धा का रूप धर कर खदान के द्वार पर भिक्षाटन हेतु गई। पाचाल जाति के लोगों ने माता को भिक्षा नहीं दी, फलत माता उनसे रुप हो गई तथा उन्हें अभिशाप दिया। खदान ढह गई। पाचाल जाति के अनेकानेक व्यक्ति खान में दबकर मर गये। उक्त पाताभाई चादाभाई ने माता की स्तुति की तथा माता को पसन किया। माता के प्रसन्न होने पर उसने माता के मंदिर का जीर्णोद्धार कराया। माता के मंदिर का जीर्णोद्धार १६वीं शताब्दी में हुआ तथा उसके बाद समय समय पर हाता रहा है। वि स १९३० में पाचाल द्वारा मंदिर पर नया शिखर चढ़ाया गया तथा इसी समाज

द्वारा वि स १९९१ में मंदिर का जीर्णोद्धार कराया गया। मंदिर का जो भव्य स्वरूप आज हमारे सामने है, वह सन् १९७७ में निर्मित हुआ।

मंदिर के गर्भगृह में माता की काले पत्थर की भव्य मूर्ति स्थापित है तथा माता की अठारह भुजाओं में विभिन्न आयुध शाखायमान है। माता की सवारी सिंह पर है। सिंह की पीठ पर अष्टदल-कमल है, जिस पर चिराजामान माता का दाहिना पैर मुड़ा हुआ है तथा माता का बाया पैर श्रीयन्त्र पर है। माता की प्रतिमा के पीछे आठ देवियों की छाटी-छोटी मूर्तियाँ भी हैं जो अपने-अपने बाहनों पर आसीन हैं तथा आयुध धारण किये हुए हैं। पीछे पीठ पर ५२ भैख व ६४ यागिनियाँ भी भव्य एवं सुंदर मूर्तियाँ अकित हैं। माता जी मूर्ति के दाहिनी और बाईं ओर श्रीकृष्ण तथा अन्य देवियों तथा विशिष्ट पशु अकित हैं तथा देवताओं और दानवों के सग्राम की झाकी दृष्टिगत होती है।

माता के दशनार्थ प्राय पतिदिन भक्तजन आते ही रहते हैं किन्तु दोनों नवरात्रि में यहा मला लगता है तथा भक्तजन यहा जात-जड़ले उतारने आते हैं।

माता के मंदिर में अचूण्ड ज्याति का दीपक प्रज्ज्वलित रहता है।

### महाप्रिपुर-सुन्दरी पीठ<sup>१</sup> (प्रयाग क्षेत्र)

कानपुर परिक्षेत्र मण्डल के अन्तर्गत फर्स्ताबाद जिले के तिगवा नामक स्थान में एक चबूतर पर सगमरमर पत्थर पर बने एक विशाल श्रीयन्त्र पर भगवती प्रिपु-सुन्दरी की सुन्दर मूर्ति बनी हुई है।

कन्द्रीय बिन्दु के ऊपर पाशाङ्कुश धनुर्वाणिधरा चतुर्भुजा भगवती की बड़ी ही सुन्दर मूर्ति है।

जनसाधारण इसे अन्नपूर्णा मंदिर कहते हैं। फर्स्ताबाद में शक्तिपीठों के रूप में इसकी विशेष मान्यता है। जिले के कान्यकुञ्ज (कन्नौज) नगर में भी अनेक प्राचीन शक्तिपीठ पाये जाते हैं। इस मंदिर को एक साधक-महात्मा के आदेशानुसार लगभग सौ-दूसौ वर्ष पूर्व तिरका नरेश ने बनवाया था।

Hinduism Discord Server https://discord.gg/HvRkTm

## मोरकी का त्रिपुर-सुन्दरीपीठ<sup>१</sup> (गुजरात)

पौराणिन महाराजमयूरध्वज के नाम पर वर्तमान मे प्रचलित मोरकी नगर मे, नगर के बाहर पश्चिम मे ग्राम-देवता त्रिपुराबाला बहुचरा जा मंदिर था। मंदिर अत्यन्त छोटा होने से पूजा-अवना मे असुविधा देख उसी मंदिर के समीप ही माता जी प्रेणा पर श्री कामेश्वर शर्मा की पत्नी गोदावरी ने माता का सुविशाल मंदिर बनवाया और वहा सुन्दर श्रीचक्र स्थापित किया है। इस स्थापित यन्त्र-गज के पष्ठभाग मे अम्बिका बहुचरा, कामेश्वरी आदि जी चित्र है। मंदिर के चारों ओर दश महाविद्याओं के चित्र, महाकाली, महालक्ष्मी आर महासरस्वती के चित्र है। इस प्रदेश के साधक भक्तो के लिए यह महत्वपूर्ण उपासना-स्थली है जहा नवरात्रादि महापर्वों के अतिरिक्त वर्ष भर उनकी साधना-उपासना चलती रहती है।

## कामाक्षी (शिव काची)<sup>२</sup>

एकाम्ब्रेश्वर- मंदिर से लगभग दो कलांग पर (स्टेशन की ओर) कामाक्षी देवी का मंदिर है। यह दक्षिण भारत का सर्वप्रथम शक्तिपीठ है। कामाक्षी देवी आद्या-शक्ति भगवती त्रिपुरसुन्दरी की ही प्रतिमूर्ति है। इन्हे काममोटी भी कहते हैं।

कामाक्षी मंदिर विशाल है। इसके मुख्य मंदिर मे कामाक्षी देवी की सुन्दर प्रतिमा है। इसी मंदिर मे अन्रपूर्णा तथा शारदा के भी मंदिर है। एक स्थान पर आदिशक्तिराचार्य की मूर्ति है। कामाक्षी मंदिर के निज द्वार पर काम-कोटि यत्र मे आद्यालक्ष्मी विद्यालक्ष्मी सत्तानलक्ष्मी, सौभाग्यलक्ष्मी, धनलक्ष्मी, धन्यलक्ष्मी, वीर्यलक्ष्मी तथा विजयलक्ष्मी जा न्यास किया हुआ है। इस मंदिर के धेरे म एक सरोबर भी है।

कामाक्षी देवी जा मंदिर आदिशक्तिराचार्य का बनवाया हुआ रहा जाता है। मंदिर की दीवार पर श्रीरूप लक्ष्मी सहित श्री चोरमहाविष्णु (जिसकी १०९ वेण्व दिव्य देश म गणना है) तथा मंदिर के अधिदेवता श्रीमहाशास्त्रा के

<sup>१</sup> कल्याण- शक्ति उपासना अर्ज वर्ष ६६ (१९८३) प ४११

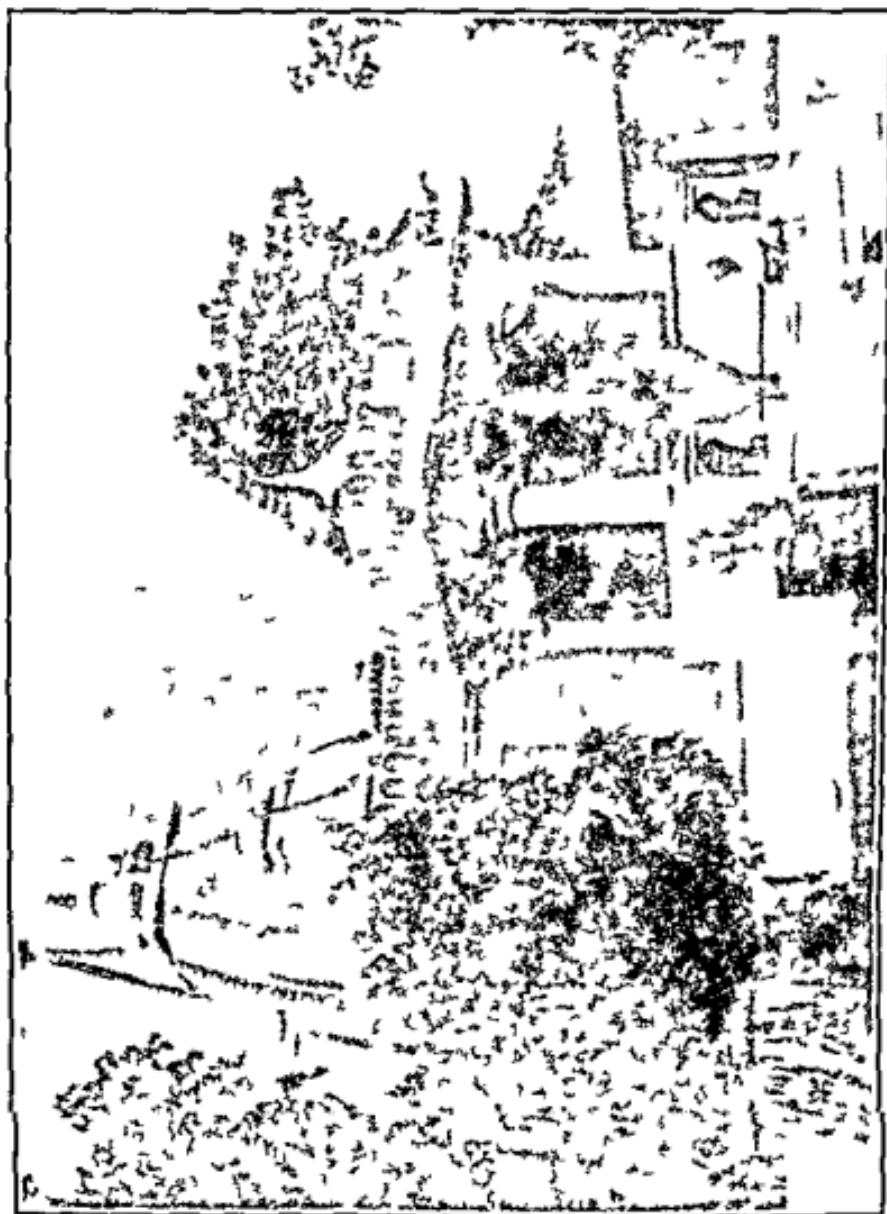
<sup>२</sup> कल्याण- तीर्थार्थ वर्ष २७ (१९५३) प ३५६

विग्रह है, जिनकी सख्त्या एक सो के लगभग होगी। शिव काढ़ी के समस्त शैव एवं वैष्णव मंदिर इस छग से बने हैं कि उन सबका मुख कामबोटिपीठ की ओर ही है और उन देव-विग्रहों की शोभायाप्त जब-जब होती है, वे सभी इस पीठ के प्रदक्षिणा करते हुए ही धुमाये जाते हैं। इस प्रकार इस क्षेत्र में कोटिपीठ की प्रधानता सिद्ध होती है।<sup>१</sup>

पारीको के निम्न अवटकों की यह कुलदेवी है—

१ जेरठा	तिवाड़ी
२ पापड	तिवाड़ी
३ पदमानिया	जोशी

<sup>१</sup> कुछ विद्वान् परमाणिया अवटक की कुलदेवी जहाँ त्रिपुरसुन्दरी बतात है वहीं कुछ विद्वान् परमाणिया अवटक की कुलदेवी तारा भी बतात है। माता एक ही है उसका स्वरूप नलग हा सरूता है। अत मान्यता एवं पारिवारिक परम्परा के अनुसार कुलदेवी मानत हुए उसका पूजन बरना चाहिए।



श्री त्रियुगा सुन्दरी मंदिर – बासवाडा

## नारायणीः नानणः लहण माता

माँ नारायणी को देवियों का केन्द्र बिन्दु माना जाता है। मार्कण्डेय पुराण में मधु-कैटभ वध, महिपासुर की सेना का वध, महिपासुर का सेनापतियों सहित वध, धूमलोचन वध, चण्ड और मुण्ड के वध, रक्त-बीज वध, निशुभ वध, शुभ वध के बाद जब देवताओं ने देवी की स्तुति की तो उन्होंने देवी के समस्त रूपों में भगवती की स्तुति की और देवताओं ने देवी से वरदान भी प्राप्त किया। उसे ही बल सम्पन्न वैष्णवी शक्ति भी माना—

त्वं वैष्णवी शक्तिरनन्तवीर्या, विश्वस्य वीजं परमासि माया ।

सम्मोहित देवि समस्तमतत, त्वं वै प्रसन्ना भुवि मुक्तिहेतु ॥५॥<sup>१</sup>

वैष्णवी, भगवान् विष्णु (नारायण) की शक्ति है, यथा—

यशसा तेजसा ऋपैर्नारायणसमा गुणे

शक्तिर्नारायणस्येय तेन नारायणी स्मृता ।

(व्रह्मवैर्वत्त, प्रकृति खण्ड ४७वा अध्याय)

नारायणाद्वाङ्मूर्त्ता तेन तुल्या च तजसा ।

तदा तस्य शरीरस्य तेन नारायणी स्मृता ॥

(व्र वै श्रीकृष्ण जन्मखण्ड २७वा अध्याय)

इस नारायणी शक्ति को शक्तियों का केन्द्रबिन्दु मान कर देवी की जो प्रार्थना की गई है, वह इस प्रकार है—

सर्वपङ्गलमङ्गल्ये शिवे सर्वार्थ-साधिके ।

शरण्य श्यम्बके गौरिनारायणि नमोस्तुते ॥

(मार्कण्डेय पुराण ९१/९)

प्रार्थनापाक श्लोकों का पूरा हिन्दी रूपान्तर नीचे दिया जा रहा है—

देवी के द्वारा वहा महादैत्यपति शुभ्म के मारे जाने पर इन्द्र आदि देवता अग्नि को आगे करके उन कात्यायनी देवी की स्तुति करने लगे। उस समय

अभीष्ट की प्राप्ति होने से उनके मुखब्रह्मल दमक उठे थे और उनके प्रकाश से दिशाएँ भी जगमगा उठी थी। देवता बोले— शरणागत की पीड़ा दूर करने वाली देवि ! हम पर प्रसन्न होओ । सम्पूर्ण जगत् की माता ! प्रसन्न होओ । विश्वेश्वरि ! विश्व की रक्षा करो । देवी ! तुम्हीं चराचर जगत् की अधीश्वरी हो । तुम ही इस जगत् का एकमात्र आधार हो, क्योंकि पृथ्वी रूप मे तुम्हारी ही स्थिति है। देवी ! तुम्हारा पराक्रम अलहनीय है । तुम्हीं जलरूप मे स्थित होकर सम्पूर्ण जगत् को तृप्त करती हो । तुम अनन्त बलसम्पन्न वैष्णवी-शक्ति हो । इस विश्व की कारणभूता परा-माया हो । देवी ! सम्पूर्ण विद्याएँ तुम्हारे ही भिन्न-भिन्न स्वरूप हैं । जगत् मे जितनी स्त्रियाँ हे वे सब तुम्हारी ही मृत्युया हैं । जगदम्बे ! एकमात्र तुमने ही इस विश्व को व्याप कर रखा है । तुम्हारी स्तुति क्या हो सकती है ? देवी ! जब तुम सर्वस्वरूप स्वर्ग तथा मोक्ष प्रदान करने वाली हो, तब इसी रूप मे तुम्हारी स्तुति हो गयी । तुम्हारी स्तुति के लिए इससे अच्छी उक्तिया और क्या हो सकती है ? बुद्धिरूप से सब लोगो के हृदय मे विराजमान रहने वाली तथा स्वर्ग तथा मोक्ष प्रदान करने वाली नारायणी देवी ! तुम्हे नमस्कार है । कला, काष्ठा आदि के रूप से क्रमशः परिणाम (अवस्था परिवर्तन) की ओर ले जाने वाली तथा विश्व का उपसहार करने मे समर्थ नारायणी ! तुम्हें नमस्कार है । नारायणी ! तुम सब प्रकार का मगल प्रदान करने वाली मगलमयी हो । कल्याणदायिनी शिवा हो । सब पुरुषार्थों का सिद्ध करने वाली, शरणागतवत्सला, तीन नेत्रा वाली एवं गौरी हो । तुम्हें नमस्कार है । तुम सृष्टि का पालन ओर सहार की शक्तिभूता, सनातनी देवी, गुणों का आधार तथा सर्वगुणमयी हो । नारायणी ! तुम्हे नमस्कार है । शरण में आये हुए दीनो एवं पीड़िता की रक्षा म सलग्न रहने वाली तथा सबकी पीड़ा दूर करने वाली नारायणी देवी ! तुम्हे नमस्कार है । नारायणी ! तुम ब्रह्माणी का रूप धारण करके हसा से जुत हुए विमान पर बैठती तथा कुश-मिश्रित जल छिड़कती रहती हो । तुम्हे नमस्कार है । माहेश्वरी रूप से विशूल, चन्द्रमा एवं सर्प को धारण करने वाली तथा महान् वृप्तभ की पीठ पर बैठने वाली नारायणी देवी ! तुम्हे नमस्कार है । मोरा और मुर्गों से घिरी रहने वाली तथा महाशक्ति धारण करने वाली बौमारीरूपधारिणी निष्पापे नारायणी ! तुम्हें नमस्कार है । शाख, चक्र, गदा और शार्निधनुपरूप उत्तम आयुधा को धारण करने वाली वैष्णवी शक्तिरूपा नारायणी !

तुम प्रसन होओ। तुम्हे नमस्कार है। हाथ मे भयानक महाचक्र लिये और दाढो पर धरती झो उठाये वाराहीरूपधारिणी कल्याणमयी नारायणी। तुम्हें नमस्कार है। भयकर नृसिंहरूप मे दैत्यों के वध के लिए उद्योग करने वाली तथा विभुवन की रक्षा म सलग्ग रहने वाली नारायणी। तुम्हें नमस्कार है। मस्तक पर किरीट आर हाथ मे महावज्र धारण करने वाली, सहस्र नेत्रों के कारण उदीप दिखायी देने वाली और वृग्रासुर के प्राणों का अपहरण करने वाली इन्द्रशक्तिरूपा नारायणी देवी। तुम्हे नमस्कार है। शिवदूतीरूप से दैत्यों की महती सेना का सहार करने वाली भयकर सूप धारण तथा विकट गर्जना करने वाली नारायणी। तुम्हे नमस्कार है। दाढो के कारण विकगल मुखवाली मुण्डमाला से विभूषित मुण्डमर्दिनी चामुण्डारूपा नारायणी। तुम्हे नमस्कार है। लक्ष्मी, लज्जा, महाविद्या, श्रद्धा, पुष्टि, स्वधा, धूवा, महारात्रि तथा महा-अविद्यारूपा नारायणी। तुम्हे नमस्कार है। मेघा, सरस्वती, वरा (श्रेष्ठा), भूति (ऐश्वर्यरूपा), बाध्रवी (भूरे रा की अथवा पार्वती), तामसी (महाकाली), नियता (सयमपरायणा) तथा ईशा (सबकी अधीश्वरी), रूपिणी नारायणी। तुम्हे नमस्कार है। सर्वम्बरूपा, सर्वेश्वरी तथा सब प्रकार की शक्तिया से सम्पन्न दिव्यरूपा दुर्ग देवी। सब भयों से हमारी रक्षा करो, तुम्हे नमस्कार है। कात्यायनी। यह तीन लोचनों से विभूषित तुम्हारा सौम्य-मुख सब प्रकार के भयों से हमारी रक्षा करे। तुम्हे नमस्कार है। भद्रकाली। ज्वालाओं के कारण विकगल प्रतीत होने वाला, अत्यन्त भयकर और समस्त असुरों का सहार करने वाला तुम्हारा विशूल भय से हमे बचाये। तुम्हे नमस्कार है। देवी। जो अपनी ध्वनि से सम्पूर्ण जगत् को व्याप्त करके दैत्यों के तेज का नष्ट किये देता है, वह तुम्हारा घटा हम लोगों की पापों से उसी प्रकार रक्षा करे, जैसे माता अपने पुत्रों की बुरे कर्मों से रक्षा करती है। चण्डिके। तुम्हारे हाथों में सुशाभित खड़ग, जो असुरों के रक्त और चर्बी से चर्चित है, हमारा मगल करे। हम तुम्हे नमस्कार करते हैं। देवी। तुम प्रसन्न होने पर सब रोगों को नष्ट कर देती हो और कुपित होने पर सभी कामनाओं का नाश कर देती हो। जो लोग तुम्हारी शरण मे जा चुके हैं, उन पर विपत्ति तो आती ही नहीं। तुम्हारी शरण मे गये हुए मनुष्य दूसरों को शरण देने वाले हो जाते हैं। देवी। अम्बिके। तुमने अपने स्वरूप को अनेक भागों म विभक्त करके नाना प्रकार के रूपों से जो इस समय इन धर्मद्वोही महादैत्यों का सहार किया

है, यह सब दूसरी कौन कर सकती थी ? विद्याआ में ज्ञान को प्रकाशित करने वाले शास्त्रों में तथा आदिवास्यो (वेदा) में तुम्हारे सिवा और किसका वर्णन है तथा तुमको छोड़कर दूसरी कौन ऐसी शक्ति है, जो इस विश्व को अज्ञानमय घार अन्धकार से परिपूर्ण मामतारूपी गढ़े में निरन्तर भटका रही हो ? जहाँ राक्षस, भयकर विपवाले सर्प, शत्रु, तुट्टा की सेना और जहा दावानल हो, वहा तथा समुद्र के बीच में भी साथ रहकर तुम विश्व की रक्षा करती हो। विश्वेश्वरी ! तुम विश्व को धारण करती हो। विश्वरूपा हो, इसलिए सम्पूर्ण विश्व को धारण करती हो। तुम भगवान् विश्वनाथ की भी वदनीया हो। जो लोग भक्तिपूर्वक तुम्हारे सामने मस्तक झुकाते हैं, वे सम्पूर्ण विश्व को आश्रय देने वाले बन जाते हे। देवि ! प्रसन्न होओ। जैसे इस समय असुरों का वध करके तुमने शीघ्र ही हमारी रक्षा की है, उसी प्रकार सदा हमे शत्रुओं के भय से बचाओ। सम्पूर्ण जगत् का पाप नष्ट कर दो और उत्पात एव पार्पों के फलस्वरूप प्राप्त होनेवाले महामारी आदि बड़े-बड़े उपद्रवों को शीघ्र दूर करो। विश्व की पीड़ा दूर करनेवाली देवी ! हम तुम्हारे चरणों में पढ़े हुए हैं, हम पर प्रसन्न होओ। ग्रिलोकनिवासियों की पूजनीया परमेश्वरी ! सब लोगों का वरदान दो।

### देव्युवाच

वरदाह सुरगणा वर यन्मनसेच्छथ ।  
त वृणुध्व प्रयच्छामि जगतामुपकारकम् ॥३७॥

**देवी बोलीं-** देवताआ ! मैं वर देने का तैयार हूँ। तुम्हारे मन में जिसकी इच्छा हो, वही वर माँग लो। ससार के लिये उस उपकारक वर को मैं अवश्य दूंगी।

सर्वाविधाप्रशमन त्रैलोक्यस्याखिलेश्वरि ।  
एवमेव त्वया कार्यमस्मद्दीर्घिविनाशनम् ॥३९॥

**देवता बोले-** सर्वेश्वरि ! तुम इसी प्रकार तीनों लोकों की समस्त व्याधिओं को शात करो और हमार शत्रुओं का नाश करती रहो।

शाकम्भरीति विल्याति तदा यास्याम्यह भुवि ।  
तत्रैव च वधिष्यामि दुर्गमाख्य यहासुरम् ॥४१॥

दुर्गा देवीति विख्यात तन्मे नाम भविष्यति ।  
 पुनश्चाह यदा भीम रूप कृत्वा हिमाचले ॥५०॥  
 रक्षासि भक्षयिष्यामि मुनीना ब्राणकारणात् ।  
 तदा मा मुनय सर्वेस्तोष्यन्त्यानप्रभूर्तय ॥५१॥  
 भीमा देवीति विख्यात तन्मे नाम भविष्यति ।  
 यदारुणाख्यस्त्रैलोक्ये महाबाधा करिष्यति ॥५२॥  
 तदाह भ्रामर रूप कृत्वाऽसख्येयपद्मदम् ।  
 त्रैलोक्यस्य हिताथाय वधिष्यामि महासुरम् ॥५३॥  
 भ्रामरीति च मा लोकस्तदा स्तोष्यन्ति सर्वत ।  
 इत्थ यदा कदा बाधा दानवोत्था भविष्यति ॥५४॥  
 तदा तदावतीर्याह करिष्याम्यरिसक्षयम् ॥५५॥५५

देवी घोर्णी— देवताओं! वैवस्वत मन्वन्तर के अद्वैस्वर्वें युग मे शुभ  
 और निशुभ नाम के दो अन्य महादैत्य उत्पन्न होगे। तब म नदगोप के घर  
 मे उनकी पत्नी यशोदा के गर्भ से अवर्तीणि हो विद्याचल मे जाकर रहूगी  
 और उक्त दोनों असुरों का नाश करूगी। फिर अत्यन्त भयकर रूप से पृथ्वी  
 पर अवतार ल, मै वैप्रचित्त नाम वाले दानवों का वध करूगी। उन भयकर  
 महादेत्यों का भक्षण करते समय मेर दौत अनार के फूल की भाति लाल हो  
 जायेगे। तब स्वर्ग मे देवता और मर्त्यलोक मे मनुष्य सदा मरी स्तुति ऋग्न  
 हुए मुझे 'रक्तदन्तिका' कहें। फिर जब पृथ्वी पर सौ वर्षों के लिय याएँ रक्त  
 जायेगी और पानी का अभाव हो जायेगा, उस समय मुनियों के गत्वन ऋग्न  
 पर मै पृथ्वी पर अयोनिजा रूप मे प्रकट होऊगी और सौ नेत्रों से मुनियां थी  
 ओर देखूगी। अत मनुष्य 'शताभी' इस नाम से मेरा वीर्तन करगा। देवता नां,  
 उस समय मै अपने शरीर से उत्पन्न हुए शाका द्वारा समस्त समाज रा भाण्ड-भाण्ड  
 करूगी। जब तक वर्षा नहीं होगी, तब तक वे शाक री भद्र प्राण री  
 रक्षा करें। ऐसा करने के कारण पृथ्वी पर 'शाकभारी' के नाम रा गयी रुक्षति  
 होगी। उसी अवतार मै दुर्गम नामक महादैत्य रा वध भी करूगी। इसम  
 मेरा नाम 'दुर्गादेवी' के रूप मे प्रसिद्ध होगा। फिर मै भीमस्य भाण्ड करक  
 मुनियों की रक्षा के लिये हिमालय पर रहने वाल गणमा रा भाण्ड रक्त  
 उस सद्यम सब मुनि भक्ति से नतमस्तक हाउ मगि ग्नति ऋग्न। तब

नाम 'भीमाटेवी' के रूप में विद्यात होगा। जब अरुण नामक दैत्य तीनों लोकों में भारी उपद्रव मचायेगा तब मैं तीनों लोकों का हित करने के लिये छ पैरोवाले असख्य भ्रमरों का रूप धारण करके उस महादेत्य का वध करूँगी। उस समय सब लोग 'भ्रामरी' के नाम से चारा ओर मेरी स्तुति करेंगे। इस प्रकार जब-जब सप्तसार में दानवीं बाधा उपस्थित होगी, तब-तब अवतार लेकर मैं सहार करूँगी।

नारायणी में शक्ति के इक्ष्यावन पीठों में, जहाँ सती के अग गिरे थे, उसमें सती के ऊपर के दाँत जहा गिरे उसके मवध में निम्न कथानक आता है<sup>१</sup>—

**शुचि-** यहाँ सती के 'ऊर्ध्वदत' (ऊपर के दाँत) गिरे थे। यहा सती 'नारायणी' और शकर को 'सहार' या 'सकूर' कहते हैं। तमिलनाडू में तीन महासागरों के सागम-स्थल कन्याकुमारी से तेरह कि मी दूर 'शुचिन्द्रम्' में स्थाणु शिव का मंदिर है, उसी मंदिर में यह शक्ति पीठ है।<sup>२</sup>

**नानण**<sup>३</sup>— इस माता का स्थान ग्राम नाद है, जो जग प्रसिद्ध तीर्थस्थान पुष्कर (अजमेर) से ९ कि मी पश्चिम में पहाड़िया के नीचे सुरम्य वन आच्छादित स्थान पर अवस्थित है।

माता का मंदिर ऊपर पहाड़ पर है। माता के दर्शनार्थ जान हेतु मंदिर तक सीढ़ियाँ बनी हुई हैं, मंदिर के भोपा (सेवायत) के अनुसार सीढ़ियों की संख्या ७७५ है।

इस माता को निम्न नामों से भी भक्त लोग पूजते हैं—

- १ नदराय
- २ वैष्णवमाता
- ३ नानिण माता
- ४ ब्रह्माणी माता
- ५ नदराणी
- ६ नदा सरस्वती देवी (सरस्वती नदी के पास होने से माता को इस नाम से भी जाना जाता है।)

<sup>१</sup> कल्याण शति उपासना अक वर्ष ६१(१९८७) पृ ३७४

<sup>२</sup> माता के दर्शनार्थ लघुक नि ३१ १९९९ का शुचिन्द्रम् गया। साथ थे पि शाभित व माहित।

<sup>३</sup> लघुक तिनाक २८ ७ १९९९ का माता के दर्शनार्थ गया था साथ थे पि शाभित तिवाड़ी व श्री भगवान्सहाय नी पारीक घड़ीवाल।

इस मंदिर में वर्तमान में सगमरमर की दो मूर्तियां विराजमान हैं, एक मूर्ति कालका माता की है तथा दूसरी मूर्ति ब्रह्माणी माता की है। सगमरमर की दोनों मूर्तियाँ लगभग ५०० वर्ष पूर्व मंदिर में स्थापित की गई थीं। इसके पूर्व यहाँ काले पत्थर की काली माता एवं ब्रह्माणी की मूर्तियां थीं, जो लगभग २००० वर्ष पुरानी बताई जाती हैं। ये दोनों प्राचीन मूर्तियां पहाड़ पर स्थित मंदिर से लाकर नीचे पहाड़ की तलहटी में एक छाटे मंदिर में स्थापित कर दी गई हैं। इन दोनों मूर्तियों के पास ही दो अन्य मूर्तियां, जो इन मूर्तियों से बड़ी हैं, तथा कालिका एवं ब्रह्माणी की ही बताई गई, अपेक्षाकृत इन में भी पुगनी बताई गई हैं।

**माताएं चतुर्भुजी हैं-** दोनों माताये कालका एवं ब्रह्माणी चतुर्भुजी हैं।

नानन माता के हाथों में त्रिशूल, तलवार, चक्र, आयुध हैं तथा चौथा हाथ वरदमुद्रा (आशीर्वाद) के रूप में है। माता की सवारी सिंह पर है।

कालका माता के हाथों में खण्ड, तलवार, त्रिशूल एवं चौथे हाथ में चौटी पकड़े हुए नरमुण्ड की है। माता की सवारी भैसे पर है।

### मासिक मेला

शुक्ल पक्ष की हर अष्टमी को गाँव के एवं आसपास के भक्त माता की पूजा अर्चना करते हैं। इस दिन ग्रामवासी कोई काम नहीं करते, यहाँ तक कि जो नौकरी करते हैं वे भी उस रोज अवकाश लेकर माता की पूजा-अर्चना करते हैं। खेत खलिहान भजदूरी आदि सभी कार्य इस दिन स्थगित रहते हैं। माता के मंदिर के रास्त में ग्रामवासी पानी की व्यवस्था करते हैं, इस प्रकार की जिम्मेदारी ग्राम भा काई व्यक्ति स्वेच्छा से लेता है।

### नवरात्रा में मेला

माता के यहाँ चैत्र एवं आश्विन मास के दोनों नवरात्रा में मेला भरता है, जिसमें न बेबल आसपास के भक्त अपितु दूरस्थ स्थानों के भक्त भी माता के दर्शनार्थ एवं जात-जहूले उतारने आते हैं। यात्रियों के सुख-सुविधा हेतु ग्रामवासी पूर्णत जागरूक रहते हैं। नवरात्राओं में नौ दिन तक यात्री आते रहते हैं।

माता के क्षेत्र म १०-१२ बीघा का ओरेण भी बताया गया।

माता के वर्तमान भोपे श्री रामपालजी है इनका परिवार ही प्रारम्भ से माता की सेवा पूजा करता आया है। इनके योग-क्षेत्र हेतु गाँववाला ने इन्हें कृषि-भूमि मय कुए के दे रखी है।

### माता के मंदिर में अन्य मूर्तियाँ

पहाड़ी पर स्थित माता के मंदिर में अन्य मूर्तियाँ भी हैं यथा-

(१) यहाँ एक अष्टकोणीय शिवलिंग है, जो लगभग पाँच हजार वर्ष पुराना बताया जाता है। इस शिवलिंग में बभूत जैसे निशान होने से इसे बभूत-माता भी कहा जाता है। ऐसी मान्यता है कि इसकी सेवा अर्चना करने से आदमी के बभूत (शरीर पर सफेद निशान) मिट जाते हैं।

(२) यहाँ श्रीकृष्ण भगवान् की लेटी हुई मुद्रा में एक अत्यन्त प्राचीन मूर्ति है। इन्हें कामदेव भी कहते हैं, ग्रामवासियों के अनुसार यह कन्दैया का ग्रामीण सबाधन है।

(३) शिवजी का मंदिर है। इस शिव मंदिर के सबध में ऐसी मान्यता है कि ब्रह्माजी ने जब पुष्कर में यज्ञ किया था, तब इस शिव लिंग की स्थापना तथा शिवमंदिर का निर्माण कराया गया था।

### भोग

ब्रह्माणी माता के मीठा भोग यथा नारियल, मिठाई आदि का लगता है जबकि काली (कालका) माता के मंदिर के भोग के अतिरिक्त बकरे की बलि भी चढाई जाती है। बकरे की बलि ऊपर पहाड़ी पर नहीं दी जाती, अपितु पहाड़ी की तलहटी में निर्मित छोटे मंदिर के सामने, जहाँ माता की पुरानी मूर्तियाँ विगजमान हैं, दी जाती हैं।

### मंदिर निर्माण की कहानी

माता की प्राचीन मूर्तियाँ जो पहाड़ी के नीचे मंदिर में विराजमान हैं, वहाँ पहले क्ष्वल चबूतरा था तथा ४-५ फुट ऊची दीवार थी बाद में एक भक्त एवं ग्रामवासियों के जनसहयोग से माता के मंदिर पर पट्टिया डाल दी

गई और अभी १९९८ मे ही माता के मंदिर पर शिखर का निर्माण भी एक भक्त एवं ग्रामवासियों के सहयोग से निर्मित किया गया है।

माता का मूल मंदिर जो पहाड़ी शिखर पर है, उसका निर्माण पुष्कर बसने के समय का बताया जाता है। ऐसा भी माना जाता है कि मंदिर का निर्माण लगभग पॉच-साढ़े पॉच हजार वर्ष पूर्व हो गया था। मंदिर निर्माण के सबध मे ऐसी किवदति है कि माता के मंदिर निर्माण हेतु निर्माण-सामग्री यथा चूना-पानी आदि रात्रि का पहाड़ के नीचे एकत्रित किया जाता था और चमत्कारी रूप से वह समस्त सामग्री प्रातः पहाड़ी छोटी पर जहाँ माता के मंदिर का निर्माण कार्य चल रहा था, पहुंचा जाती थी।

### प्राचीनता

नाद क्षेत्र मे ब्रह्माजी ने यज्ञ वेदी बनाई थी तथा उस समय भी इसका नाम नदनस्थान' था, पोराणिक कथा के अनुसार चन्द्रन नदी के उत्तर, सरस्वती नदी के पश्चिम नदन स्थान के पूर्व तथा कनिष्ठ पुष्कर के दक्षिण के मध्यवर्ती क्षेत्र को यज्ञवेदी बनाया। इस यज्ञवेदी मे उन्होंने ज्येष्ठ पुष्कर, मध्यम पुष्कर तथा कनिष्ठ पुष्कर ये तीन पुष्कर तीर्थ बनाये। ब्रह्मा के यज्ञ मे सभी देवता तथा ऋषिगण पधारे। ऋषियों ने आसपास अपने आश्रम बना लिये। भगवान् शकर भी कपालधारी बनकर पधारे।

नाद ग्राम नदा का अपभ्रंश है। यह स्थान उतना ही पुराना है जितना पुष्कर क्षेत्र मे ब्रह्माजी द्वारा कराया गया यज्ञ। पद्य पुराण के अनुसार 'चन्द्रननदी' के उत्तर प्राची सरस्वती तक और नदन नामक स्थान स पूर्व क्रम्य या कल्पनामक स्थान तक जितनी भूमि है, वह सब पुष्कर तीर्थ के नाम से प्रसिद्ध है। 'इस क्षेत्र मे भगवान् ब्रह्मा सदा निवास करते हैं। (माता ब्रह्माणी का मंदिर नाद गाँव के पहाड़ी शिखर पर हजारो वर्ष पुराना है) यह वही क्षेत्र है, जहाँ ऋषिमुनि जानी, तप, तपस्या करते रहते हैं। 'पुष्कर तीर्थ मे सरस्वती नदी सुप्रभा, काञ्जना, प्राची, नदा और विशाला नाम से प्रसिद्ध पाच धाराओं में प्रवाहित होती है।' पुष्कर क्षेत्र मे यज्ञ समाप्ति के पश्चात् सरस्वती नदी 'अदृश्य होकर वहाँ से पश्चिम दिशा की ओर बहने लगती है। कहा जाने पर यहाँ का धनि मिला, जो फल आर फूला से सुशाभित था, सभी क्रतुओं के पुण्य

उस बनस्थली की शोभा बढ़ा रह थे, यह स्थान मुनियों के भी मन को मोहने वाला था। वहाँ पहुंच कर नदियों में श्रेष्ठ सरस्वती देवी पुन प्रकट हुई। वहाँ के नदा' नाम से तीना लोकों में प्रसिद्ध हुई।

इसी नदा नदी के नाम से ग्राम नाद (नदा) प्रसिद्ध है तथा ब्रह्मणी, कालका माताएं, ग्राम नाद में विराजमान होने से ग्राम के नाम से भी "नानण" माता के नाम से जानी जाती है।

### सरस्वती नदी का नदा नाम पड़ने का इतिहास

पद्मपुराण में बड़े विस्तार से यह प्रसग दिया गया है कि सरस्वती नदी के नाम नदा नदी किस पक्षार हुआ। इसका कथानक इस प्रकार बताया गया कि मिसी समय पश्ची पर प्रभञ्जन नामक एक प्रसिद्ध एवं शक्तिशाली राजा हुए। एक दिन जब वे शिखर खलने गये तो वन में एक मृगी को अपने बाण का निशाना बना दिया। आहत मारी ने राजा की ओर देखकर कहा, और मूर्ख! यह तूने म्या किया? एक निरपराध अबला को, जो अपने नवजात शिशु को स्तन पान कर रही हो, उस तूने बज्र के समान बाण का निशाना बनाया है। तेरी बुद्धि खोटी है, मैं तुझे शाप देती हूँ कि तू कच्चा माँस खाने वाली पशु-योनि से जन्म लेगा। जा तू इस कण्टकाकीर्ण वन में व्याघ्र हो जा' मृगी का शाप सुनकर मृगी के सामने छड़ा राजा थरथर काँपने लगा और आर्त स्वर म हाथ जोड़कर मृगी से बोला- हे कल्याणी! मुझे यह नहीं मालूम था कि तुम नवजात शिशु का दूध पिला रही थी, मुझसे अनजाने मे ही यह महा-अपराध हो गया- 'मने तुम्हारा वध किया है, इसके लिए मैं क्षमा प्रार्थी हूँ, हे दया री सागर! तुम मुख पर प्रसन्न होओ। हे कर्मणामयी! मुझ पर इतनी तो कृपा करो मि मे पुन मानव योनि म आऊ, वह समय भी मुझे बताओ तथा इस शाप से उद्धार री अवधि बताने की कृपा करो। राजा का आर्त-स्वर सुनकर मृगी वाली- गजन् आज स सौ वर्ष बीतने पर यहाँ नाद नाम री एक गाय आवेगी, उसके साथ तुम्हारा वातालाप होने पर मेरे द्वारा दिये शाप का अत दो जावेगा।

मृगी के शाप से राजा प्रभञ्जन व्याघ्र हो गय। उसकी आँखें बड़ी भयानक थी। इस व्याघ्र यानि में रहने वह मृगों, अन्य चौपायों व मनुष्यों को भी मार मार कर खाने लगा। वह यह चितन करता रहा मि मेरी जीवन-वृत्ति

हिंसा की हो गई, अब क्व धन मै मानव देह धारी बन्गा और किस प्रकार व क्व इस मृगी की शाप मुक्त होने की बात सत्य होगी।

सौ वर्ष पश्चात् एक दिन गौओं का एक दुण्ड इधर से निकला। उसमें नदा नामक एक गाय उन सबकी पथ प्रदशक थी, वह धीर, गभीर स्वाभाव ही व्याघ्र था। उसने हृषि-पुष्ट गाय को देखकर कहा, ‘अहा आज मुझे अनायास ही भोजन मिल गया’ और वह गाय की ओर बढ़ा। व्याघ्र को देखकर नदा नामक गाय थर-थर काँपने लगी। उसने बड़े आर्त एवं विभीत-भाव से व्याघ्र से कहा- हे व्याघ्राज! मैं नवजात प्रसूता हूँ, मैंने अभी एक बछड़े को जन्म दिया है, आप कृपा कर मुझ पर इतनी दया करे कि मुझे इतने समय का अवकाश दे दे कि मैं अपने नवजात शिशु को स्तनपान करा आऊ तथा उसकी देखभाल हेतु अपनी सहेलियों को समला आऊ। व्याघ्र ने कहा मैं इतना मूर्ख नहीं कि आये हुए भोजन को छोड़ दू। तब नदा गाय ने पुन कहा मैं ईश्वर को साक्षी रखकर कहती हूँ कि मैं अपने बछड़े को दूध पिलाकर आ जाऊँगी। यदि मैं न आऊ तो मुझे वही पाप लगे जो ब्राह्मण तथा माता-पिता का वध करने से होता है, सोते हुए प्राणी को मारने से होता है। व्याघ्र ने इस पर विश्वास कर कहा, ‘अब तुम जाओ। पुत्रवत्सले! अपने पुत्र को देखो, दूध पिलाओ उसका मस्तक चूमकर माता, भाई, सखी, स्वजन एवं बधु, बाधवों का दर्शन करके सत्य को आगे रखकर शीघ्र ही यहाँ लौट आओ।’

नदा नामक वह गाय बड़ी सत्यवादिनी थी। व्याघ्र से आज्ञा ले वह अपने दुण्ड में आयी। माँ को आती देख बछड़ा पुलकित हो उठा, माता के पास जाकर जब उसने अपनी माता की आँखों में आसू देखे तो उसने पूछा हे माता! आप उदास क्यों है? क्या कारण है? गाय ने सारी बात बताते हुए कहा, ‘वत्स मैं व्याघ्र से बादा करके आई हूँ कि तुम्हे स्तनपान करवाकर उसके पास जाऊ, यह अपनी अंतिम मुलाकात है।’ फिर नदा गाय ने अपनी सहेली गायों से कहा- मेरे पुत्र का तुम सभी ध्यान रखना। आज से तुम ही इसकी माता हो। यह कहकर नदा गाय अपने दुण्ड से विदा लेकर व्याघ्र के पास चली गई। उसके पीछे उछलता कूदता वह बछड़ा भी आ गया। माता ने उसे पुन लौट जाने को कहा- तब बछड़े ने कहा माता बिना माता

के पुत्र का जीना व्यर्थ है। इतने में व्याघ्र आ गया उसे अपने पूर्व जन्म की घटनाओं का स्मरण हाने लगा। गाय ने उसके सामने जाकर कहा- हे व्याघ्र राज! मैं अपने वायद के अनुसार आपके समक्ष आ गई हूँ, अब आप दयाकर, मुझे अपना भोजन बनाय। व्याघ्र ने कहा तुम बड़ी सत्यवादी निकली अन्यथा कौन मौत के मुह में वापिस आता है? व्याघ्र ने गाय से पूछा तुम्हारा नाम क्या है? गाय ने अपना नाम नदा बताया। नदा नाम सुनते ही व्याघ्र ने उसे प्रणाम किया तथा तत्काल ही वह व्याघ्र-योनि से मुक्त होकर पुन राजा के रूप में परिवर्तित हो गया।

इसी समय सत्य भाषण करने वाली यशस्विनी नदा का दर्शन करने के लिए साक्षात् धर्म वहा आये और इस प्रकार बोले- ‘नदे! मैं धर्म हूँ, तुम्हारी सत्यवाणी से आकृष्ट होकर यहाँ आया हूँ। तुम मुझसे काई भी श्रेष्ठ वर मागलो’ धर्म के एसा कहने पर नदा ने यह वर मागा- ‘धर्मराज आपकी कृपा से मैं पुत्र सहित उत्तम पद को पास होऊं तथा यह स्थान मुनिया को धर्म प्रदान करने वाला शुभ तीर्थ बन जाये। देवश्वर! यह सरस्वती नदी आज से मेरे ही नाम से प्रसिद्ध हो- इसका नाम नदा’ पढ़ जाय। आपने वर देने को कहा, इसलिए मैंने यही वर मागा है’ तभी से इसका नाम नदा हो गया।

### चमत्कार

यो तो माता के अनेकानेक चमत्कार है, जो माता के भक्तों को माता ने दिये हैं। उन में से एक चमत्कार का सक्षिप्त कथानक इस प्रकार है—

पटवा जाति के सभी पुस्त कही से आ रहे थे। रात्रि हो जाने के कारण, स्त्री, पुस्त इस ग्राम के पास रुक गये। रात्रि को चार ने आकर इनका माल चोर लिया तथा पुरुष की तलवार से हत्या कर सिर व धड़ को अलग-अलग कर भाग गये। स्त्री अपने पति की मृत्यु से विलाप करने लगी तभी माता एक बद्धा के रूप में प्रकट होकर इस स्त्री के पास गई तथा उसके रोने एवं विलाप करने का कारण पूछा। स्त्री द्वारा समस्त घटना बताने पर माता ने उस स्त्री को कहा, ‘तर पति के शरीर पर चादर ओढ़ा दे तथा उसका सिर धड़ से लगा दे।’ स्त्री ने माता के बताये अनुसार अपने पति का सिर, धड़ से लगा दिया। रात्रि का समय था। पुस्त की छोटी बड़ी थी, अत धड़ लगाते

समय चोटी का कुछ भाग पीछे की ओर न रहकर गले पर भी लटका हुआ रह गया। माता के चमत्कार से धड़ से सिर का स्पर्श होते ही वह व्यक्ति जीवित हो उठा। कुछ समय पश्चात् माता पुन् प्रकट हुई तथा उनका चोरी गया सामान उन्ह दिया। माता के हाथ में चोर का सिर था जिसकी चोटी पकड़े हुए माँ थी। कहते हैं चोर का वह सिर चोटी पकड़े हुए माता के हाथ में है। यह घटना दो हजार वर्ष पुरानी बताई गई।

पटवा जाति के लोग माता की मान्यता रखते हैं तथा माता की सेवा पूजा करने हेतु आते हैं। जिनम फुलरा के पटवा प्राय आते ही रहते हैं। ऐसा भी बताया गया कि प्राय पटवा जाति के लोगों के गले के सामने कुछ बालों का गुच्छा सा जन्म से ही रहता है। जो उनके पूर्व पुरुष के गले के सामने धड़ एवं सिर को जोड़ते समय रह गया था।

### ग्राम की नववधु की जात

राजपूत एवं द्वाराण समुदाय में शादी के बाद नववधु को सर्वप्रथम आशीर्वाद लेने हेतु माता के मंदिर में ले जाया जाता है। माता के ढोक देने के बाद ही अन्य धार्मिक काय एवं रीति रिवाज सम्पन्न कराये जाते हैं।

### देवी के अन्य स्थान

(१) नारायणी का पीठ स्थान सुपाश्वर कहा गया है, यथा—

नारायणी सुपाश्वरे तु प्रिकुटे भद्रसुन्दरी।

(देवी भागवत ७/३०/६६)

नारायणी माता का एक प्रतिहारकालीन देवालय दौसा-अलवर मार्ग पर टेहला ग्राम से १२ मील पर (अलवर जिले में) स्थित है। राजोणाड़ की ऊची पर्वत-शृंखलाओं में ऊचे पर्वतों से आच्छादित इस रमणीक स्थान में एक प्राचीनिक जल-स्रोत के तट पर मंदिर में शिवलिंग स्थापित है। मंदिर के सामने निर्मित कुड़ में उक्त स्रोत का जल आमर सग्रहीत होता है। यह मंदिर मूल रूप में ८वीं शताब्दी का है। मंदिर की प्राचीनता का प्रमाणित करने के लिए इस मंदिर में बारह प्रतिमाओं के साथ सिंहों की दो प्रतिमाएँ ही व्यवस्थित गयी हैं।

पूर्वभिमुख इस मंदिर में सभा-मण्डप के दोनों पाश्वों में दो लघु प्रतिमाएँ स्थापित हैं, जिन पर सिन्दूर चर्चित है। गर्भगृह के बाहर की दोनों प्रतिमाएँ शिव की हैं। उत्तर दिशा की ओर की अर्द्धपर्यङ्गासन मुद्रा में शिव प्रतिमा नन्दी पर आसीन है, जिसके एक हाथ में त्रिशूल और दूसरे में पुष्ट है। दक्षिण पाश्व की अर्द्धपर्यकासनस्थ मुद्रा में प्रतिष्ठित शिव के एक हाथ में डमरू है और दूसरा हाथ जघा पर टिका है।

गर्भगृह में नदी पर आरूढ़ उमामहेश्वर की भव्य प्रतिमा है। चतुर्हस्त शिव प्रतिमा के एक हाथ में त्रिशूल, दूसरे में पुष्ट, एक में कोई अस्पष्ट आयुध और एक हाथ उमा (पार्वती) के स्तन पर अवस्थित बताया गया है। शिव अर्द्धपर्यङ्गासन मुद्रा में नन्दी की पीठ पर आगे की ओर आरूढ़ है और पार्वती उनके पीछे एक ओर पॉव लटकाये आरूढ़ है। पार्वती का मुख शिवजी की ओर है। प्रतिमा में केश-विन्यास तथा अग-प्रत्यगो की रचना अत्यन्त मनोहर हुई है।

मंदिर के मण्डावर भाग में मध्यस्थ प्रमुख भाग में गणेश आदि उभय पाश्वों में स्थित मूर्तियां में से एक में शिव की प्रतिमा है। दूसरी ओर की प्रतिमा सभवत पार्वती की हो-जा सिन्दूर से चर्चित हो जाने से स्पष्ट नहीं है। शिव प्रतिमा के एक हाथ में पुष्ट है— दूसरा हाथ का आयुध अस्पष्ट है। प्रतिमा के पष्ट भाग में पर्ण-लता है। अधो-भाग में नन्दी और शिव उत्कीर्ण है। शिव के एक हाथ में त्रिशूल है और दूसरा हाथ जघा पर अवस्थित दर्शाया गया है।

पृष्ठ भाग में स्थित प्रतिमाग्रय में से मध्य में ताक में अपने हाथों में त्रिशूल और बीजपूर लिये अर्द्धपर्यकासन मुद्रा में शिव प्रतिष्ठित है जिसके दोनों ओर परिचारक उत्कीर्ण हैं। वही मयूर पर आरूढ़ स्कद कात्तिकिय की प्रतिमा भी अवस्थित है, जिसके एक हाथ में दण्ड है और दूसरा हाथ जघा पर रखा है।

उत्तर पाश्व में स्थित तीन रथिकाओं में से मध्यस्थ रथिका में पार्वती की चतुर्हस्त प्रतिमा है जिसके एक हाथ में त्रिशूल और दूसरे में कोई फल प्रदर्शित है। अन्य हाथ रिक्त है। इनके दोनों पाश्वों में नन्दी पर आसीन शिव की प्रतिमाएँ हैं।

रथिकाओं में स्थित इन प्रतिमाओं में मध्य की ताको में स्थित प्रतिमाएँ बाहर उत्कीर्ण की गई हैं। शेष के साथ उनके वाहन हैं। सभी प्रतिमाएँ अर्धपर्यंकालीन हैं।

नाई जाति के लोग इसका अपनी जाति का तीर्थ मानते हैं— सभवत नाम साम्य ही इसका प्रमुख कारण है। उन्होंने मंदिर का जीर्णोद्धार कराकर इसको नया ही रूप दे दिया है।

(२) पारीकों के रथों की पौधियों में नारायणी माता का स्थान टोडा भीम तालाब के पापड पर बताया गया है।

(३) तन्त्रचूडामणि में ५१ शक्तिपीठों में नारायणी का पीठसहार (सक्रूर नामक भैरव के साथ शुचीन्द्रम में बताया गया है, जो कन्यकुमारी से ८ मील दूर स्थित है। यथा—

‘सहाराख्य ऊर्ध्वदत्ते देवी नारायणी शुची’।

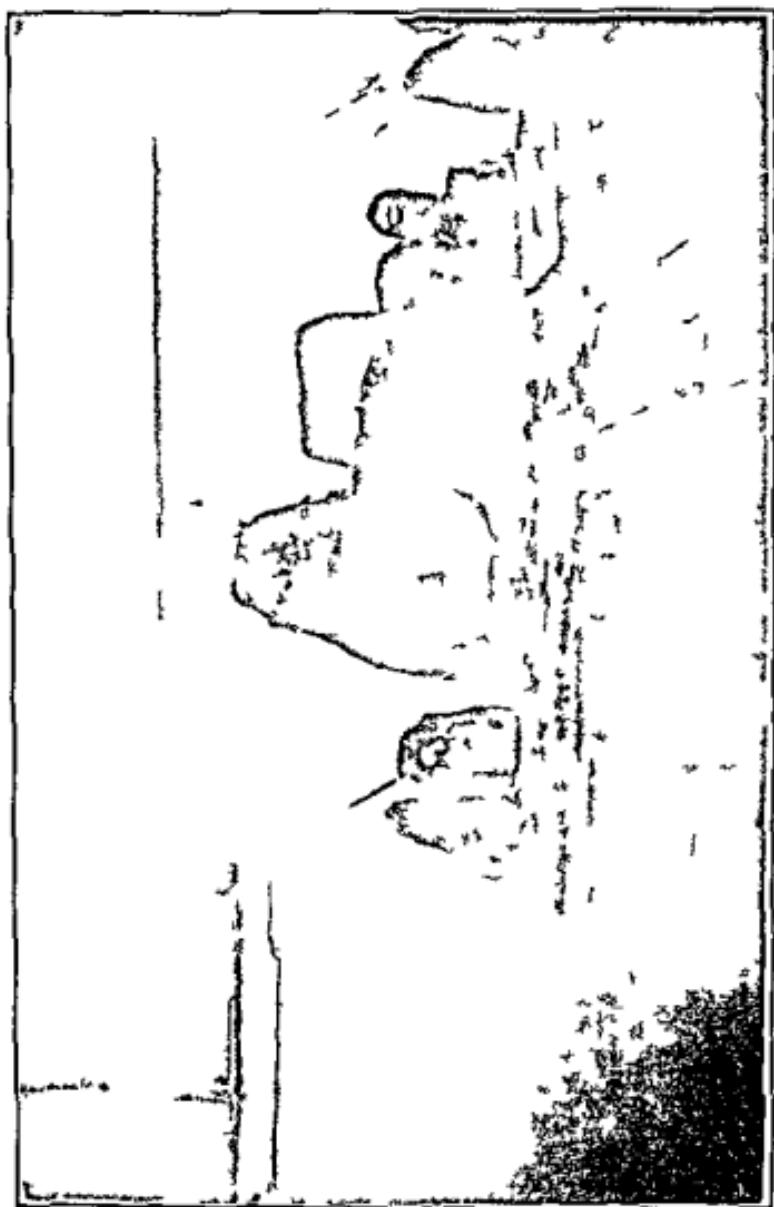
यहा भगवती का ऊर्ध्वदत्त गिर था।

(४) टोडा रायसिंह में अम्बा तालाब पर नारायणी माता का मंदिर है।

पारीकों के केसोट (पुरोहित) व गार्य (मिश्र-बोहरा) अवटकों की यह कुलदेवी है।

- कहीं करी गार्य की कुलदेवी ललिता भी बताई गई है।
- भवाल माता (दय- चतुर्मुखी माता) की कानिका माता का भी लाहणी/लहण माता कहते हैं।
- कुछ विद्वान् इस माता के स्वरूप का ललिता के रूप में भी मानते हैं।





ननन माता (नौद-पुष्कर)

पहाड़ी के नीचे मदिर मे रिथत माता ब्रह्मणी व कालिका की प्राचीनतम प्रतिमाये

## परा. पराख्या: पाडोखा: पडाय: पाडला: पाढा माता पाण्डोख्या: पाण्डुक्या माता

परा शब्द अनेक अर्थों का वाची है। भावप्रकाश-पूर्वखण्ड- प्रथम भाग में 'परा' शब्द वन्ध्याकर्कोटकी के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है जो कफ का शमन करने वाली, ब्रणशोधिनी, सर्पदर्पहारिणी तथा विसप विष का हरण करने वाली है। दूसरा अल्कार कौस्तुभ में मूलाधार से उदित प्रथम भाव को परा सज्जा दी गयी है। काशीखण्ड (२१।१०६) के अनुसार पूर्यति सागर भक्तमनोरथन्नेति व्युत्पत्य गङ्गा अर्ध है। (१२।६।१०) के अनुसार परा गायत्री को कहते हैं। यथा परानन्दा प्रकृष्टाथा प्रतिष्ठा पालकी परा पार्वती को कहते हैं— यथा पार्वती परमोदारा परब्रह्मात्मिका परा।'

परा, पराख्या, पाडोखा, पडाय, पाडला, पाढा माता के नाम से जिस माता की मान्यता है, वह माता डीडवाना से १२ कि मी दूर नमक की खान पर है। जहाँ माता की दो मूर्तियां हैं। पहली मूर्ति बालिका के रूप में व दूसरी मूर्ति महिपासुर-मर्दिनी के रूप में। माता का एक मंदिर डीडवाना नगर में भी बनाया गया है, जिससे भक्तों को दूर न जाना पड़े।

पण्डोख्या व पाण्डुक्या, नाम से पूजित माता का स्थान मेडता सिटी से पश्चिम में ६ कि मी दूर, मेडता गेड से पूव की ओर ९ कि मी की दूरी पर पाण्डोराई स्थान पर अवस्थित है। इस माता का रूप भी महिपासुर-मर्दिनी का है।

दोनों माताओं का स्वरूप महिपासुर-मर्दिनी का है अत माताओं के बेवल नाम भेद एव स्थान भेद का ही अतर है। पाठको एव भक्तों की सुविधा हेतु दोनों स्थानों पर विराजमान माताओं का विवरण परामाता की सामान्य जानकारी के बाद अलग-अलग दिया जा रहा है।

**महामाया पराविद्या-जगद रचियित्री महामाया पराविद्या।**

महामाया हरेश्चैषा तथा सम्मोहृते जगत्।

ज्ञानिनामपि चेतासि ददी भगवती हि सा॥

बलादाकृष्ण मोहाय महामाया प्रयच्छति ।  
तया विसृज्यते विश्व जगदेतच्चराचरम् ॥  
(दुर्गा-सप्तशती १ /५५६)

‘जिसके द्वारा सम्पूर्ण जगत् मोहित हो रहा है, वह भगवान् विष्णु की महामाया है। वह महामाया देवी भगवती ज्ञानियों के चित्त को भी बलपूर्वक आकर्षित कर मोह में डाल देती है। उसी के द्वारा यह सम्पूर्ण चराचर जगत् रखा गया है।’

पराशक्ति सर्वपूज्य और आराधनीया है—

आराध्या परमा शक्ति सर्वैरपि सुरासुरै ।  
नात परतर किञ्चिदधिक भुवनत्रये ॥  
सत्य सत्य पुन सत्य वेदशास्त्रार्थनिर्णय ।  
पूजनीया परा शक्तिर्निर्गुणा सगुणाथवा ॥  
(श्रीमद्देवी भागवत १/८६-८७)

‘सभी देवता और दानवों के लिए ये चिन्मयी परमाशक्ति ही आराधना करने योग्य है। तीनों लोकों में भगवती से बढ़कर अन्य कोई भी नहीं है। यह बात सत्य है। वेद और शास्त्रों का यही सच्चा तात्पर्य-निर्णय है कि निर्गुण अथवा सगुणरूपा चिन्मयी पराशक्ति ही पूजनीया है।’

पराशक्ति प्रकृति

वद के अद्वैत सिद्धान्त के अनुसार एक ब्रह्म से भिन्न कुछ भी नहीं है। सारे ब्रह्माण्ड में इस विश्व-प्रपञ्च की स्थिति-सहारकारिणी विश्वेश्वरी महामाया प्रकृति पराशक्ति भी उस एक पर-ब्रह्म का पृथक् नाममात्र ही है। ब्रह्म, ईश्वर, विराट् पुरुष और ब्रह्म शक्ति या ईश्वरी—ये भेद सब उस महामाया पराशक्ति की महिमा को प्रकट करने वाले वैभव के समर्थक नाम रूप हैं। प्रकृति ईश्वर है और ईश्वर पराशक्ति प्रकृति है।

पराशक्ति का स्वरूप एव ध्यान १

रक्ताभ्योधिस्थपोतोल्लसदरुण-सरोजाधिरूढा-कराव्यै।  
पाश कोदण्डमिक्षुद्वयमणिगुणमप्यहुश पञ्च वाणान् ॥

विभ्राणासुक्कपाल त्रिनयनलसिता पीनवक्षोरुहादधा-  
देवी वालार्कवर्णा भवतु सुखकरी प्राणशक्ति परा न ॥

जो रक्तसागर मे स्थित पोत-सदृश उत्कुल्ल लाल कमल पर स्थित रहती है, कर कमलों में पाश, ईख का धनुष, प्रिशूल, अकुश, पञ्चवाण और रुधिरयुक्त कपाल धारण करती है, तीन नेत्रों से सुशोभित है, स्थूल स्तनों से युक्त है और सूर्य-सदृश वर्णवाली है, वे परा देवी प्राणशक्ति हम लोगों के लिए सुखकारी है।

### पराशक्ति के विभिन्न रूप ³

भारत के प्राचीन क्रषि-मुनि इस जगत् के वैचित्र्य के कारणा तथा तात्त्विक स्थिति को जानने के प्रयत्न मे जी-जान से लग गये। फलस्वस्प उन्हें यह ज्ञात हुआ कि यह विश्व विभिन्न स्तर की शक्तियों से सम्पन्न जड़-वस्तुओं से भरा पड़ा है। एक ही पराशक्ति इन सभी मे विभिन्न मात्रा म भरी है। यही नहीं, इसी पराशक्ति ने विभिन्न जड़ वस्तुओं के भी रूप धारण कर लिये हैं और यही सजीव वस्तुओं मे जीव के रूप में विलसित होती है।

आधुनिक विज्ञान जो चाद शताब्दी पूर्व तक जड़ एव चेतन शक्ति ना अलग-अलग मानता था, इसे स्वीकार न कर सका। पर अब वह भी भास्तीय क्रषि-मुनियों के इस तत्त्व का 'राम-राम' कहता हुआ स्वीकार करता है और घोषित करता है कि शक्ति जड़ के रूप में परिणत हो सकती है।

इस पराशक्ति की दो मुख्य स्थितियाँ हैं— निगुणा एव मगुणा। निगुण स्थिति में वह परिपूर्ण ज्ञानस्वरूपिणी एव कृपासमुद्ररूपिणी है। इमी न ज्ञान एव कृपा का एक अश हममे विकसित हुआ है। अतएव प्रत्येक में ज्ञान-कोण बहुत है, प्रम भी उसी पराशक्ति के आज्ञारूप है। वेद तो दर एक का अलग-अलग करत्व निर्धारित करता है। उन सब कर्तव्यों ने निभाना पड़ना है। एसा निभाने से ही पराशक्ति वी सत्यस्थिति का जान सकत है। यही सत्य निमनिहित गीता-वाच्य म भी बताया जाता है—

‘स्यकर्मणा तमप्यच्यं सिद्धि पितृति यान् ४

१ कल्याण- शक्ति उपराना अर्च वर्ष ६१ (१९८०) पृ ३३

२ कल्याण- शक्ति उपराना अर्च वर्ष ६१ (१९८०) पृ ५४

कर्तव्य पूरा करने मे निमग्न मन, जो स्वभावत ही चबल है, कभी द्वेष एव क्रोध से भर जाता है। अत स्वीकार्य प्रसन्नता और प्रेम के बहिष्कार्य से द्वेष का होना अनिवार्य है। तो भी व्यावहारिक स्थिति तक इन भावनाओं को स्थगित कर प्रेम की भावना को बढ़ाना चाहिये। पहले तो यह असाध्य मालूम पड़गा। परतु कर्तव्य को पूरा कर और उसे पराशक्ति को अर्पित कर, तो यह मुलभ-साध्य हागा।

एस अपण करने से सुदृढ आधार बनेगा, पराशक्ति के विभिन्न संगुणरूपो मे— जिसमे जिसका मन विशेष लगता हो, उसमे सुदृढ लगाना चाहिये। श्रीदुर्गा, लक्ष्मी, सरस्वती आदि इसी पराशक्ति के विद्यमान रूप आप हैं। श्रीशिवजी, भगवान् विष्णु, श्रीगणपतिदेव, श्रीकार्तिकिय, श्रीसूर्यनारायण के रूपो म भी यह शक्ति विद्यमान है। भगवान् श्री आदिशकराचार्य जी के निम्नलिखित वाक्य म इसी तत्त्व का उल्लेख है—

शिव शक्त्या युक्तो यदि भवति शक्त प्रभवितु  
न चेदेव देवो न खलु कुशल स्पन्दितुमपि।

अस्तु, हम अपनी कर्तव्यपरायणता के रूप म पराशक्ति की पूजा करे एव सतुष्ट हो। दात-शक्ति तो पराशक्ति ही है, हमारी तो केवल स्वीकरण करने की ही है। पराशक्ति से हमारी प्रार्थना है कि चाहे शरीर तक की भावना सीमित कर द्वैत-भाव ही दे द, पर आप सतुष्ट हो। चाहे केलाश वेचुण्ठ, मणिद्वीप आदि लोको मे नित्य उसका आनन्दानुभव किया जाय, पर आप सतुष्ट हो अथवा चाहे अपने म ही लीन कर अद्वैत स्थिति मे कर लें पर आप सतुष्ट हो। यही हम सबका कर्तव्य है।

वास्तव म हमारा कर्तव्य तो कोई अभिलापा किये बिना सर्वशक्ति की निसी-न-निसी स्वरूप म भक्ति करना ही है। हमे जो मिलता है, उससे सतुष्ट रहकर उनकी सेवा म तत्पर रहना उच्चस्तर की उपासना है—

यद्यच्छालाभसतुष्टो द्वन्द्वातीता विमत्सर ' इत्यादि।

**श्री दुर्गा-सप्तशती की सक्षिप्त कथा ?**

पराशक्ति के तीन चरित्र— दूसर मनु के राज्याधिकार म 'सुरथ' नामक एक चैत्रवशीय राजा हुए थे। जब शाशुओं और दुष्ट मरियों ने उनका राज्य,

खजाना और सेना सभी कुछ छीन लिया, तब वे शाति पाने के लिए मेधा क्रष्ण के आश्रम में पहुंचे। इसी बीच उस आश्रम में राजा सुरथ की समाधि नामक एक समदुखी वैश्य से भेट हुई। राजा और वैश्य दोनों मेधा क्रष्ण के निकट पहुंचे और उन्हे नमनकर पूछा— ‘महाराज! कृपा करके बताइये कि जिन विषयों में दोष देखकर भी ममतावश हम दोना का मन उनमें लगा रहता है, क्या कारण है कि ज्ञान रहते हुए भी ऐसा मोह हो रहा है?’

क्रष्ण से कहा— ‘राजन्! ज्ञानियों के चित्तों को भी महामाया बलात् खीचकर मोहग्रस्त बना देती है। यह सुनकर राजा ने उन महामाया देवी के विषय में प्रश्न किया। तब क्रष्ण ने कहा— ‘वे भगवती नित्य है और उन्होंने सारे विश्व को व्याप्त कर रखा है। जब वे द्वा के कार्य के लिए आविभूत होती है, तब उन्हे ‘उत्पन्ना’ कहा जाता है।’ राजा के पूछने पर क्रष्ण ने उन्हें पराशक्ति के तीन चरित्र बताये, जो इस प्रकार है—

**प्रथम चरित्र—** जब प्रलय के पश्चात् शेषशब्द्या पर योगनिद्रा में निमग्न भगवान् विष्णु के कर्ण-मल से मधु और कैटभ नाम के असुर उत्पन्न हुए और वे श्रीहरि के नाभि-कमल पर स्थित ब्रह्मा को ग्रसने के लिए उद्यत हो गये, तब ब्रह्मा ने भगवती योगनिद्रा की स्तुति करते हुए उनसे तीन प्राथनाएँ की—

१ भगवान् विष्णु को जगा दीजिए, २ उन दोना असुरों के सहारार्थ उद्यत कीजिए और ३ असुरों को विमोहित कर श्रीभगवान् द्वारा उनका वध करवाइये।’ तब भगवती ने ब्रह्मा को दशन दिया। भगवान् योगनिद्रा से उठकर असुरों से युद्ध करने लगे। दोना असुरों ने योगनिद्रा द्वारा माहित कर दिये जाने पर भगवान् से वर मागन को कहा। अन्त में उसी वरदान के अनुसार वे भगवान् विष्णु के द्वारा मारे गये।’

**मध्यम चरित्र—** प्राचीनकाल में पहिप नामक एक महावली असुर ने जन्म लिया। वह अपनी अदम्य शक्ति से इन्द्र, सूर्य, चन्द्र, यम, वर्ण, अग्नि, वायु तथा अन्य सभी देवों को पराजित कर स्वयं इन्द्र बन बैठा और सभी देवों को स्वर्ग से निकाल दिया। स्वर्ग सुख से वचित देव मत्युलोक में भटकने लगे। अन्त में उन लागों ने ब्रह्मा के साथ भगवान् विष्णु और

<sup>१</sup> कल्याण—इसकि उपासना अक्ष वर्ष ६१ (१९५३) पृ ३९

शिव के निकट पहुंचकर अपनी कष्ट-कथा वह सुनायी। देवों की कर्ण-कहानी सुखकर हरि-हर के मुख से एक महान् तेज निकला। तत्परचात् ब्रह्मा, इन्द्र, सूर्य, चन्द्र, यमादि देवों के शरीर से भी तेज निकले। वह तेज एकत्र होकर एक दिव्य देवी के रूप म परिणत हो गया।

विधि, हरि और हर त्रिदेवा ने तथा अन्य प्रमुख देवों ने उस तेजोमूर्ति को अपने-अपने अस्त्र-शस्त्र प्रदान किये। तब देवी अदृहास करने लगी, जिससे त्रैलोक्य काप उठा। उस अदृहास को सुनकर असुरराज सम्पूर्ण असुरों को साथ लेकर उस शब्द की ओर दोड़ पड़ा। वहाँ पहुंचकर उसने उग्र स्वरूपा देवी को देखा। फिर तो वे सभी असुर देवी से युद्ध करने लगे। भगवती और उनके वाहन सिंह न कई कोटि असुरों का विनाश कर दिया। भगवती के हाथों असुर के पन्द्रह सेनानी— चिक्षुर, चामर, उदग्र, कराल, बाष्कल, ताम्र, अन्धक, असिलामा, उग्रास्य, उग्रवीर्य, महाद्वनु, विडालास्य, महासुर, दुर्धर और दुर्मुख आदि मारे गये। तब महिषासुर महिय, हस्ती, मनुष्यादि का रूप धारणकर भगवती से युद्ध करने लगा और अन्त म मारा गया।

अपने समग्र शत्रुओं के मार जाने पर आह्लादित हो देवों ने आद्याशक्ति की स्तुति की, और वर मागा कि ‘हम लोग जब-जब दानवों द्वारा विपद्यस्त हो, तब-तब आप हमे आपदाओं से विमुक्त करे तथा इस चरित्र को पढ़ने सुनने वाला प्राणी सम्पूर्ण सुख-ऐश्वर्य से सम्पन्न हो जाए।’ ‘तथास्तु’ कहकर देवी ने देवों को इप्सित वरदान दिया और स्वयं तत्काल अन्तर्धान हो गयी।

उत्तर चरित्र— पूर्वकाल मे शुभ्म और निशुभ्म नामक दो महापराक्रमी असुर हुए। उन्होंने इन्द्र का राज्य और यज्ञों का भाग तक छीन लिया। वे दोनों सूर्य, चन्द्र, कुबेर, यम, वरुण, पवन और अग्नि के अधिकारों के अधिपति बन बैठे। तब देव शोकग्रस्त हो मर्त्यलोक म आये और हिमालय पर पहुंचकर करुणार्द्र हृदय से प्रार्थना करने लगे। भगवती पार्वती प्रगट हुई। उन्होंने देवों से पूछा— ‘आप लोग किसकी स्तुति कर रहे हैं?’ इसी समय देवी के शरीर से ‘शिवा’ निकली और कहने लगी— ‘शुभ्म-निशुभ्म से पराजित होकर स्वर्ग से निकले गये ये इन्द्रादि देव मेरी स्तुति कर रहे हैं।’ पार्वती के शरीर से निकलने के कारण अम्बिका ‘कौशिकी’ कहलायी। उनके निकल जाने से पार्वती कृष्णवर्ण हो गयी तथा ‘काली’ नाम धारण कर हिमालय पर रहने लगी।

इधर परमसुन्दरी अम्बिका को शुभ-निशुभ के भत्य चण्ड-मुण्ड ने देखा तो दोनों ने जाकर शुभ से उनके अतुल सौन्दर्य की प्रशंसा की। भूत्यों की बात सुनकर शुभ ने सुग्रीव नामक असुर को अम्बिका को ले आने के लिए भेजा। सुग्रीव ने भगवती के पास पहुंचकर शुभ-निशुभ के ऐश्वर्य और शौर्य की प्रशंसा करते हुए उनसे परिधि (विवाह) की बात कही। देवी ने उत्तर दिया— ‘जो मुझे सग्राम में पराभूत करके मैं बल-दर्प को नष्ट करेगा, उसी को मैं पति-रूप में स्वीकार करूँगी, यही मेरी अटल प्रतिज्ञा है।’ सुग्रीव ने शुभ-निशुभ के निकट पहुंच कर भगवती अम्बिका की प्रतिज्ञा विस्तारपूर्वक कह सुनायी। असुरों ने कुपित होकर देवी को बाल पकड़कर खींच लाने के लिए धूम्रलोचन असुर को भेजा, किन्तु देवी ने तो हुकार मात्र से ही उसे भस्म कर दिया।

पश्चात् असुरराज ने भारी सेना के साथ चण्ड-मुण्ड नामक असुरों को भगवती कौशिकी को पकड़ लाने के लिए भेजा। वे वहा भगवती को पकड़ने का प्रयत्न करने लगे। तब उनके ललाट से एक भयानक काली देवी प्रकट हुई। उन्होंने सारी असुर-सेना का विनाश कर दिया और चण्ड-मुण्ड का सिर काटकर वे अम्बिका के पास ले आयी। इसी कारण उनका नाम ‘चामुण्डा’ पड़ा। चण्ड-मुण्ड का वध सुनकर असुरेश ने सात सेनानायकों को भगवती से युद्ध करने के लिए भेजा। उस समय ब्रह्मा, विष्णु, शिव, इन्द्र, वराह, नृसिंह, कार्तिकिय— इन सात प्रमुख देवों की शक्तिया असुर-सेना के साथ युद्ध करने के लिए पहुंची। फिर अम्बिका के शरीर से एक भयकर शक्ति निकली, जो लोक में शिवदूती नाम से विद्युत हुई। उसने ईशान को शुभ-निशुभ के पास भेजकर कहलवाया कि यदि तुम लोग अपना कल्याण चाहते हो तो देवताओं के लोक और यज्ञाधिकार उन्हे लौटाकर पाताल में चले जाओ।

बलोन्मत्त शुभ-निशुभ देवीं की बात की अवहेलना करके युद्धस्थल में सेना सहित आ डटे। भगवती ने देव-शक्तियों की सहायता से असुर-सैन्य का सहारा प्रारम्भ कर दिया, तब असुर-सेनाध्यक्ष रक्तबीज, भगवती और देवशक्तियों से युद्ध करने लगा। उसके शरीर से जितने रक्तबिन्दु भूमि पर गिरे थे उतने ही रक्तबीज उत्पन्न हो जाते थे। अन्त में देवी ने चामुण्डा को आज्ञा दी कि वह अपने मुख का विस्तार कर रक्तबीज के शरीर के रक्त को अपने मुख

म ले ले और इस तरह उन नये असुरों का भक्षण कर डाले। चामुण्डा ने ऐसा ही किया और भगवती ने उस असुर का सिर काट डाला। तत्पश्चात् निशुभ्य भगवती से युद्ध करने लगा और मारा गया।

अब शुभ्य ने क्रोधित होकर अम्बिका से कहा— ‘तू दूसरे का बल लेकर अभिमान कर रही है?’ भगवती ने उत्तर दिया— ‘ससार में मैं एक ही हूँ। ये समस्त मेरी विभूतिया है। ये मुझसे ही उत्पन्न हुई हैं और मुझमें ही वित्तुम हो जायेगी।’ इसके बाद सृष्टी शक्तिया देवी के शरीर में प्रविष्ट हो गयीं और शुभ्य भी देवी के कौशल से मारा गया। देवगण ने हर्षित होकर अम्बिका की स्तुति की। अन्त में प्रसन्न होकर देवी बोली— ‘ससार का उपकार करने वाला वर माणिये।’ देवा ने कहा— ‘जब जब हमारे शत्रु उत्पन्न हों आप उनका नाश कर हमें आश्वस्त कर?’ भगवती आद्या शक्ति ने ‘एवमस्तु’ कहा और भविष्य में सात बार भक्तरक्षार्थ अवतार लेने की कथा तथा दुर्गचरित्र के पाठ का महात्म्य वर्णन कर वे अन्तर्धान हो गयीं।

**उपसहार—** भगवती की उत्पत्ति और प्रभाव के तीन चरित्र सुनाकर मेधा ऋषि ने राजा सुरथ और समाधि वैश्य को भगवती की उपासना का आदेश दिया। दोनों ने कठोर उपासना की। अन्त में देवी ने प्रकट होकर राजा को उनका राज्य वापस मिलने तथा वैश्य को ज्ञान-प्राप्ति का वरदान दिया। उस वरदान के प्रभाव से राजा सुरथ सूर्य से उत्पन्न होकर सावर्णि मनु हो गये।

**देवी कुमारी की तपस्या और प्रतिष्ठा :**

पराशक्ति के सम्बन्ध में एक कथानक निम्न प्रकार भी मिलता है—

हजारों वर्ष पहले भरत नामक एक राजर्षि हमारे देश का शासन करते थे। उस राजा के एक पुत्री और आठ पुत्र थे। पुत्री का नाम था कुमारी। बुद्धापे के कारण राजा भरत ने सारी सम्पत्तियों को अपनी सतानों में बाट दिया। तब कन्याकुमारी का वर्तमान भू-भाग कुमारी के जिम्मे आ गया। उस दिन से इस स्थान का नाम कन्याकुमारी बन गया। पुराण में प्रस्ताव है कि देवी पराशक्ति यहा तपस्या करने आयी थी और परशुराम के परिश्रम से तब देवी

की प्रतिष्ठा यहा स्थापित हो गयी। मंदिर के कुछ शिलालेखों से यह मालूम होता है कि पाद्य राजाओं के काल में ही उस प्रतिष्ठा को वहां से हटाकर समुद्र तट के इस मंदिर में रख दिया गया।

दक्षिण भारत में कन्याकुमारी के साथ पराशक्ति की कहानी निम्न प्रकार से कही जाती है, जिसमें बाणासुर वध का प्रसंग है<sup>१</sup>—

‘वेद’ हिन्दुओं के लिए बहुत ही प्रधान धर्मशास्त्र है। वेद चार हैं—ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद। ऋग्वेद काशी की महिमा को कहता है। यजुर्वेद कन्याकुमारी के महत्त्व को बताता है।

कश्यप प्रजापति शोनितपुर का राक्षस राजा था। उनके बाण, मूक, शुभ और महिष नाम के चार असुर पुत्र थे। इन चारों में बाणासुर ने कठिन तपस्या करके परमेश्वर से ‘अमरत्व’ का वर पाया था। लेकिन उसने ऐसा वर प्राप्त नहीं किया था, जो कि किसी कन्या के हाथों से नहीं मेरेगा।

उस वर के घमड से वह देवी-देवताओं और नर-नारियों पर बहुत अत्याचार करने लगा। उस समय ससार में असुरों का अत्याचार बहुत बढ़ गया था। धर्म घटने और अधर्म बढ़ने लगा। स्त्रियों का पातिक्रित धर्म असुरों के द्वारा नष्ट होने लगा।

लोग वर्णाश्रम-धर्म का पालन नहीं कर सके। मंदिरों में पूजा-पाठ चल नहीं सका। पृथ्वी माता का बल इन अत्याचारों से एकदम घट गया। इसलिए वह जाकर ब्रह्मदेव से अपने हाल का वर्णन करने लगी। लेकिन ब्रह्मदेव ने सुनकर एकदम कह दिया कि मैं कुछ भी नहीं कर सकता। उसके बाद वे दोनों मिलकर शख्ब-चक्र-गदा-पद्मधारी श्रीविष्णु भगवान् के पास पहुंचे। पृथ्वी माता गाय का रूप धारण कर चली थी। उसी समय देवता और मुनीश्वर सब मिलकर भगवान् से प्रार्थना कर रहे थे।

उस समय भगवान् महाविष्णु ने कहा कि बाणासुर का वध करना आसान काम नहीं है। यह काम पराशक्ति महामाया द्वारा ही हो सकता है। पराशक्ति को प्रसन्न करने के लिए एक बड़ा यज्ञ कीजिए। उस यज्ञाग्रंथि में आप लोगों

Hinduism-Discord Server <https://discord.com/invite/krVHJGg>

<sup>१</sup> कन्याकुमारी-सुचीन्द्रम महिमा पृ४४

की अपनी-अपनी शक्ति को होम-आहूति में प्रदान करना होगा। उसी समय उस होम कुण्ड से एक ज्योतिर्मय देवी मूर्ति स्त्री प्रगट होगी, उसके द्वारा ही आप लोगों का कल्याण होगा। उस होम कुण्ड से आने वाली देवी का नाम ‘चितप्रि-कुण्ड सम्भूता’ रखकर प्रार्थना कीजिए।

भगवान की ऐसी आज्ञा पाकर सब देव वापस आ गये, सबन मिलकर ‘महायज्ञ’ करना शुरू कर दिया। भगवान के कहे अनुसार उस होम-कुण्ड से पराशक्ति देवी का उद्गम हुआ। वह देवी दक्षिण समुद्र के तट पर आकर तपस्या करने लगी। धीर-धीर देवी बड़ी हो गयी और विवाह के योग्य होने पर विवाह के लिए सब तरह के प्रबन्ध होने लगे।

यह बात जब नारद मुनि को मालूम हुई तब वे बड़ी चिन्ता में पड़ गये। उन्होंने सोचा कि अगर देवी का विवाह पूरा हो जायेगा तो बाणासुर का वध नहीं हो सकेगा। इस तरह सोचकर नारद मुनि पराशक्ति के पास पहुंचे और देवी को प्रणाम करते हुए कहने लगे— ‘हे दुष्टों के नाश करने वाली लोक माता, आपके विवाह के लिए व्यवस्था करना बिल्कुल सही है, परन्तु आपको असुरा के माया जाल में फसे बिना अपने कार्य को पूरा करना चाहिए। इसलिए आपसे विवाह करने के लिए आने वाले परमेश्वर से, ‘आख न होने वाला नारियल’ गाठ न होने वाला गन्ना और नस न होने वाला पान’ इन तीनों को सूर्योदय होन से पहले ला देने की आज्ञा कीजिए। अगर वे उस आज्ञा को पूरा कर सकते हों तो विवाह पूरा हो जायेगा।

नारद मुनि के कहे अनुसार शक्ति ने भी परमेश्वर को आज्ञा दी। जब परमेश्वर उन तीनों को लेकर आ रहे थे तब नारद मुनि एक मुर्गी का रूप लेकर ‘सुचिन्द्रम्’ से कन्याकुमारी को आने वाले रस्ते में ‘बक्कम् पौर’ नाम की जगह पर खड़ होकर मुर्गी की तरह बोलने लगे।

जब यह आवाज परमेश्वर के कानों में पड़ी तब वे एकदम स्तम्भित हो गये। उनके मन में यह बात आई कि अब सबेरा हो गया है। इतनी देर के बाद हमारा वहा जाने से कोई फायदा नहीं है और हमारा विवाह भी रुक जायेगा। इस तरह सोचते-सोचते वे सुचिन्द्रम में ही स्तम्भित होकर खड़े हो गये और वही पर स्थाणु-मूर्ति बन गये। इसलिए इधर विवाह भी रुक गया

और विवाह के लिए जितने सामान तैयार किये गये थे वे सब पत्थर या बालू बनकर नष्ट होने लगे। उन कई रण वाले बालू को हम आज भी कन्याकुमारी के समुद्र के पास देख सकते हैं। इसके अलावा मंदिर के आगान में एक बहुत बड़ा बर्तन पत्थर बनकर विराजमान है। इसको आज भी हम अपनी आखो से देख सकते हैं।

### बाणासुर का वध

तीनों लोकों का दमन करके राज्य करने वाले बाणासुर के दूत 'दुर्मुख', 'मूक' आदि दक्षिण दिशा में तपस्या करने वाली देवी को देखकर बाणासुर के पास गये और उस देवी के सौदर्य के बारे में वर्णन किया। उनकी बात सुनकर बाणासुर भी देवी के मोह में पड़ गया और सीधे उसके पास जाकर अपने मन की बात कहने लगा। बाणासुर की बात सुनकर देवी ने कहा— 'अगर तुम मुझसे विवाह करना चाहते हो, तो पहले मुझसे लड़ो और युद्ध में हराकर ही मुझे पा सकते हो ?' इतना कहकर पगशक्ति युद्ध करने को तैयार हो गई। दोनों के बीच घमासान लडाई होने लगी। उस समय बाणासुर को मदद देने के लिए मूक भी युद्ध में शामिल हो गया।

इसी समय पर देवी ने भद्रकाली की सृष्टि करके मूक के साथ युद्ध करने के लिए उसको भेज दिया। मूक भद्रकाली को उठाकर ले जा रहा था लेकिन उसका मूकाबिका नाम की भद्रकाली ने उसी जगह सहार कर दिया। उस जगह पर आज भी उसके चिह्न के रूप में एक त्रिशूल विद्यमान है। इसके बाद बाणातीर्थ की जगह पर बाणासुर का वध हुआ। सब देव और देवता प्रसन्न होकर पुष्पवर्षा करने लगे। उस समय जब बाणासुर मरणासन्न पड़ा था तब वह देवी से प्रार्थना करने लगा, 'हे ! अखिल ब्रह्माण्ड चराचरों की जननी ! मेर सब अपराधों को क्षमा करके मुझे सदगति प्रदान कीजिए। इसके अलावा मेरे मरणस्थान पर एक पवित्र तीर्थ धाट बनाकर उसमें स्नान करने वालों को गगा स्नान का फल प्राप्त होने दीजिए।' देवी ने भी उसकी इच्छा के अनुसार वर दिया और उसके मरण स्थान पर बाण-तीर्थ स्थापित करके लोगों में यह खबर पहुंचाई कि हर साल 'आपाढ़ की अमावस्या' के दिन जो लोग यहा आकर इस तीर्थ में स्नान करके अपने पितृ कर्मों को करें, वे सब गगा-स्नान

का महापुण्य और सद्गति प्राप्त कर सकते हैं। आज भी हर वर्ष आपाढ़ी अमावस्या के दिन लोगों के झुण्ड के झुण्ड यहा आकर इस तीर्थ में स्नान करके सद्गति पाते हैं।

बाणासुर के नाश के बाद देवी यहा आकर हाथ में जयमाला लिए तपस्या करती दीखती थी। देवी की सखी भद्रकाली उसके मंदिर के उत्तर में अग्रहार के बीच में एक सुन्दर मंदिर में बड़ी प्रसन्नता से रहती थी। उसके मंदिर के पास जो तीर्थ है उसको 'भद्रकाली तीर्थ' कहते हैं। मंदिर के अदर पूजा के पानी के लिए शूल से चढ़ान को छेदने से पानी निकला हुआ था, उसी को आज भी देवी के अधिष्ठेक और मंदिर की आवश्यकताओं के काम में लात है।

इस तीर्थ स्थान को गगा के समान मर्यादा दी है। पानी लाने के लिए पानी की गहराई तक सीढ़िया है। इस सीढ़ी द्वारा नीचे जाकर के पुरोहित मड़ली जब अति आश्चर्यजनक ढग से जल लाती है, तब उसको देखकर सचमुच ही आश्चर्य होता है।

पराशक्ति ही विभिन्न नामों से लोक में पूजी जाती है, परा, पराट्या, पड़ाय, पाड़ता, पाढ़ा, पाड़ाखा, पाण्डाख्या, पाण्डुक्या। माता के दो मंदिर हैं। एक मंदिर डीडवाना में है जहा माता परा, पराट्या पाड़ाखा, पड़ाय, पाड़ता व पाढ़ा आदि नाम से पूजी जाती है। माता का दूसरा मंदिर पाण्डोराई स्थान पर है, जहा माता पण्डोर्या, पाण्डुक्या नाम से पूजी जाती है। इन दोनों माताओं के स्थान पर लेखक ने जाकर माता के दर्शन कर जानकारी प्राप्त की है, जिसका विवरण निम्न प्रकार है—

पाढ़ा माता के मंदिर का निर्माण वि स १०२, बार गुरुवार आसोज मुदी ९ को मकराना में हुआ। माता का स्थान नमक की खान पर है, जो डीडवाना से १२ कि.मी. की दूरी पर है। वाया मारवाड वालिया स्टेशन से २ कि.मी. की दूरी पर है।

माता के प्रगट होने एवं मंदिर निर्माण का कथानक इस प्रकार है कि माता मंदिर प्रागण में स्थित कैर के पेड़ में से प्रगट हुई। वि स १०२ में यह स्थान पूर्णत जगल था यहा गाय चरने आती थी। उन गायों में भैसा

नामक सेठ की गाय भी जगल मे चर्ने आती थी ओर कैर के पेड के नीचे बैठा करती थी। सायकाल जब गाय जाती तो पाढ़ा माता कन्या के रूप मे उस गाय का दूध पी जाती। यह क्रम बहुत दिनों तक चलता रहा। एक दिन सेठ ने घाले को कहा कि गाय का दूध कोन निकाल लेता है, घाले द्वारा अनभिज्ञता प्रकट करने पर सेठ ने इस तथ्य की जानकारी करने हेतु घाले को हिदायत दी। सायकाल घाले ने देखा कि कैर के पेड से एक कन्या आई और उसने गाय के थनों से दूध पीया। घाले ने जो देखा वह यथावत् उसने सेठ को कह सुनाया। सेठ ने घाले के कथन को सही नहीं माना तो घाले ने कहा आप स्वयं इसकी जाव कर ले। एक दिन सेठ स्वयं सायकाल उस स्थान पर गया, जहा बालिका द्वारा गाय के थनों से दुधपान की बात घाले ने बताई थी। सेठ यह दृश्य देखकर अचम्भित रह गया जब एक कन्या कैर के पेड मे से प्रगट हुई ओर गाय के थना से दुधपान करने लगी। सेठ तत्काल उस स्थान पर गया और उस बालिका से पूछा, ‘तू कौन है? तू दूध पीती है तो कोई बात नहीं, यदि तेरी मुक्ति नहीं हुई तो वह बता, मैं विधि-विधानपूर्वक तेरी मुक्ति कराऊगा।’ तब उस कन्यारूपी भगवती ने कहा— हे सेठ! मैं कोई अलाय-बलाय नहीं हूँ, अपितु आदि-शक्ति हूँ। मैं अब प्रगट होऊँगी। मेरे प्रगट होने का समय आ गया है। तू मेरा मंदिर बना। सेठ द्वारा आर्थिक रूप से अपने को असमर्थ बताने पर माता ने भैसा सेठ से कहा— ‘तू तेरा घोडा दौड़ा, पीछे मुड़कर मत देखना। तेरा घोडा जहा तक दोडेगा वहा तक चादी की खान हो जावेगी।’ सेठ ने माता के आदेशानुसार अपना घाड़ा दौड़ाया। कुछ समय बाद कैर का पेड फटा, धरती धूजी, भूम्प आया। भयमर आवाज को सुनकर एवं भूकम्प आने पर सेठ ने सोचा— उस कन्या की माया से यह सब कुछ हो रहा है। सेठ घबरा गया ओर वह आवाज सुनकर पीछे की ओर देखने लगा— सेठ देखता है कि माता प्रगट होकर वही रह गई। सेठ के पीछे मुड़कर देखने के कारण माता का आधा पाव धरती मे ही रह गया। यह सब देखकर सेठ माता के प्रभाव को जान गया तथा उसे पूणविश्वास हा गया कि कन्यारूपी माता चमत्कारी है। वह आद्याशक्ति है। सेठ तत्काल लौटकर माता के पास आया। उसने माता का प्रणाम किया। उस यह विश्वास हा गया। उसका कहना हुआ अस्त्वा है कि इस ही सकता। उस

उसने प्रार्थना की है माता। यदि इस क्षेत्र को तुमने चादी का बना दिया तो लोग उसे लूट लाएं, अतः आपकी यदि मुझ पर क्षण ही है, तो मुझे ऐसी चीज दो जिस बिना भय के मैं और मेरी आस-ओताद उसका उपयोग एवं उपभोग कर सके एवं उससे जीविकोपार्जन नी कर सके। माता ने कहा ऐसा ही हांगा और उसने चादी की खान के स्थान पर उस स्थान को कच्ची चादी की खान (नमक की खान) बना दी। तब से यहा नमक की खान है।

माता के यहा मेला चैन के नवरात्रों में भरता है जो चैत्र सुदी एकम से चौदस तक चलता है। माता को चोला, वर्ष में दो बार चैत्र एवं आसोज के नवरात्रा के बाद चौदस को चढ़ाया जाता है। माता के सात्त्विक उजला भोग यथा लापसी, चावल, चूरमा आदि का लगता है।

माता के मंदिर में कुल चार शिलालेख हैं। प्रथम शिलालेख इस मंदिर में निर्माण से सम्बन्धित है जिसके अनुसार मंदिर का निर्माण वि स ९०२ में आसोज सुदी ९ गुरुवार को भैसा सेठ द्वारा कराया बनाया गया है।

इस मंदिर की बनावट एवं गुबद सुदर्शना माता के मंदिर के समान ही है। जो इस क्षेत्र में ही स्थित है और ऐसा प्रतीत होता है कि ये दोनों मंदिर एक ही समय में बने थे।

माता के मण्डप में पीछे नटराज की प्रतिमा उत्कीर्ण है। मण्डप के दक्षिण में गणशजी की तथा उत्तर वी आर महिपासुर मर्दनी की प्रतिमा उत्कीर्ण है।

मंदिर का दूमरा शिलालेख सम्वत् १६१० जेठ वदी २ मण्लवार का है, जो मुगल काल में किमी अग्रवाल द्वारा माता के मंदिर के किंवाड़ों की जोड़ी बनान से सम्बन्धित है।

मंदिर में उत्कीर्ण शिलालेखों के सम्बन्ध में मंदिर के पुजारीजी ने बताया कि मंदिर में इस आशय का शिलालेख भी है कि मंदिर का द्वार सम्वत् १८०३ में सावण सुदी ४ शुक्रवार को पुरोहित खेमराज सहदेव गोलवाल व्यास ने बनवाया।

मंदिर का चौथा शिलालेख सम्वत् १७६५ का एक अग्रज अधिकारी द्वारा बरामदा बनाने का है।

माता के मदिर में दो मूर्तियां हैं, सामने जो मूर्ति है वह माता की बालिका रूप की मूर्ति है तथा उसकी बगल में जो मूर्ति है वह माता की बीर रूप महियासुर-मर्दिनी के रूप में है। इनके बाई ओर भैरुनाथ बाबा की प्रतिमा है।

दोनों माताये अष्टभुजायुक्त हैं। माता की सवारी शेर पर है तथा महियासुर का वध करती प्रतिष्ठापित हुई है।

माता के सभा मण्डप में १६ खम्भे हैं।

(१) ऐसी किवदती है कि भैसा सेठ को जगत्-जननी माता का यह भी आशीर्वाद था कि तेरी मूँछ के एक बाल की कीमत एक लाख रुपया होगी। एक बार सेठ की मा तीर्थयात्रा को गई। सेठ ने उसे अपनी मूँछ का एक बाल दे दिया तथा कहा कि मा यदि तुम्हे रुपयों की आवश्यकता हो तो यह बाल किसी के गिरवी रख देना और बदले में एक लाख रुपये मिल जायेगे। यात्रा के दौरान गुजरात में सेठ की मा अपने लड़के की बात को आजमाने के उद्देश्य से एक सेठ की दुकान पर गई जो तेल का बड़ा व्यापारी था। उसने व्यापारी से कहा यह बाल रख लो और मुझे एक लाख रुपये दे दो। मेरे ढीड़वाना के भैसा सेठ की मा हूँ। व्यापारी ने भैसा सेठ की मा को दुत्कार दिया तथा कहा क्या बाल के बदले भी रुपये मिलते हैं? भैसा सेठ की मा जब तीर्थ यात्रा कर चापस लौटी तो उसने अपने बेटे भैसा सेठ को सारी कहानी सुनाई तथा साथ ही यह भी कहा कि कहीं बाल के बदले रुपये मिलते हैं और वह भी एक लाख! तुमने नाहक ही मेरी और अपनी मूँछ का एक बाल देकर खिल्ली उड़वाई। सेठ ने विचार किया फिर मन में यह सोचकर कि वरदान तो मुझे मिला है, उसने अपनी माता से व्यापारी का पता ठिकाना पूछा तथा उस व्यापारी के यहा गया। भैसा सेठ ने तेल व्यापारी से उसके पास उपलब्ध सारे तेल का सोदा किया तथा वही तेल व्यापारी के यहा ही एक कुण्डी बनवाई तथा व्यापारी से कहा अपने सौदे का तेल इस कुण्डी में डाल दो, तेल डालते जाओ और पैसे लेते जाओ। व्यापारी ने अपने गोदाम का सारा अकूत तेल उस कुण्डी में डाल दिया किन्तु तेल से वह कुण्डी नहीं भरी, आखिर तेल के व्यापारी न भैसा सठ से यह कहते हुए माफी मागी कि मेरे पास अब और अधिक तेल नहीं है तथा अपने द्वागा किये गये सौदे के लिए माफी चाहता हूँ तथा साथ ही विनम्रतापूर्वक कुण्डी

नहीं भरने का रहस्य पूछा तो भैसा सेठ ने कहा, 'मैं वही भैसा सेठ हूँ जिसके बाल के बदले तूने मेरी मा को रुपये नहीं दिये थे और कहा था मूछ के बदले रुपये लेने वाले बहुत भैसा सेठ आते हैं। तेल नहीं भरने का कारण मातेश्वरी भगवती का चमत्कार है। जिसका मैं अकिञ्चन सेवक हूँ' भैसा सेठ ने तेल व्यापारी को सौदे के अनुसार पूरा तेल नहीं देन पर अपनी टांग के नीचे से निकाला। कहते हैं तब से वहा एक लांग की धोती बाधते हैं। ऐसा भी कहते हैं कि भगवती माता की कृपा से कुण्डी में डाला गया सारा तेल डीडवाना आ गया। यह भी कहा जाता है कि गुजरात में उसके बाद तोलने की तखड़ी में चार के स्थान पर तीन डोरिया ही लगाते हैं।

(२) लक्खी बनजारे का भी एक कथानक है। उसने माताजी के मंदिर के छोक में पानी सग्रह के लिए एक हौज बनवाया। इस हौज (टाके) में वर्षा का पानी एकत्रित किया जाता है। कहते हैं कि वह लक्खी बनजारा अपनी बालद लेकर जा रहा था। उसके पीछे डाकू लग गये। बनजारा मंदिर में आकर स्का तथा माता के चरणों में गिरकर माता की स्तुति करने लगा। उसका पड़े-पड़े ही आवाज आई 'जा चला जा तेरा कोई अनिष्ट नहीं होगा।' लक्खी बनजारे ने मान्यता भागी, हे मा। यदि मेरी लाज रह गई तो मैं मेरे हाथ से तेरे मंदिर में टाका बनवाऊगा।' यह कहकर वह चला गया। देवी कृपा से डाकुओं की मति ऐसी फिरी कि वे दूसरी तरफ चले गये। लक्खी बनजारा अपने नियत स्थान पर अपना माल रखकर पुन माता की शरण में आया और उसने अपने हाथ से १६ खम्भे का टाका माता के मंदिर में बनाया जो अभी भी मंदिर के छोक में है तथा उसमें वर्षा के जल का सग्रह किया जाता है।

(३) माता के चमत्कार के सम्बन्ध में मंदिर के पुजारी जी ने बताया कि इस इलाके में एक अग्रेज अफसर आया था। अग्रेज देवी देवताओं आदि के अस्तित्व को नहीं मानता था। एक बार नमक की झील में पानी ही पानी भर गया। झील से पानी निकलवाने का यत्न निरन्तर कई दिन तक उस अग्रेज अफसर ने किया किन्तु जितना पानी रोज झील से निकाला जाता उतना ही पानी प्राप्त फिर झील में भर जाता। यह क्रम कई दिनों तक चलता रहा। एक दिन वह अग्रेज अधिकारी इधर से जा रहा था। उसे ८-९ साल की

एक बालिका मिली। उस बालिका ने उस अग्रेज अफसर को आवाज लगाई तथा कहा 'अभी तेर समझ म आई कि नहीं'। अग्रेज अफसर उस बालिका के वथन के रहस्य को नहीं समझ सका, किन्तु उसका सहायक जो हिन्दू था, माता के कहे गये रहस्यपूर्ण वाक्य का अर्थ समझ गया तथा उसने अग्रेज अफसर से कहा यह आदिशक्ति है, उसके वरदान से ही यहा नमक की खान बनी है, आपने इसकी स्तुति नहीं की, इसके हाथ नहीं जोड़े, यही कारण है कि झील से पानी नहीं निम्नल पा रहा है। 'आप माता के अस्तित्व को स्वीकार करत हुए उस परम आद्याशक्ति भगवती के प्रति आस्था प्रकट करते हुए उनसे प्राथना करें। भगवती भक्तों के मनोरथ को अवश्य पूर्ण करती है।' अग्रेज अधिकारी ने माता की स्तुति की। इसके बाद झील का पानी स्वत ही अपने आप सूख गया। अग्रेज ने इस अद्भुत चमत्कार को देखकर मंदिर में, मंदिर के बाईं ओर अपनी श्रद्धा के प्रतीकस्वरूप एक वरामदा बनवाया जिसका शिलालेख भी है। वरामदा अभी भी ठीक दशा में है।

- इस माता को— पेड़ से प्रगट होने के कारण पाड़ा माता कहते हैं
- नमक का सर हाने से इसे नमक वी माता भी कहते हैं
- गाव के बाहर हाने से इसे बारली माता भी कहते हैं
- इस भैसा माता भी कहते हैं, क्याकि (१) भैसा का यह वध कर रही है तथा (२) भैसा सेठ ने मंदिर का निर्माण कराया था

पारीकों के अलावा माहेश्वरियों के कई अवटको, कुलडिया जाटो, फूल मालियो एवं अन्य जातियों की भी यह कुलदेवी है।

प्रारम्भ से ही इस माता के पुजारी सेवक जाति के हैं तथा वर्तमान में इसके पुजारी पूनमचदजी सेवक हैं।

माता की सेवा-पूजा एवं पुजारी का योग-क्षेम भक्तों द्वारा चढ़ाये गये चढ़ावे से ही होता है।

मंदिर में यात्रियों के रहने-ठहरने के लिए ३-४ कमर हैं।

औरंगजेब के समय म माता की दोनों मूर्तियां तो सुरक्षित रही किन्तु मंदिर के बाहरी हिस्से की मूर्तियों को छाड़ित किया गया। आतहायियों को माता ने कन्या रूप में ही भगाया, जिससे मंदिर भी-मूल मूर्तिया सुरक्षित रह सकी।

## पाण्डुका पण्डोखा पाण्डुक्या माता

पाण्डुक्या माताजी के निज मंदिर में तीन मूर्तियां हैं। मध्य में महिपासुर-मर्दिनी माताजी की मूर्ति है, बाईं ओर (मूर्ति के दाहिनी ओर) कुन्ती (पाण्डवों की माता) की मूर्ति है। यह मूर्ति माताजी की मूर्ति से छोटी है तथा दाहिनी ओर (माताजी की मूर्ति के बाईं ओर) सिंह पर सवार दुर्गा माता की सगमरमर की मूर्ति है जो वर्तमान में ही स्थापित की गई है। पाण्डुका माता का विश्राम महिपासुर-मर्दिनी के रूप में है। वह महिप को मारती हुई है। पाण्डुका माता एवं कुन्ती की मूर्तियां नवीं शताब्दी की हैं।

मंदिर के निर्माण के सम्बन्ध में जाधपुर राज्य के इतिहास<sup>१</sup> के अनुसार यह मेड़ता से ४ मील पश्चिम में है। गाव के बाहर पुराने मंदिरों के सामान से बना हुआ एक प्राचीन कुआ है। इस पर दिल्ली के सुल्तान अलाउद्दीन खिलजी के समय वि स १३५८ (चैत्रादि १९५९) वैशाख बदी ६ (ई स १३०२ ता २० मार्च) का एक लेख है। मेड़ते में उसने अपना एक फौजदार नियुक्त किया था।

कुए के निकट एक माता का मंदिर है।

माता के वर्तमान पुजारी सोहनलालजी वैष्णव है, जिनका परिवार सन् १९६० के लगभग यहां आया था। इसके पूर्व के पुजारियों की जानकारी नहीं हो सकी। पुजारी जी ने बताया कि इसके पहले कई पुजारी आये और चले गये।

मंदिर में सवत् २०१८ की आसाढ़ की पूनम को कन्हैयालालजी सुनार ने कुछ निर्माण कार्य कराया जिसमें कुन्ती माता का भवन (रहने का मकान जिसे कुती माता का नाम दिया गया) तथा पुजारी जी के रहने हेतु कमरे बनवाये। अजमेर के एक कायस्थ परिवार ने मंदिर में तिबारे का निर्माण कराया।

घटोड व्यासो (पारीक) द्वारा भी यात्रियों के विश्राम हेतु एक कमरे का निर्माण कराया गया। मंदिर में एक शिलालेख सम्वत् १३५८ का है जैसा कि पूर्व में वर्णित किया गया है।

<sup>१</sup> जाधपुर राज्य का इतिहास (प्रथम घण्ड), ले गौरीशक्ति द्वारा आज्ञा पृ ३३ ३४

माता की मूर्ति चर्तुभुजी है। माता की सवारी सिंह पर है। माता के मंदिर के सामने सीढ़ियों के बाईं ओर शिवजी का चित्र, दीवार पर चित्रित है।

माता का स्वरूप महिपासुर मर्दिनी का है जिसका त्रिशूल भैमे के माथ पर है।

मंदिर मेड़ता सिटी से पश्चिम में ६ कि मी मेड़ता रोड से पूर्व की ओर ९ कि मी की दूरी पर है। माता का मंदिर जगल में प्राकृतिक वातावरण से परिपूर्ण स्थान पर अवस्थित है। मंदिर पहाड़ी की एक ऊची टेकरी पर बना हुआ है।

मंदिर के बाहर गणेशजी की एक प्रतिमा है।

माता के सामने सभा-मण्डप में दो सिंह हैं जो अति प्राचीन हैं। इनमें से एक सिंह का धड़ खण्डित है तथा दूसरे सिंह का एक पैर खण्डित है। मंदिर के सामने एक तालाब है।

मंदिर के बाहर ही माता के दो भक्त जो गुरु चले के स्प में यहाँ रहते थे उनकी समाधियाँ हैं जो काफी पुरानी हैं।

मंदिर के पास अनेकानेक खण्डित-मूर्तियाँ इधर-उधर बिखरी पड़ी हैं। सभव है मंदिर की अनेकानेक मूर्तियों को खण्डित किया गया हो एवं मंदिर का भी तोड़ा गया हो।

मंदिर के योग-क्षेत्र हेतु १०० बीघा पर्याप्ती जमीन है।

पाण्डुका माता का नामबद्ध इस आधार पर हुआ कि पाण्डुओं ने बनवास की अवधि में यहाँ तपस्या की थी। अतः यह स्थान पाण्डुओं के ओरण नाम से जाना जाता है। पाण्डुओं का ओरण हेने से पाण्डुका माता कहलाई। मूर्ति महिपासुर मर्दिनी की है। पाण्डुओं द्वारा तपस्या करने के कारण उनकी माता कुन्ती की भी यहाँ मूर्ति है।

माता का एक अन्य मंदिर पुण्ड्रवर्धन पीठ में 'पाडला'<sup>१</sup> माता के नाम से है जहाँ देवी 'पाडला' नाम से विराजमान है।

<sup>१</sup> कल्याण-संक्षिप्त दर्शी भागवत अङ्ग वर्ष ३४ (१९६०) पृ ४०१

पराशक्ति का एक मंदिर गाव- भरुच से नर्बदा प्रवाह की ओर उत्तर तट के तीर्थों के अन्तर्गत यह एक तीर्थ स्थान है। यहा गणिता तीर्थ म पराशक्ति का नित्य सानिध्य है। (यह स्थान पश्चिम रेल्वे की बांबई-वडौदा लाइन पर है)।

विद्वानों के अनुसार उक्त दोना माताए कुलदेवियों के रूप में एक ही है तथापि प श्रीपति शास्त्री, श्री एस एल शर्मा से उपरोक्तानुसार दो भिन्न माताए मानी हैं।

पारीको के निम्न अवटकों की ये कुलदेविया है—

१ ओजाया	व्यास	मकराना की झील	परा
२ गोलबाल	व्यास	मकराना की झील	परा
३ ओहोरा	व्यास	मकराना की झील	परा
४ घुघाट	तिवाड़ी	मकराना की झील	परा
५ अगरेटा	तिवाड़ी	मकराना की झील	परा
६ ठकुरो	जोशी	मकराना की झील	परा
७ बुलबुला	जोशी	मकराना की झील	परा
८ खटोड़ (खटवड़)	व्यास	पाण्डरोई (मेडता के पास)	पाण्डुक्याँ
९ मेडतबाल	तिवाड़ी	पाण्डरोई (मेडता के पास)	पाण्डुक्याँ

चूंकि पारीको की दोनों कुल देवी माताए एक ही स्वरूप महिषासुर मर्दिनी की है अत नाम भेद एव अलग-अलग स्थान होते हुए भी परा, पराख्या, पाढोख्या, पड़ाय, पाडला, पाढा एव पाण्डोख्या, पाण्डुक्या एक ही माता है। इन सभी अवटकों की कुलदेविया है।

१ जाधपुर राज्य का इतिहास (प्रथम खण्ड) ल गौरीशक्ति हीराचंद आड्जा पु ३३

## बीजल : विद्युद्रूपा माता

विद्युद्रूपा का शाब्दिक अर्थ है विद्युत् के समान प्रभा या काति वाली। विद्युद्रूपा का ही अपभ्रंश रूप बीजल है।

### बीजल की पौराणिकता

मधु-कैटभ नामक दो राक्षसों की उत्पत्ति जब हुई और वे जब तमण हो गयों तो उनके मन में यह प्रश्न उठा कि हमारी उत्पत्ति क्यों हुई और किसने की। हमारा जन्मदाता कौन है? वे जन्मदाता पिता कहाँ हैं?

मधु-कैटभ को देवी का वरदान देने के सदर्भ में देवी भागवत में यह कथानक आया है कि मधु-कैटभ जब किसी निषय पर नहीं पहुँचे और इस विषय पर चितन कर रहे थे तभी 'आकाश में गूँजता हुआ सुन्दर वाघीज मत्र 'ए' सुनार्ह पड़ा। सुनकर वे दोनों उसका अभ्यास करने में तत्पर हो गये। तब उस वाघीज की आकृति आकाश में इस प्रकार चमक उठी माना विजली कौँध रही हो। फिर तो उन्होंने विचार कि यही मत्र है, इसमें कुछ भी सदैह वरने की बात नहीं। ध्यान लगाया तो उसी संगुण मत्र की झाँकी उपलब्ध हुई। अब तो वे उसी मत्र का ध्यान और जप करने में लग गये। अन्नजल छोड़ दिया। मन और इन्द्रियों पर विजय प्राप्त कर ली। यो एक हजार वर्ष तक उन्होंने बड़ी कठिन तपस्या की। फिर तो वह परम आराध्य शक्ति मधु और कैटभ पर प्रसन्न हो गई। उस समय वे निष्ठित होकर तप कर रहे थे। उनकी स्थिति देखकर शक्ति का मन कृपा से ओत-प्रोत हो गया। अत आकाशवाणी होने लगी— 'दैत्या! तुम्हारी तपस्या से मैं प्रसन्न हूँ। स्वच्छानुसार वर माना, उसे मैं पूर्ण कर दूँ।'

सुनने के पश्चात् मधु और कैटभ ने कहा— 'सुन्दर घृत का पालन करने वाली देवी! तुम हमें स्वच्छा-मरण का वर देने की कृपा करो।'

तुम्हे मार सकेगी, यह निश्चित है, देवता और दानव किसी से भी तुम दोनों भाइ पराजित न हो सकोगे।’<sup>१</sup>

यही महामाया आद्याशक्ति भगवती देवी वाष्पीज के रूप में बिजली के सदृश्य कौधी। विद्युद्मुपा शक्ति आद्या शक्ति भगवती का ही रूप है।

देवीभागवत के तीसरे स्कन्ध में भगवती आद्या शक्ति के प्रभाव का जो वर्णन किया गया है उसमें देवी के स्वरूप का विस्तृत वर्णन करते हुए लिखा है— वे ऐसी प्रभापूर्ण देवी थी, मानो करोड़ों बिजलियों एक साथ चमक रही है।’<sup>२</sup>

बीजल माता (विद्युत् प्रभा) का प्रसग वराह पुराण में भी आया है। ‘अन्धक’ नामक राक्षस ने जब सभी देवताओं को सताना प्रारम्भ कर दिया तथा देवता जब उसके अत्याचार से पीड़ित हो गये तो वे ब्रह्माजी के पास गये, देवताओं की बात सुनकर ब्रह्माजी शिवजी के पास गये तथा ब्रह्माजी ने वहाँ विष्णु का ध्यान किया तब विष्णु भी वहाँ प्रगट हो गये। तीनों देव परस्पर प्रेमपूर्वक देखने लगे। उनकी इस दिव्य दृष्टि से तत्काल एक कन्या का प्रादुर्भाव हुआ जिसका स्वरूप परम दिव्य था। उसके अग नीले कमल के समान श्यामल थे तथा उसके सिर के बाल भी नीले धुधराले एवं मुडे हुए थे। उसकी नासिका, ललाट और मुख की सुन्दरता असीम थी। विश्वरूपा ने शास्त्रों में जो अग्निजिह्वा के अग लक्षण बताये हैं, वे सभी सुन्दर प्रतिष्ठा पाने वाली उस कुमारी कन्या में एकत्र दिखाई देते थे। ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर इन तीनों देवताओं ने उस दिव्य कन्या को देखकर पूछा— ‘शुभे! तुम कौन हो? और विज्ञानमयी! देवी! तुम क्या करना चाहती हो?’ इस पर शुक्ल, कृष्ण एवं रक्त इन तीन वर्णों से सुशोभित उस कन्या ने कहा— दव श्रेष्ठा! मैं तो आप लोगों की दृष्टि से ही उत्पन्न हुई हूँ। क्या आप लोग अपने से ही उत्पन्न अपनी पारमेश्वरी शक्ति मुझ कन्या को नहीं पहचानते?’

दिव्य कुमारी का यह वचन सुनकर तीनों देवताओं ने प्रसन्न होकर उसे वर दिया— देवी! तुम्हारा नाम त्रिक्ला होगा। तुम विश्व की सदा रक्षा करोगी।

<sup>१</sup> कल्याण—समिति देवी भगवत अक्ष वर्ष ३४ (१९६०) पृ ५०

<sup>२</sup> उपरात्र पृ १०७

महाभागे। गुणों के अनुसार तुम्हारे अन्य भी बहुत से नाम होंगे और उन नामों में सम्पूर्ण कार्यों को करने की शक्ति होगी। देवी! तुममें जो ये तीन वर्ण दिखाई पड़ते हैं तुम इनसे अपनी तीन मूर्तियाँ बना लो।'

देवताओं के इस प्रकार कहने पर उस कुमारी ने अपने श्वेत, रक्त और श्यामल रंग से युक्त तीन शरीर बना लिये। ब्रह्मा के अश से 'ब्राह्मी' (सरस्वती) नामक मगलमयी सौम्यरूपिणी शक्ति उत्पन्न हुई जो प्रजाओं की सृष्टि करती है। सूक्ष्म कटिभाग, सुन्दर रूप तथा लालवर्ण वाली जो दूसरी कन्या थी, वह वैष्णवी कहलाई। उसके हाथ में शश एवं चक्र सुशोभित हो रहे थे। वह विष्णु की बला कही जाती है तथा अखिल विश्व का पालन करती है जिसे विष्णु माया भी कहते हैं। काले रंग से शोभा पान वली रुद्र की शक्ति थी जिसने हाथ में त्रिशूल ले रखा था, जिसके दाँत बड़े विकराल थे, वह जगत् का सहार करने वाली 'स्त्राणी' है। तीनों देवियों तपस्या करने को चली गई। ब्राह्मी शक्ति श्वेत गिरि पर, वैष्णवी शक्ति मदराचल पर्वत पर तथा रुद्र की शक्ति 'नीलगिरि' पर चली गई।

कुछ समय पश्चात् ब्रह्माजी प्रजाओं की सृष्टि में तत्पर हुए। उन्होंने योगाभ्यास के सहारे अपने हृदय में ध्यान लगाया तो श्वेत पर्वत पर स्थित 'सृष्टि' कुमारी की तपस्या की बात उनकी समझ में आ गई। ब्रह्मा जी द्वारा फिर सृष्टि की रचना की गई। पहले मानस पुत्रों की ओर फिर स्वेदज, उद्दिज जरायुज और अण्डज इन चार प्रकार के प्राणियों की उत्पत्ति हुई। इन सबकी रचना में सृष्टि देवी का ही हाथ है।

यह सृष्टि देवी सम्पूर्ण अक्षरों से 'युक्त होने पर 'वागीशा' और कही 'सरस्वती' कही जाती है। इसे 'ज्ञान निधि' अथवा 'विभावरी' देवी भी कहते हैं। वेदों की उत्पत्ति भी इसी से हुई है।

वैष्णवी देवी तपस्या करने के लिए मदराचल पर्वत पर गई थी— उस देवी ने कौमाग्रत धारण कर विशाल क्षेत्र में एकाकी रहकर कठोर तप आरम्भ मिया। बहुत दिनों तक तपस्या करने के पश्चात् उस देवी के मन में विक्षोभ उत्पन्न हुआ, जिससे अन्य बहुत-सी कुमारियाँ उत्पन्न हो गईं। उनके नेत्र बड़े

के शरीर से दिव्य प्रकाश फैल रहा था। ऐसी अनेक कुमारियाँ उस वैष्णवी देवी के शरीर से प्रगट हुई थीं, जिनके लिए देवी ने नगर एवं महलों का निर्माण किया। देवी के शरीर से प्रगट प्रधान-प्रधान कन्याओं के नाम इस प्रकार हैं— विद्युतप्रभा, चन्द्रकान्ति, सूर्यकान्ति, गम्भीरा, चारुकशी, सुजाता, मुक्तकेशिनी, उर्वशी, शशिनी, शीलमण्डिता, चारुकन्या, विशालाक्षी, धन्या, चन्द्रप्रभा, स्वयंप्रभा चारुमुखी, शिवदूती, विभावरी, जया, विजया, जयन्ती अपराजिता।

वहाँ नारदमुनि के आगमन पर उन्हाने देवी के सौरदर्य को देखा तथा बाद में महिषासुर को देवी की सुन्दरता का बखान किया। महिषासुर का देवी से युद्ध होने पर देवी के शरीर से प्रगट अन्य शक्तियाँ ने, जिनमें विद्युतप्रभा भी थी, दैत्यों के सहार म अद्भुत पराक्रम दिखाया।

बिजल माता (विद्युतप्रभा) का मंदिर नागोर जिलान्तर्गत डेगाना के पास कुबाड़िया खेड़ा की ढाणी के पश्चिम की ओर एक टेकरी पर अवस्थित है। कुबाड़िया खेड़ा, चादारूण के पूर्व में दो कि.मी की दूरी पर है। डेगाना से चादारूण पॉच कि.मी है। जयपुर जोधपुर मार्ग पर डेगाना रेल्वे जम्शन है। सड़क मार्ग से भी डेगाना के लिए सुगम साधन उपलब्ध है।\*

कहत है पहल यह गाँव सातारूण था जो बाद में उजड गया। सन् १८९६-९७ में भीषण अकाल पड़ा तथा भयकर धीमारी से ग्रसित यह गाँव उजड गया। अधिकाश व्यक्ति कालकवलित हो गये शेष ने यह गाँव छोड दिया। इसके पश्चिम में नवीन गाँव ब्रमा जा चांदारूण के नाम से जाना जाता है।<sup>१</sup>

यह स्थान अत्यन्त प्राचीन है। माता का स्थान जिस टेकरी पर है वहाँ ठीकरियाँ घुटायत में मिलती हैं। ये ठीकरिया पत्थर के समान कठोर व मजबूत हैं।

मंदिर निर्माण के सम्बन्ध में ऐसा बताया गया है कि यह मंदिर मालियों द्वारा बनाया गया है। मंदिर का चबूतरा महाजना द्वारा बनाया गया बताते हैं।

\* माता का अवधारण निक २ ६ १९९९ का तात्काल गया। साध म वि शाभित एवं माहित भी थे। माता का स्थान बताने के लिए हमार साध डेगाना से श्री नृसिंह प्रसाद जी (बठाया) पुराण व श्री अराक कुमार जी याहरा गये।

<sup>१</sup> श्री जगन्नाथ प्रसाद पानी के पर के आधार पर।

मंदिर के पास झोपड़ी में रहने वाले सज्जन ने ऐसा बताया कि एक नवरात्रा में कोई पण्डित (पारीक?) यहाँ आता है और नौ दिन तक यहाँ रहकर पूजा-पाठ करता है।

## माता का स्वरूप

माता की प्रतिमा एक चोकोर पत्थर पर उत्कीर्ण है। माता के दाहिने हाथ में ब्रिशूल व बाये हाथ में मुद्गर है जो माता के वाहन सिंह के मस्तक पर रखा है। माता के मंदिर में ही माता की प्रतिमा के पास दो खण्डित मूर्तियाँ और हैं जो काफी प्राचीन प्रतीत होती हैं।

माता का यह मंदिर 'ओरण' (जगल) के मध्य में बना हुआ है। एक खेजड़ी के नीचे लगभग दस फुट लम्बे और दस फुट चाढ़े चबूतरे पर निर्मित माताजी का मंदिर, जैसा पूर्व में अनित किया गया है, एक छोटी गुमटी के रूप में है। माता के दर्शन, दर्शनार्थी बैठकर ही कर सकते हैं। मंदिर में कोई परिक्रमा स्थल नहीं है। माता का ओरण मूलत बीस बीघा का था जो अब अतिक्रमण होते-होते आधा ही रह गया बताया। इस ओरण क्षेत्र में खेजड़ी व कैर के पेड़ बहुतायत में हैं। माता के मंदिर के पास दो झोपड़ियों के अतिरिक्त कोई मकान, झोपड़ी या आबादी नहीं है। माता के मंदिर के उत्तर में खेजड़ी के ही नीचे भैरुजी का स्थान है।

माता की नियमित रूप से पूजा-अर्चना नहीं होती।

माताजी के सामिय एवं निरामिय दोनों प्रकार के भोग लगते हैं।

माता सर्वसमाज द्वारा पूजित है। स्थानीय भक्त माता की चामुण्डा एवं कालका माता के रूप में भी पूजते हैं। इसे कुवाड़िया खेड़ा की माता एवं पुन्द्रायिनी माता भी कहते हैं।

## माताजी के चमत्कार

यो तो माता के अनेकानेक चमत्कार है। उनमें से कतिपय का उल्लेख किया जा रहा है।

ऐमा कहते हैं कि माता के स्थान पर पहले खजाना था। वह यजाना एक सही जोड़ी में था जो उष्माल क्षेत्र के द्वारा निष्कर्ता था। यह

के ही गाँव मिठड़िया (यहाँ से ३ कि.मी. दूर) के बावरिया ने खजाने को निकालने हेतु खुदाई प्रारम्भ की। खुदाई प्रारम्भ करते ही सर्प आने लगे, जब उन्होंने सर्पों को मारना चाहा तो उनके गाँव मीठड़िया में आग लग गई। वे खजाने की खुदाई को छोड़कर अपने गाँव आग बुझाने को भागे। वे पुन खजाना प्राप्त करने हेतु खुदाई करने आये तो उनके सिर पर जो वस्त्र (साफा, पगड़ी, क्षण्डा) आदि था उसम आग लग गई, वे घबराकर भाग गये, फिर कभी उस ओर नहीं आये।

चूंकि माँ ने अप्रिप्रज्वलित की थी इमलिए इसका नाम विद्युद्रूपा पड़ा है।

एक अन्य कथानक के अनुसार लगभग १० वर्ष पूर्व (१९८८) की घटना है। बीकानेर के किसी व्यक्ति की बहू की बोली बद हो गई। किसी ने उसे माताजी की मान्यता करने एवं उनके दरबार में जाने की सलाह दी। इसके पूर्व उसमा इलाज सभी स्थानों पर कराया जा चुका था। अन्तत निराश होकर वे माता की शरण में आये। दीन-दुखियों के कष्ट निवारण माँ करती है, उस स्त्री की बाली पुन आ गई। उस भक्त द्वाग माता के एक चाँदी की जीभ चढ़ाई गई।

माता के मंदिर के पास जुझारों के दो चबूतरे हैं। ऐसा बताया गया कि जब यह गाँव उआड हुआ तब ये जुझार बने थे। आततायिया से लडते-लडते इन्होंने वीर मर्ति प्राप्त की थी। इन देवलियों पर सम्बत् ११३०, ११२०, १११० के लेख भी उत्कीर्ण हैं।

मंदिर के पास पानी का एक विशाल टाका है तथा वर्ष १९९८ में पानी की टक्की का निर्माण हुआ है। पास ही जानवरों के पानी पीने के लिए एक खेळी बनी हुई है।

एक जाट के लड़का नहीं हाता था। उसने माताजी की मान्यता की। माता की कृपा से उसके लड़का हो गया। वह जाट एवं उसका परिवार हर माह शुक्ल पक्ष की अष्टमी को माता के दरबार में आता है। कदाचित् अपरिहार्य कारण से अष्टमी का नहीं आ पाने पर वह चौदस को माता के यहाँ आता है।

पारीओं के निम्न अवटकों की यह कुल देवी है—

१ विलसरा विणसरा

जोशी

२ वावर

तिवाड़ी

## ३ वव्या\*

## तिवाड़ी

\* बींजल माता के सम्बन्ध में यही यह बताया गया है कि बींजराजजी के बशज (वव्या अवटक के तिवाड़ी) अपनी कुलदेवी का नहीं पूजत। इसका कारण यह बताया कि माता ने किसी बात पर रुक्ष हाकर कहा बताया कि सुबह हान स पहले रात रात म अपना स्थान छाड़कर चले जाओ अन्यथा भारी अनिट हा जायगा। माता की आज्ञा स व चल गय तथा इसक बाद व नृसिंहजी की पूजा करने लग।

श्री जगदीश प्रसाद जी तिवाड़ी (वव्या) पाली जिनकी कुलदेवी बींजल माता है। वव्या तिवाड़ियों द्वारा माता नहीं पूजने का एक कारण लखक का प्रेषित किया है जा इस प्रकार है—

माता द्वारा वव्या तिवाड़ियों के त्याग सम्बन्धी किंवदन्ती बड़ी पादु, जिला नामीर निवासी वयोवृद्ध राव श्री गुलाबचंद द्वारा निम प्रकार बताई गई—

ग्राम सातारूण' में वव्या तिवाड़िया के काफी घर थे। उनमें श्री बींजराज नामक व्यक्ति बड़े ही तपस्वी तथा मातृभक्त थे। अत उन पर माता की कृपा थी। कहत है उन्ह माता बींजल साक्षात् दर्शन देती थीं। उनके याद करने पर माता प्रगट होती एव यात्र करने का कारण पूछती और उनकी समस्या का तुस्तु समाधान करती। स्पष्ट है, जिस व्यक्ति पर ऐसी मातृकृपा हो उसके यहीं किस तुस्तु की कहाँ कमी रहती है? चारा तरफ सम्पन्नता ही सम्पन्नता थी। बींजराज जी की भौतिक एव आध्यात्मिक सम्पन्नता देखकर अन्य भाइयों को अन्दर ही अन्दर जलन होती थी पर वे मन मसोस कर रह जाते। बींजराज जी पर मातृ कृपा पूर समाज म जाहिर थी। अन्य द्वारी बन्धु भौके की तलाश म थ कि किस तरह उन्हें गिराया जाय। भागवान् जिस पर कृपा दृष्टि रखे उसका बालं भी बाका नहीं हो सकता। लकिन इसका एक दूसरा पक्ष भी है। एक लोकोक्ति है रविहैं की इक दिवस म तीन अवस्था होय। अर्थात् समय एक जैसा नहीं रहता। उस व्यक्ति म ईश्वर घमण्ड रूपी दीमक लगा देता है जा उस धरि धरि खा जाती है। एक लोकोक्ति है अतिगर्वेण लक्षा नष्ट।' अर्थात् घमण्ड स आदमी का पतन होता है। तिवाड़ी बींजराज जी के साथ भी एसा ही कुछ हुआ।

एक दिवस प्रात काल ग्राम सातारूण म रावजी बही लकर पद्धार। पारीकों के बास में स्थित एक सामूहिक स्थान जिसे दृष्टाई कहा जाता है वहाँ चैठ गये और सभी यजमानों के नवागतुकों के नाम अवित करने लगे। सभी भाइयों ने अपने अपने परिवार के नव सदस्यों के नाम रावजी की बही म लिखवाय। बींजराज जी नाम लिखान हतु नहीं आय। उन्हें बुलवाया गया। सभी भाइयों न कहा कि आर। भाई तूने अपने परिवार के नवीन सदस्यों के नाम नहीं लिखवाय क्या बात है? मै बाद म लिखवा दूगा श्री बींजराज ने उत्तर दिया। इतन पर एक भाई जा उनस अत्यधिक द्वेष रखता था कटाक्ष करते हुए बाला, आप बाद में नाम

लिखवा कर रावजी का कौनसा सिंह दक्षिणा म द रह हा ? बींजराज न इस चुनौती के रूप म निया और व इस कथन का बिना तौल किय ब बिना महत्व समझ बात उठ ही हा। मैं रावजी का दक्षिणास्वरूप सिंह ही दूगा। इतना कहकर उन्होंने अपन परिवार क नवीन सन्त्स्यों के नाम राव की यही म लिखवा दिय। अब बींजराज जी अच्छी खासी दक्षिणा रावजी का तत् हुए बाल कि आपका सिंह भी निया जायगा। घाणा के तुरन्त बाल उनका ध्यान आया कि सिंह कहाँ स लामर देंग ? इतन म सभी भाईयों न कहा कि सिंह घरों म नहीं पाल जात जा आप रावजी का द लेंगे। उन्होंने बींजराज जी स उत्त बचन पुन बापरा लन का अनुराग किया लकिन बींजराज जी भी कहा मानन बाल थ। उन्होंने तुरन्त मातश्वरी बींजल का ध्यान किया। आङ्गन पर माता प्रगट हुई और बाली बल। मुझ इस समय यार करन का क्या कारण ? ह माता ! मुझ सिंह चाहिए श्री बींजराज न उत्त निया। माता न पूछा सिंह क्यों चाहिए तुम्हें पुत्र ? ह माता ! मैं रावजी का दक्षिणा म सिंह दम का बचन निया है इसलिए मुझ सिंह दआ। श्री बींजराज न कहा।

मातश्वरी बींजरावजी की इस दक्षिणा क बचन स अति कुपित हुई। उन्होंने कहा मिंह ता मरा बाहन है उसका टान बर तून उपित कृत्य नहीं किया। फिर भी तो निया हुआ बचन रखैंगी पर मरी भी एक शर्त है आज क बाद तुम्ह मरी पूजा और यह स्थान छाडना हागा। इतना कहकर माता अन्तर्धान हा गई। बींजराज जी क बाड म जा गाये व बछड़ ध व सभी सिंह हा गय। उन्होंने रावजी का कहा जा अच्छा सिंह हा उस ल ला। रावजी न माता का मन ही मन प्रणाम किया तथा बींजराजजी का बचन पूरा हुआ, एसा कहा।

माता क आदरा का शिराधोर्य समझकर व अपन कुतुम्ब सहित ग्राम सातारूण स गल निय। खाना हान पर उन्ह ध्यान आया कि माता ने स्थान त्याग क साथ साथ उनकी पूजा का त्याग करन का भी आनंद दिया है। अब व किसकी पूजा करेंग ? इस प्रश्न के समाधान हतु उन्होंने मातश्वरी बींजल का फिर आङ्गन किया और व किसकी पूजा करेंग यह बतान का निवन्न किया। माता ने कहा, सूर्यास्त क समय जिस स्थान पर तुम्हारी गाड़ी का पहिया रुक जाय वहाँ जपीन की खुलाई करना एव खुलाई म जा मूर्ति प्राप्त हा उसकी पूजा करना। इतना कहकर माता पुर अन्तर्धान हो गई। कहत हैं बींजराजजी की बैलगाड़ी सातारूण स तिलानस ग्राम आकर रही। वहाँ उन सूर्यास्त हा गया। उस स्थान पर उन्होंने खुलाई की ता नरमिह भगवान् की मूर्ति निकली। उस गाँव म आज भी नरसिंह भगवान् का एक भव्य मनि है और य लाग आज भी नरसिंह भगवान् की पूजा करत हैं।

इस प्रकार अन्या नियाडिया म बींजराज जी क बशजों द्वारा माता बींजल की पूजा नहीं की जाकर नरसिंह भगवान् की पूजा की जाती है। य लाग नवरात्रि भी नहीं करत।

## ललिता\* माता

दक्षिण भारत के दक्षिणमार्ग शाक्तों के मत से ललिता सुन्दरी देवी न, जो औंखों को चौधिया देने वाली आभा से युक्त है, चण्डी का स्थान ले लिया है। इनके यज्ञ, पूजा आदि की पद्धति चण्डी के समान ही है। चण्डी (दुर्गा) पाठ के स्थान पर ललितापाख्यान, ललितसहस्रनाम, ललिता-व्रिशती का पाठ होता है। ये तीनों ग्रथ ब्राह्मण्ड पुराण से लिये गये हैं। ललितोपाख्यान में देवी द्वारा भण्डासुर तथा अन्य देत्या के वध का वर्णन है। ललिता की पूजा में पशुबलि निषिद्ध है।<sup>१</sup>

ललिता-परम सुन्दरी या ललिता देवी-रूपिणी है।<sup>२</sup>

आद्यामहाशक्ति अगाध और अपार सौन्दर्य-राशि की भी स्वामिनी है। वे त्रिपुर की अधिष्ठात्री है, इसलिए महात्रिपुरसुन्दरी कही जाती है। ललिता सुन्दरी का ही पर्यायवाची है। ललिता, परा, परम-भट्टारिका आदि नामों से पूजित चरम सौदर्य रूपिणी माता को श्री चक्र से व्यक्त किया जाता है और इनकी आराधना को श्री विद्या कहते हैं। श्री शब्द का अर्थ सामान्यतया 'लक्ष्मी' लिया जाता है परन्तु 'श्री' तो उस परम आद्या महाशक्ति का वाचक है, जो श्री चक्र में निवास करती है। इसी के माध्यम से श्री तत्व का चिन्तन किया जाता है।<sup>३</sup>

ललिता देवी का प्रादुर्भाव और भण्ड नामक असुर के वध का सक्षिप्त कथानक निम्न प्रकार है।<sup>४</sup>

\* दुर्घ विद्वानों न ललिता माता का ललिता के साथ वृद्धी व लाहण के नाम से भी सम्बाधित किया है।

१ हिन्दू धर्मकाण्ड डॉ राजवली पाण्ड्य पृ ५६६

२ कल्याण सक्षिप्त देवी भागवताक वर्ण ३४ (१९८०) गायत्री सहस्रनाम पृ ६४३

३ श्री ललिता सहस्र नामस्तोत्रम् प्रस्तावना गायत्र नामपर्यग बहरा पृ १ (१२)

४ ललिता ज्ञान विज्ञान शक्ति तत्त्व नाम व ललिता नामनामजी वा ललिता व ललिता व ललिता

पूर्वकाल मे भण्ड नाम के असुर ने श्री शिवजी की आराधना की और उन से अभयरूप वर प्राप्त कर त्रिलोकाधिपत्य करते हुए देवताओं के हविर्भाग का भी स्वयमेव भोग करना आरम्भ कर दिया। इन्द्राणी उसके डर से गौरी के निकट आश्रयार्थ गयी। इधर भण्ड ने विशुक्र को पृथ्वी का और विष्णु को पाताल का आधिपत्य दे दिया। स्वय इन्द्रासन पर आरूढ़ होकर इन्द्रादि देवताओं को अपनी पालकी ढोने पर नियुक्त किया। शुक्राचार्यजी ने दयार्द्र होकर इन्द्रादि को इस दुर्गति से मुक्त किया। असुरा की मूल राजधानी शोणितपुर को ही मयासुर के द्वारा स्वर्ग से भी सुन्दर बनवाकर उसका नया नाम शून्यकपुर रखा और वहीं पर भण्ड दैत्य राज्य करने लगा। स्वर्ग को उसने नष्ट कर डाला। दिकृपालों के स्थान पर अपने बनाये हुए दैत्यों को ही उसने बैठाया। इस प्रकार एक सौ पाँच ब्रह्माण्डों पर उसने आक्रमण किया और उनको अपने अधिकार में कर लिया। अनन्तर भण्ड दैत्य ने और भी घोर तपस्या कर शिवजी से अमरत्व का वरदान पाया। इन्द्राणी ने गौरी का आश्रय पाया है, यह सुनकर वह कैलास गया और गणेशजी की भर्त्सना कर उनसे इन्द्राणी को अपने लिये मांगने लगा। गणेशजी बिगड़कर प्रमथादि गणों को साथ लेते हुए उससे युद्ध करने लगे। पुत्र को युद्धप्रवृत्त देखकर उसकी सहायता करने के लिए गौरी अपनी कोटि-कोटि शक्तियों के साथ युद्धस्थल में आकर दैत्यों से युद्ध करने लगी। इधर गणेशजी की गदा के प्रहार से मूर्च्छित होकर पुन व्रकृतिस्थ होते ही भण्डासुर ने उनको अकुशाघात से गिराया। गौरी यह देखकर बहुत कुर्द हुई और हुकार से भण्ड को बाँधकर ज्योंही मारने के लिये उद्यत हुई त्योही ब्रह्माजी ने गौरी को शकरजी के दिये हुए अमरत्व-वर-प्रदान का स्मरण दिला दिया। लाचार होकर गौरी ने उसको छोड़ दिया।

इस प्रकार भण्ड दैत्य से त्रस्त होकर इन्द्रादि देवों ने गुरु की आज्ञानुसार हिमाचल मे त्रिपुरा देवी के उद्देश्य से तात्रिक महायाग करना आरम्भ किया। अतिम दिन याग समाप्त कर जब देवगण श्रीमाता की स्तुति कर रहे थे, इतने मे ही ज्वाला के बीच से महाशब्दपूर्वक अत्यन्त तेजस्विनी त्रिपुराम्बा प्रादुर्भूत हुई। उस महाशब्द को सुनकर तथा उस लोकोत्तर प्रकाश-पुज्ज को देखकर गुरु बहस्पति के सिवा सब देवगण बधिर तथा अध होते हुए मुर्च्छित हो गये। गुरु तथा ब्रह्मा ने हर्षगद्गद स्वर से श्रीमाता की स्तुति की। श्रीमाता ने प्रसन्न

होकर उनका अभीष्ट पूछा। उन्होने भी भण्डासुर की कथा सुनकर उसके नाश की प्रार्थना की। माता ने भी उसको माना स्वीकार किया और मूर्च्छित इन्द्रादि देवों को अपनी अमृतमय कृपा-दृष्टि से धैतन्य करते हुए अपने दर्शन की योग्यता प्राप्त करने के लिये उनको विशेषरूप से तपस्या करने की आवश्यकता बतलायी। देवगण भी माता की आज्ञानुसार तपस्या करने लगे। इधर भण्डासुर ने देवों पर धावा बोल दिया। कोटि-कोटि सेनिकों के साथ आते हुए भण्ड दैत्य ने देखकर देवों ने प्रिपुराम्बा की प्रार्थना करते हुए अपने शरीर अग्नि-कुण्ड में डाल दिये। प्रिपुराम्बा की आज्ञानुसार ज्वालामालिनी शक्ति ने देवगणों के आसमन्तात् ज्वालामण्डल प्रकट किया। देवों को ज्वाला में भस्मीभूत समझकर भण्ड दैत्य सैन्य के साथ वापस चल गया। दैत्य के जान के बाद देवगण अपने अवशिष्टगों की पूणहिति करने के लिए ज्यो ही उद्यत हुए त्यो ही ज्वाला के मध्य से तडितुज्जनिभा प्रिपुराम्बा आविर्भूत हुई। देव गणों ने जयघोषपूर्वक पूजानादि द्वारा उनमें सतुष्टि किया। देवों को अपना दशन सुलभ हो, इमलिये श्रीमाता ने विश्वकर्मा के द्वारा सुमेश्वरग पर निर्मित श्रीनगर में सर्वदा निवास करना स्वीकार किया। उसके बाद श्रीमाता ने देवों की प्रार्थना अनुसार श्रीचक्रात्मक रथ पर आरूढ होकर भण्ड दैत्य ने मारने के लिये प्रस्थान किया। महाभयानक युद्ध में बहुत पराक्रम दिखाया। श्रीमाता की कुमारी वालाम्बाने भी युद्ध में बहुत पराक्रम दिखाया। श्रीमाता की मुख्य दो शक्तियाँ १ मणिणी-राजमातागीश्वरी, २ दण्डिनी-वाराही ओर इतर अनेक शक्तियाँ ने अपन प्रबल पराक्रम के द्वारा दैत्य-सैन्य में खलबली मचा दी। अत मैं बड़ी मुश्किल से जब श्रीमाता ने महाकामेश्वरास्त्र चलाया तब सपरिवार भण्ड दैत्य मार गया। देवों का भय दूर हुआ।

### पराम्बा ललिता का प्रात स्तवन-कीर्तन<sup>१</sup>

प्रात स्मरामि ललितावदनारविंद विष्वाधर पृथुलमीक्तिकशाभिनासम्।  
आकर्णदीर्घनयन मणिकुण्डलाख्य मदस्मित मृगमदोज्ज्वलभालदेशम्॥  
प्रातर्भजामि ललिताभुजकरपवल्लीं रक्ताहुलीयसद्गुलिपल्लावाख्याम्।  
माणिक्यहेमवलयाङ्गदशोभमाना — पुण्ड्रेष्वुच्चापकुसुमेपुसृणीदधानम्॥

प्रातर्नमामि ललिताचरणारविन्द भक्तेष्टदाननिरत भवसिन्धुपोतम्।  
 पदमासनादिसुरनायकपूजनीय पदमाकुशध्वजसुदर्शनलाज्जनाख्यम्॥  
 प्रात स्तुवे परशिद्या ललिता भवानीं प्रथ्यन्तवेद्यविभवा करुणानवद्याम्।  
 विश्वस्य सृष्टिविलयस्थितिहेतुभूता विद्येश्वरीं निगमदाध्यनसातिदूराम्॥  
 प्रातर्वदामि ललिते तव पुण्यनाम कामेश्वरीति कमलेति महेश्वरीति।  
 श्रीशाम्भवीति जगता जननी परेति वाण्डेवतेति वदसा त्रिपुरेश्वरीति॥  
 य श्लोकपञ्चकमिद ललिताम्बिकाया सौभाग्यद सुललित पठति प्रभाते।  
 तस्मै ददाति ललिता इटिति प्रसन्ना विद्या त्रिय विमलसीख्यमनन्तकीर्तिम्॥

मै प्रात काल श्रीललिता देवी के उस मनोहर मुखकमल का स्मरण करता हूँ, जिसके बिम्ब-समान रक्तवर्ण अधर, विशाल (मोतीवाली) नक्केसर से सुशोभित नासिका कर्णपर्यन्त फैले हुए विशाल नयन हैं, जो मणिमय कुण्डल और मद मुस्कान से युक्त है तथा जिसका ललाट कस्तूरी के तिलक से सुशोभित है। मै श्रीललितादेवी की भुजारूपिणी कल्पलता का प्रात काल सम्मरण करता हूँ, जो लाल अगूठी से सुशोभित सुकोमल अगुलि-रूप पल्लवोवाली तथा रत्नजटित सुवर्णमय कक्षण और अगदादि से भूषित है एव जो पौड़ा-ईख के धनुष, पुष्पमय बाण और अकुश धारण किय हुए है। मै श्रीललितादेवी के चरणकमलों को, जो भक्तों को अभीष्ट फल देने वाले और ससार सागर के लिए सुदृढ जहाज-रूप है तथा कमलासन श्री ब्रह्माजी आदि देवेश्वरों से पूजित और पद्य, अकुश, ध्वज एव सुदर्शनादि मगलमय चिन्हा से युक्त है, प्रात काल नमस्कार करता हूँ। मै प्रात काल परमकल्याणरूपिणी श्रीललिता भवानी की स्तुति करता हूँ, जिनका वैभव वेदान्तवेद्य है, जो कल्याणमयी होने से शुद्धस्वरूपा है, विश्व की उत्पत्ति स्थिति ओर लय की मुट्ठ्य हेतु है, विद्या की अधिष्ठात्री देवी है तथा वेद, वाणी और मन की गति से अति दूर है। ललिते। मै आपके पुण्यनाम कामेश्वरी, कमला, महेश्वरी, शाम्भवी, जगज्जननी, परा, वाण्डेवी तथा त्रिपुरेश्वरी आदि का प्रात काल अपनी वाणी से उच्चारण करता हूँ।'

माता ललिता के अति सौभाग्यप्रद और सुललित इन पाँच श्लोकों को जो पुर्य प्रात काल पढ़ता है, उसे ललितादेवी शीघ्र ही प्रसन्न होकर विद्या, धन, निर्मल-सुख और अमन्त कीर्ति देती है।

## स्थान

काचीपुरे तु कामाक्षी मलय भ्रामरी तथा।  
 केरले तु कुमारी सा अम्बाऽनर्तेषु सस्थिता॥  
 करवीरे महालक्ष्मी कालिका मालबेशुत्रा।  
 प्रयागे ललितादेवी विन्ध्ये विन्ध्यवासिनी॥  
 वाराणस्या विशालाक्षी गयाया मङ्गलाचती।  
 वझेषु सुन्दरीदेवी नेपाले गुह्येश्वरी॥  
 इति द्वादशरूपेण सस्थिता भारते शिवा।  
 एतेषा दर्शनादेव सर्वपापै प्रमुच्यते॥  
 अशक्तो दर्शने नित्य स्मरेत् प्रात् समाहित।  
 तथाप्युपासक सर्वंपराधैविमुच्यते॥

(त्रिपुरा-रहस्य, महात्म्य ख अ ४८/७१-७५)

ललिता सहस्रानाम मे देवी को बारह पीठों की अधिष्ठात्री माना गया है। वे स्थान क्रमशः इस प्रकार हैं:-

- १ कामाक्षी (काचीपुरम्)
- २ भ्रामरी (मलयगिरी पर)
- ३ कन्या या कन्याकुमारी (केरल मे)
- ४ अम्बा (आनंद, गुजरात मे)
- ५ महालक्ष्मी (करवीर मे)
- ६ कालिका (मालव मे)
- ७ ललिता (प्रयाग मे)
- ८ विन्ध्यवासिनी (विन्ध्याचल मे)
- ९ विशालाक्षी (वाराणसी मे)
- १० मूलचण्डी (गया मे)
- ११ सुन्दरी (बागल मे)
- १२ गुह्येश्वरी (नेपाल मे)

वस्तुत ये देवी के बारह रूप हैं। इनके अतिरिक्त प्रधान तीन स्थान हैं (१) कामगिरि (पूर्वसागर तट पर) (२) जालधर (मेशशिखर पर) (३) पूर्णगिरि (पश्चिम सागर तट पर)। ये त्रिकोण के तीन विन्दु हैं।

<sup>१</sup> श्रीललितासहस्रानाम स्त्राव्रम् भूमिता—डॉ अर्कनाथ चौपरी पृ. xx

तीर्थराज प्रयाग में सती के हाथ की अगुली गिरी थी। यहाँ सती को 'ललिता' देवी एवं शिव को 'भव' कहा जाता है। अक्षगवट के निकट ललिता देवी का मंदिर है। कुछ विद्वान् इसे ही शक्तिपीठ मानते हैं। यो शहर में एक और (अलोपी माता) ललितादेवी का मंदिर है। इसे भी शक्तिपीठ माना जाता है। निश्चित ही निष्कर्ष पर पहुँचना कठिन है।<sup>१</sup> प्रयाग में देवी ललिता का मंदिर है।<sup>२</sup>

नैमीपारण्य में भी भगवती ललिता का परम पवित्र स्थान है। वहाँ सम्पूर्ण शुभलक्षणों से शोभा पाने वाली भगवती ललिता विराजती है।<sup>३</sup>

### कुल देवी

पारीको के गर्भ (गार्भ) बोहरा अवटक की यह कुलदेवी है।

कहीं-कहीं जहाँ देवपुरा व रोजड़ा अवटको की माता ललिता बताई गई है, वहीं कहीं कहीं रोजड़ा अवटक की कुलदेवी बूढ़ण माता बताई गई है। कहीं देवपुरा की कुलदेवी बूढ़ण माता बताया गया है, तो कहीं गार्भ की कुलदेवी लहण, नारायणी बताया गया है।

१ कल्याण शक्ति उपासना अक वर्ष ६१ (१९८७) पृ ३७६ कल्याण संक्षिप्त मार्कण्डय ब्रह्मपुराणाक वर्ष २१ (१९४७) पृ ११८

२ कल्याण संक्षिप्त देवी भागवताक वर्ष ३४ (१९६०) पृ ४००

३ उपराक्त पृ ४१७

## श्री सच्चियाय माता

श्री सच्चियाय माताजी को सुच्चाय माता, सच्चिका माता व सूचिकेश्वरी माता के नाम से भी भक्त लोग पूजते हैं।

### माता का आदिनाम

महियासुर मर्दनी, सच्चियाय माता के रूप में पूजित है।<sup>१</sup> श्री दुर्गासमशती<sup>२</sup> में नव दुर्गाओं के जो नाम दिये गये हैं, उनमें शैलपुत्री, ब्रह्मचारिणी, चन्द्रघण्टा, कृष्णाण्डा, स्कन्दमाता, कात्यायनी, कालरात्रि, महागारी और सिद्धिदात्री बताया गया है। महियासुर का मर्दन (वध) माता कात्यायनी के द्वारा किया गया था। मार्कण्डेय-ब्रह्मपुराणाक<sup>३</sup> में इस माता को अम्बिका, वामन पुराण<sup>४</sup> में अम्बा, सरस्वती, नारायणी आदि नामों से भी सम्बोधित किया गया है। इस प्रकार सुच्चियाय माता को कात्यायनी, अम्बा-अम्बिका, सरस्वती, नारायणी भी कहा गया है।

भगवती कात्यायनी दुर्गा का छठा रूप है। देवताओं का कार्य सिद्ध करने के लिए देवी महर्षि कात्यायन के आश्रम पर प्रगाट हुई और महर्षि ने उन्हे अपनी कन्या माना इसलिए यह कात्यायनी नाम से प्रसिद्ध हुई। इस देवी के तीन नेत्र और आठ भुजाएँ हैं, जिनमें शस्त्र धारण किये हुए हैं। इनका वाहन सिंह है।

वृन्दावन की गोपियों ने श्रीकृष्ण को पति रूप में पाने के लिए मार्गशीर्ष के महीने में कालिन्द-यमुना नदी के तट पर 'कात्यायनी' की पूजा की थी, जिससे सिद्ध होता है कि वृजमण्डल की यह आद्येश्वरी देवी है।<sup>५</sup>

<sup>१</sup> कल्याण- तीर्थीक वर्ष ३१ (१९५७), पृ २९२

<sup>२</sup> श्री दुर्गासमशती- कल्याण प्रेस पृ १०-२०

<sup>३</sup> कल्याण- संक्षिप्त मार्कण्डेय ब्रह्मपुराणाक वर्ष २१ (१०४७) पृ ११५

<sup>४</sup> कल्याण- वामन पुराण वर्ष ५६ (१९८२) पृ ११७ ११८ १२३

<sup>५</sup> कल्याण- शक्ति उपासना अक वर्ष ६१ (१९८७) पृ ४९१

देवताओं के तेज से देवी का प्रादुर्भाव और महिषासुर की सेना, सेनापतियों सहित महिषासुर का वध १

सुच्चाय माता महिषासुरमर्दिनी कत्यायनी के रूप में है। माता के स्वरूप एवं आयुधों का भक्त निम्न प्रकार ध्यान करता है—

‘मे कमल के आसन पर बैठी हुई महिषासुरमर्दिनी भगवती महालक्ष्मी का भजन करता हू, जो अपने हाथों में अक्षमाला, फरसा, गदा, बाण, वज्र, पद्म, धनुष, कुण्डिका, दण्ड, शक्ति, खड़, ढाल, शख, घण्टा, मधुपात्र, शूल, पाश और चक्र धारण करती है तथा जिनके श्रीविग्रह की कान्ति मूर्गे के समान लाल है।’

पूर्वकाल में देवताओं और असुरों में पूरे सौ वर्षों तक घोर-सग्राम हुआ था। उसमें असुरों का स्वामी महिषासुर था और देवताओं के नायक इन्द्र थे। उस युद्ध में देवताओं की मेना महाबली असुरों से परास्त हो गयी। सम्पूर्ण देवताओं को जीतकर महिषासुर इन्द्र बन बैठा। तब पराजित देवता प्रजापति ब्रह्माजी को आग करके उस स्थान पर गय जहा भगवान् शक्ति और विष्णु विगजमान थे। देवताओं ने महिषासुर के पगङ्कम तथा अपनी पगजय का यथावत् वृत्तान्त उन दोनों देवेश्वरों से विस्तारपूर्वक कह सुनाया। वे बोले—‘भगवान्! महिषासुर सूय, इन्द्र, अग्नि, वायु, चन्द्रमा, यम, वरुण तथा अन्य देवताओं के भी अधिकार छीनकर स्वयं ही सबका अधिष्ठाता बना बैठा है। उस दुरात्मा महिष ने समस्त देवताओं को स्वर्ग से निकाल दिया है। अब वे मनुष्यों की भाति पृथ्वी पर विचरते हैं। देत्या की यह सारी करतूत हमने आप लोगों से कह सुनाई। अब हम आपकी ही शरण में आये हैं। उसके वध का कोई उपाय सोचिए।’

इस प्रकार देवताओं के वचन सुनकर भगवान् विष्णु और शिव ने दैत्यों पर बड़ा क्रोध किया। उनकी भौंहें तन गर्याँ और मुहे टेढ़ा हो गया। तब अत्यन्त बोय म भेर हुए चक्रपाणि श्रीविष्णु के मुख से एक महान् लाल तेज प्रगट हुआ। इसी प्रकार ब्रह्मा, शक्ति तथा इन्द्र आदि अन्यान्य देवताओं के शरीर से भी बड़ा भारी तेज निकला। वह सब मिलकर एक हो गया। महान् तेज

का वह पुज जाज्ज्वल्यमान पवत-सा जान पड़ा। देवताओं ने देखा, वहा उसकी ज्वालाए सम्पूर्ण दिशाओं में व्याप्त हो रही थी। सम्पूर्ण देवताओं के शरीर से प्रगट हुए उस तेज की कही तुलना नहीं थी। एकनित होने पर वह एक नारी के रूप में परिणत हो गया और अपने प्रकाश से तीनों लोकों में व्याप्त जान पड़ा। भगवान् शक्ति का जो तेज था, उससे उस देवी का मुख प्रगट हुआ। यमराज के तेज से उसके सिर में बाल निकल आये। श्रीविष्णु भगवान् के तेज से उसकी भुजाएं उत्पन्न हुईं। चन्द्रमा के तेज से दोनों स्तनों का और इन्द्र के तेज से मध्य भाग (कटि प्रदेश) का प्रादुर्भाव हुआ। वरुण के तेज से जघा और पिडली तथा पथ्वी के तेज से नितम्ब भाग प्रगट हुआ। ब्रह्म के तेज से दोनों चरण और सूर्य के तेज से उनकी अगुलिया हुईं। वसुओं के तेज से हाथों की अगुलिया और कुबेर के तेज से नासिका प्रगट हुईं। उस देवी के दात प्रजापति के तेज से और तीनों नेत्र अग्नि के तेज से प्रगट हुए थे। उसकी भौंहि सध्या के और कान वायु के तेज से उत्पन्न हुए थे। इसी प्रकार अन्यान्य देवताओं के तेज से भी उस कल्याणमयी देवी का आविर्भाव हुआ।

तदन्तर समस्त देवताओं के तेज पुञ्ज से प्रगट हुई देवी को देखकर महिषासुर स सताये हुए देवता बहुत प्रसन्न हुए। यिनाकथारी भगवान् शक्ति ने अपने शूल से एक शूल निकालकर उन्हे दिया, फिर भगवान् विष्णु ने भी अपने चक्र से चक्र उत्पन्न करके भगवती को अर्पण किया। वरुण ने भी शख भेट किया, अग्नि ने उन्हे शक्ति दी और वायु ने धनुष तथा बाण से भरे हुए दो तरकश प्रदान किये। सहस्र नेत्रोवाले देवराज इन्द्र ने अपने वज्र से वज्र उत्पन्न करके उन्हे दिया और ऐरावत हाथी से उतारकर एक घण्टा भी प्रदान किया। यमराज ने कालदण्ड से दण्ड, वरुण ने पाश, प्रजापति ने स्फटिकाक्ष की माला तथा ब्रह्माजी ने कमण्डलु भेट किया। सूर्य ने देवी के समस्त रोम कूपों में अपनी किरणों का तेज भर दिया। काल ने उन्हे चमकती हुई ढाल और तलवार दी। क्षीर-समुद्र ने उज्ज्वल हार तथा कभी जीर्ण न होने वाले दो कुण्डल, कड़े, उज्ज्वल अर्धचन्द्र, सब बाहर्आ के लिए केयूर, दोनों चरणों के लिए निर्मल उपूरू, गल की सुन्दर हस्ती और सब अगुलियों में पहनने के लिए रत्नों की बनी अगूठिया भी दी। विश्वकर्मा ने उन्हें अत्यन्त निर्मल फरसा भेट किया।

साथ ही अनेक प्रकार के अस्त्र और अभेद्य कवच दिये, इनके सिवा मस्तक और बक्ष स्थल पर धारण करने के लिए कभी न कुम्हलाने वाले कमलों की मालाए दी। जलधि ने उन्हे सुन्दर कमल का फूल भेट किया। हिमालय ने सवारी के लिए सिंह तथा भाँति-भाँति के रत्न समर्पित किये। धनाध्यक्ष कुबेर ने मधु से भरा पानपात्र दिया तथा सम्पूर्ण नागों के राजा शेष ने, जो इस पृथ्वी को धारण करत है, उन्हें बहुमूल्य मणियाँ से विभूषित नागहार भेट दिया। इसी प्रकार अन्य देवताओं ने भी आभूषण और अस्त्र-शस्त्र देकर देवी का सम्मान किया। तत्पश्चात् देवी ने बारम्बार अद्वृहासपूर्वक उच्च स्वर से गर्जना की। उनके भयकर नाद से सम्पूर्ण आकाश गूँज उठा। देवी का वह अत्यन्त उच्च-स्वर से किया हुआ सिहनाद कहीं समा न सका, आकाश उसके सामने लघु प्रतीत होने लगा। उससे बड़े जोर की पतिष्ठनि हुई, जिससे सम्पूर्ण विश्व में हलचल मच गयी और समुद्र काप उठे। पृथ्वी डौलने लगी और समस्त पर्वत हिलने लगे। उस समय देवताओं ने अत्यन्त प्रसन्नता के साथ सिंहाहिनी भवानी से कहा— देवी, तुम्हारी जय हो। साथ ही महर्षियों ने भक्तिभाव से विनम्र होकर उनका स्तवन किया।

सम्पूर्ण त्रिलोकी को क्षोभग्रस्त देख दैत्याण अपनी समस्त सेना को कवच आदि से सुसज्जित कर, हाथों में हथियार ले सहसा उठकर खड़े हो गये। उस समय महिपासुर ने बड़े क्रोध में आकर कहा— आ ! यह क्या हो रहा है ? फिर वह सम्पूर्ण असुरों से घिरकर उस सिहनाद की ओर लक्ष्य करके दौड़ा और आगे पहुंचकर उसने देवी को देखा, जो अपनी प्रभा से तीनों लोकों को प्रकाशित कर रही थी। उनके चरणों के भार से पृथ्वी दबी जा रही थी, तथा वे अपने धनुष की टकार से सातों पातालों को क्षुब्ध किये देती थी। देवी अपनी हजारों भुजाओं से सम्पूर्ण दिशाओं का आच्छादित करके खड़ी थीं। तदन्तर उनके साथ दैत्यों का युद्ध छिड गया। नाना प्रकार के अस्त्र-शस्त्रों के प्रहार से सम्पूर्ण दिशाएं उद्धसित होने लगी। चिक्षुर नामक महान् असुर महिपासुर का सेनानायक था। यह देवी के साथ युद्ध करने लगा। अन्य दैत्यों की चतुरगिणी सेना साथ लेकर चामर भी लड़ने लगा। साठ हजार रथियों के साथ आकर उदग्र नामक महादैत्य ने लोहा लिया। एक करोड़ रथियों को साथ लेकर महाहन् नामक दैत्य युद्ध करने लगा। जिसके रोए तलवार के समान

तीखे थे, वह असिलोमा नाम का महादैत्य पाच करोड़ रथी सैनिको सहित युद्ध में आ डटा। साठ लाख रथियों से घिरा हुआ वाष्कल नामक दैत्य भी उस युद्धभूमि में लड़ने लगा। परिवारित नामक राक्षस हाथी सवारों और घुड़सवारों के अनेक दला तथा एक करोड़ रथियों की सेना लेकर युद्ध करने लगा। विडाल नामक दैत्य पाच अरब रथियों से घिरकर लोहा लेने लगे। इनके अतिरिक्त और भी हजारो महादैत्य रथ, हाथी और घोड़ा की सेना साथ लेकर वहां देवी के साथ युद्ध करने लगे। स्वयं महिपासुर उस रणभूमि में कोटि-कोटि सहस्र रथ, हाथी और घोड़ा की सेना से घिरा हुआ खड़ा था। वे दैत्य देवी के साथ तोमर, भिन्दिपाल, शक्ति, मूसल, खड्ग, परशु और पट्टिश आदि अस्त्र-शस्त्रों का प्रहार करते हुए युद्ध कर रहे थे। कुछ दैत्यों ने उन पर शक्ति का प्रहार किया, कुछ ने पाश फेंके तथा कुछ दूसरे दैत्यों ने खड्गप्रहार करके देवी को मार डालने का उद्योग किया। देवी ने भी क्रोध में भरकर खेल-खेल में ही अपने अस्त्र-शस्त्रों की वर्षा करके दैत्यों के वे समस्त अस्त्र-शस्त्र काट डाले। उनके मुख पर परिश्रम या थकावट का रचमात्र भी चिह्न नहीं था, देवता और ऋषि उनकी स्तुति कर रहे थे और वे भगवती परमेश्वरी दैत्यों के शरीरों पर अस्त्र-शस्त्रों की वर्षा करती रही।

देवी का वाहन सिह भी क्रोध में भरकर गर्दन के बालों को हिलाता हुआ असुरा की सेना में इस प्रकार विघरने लगा, मानो वनों में दावानल फैल रहा हो। रणभूमि में दैत्यों के साथ युद्ध करती हुई अम्बिका देवी ने जितने नि श्वास छोड़े, वे सभी तत्काल सैकड़ों-हजारा गणों के रूप में प्रकट हो गये और परशु, भिन्दिपाल, खड्ग तथा पट्टिश आदि अस्त्रों द्वारा असुरों का सामना करने लगे। देवी की शक्ति से बढ़े हुए वे गण असुरों का नाश करते हुए नगाड़ा और शाखा आदि बाजे बजाने लगे। उस सग्राम-महोत्सव में कितने ही गण मृदग बजा रहे थे। तदनन्तर देवी ने त्रिशूल से, गदा से, शक्ति की वर्षा से और खड्ग आदि से सैकड़ों महादैत्यों का सहार कर डाला। कितनों को घटे के भयकर नाद से मूर्च्छित करके मार गिराया। बहुतेरे दैत्यों को पाश से बाधकर धरती पर घसीटा। कितने ही दैत्य उनकी तीखी तलवार की मार से दो-दो टुकड़े हो गये। कितने ही गदा की चोट से घायल होकर धरती पर सो गये। कितने ही मूसल की मार से अत्यन्त आहत होकर रक्त वमन करने लगे। कुछ

दैत्य शूल से छाती फट जाने के कारण पृथ्वी पर ढेर हो गये। उस रणागण में बाणसमूहों की वृष्टि से कितने ही असुरा की कमर टूट गयी। बाज की तरह झपटने वाले देवपीड़क दैत्यगण अपने प्राणों से हाथ धोने लगे। किन्हीं की बाहें छिन्न-भिन्न हो गयीं, कितनों की गदनी कट गयी। कितने ही दैत्यों के मस्तक विदीर्ण हो गये। कितने ही महादैत्य जाघ कट जाने से पृथ्वी पर गिर पडे। कितना को ही देवी ने एक बाह, एक पैर और एक नेत्र वाले करके दो टुकड़ों में चीर डाला। कितने ही दैत्य मस्तक कट जाने पर भी गिरकर फिर उठ जाते और केवल धड़ के ही रूप में अच्छे-अच्छे हथियार हाथ में ले देवी के साथ युद्ध करने लगते थे। दूसरे कबन्ध युद्ध में बाजों की लय पर नाचते थे। कितने ही बिना सिर के धड़ हाथों में खड़ग, शक्ति और झटिलिए दौड़ते थे तथा दूसरे-दूसरे महादैत्य ठहरो! ठहरो! यह कहते हुए देवी को युद्ध के लिए ललकारते थे। जहा वह घोर स्नाम हुआ था, वहा की धरती देवी के गिराये हुए रथ हाथी, घोड़ा और असुरों की लाशों से ऐसी पट गयी थी कि वहा चलना-फिरना असम्भव हो गया था। दैत्यों की सेना में हाथी घोड़ा और असुरों के शरीरों से इतनी अधिक मात्रा में रक्तपात हुआ था कि योड़ी ही देर म वहा खून की बड़ी-बड़ी नदिया बहने लगी। जगदम्बा ने असुरों की विशाल सेना को क्षण भर में नष्ट कर दिया—ठीक उसी तरह, जैस तृण ओर काठ के भारी ढेर को आग कुछ ही क्षणों में भस्म कर देती है। और वह सिह भी गदन के बालों को हिला-हिलाकर जोर-जोर से गर्जना करता हुआ दैत्यों के शरीरा का माना उनके प्राण चुने लेता था। वहा देवी के गणों ने भी उन महादैत्यों के साथ ऐसा युद्ध किया, जिससे देवतागण उन पर आकाश से फूल बरसाने लगे और उन सबसे बहुत सतुष्ट हुए।

दैत्या की सेना को इस पकाग तहस-नहस होते देख महादैत्य सेनापति चिक्षुर झोध म भाकर अम्बिका देवी से युद्ध करने को आग बढ़ा। वह असुर रणभूमि म देवी के ऊपर इस पकार बाणों की वर्षा करने लगा जैसे बादल मेहुगिरि के शिखर पर पानी की धाराय बरसा रहा हो। तब देवी ने अपने बाणों से उसके बाण समूह को अनायास ही काटकर उसके घोड़ों और सारथि को मार डाला। साथ ही, उसके धनुप तथा अत्यन्त ऊची ध्वजा को भी तत्काल काट गिराया। धनुप झट जाने पर उसके आगों को अपने बाणों से बीध डाला।

धनुष, रथ, घोड़े और सारथि के नष्ट हो जाने पर वह असुर ढाल और तलवार लेकर देवी की ओर दोड़ा। उसने तीखी धारवाली तलवार से सिंह के मस्तक पर चोट करके देवी की भी बायीं भुजा में बड़े बेग से प्रहार किया। देवी की बाह पर पहुंचते ही वह तलवार टूट गयी, फिर तो क्रोध से लाल आख करके उस राक्षस ने शूल हाथ में लिया और उसे उस महादैत्य ने भगवती भद्रकाली के ऊपर चलाया। वह शूल आकाश से गिरते हुए सूर्यमण्डल की भाति अपने तेज से प्रज्वलित हो उठा। उस शूल की अपनी ओर आते देख देवी ने भी शूल का प्रहार किया। उससे राक्षस के शूल के सैकड़ों टुकड़े हो गये, साथ ही महादैत्य चिक्खुर की धज्जिया उड़ गयीं। वह प्राणों से हाथ धो बैठा।

महिपासुर के सेनापति उस महापराक्रमी चिक्खुर के मारे जाने पर देवताओं को पीड़ा देने वाला चामर हाथी पर चढ़कर आया। उसने भी देवी के ऊपर शक्ति का प्रहार किया किन्तु जगद्मबा ने उसे अपने हुक्कार से ही आहत एवं निष्प्रभ करके तत्काल पश्ची पर गिरा दिया। शक्ति को टूटकर गिरी हुई देख चामर को बड़ा क्रोध हुआ। अब उसने शूल चलाया, किन्तु देवी ने उसे भी अपने बाणों द्वाग काट डाला। इतने म ही देवी का सिंह उछलकर हाथी के मस्तक पर चढ़ बैठा और उस दैत्य के साथ खूब जोर लगाकर बाहुद्ध करने लगा। वे दोनों लडते-लडते हाथी से पृथ्वी पर आ गये और अत्यन्त क्रोध में भरकर एक दूसरे पर बड़े भयकर प्रहार करते हुए लडने लगे। तदन्तर सिंह बड़े बेग से आकाश की ओर उछला और उधर से गिरते समय उसने पजा की मार से चामर का सिर धड़ से अलग कर दिया। इसी प्रमार उदय भी शिला आर वक्ष आदि की मार खाकर रणभूमि में देवी के हाथ से मारा गया तथा झराल भी दातो, मुङ्गो और थप्पड़ो की चोट से धराशायी हो गया। क्रोध में भरी हुई देवी ने गदा की चोट से उद्धत का कच्चूमर निमाल डाला। भिन्दिपाल से वाष्पल को तथा बाणा से ताप्र और अन्धम की मौत के घाट उतार दिया। तीन नेत्रों वाली परमेश्वरी ने प्रिशूल से उग्रास्य, उग्रवीर्य तथा महानु नामक देत्या को मार डाला। तलवार भी चोट से बिडाल के मस्तक

इस प्रकार अपनी सेना का सहार होता देख महिषासुर ने भैसे का रूप धारण करके देवी के गणों को त्रास देना आरम्भ किया। किन्हीं को थृथुन से मारकर, किन्हीं के ऊपर खुरों का प्रहार करके, किन्हीं-किन्हीं को पूछ से चोट पहुचाकर, कुछ को सींगों से विदीर्ण करके, कुछ गणों को वेग से, किन्हीं को सिहनाद से, कुछ को चक्कर देकर और कितनों को नि श्वास वायु के झोंके से धराशायी कर दिया। इस प्रकार गणों की सेना को गिराकर वह असुर महादेवी के सिंह को मारने के लिए ज्ञापटा। इससे जगदम्बा को बड़ा क्रोध हुआ। उधर महापराक्रमी महिषासुर भी क्रोध में भरकर धरती को खुरों से खोदने लगा तथा अपने सींगों से ऊचे-ऊचे पर्वतों को उठाकर फेंकने और गजनी लगा। उसके वेग से चक्कर देने के कारण पृथ्वी क्षुब्ध होकर फटने लगी। उसकी पूछ से टकराकर समुद्र सब और से धरती को डुबोने लगा। हिलते हुए सींगों के आधात से विदीर्ण होकर बादलों के टुकड़े-टुकड़े हां गये। उसके श्वास की प्रव्याप्ति वायु के वेग से उड़े हुए सैकड़ा पर्वत आकाश से गिरने लगे। इस प्रकार क्रोध में भेर हुए उस महादैत्य को अपनी ओर आते देख चण्डिका ने उसका बध करने के लिए महान् क्रोध किया। उन्हाने पाश फक्कर उस महान् असुर को बाध लिया। उस महासग्राम में बध जाने पर उसने भैसे का रूप त्याग दिया और तत्काल सिंह के रूप में प्रकट हा गया। उस अवस्था में ज्यो ही जगदम्बा उसके मस्तक काटने को उद्यत हुई, ज्यो ही वह खड़गधारी पुरुष के रूप में दिखायी देने लगा। तब देवी ने तुरन्त ही बाणों की वर्षा करके ढाल और तलवार के साथ उस पुरुष को बींध डाला। इतने में ही वह महान् गजराज के रूप में परिणत हो गया तथा अपनी सूड से देवी के विशाल सिंह को खीचने और गजनी लगा। खीचने समय देवी ने तलवार से उसकी सूड काट डाली। तब उस महादैत्य ने पुन भैस का शरीर धारण कर लिया और पहले की भाति चराचर प्राणिया सहित तीनों लोकों को व्याकुल करने लगा। तब क्रोध से भरी हुई जगन्माता चण्डिका बारम्बार उत्तम मधुका पान करने और लाल आख करके हसने लगी। उधर वह बल और पराक्रम के मद से उन्मत्त हुआ राक्षस अपने सींगों से चण्डी के ऊपर पर्वतों को फेंकने लगा। उस समय देवी अपने बाणों के समूह से उसके फेंके हुए पर्वतों को चूर्ण करती हुई बोली। बोलते समय उनका मुख मधु के मद से लाल हो रहा था और बाणी लड़खड़ा रही थी। देवी ने कहा— ओ मूढ़! मैं जब तक

मधु पीती हू तब तक तू क्षण भर के लिए यब गर्ज ल। मर हाथ से यही तरी मृत्यु हो जाने पर अब शीघ्र ही देवता भी गर्जना करग।'

या कहकर दबी उछली ओर उस महादैत्य के ऊपर चढ गयी। फिर अपने पैर से उसे दबाकर उन्होंने शूल से उसके कण्ठ पर आधात किया। (उनके पैर से दबा होने पर भी महिपासुर अपने मुख से दूसरे रूप में बाहर होने लगा)। अभी आध शरीर से ही वह बाहर निकलने पाया था कि देवी ने अपने प्रभाव से उसे रोक दिया। आधा निकला होने पर भी वह महादैत्य दबी से युद्ध करने लगा। तब देवी ने बहुत बड़ी तलवार से उसका मम्तक काट गिराया। फिर तो हाहाकार करती हुई दैत्यों की सारी सेना भाग गयी तथा सम्पूर्ण देवता अत्यन्त प्रसन्न हो गये। देवताओं न दिव्य महर्षियों के साथ दुर्गा देवी का स्तवन किया। गधर्वगण गान तथा अप्सराएं नृत्य करने लगीं।

### कात्यायनी का नाम

महिपासुर मर्दिनी-कात्यायनी का नाम सच्चिकाय माता किस प्रकार हुआ इस सम्बन्ध में एक कथानक है<sup>१</sup> जिसके अनुसार- महावीर स्वामी के निर्वाण के ५२ वर्ष बाद एक बार रत्नप्रभुमूर्गिजी अपने पाच-सौ शिष्यों सहित उकेशपुर पधा। उस समय राजा का मत्री ऊहड़ कृष्ण-मंदिर का निर्माण करवा रहा था। कहते हैं कि मंदिर का जितना हिस्सा दिन में बनता था, वह गत में वायिस ढह जाता। सूरजी की आज्ञा के अनुसार उस स्थान पर महावीर स्वामी का मंदिर बनवाया जाने लगा और कुछ ही समय में वह मंदिर बनकर तैयार हो गया। मत्री ऊहड़ की एक गाय के स्तन से नगर के किसी निश्चित स्थान पर दूध अपने आप ही बहने लगा। ऊहड़ ने यह बात रत्नप्रभुसूरि जी को कही और उनके निर्देशानुसार उक्त स्थान की खुदाई की, तो वहाँ एक मूर्ति मिली लकिन समय में पूर्व मूर्ति को जमीन से बाहर निकालने से मूर्ति के स्तनों पर दो गाठ (व्यूम) रह गई। उक्त मूर्ति की प्रतिष्ठा करवा दी गई।

कालान्तर में लोगों ने विचार किया कि मूर्ति की गाठ मिटा दी जाये, तो एक मिस्त्री को बुलाया जिसने वे गाठ काट दी। परन्तु गाठों से यून बहने लगा और वह मिस्त्री वही मर गया। आधी रात में देवी न नगरवासियों को

<sup>१</sup> श्री सच्चियाय माता मंदिर की पावन तीर्थ स्थली का संग्रह परिवर्त्य स उद्धृत प ४५

स्वप्न मे कहा कि वे तत्काल नगर खाली कर दे। शाप के भय से लोग नगर छोड़ अन्यत्र जा बसे- तब से जैन ओसवाल यहां नहीं रहते हैं।

नगर खाली होने के कुछ समय बाद (याने छठे पोहर) तत्कालीन जैन आचार्य कक्षसूरिजी को ओसिया बुलाकर उनके सामने सारी स्थिति रखी। उन्हाने विविध उपायों से तथा अष्ट-द्रव्यादि से देवी का अभिषेक कर उन्हे प्रसन्न किया। इस देवी महिपासुर- मर्दिनी ने सत्य वचन कहने के कारण लोगों को क्षमा प्रदान की, इसलिए 'सच्चियाय माता' के नाम से पहचानी जाने लगी।

स्व प जुगराज शमा<sup>१</sup> द्वारा प्रकाशित माता के सक्षिप्त परिचय पुस्तिका मे मूर्ति विवाद के सम्बन्ध मे कुछ तथ्य अकित किये हैं। विभिन्न विद्वानों के मतों को उद्धृत करते हुए, अत म यह निष्कर्ष निकला कि मूर्ति कात्यायनी माता की सच्चियाय माता के रूप मे है। उक्त पुस्तिका के अनुसार-

**मूर्ति विवाद-** श्री सच्चियाय का मूल मंदिर स्थापत्य के आधार पर १२वीं शताब्दी का माना जाता है और ऐसी भी मान्यता है कि जैनाचार्य रत्नप्रभूसूरि ने मौस एव सुरा सेवन करने वाली इस देवी की सात्त्विक आहार करने वाली बनाकर इनको सच्चियाय अथवा 'सच्चिका' नाम दिया। पर विवाद खड़ा हुआ कि यह देवी कौन है?

उपकेश-गच्छ पट्टावलियों से- उपकेशगच्छ पट्टावली मे इस देवी को चण्डिङा या चामुण्डा आदि नामों से अभिहित किया गया है। वि स १२३४ के गयापाल के शिलालेख मे इसे सच्चिका, क्षेमकरी और शीतला के नाम से सम्बोधित किया गया है। वर्तमान महिपासुर मर्दिनी ही सच्चियाय है अथवा नहीं, इस विषय मे विद्वाना मे मतभेद है।

**प्रमाण-** एम ए ढाक के अनुसार मुख्य मूर्ति क्षेमकरी की थी, अन्य विद्वान कुछ और ही देविया का नाम बतलाते हैं। किन्तु उनके पास सतोपजनन उत्तर नहीं है। पुरातत्त्व एव सग्रहालय विभाग जयपुर के पूर्व निदेशक रत्नचंद्र अग्रवाल ने इस विषय मे काफी खोज कर यह निष्कर्ष निकाला कि महिपासुर-मर्दिनी ही सच्चियाय है। उन्हे मारवाड़ के जसवतपुरा स्थान पर एक मूर्ति मिली थी,

\* श्री सच्चियाय माता मर्दिनी की पात्रन तीर्थ स्थली का संग्रह परिचय- पृ ८९

जो वि स १२३७ की है। उसके शिलालेख म महिपासुर मर्दिनी को सच्चियाय कहा गया है।

वि स १३७१ शत्रुजय पर्वत पर सच्चियाय देवी की प्रतिमा स्थापित की गई थी। वि स १४२२ म चूरु (बीकानेर) मे स्थापित सच्चियाय मंदिर की मूर्ति भी महिपासुर मर्दिनी की ही है। इसी प्रकार कुछ और भी जैन मंदिरों के उदाहरण है, जहा महिपासुर मर्दिनी ही सच्चियाय मानी गई है और आराधित है।

ओसियाँ स्थित सच्चियाय माता के वयोवद्ध पुजारी श्री जुगराज शर्मा के मतानुसार जिस मंदिर के दाये और बाये तथा पृष्ठ भाग म जो मूर्ति होती है तथा ताकों में जिस देवी-देवता की मूर्ति होती है, वही मूर्ति निश्चित रूप से मुख्य मंदिर मे होती है और इस सच्चियाय मंदिर मे भी दाये-बाये और पृष्ठभाग के ताको मे महिपासुर-मर्दिनी ही है, अत यह मूर्ति महिपासुर-मर्दिनी की ही है। यही तथ्य जैन मंदिर की मूर्तियों पर भी लागू होता है— जैसे महावीर स्वामी के मंदिर म बाये, दाये और पीछे महावीर स्वामी की मूर्ति विद्यमान है— ओसियाँ के अन्य मंदिरो मे इसी प्रकार सनातन धर्म की या जैन धर्म की मूर्तिया होती है तो पुरातत्त्ववेत्ता या इतिहासकार इसी आधार पर उस मंदिर की पहिचान करते है।

## मंदिर स्थान

माता के वर्णित नामो यथा कात्यायनी, अम्बा-अम्बिका, सरस्वती, नारायणी नामों से मंदिर देश के अनेकानेक स्थानो पर पूजित है, तथापि सच्चियाय माता के नाम से जो मंदिर प्रसिद्ध है, वह जोधपुर जिले के ओसियाँ कस्बे में है।

ओसियाँ कस्बा जोधपुर से ६१ कि मी उत्तर-पूर्व मे अवस्थित है तथा पुरातत्त्व दृष्टि से एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण स्थान है। आवागमन की दृष्टि से जोधपुर शहर से यह स्थान रेल एव सडक मार्ग से जहा जुड़ा हुआ है वही नागौर, बीकानेर एव जैसलमेर से भी सडक मार्ग से जुड़ा हुआ है।

## सच्चियाय माता का मंदिर

माता का भव्य मंदिर है। यह मंदिर सम्पूर्ण भारतवर्ष मे विशेषत राजस्थान के [Hinduism Discord Server](https://discord.gg/2HJXkVw) <https://discord.gg/2HJXkVw>

मेरे पूर्व दिशा मेरे एक पहाड़ी पर अवस्थित है, जो भूमि तल से १०० फीट ऊपर है। माता की मूर्ति तक पहुंचने के लिए सीढ़िया निर्मित है, जिनकी कुल सख्त्या १०६ है। मार्ग मेरो तोरण द्वारा निर्मित है, जो भक्त को अनायास ही मंदिर की भव्यता दर्शित करते हैं। इन तोरणद्वारों पर अनेक देवियों यथा ब्रह्मचारिणी, प्रियंगसुन्दरी, चन्द्रघण्टा, कालिका, चत्रिका, कात्यायनी, दुर्गा, सच्चियाय आदि देवियों के नाम लिखे हुए हैं। सीढ़ियों के दोनों ओर की दीवारों पर कई देवलियां हैं।

मण्डप द्वार के बाहर दोनों ओर बाये व दाये चबर ढुलाती हुई दो सेविकाओं की भव्य प्रतिमाये हैं। मंदिर के मुख्य मण्डप मे भगवती चामुण्डा, वीरवर पवनसुत हनुमान रेवत भगवान नृसिंह, महियासुर-मर्दिनी माता पार्वती, वाराह भगवन एवं बलराम आदि देवी-देवताओं की प्रतिमाये भी हैं।

माता के मंदिर मे परिक्रमा एवं सुन्दर यज्ञ-मण्डप है। मंदिर का शिखर अपनी अद्भुत छटा बिखरेता है तथा उसके चारों ओर अनेकानेक देवी-देवताओं की प्रतिमाये उत्कीर्ण हैं। यह मंदिर आठवीं सदी का बना हुआ है, किन्तु वर्तमान मंदिर का अधिकाश भाग इसा की बारहवीं सदी मे बना है, जिसकी पुष्टि मंदिर मे लगे स्तम्भों के शिलालेखों से होती है। इन शिलालेखों के अनुसार ब्राह्मणों के अनेकानेक परिवारों ने धन एकत्रित कर इसा की बारहवीं शताब्दी के अंत मे मंदिर के विभिन्न भागों का निर्माण कराया। इस मंदिर के शिलालेखों मे विस १२३६ कार्तिक सुदी १ (एकम) (इस ११७९ ता ३ अक्टूबर) वृधवार विस १२३४ (चैत्रादि १२३५) चैत्र सुदी १० (इस ११७८ ता ३० मार्च) गुरुवार और विस १२४५ फाल्गुण सुदी ५ (इस ११८१ ता २२ फरवरी) के छोटे-छोटे लेख हैं। दूसरे लेख से ज्ञात होता है कि सेठ गयपाल की मूर्तिया ने यहां पर चडिका, शीतला, सच्चिदा, क्षेमकारी और क्षेत्रपाल की मूर्तिया स्थापित कराई थी। इसका सभा-मण्डप स्तम्भों पर स्थित है।

माता की मनमोहक मूर्ति महियासुर-मर्दिनी की प्रतिमा है। माता अनेकानेक आभूषणों से अलृत है। कल्याण<sup>१</sup> मेरो माता के सर्दर्भ मे बताया गया है कि

<sup>१</sup> जापुर राज्य का इतिहास प्रथम घण्ड-पृ ३०  
<sup>२</sup> कल्याण तीर्थांक वर्ष ३० (१९५०) पृ २९२

महिषासुर-मर्दिनी देवी को ही यहा सच्चिया माता कहत है। माता के बाई और वैष्णवी माता की आकपक प्रतिमा है। यह मूर्ति नत्य मुद्रा में है तथा शख, चक्र, गदा व पद्म इनके हाथों की शोभा बढ़ाते हैं। वि स १२४७ के शिलालेख के अनुसार कोल्ही नामक एक ब्राह्मण न देवी के कुम्भोम्तम्भ और छग का निर्माण कराया था।

### मूर्ति के भोग

मूर्ति के वर्तमान में शाकाहारी भोग लगाया जाता है। एसा कहते हैं कि पूर्व म माता के मास-मदिरा का भोग लगता था, जिन्तु जैन आचार्य रत्नप्रभुसूरि के समय से माता को शाकाहारी भोजन का ही भोग लगाया जाने लगा। इस सम्बन्ध में एक ऋथानक इस प्रकार है कि यहा (ओसिया) के राजा उत्पलदेव के पुत्र को एक बार सप ने डस लिया। फलत राजकुमार का निधन हो गया। तत्समय जैनाचार्य रत्नप्रभुसूरि वही विराज रहे थे। उन्होंने अपनी मत्र शक्ति से राजकुमार को जीवित कर दिया। उनके आग्रह पर माता का चटाई जाने वाली पशुबलि एवं मदिरा-पान की जो व्यवस्था थी वह समाप्त हो गई तथा उसी समय से माता के शाकाहारी भोग लगने लगा। माता के प्राय लापसी का भोग लगता है।

### प्राचीनता

पुरातत्त्व की दृष्टि से यह स्थान अत्यन्त महत्वपूर्ण है। ओसवाल महाजनों का उत्पत्ति-स्थान ओसिया ही माना जाता है। इमका प्राचीन नाम जैन-ग्रन्थों के अनुसार 'उपकेश पट्टन' था। श्री के सी जैन<sup>१</sup> के अनुसार इसका प्राचीन नाम उवारिशा व उपकेश था, जेसा कि शिलालेपो व प्रशस्तिया म उल्लिखित है। स्थानीय लोगों से जानकारी सुने पर इसके प्राचीन नाम उक्सागाल, उकेश, उपकेशपुर, पट्टन भी बताये गये। इस कम्बे की प्राचीनता के सम्बन्ध में जोधपुर राज्य के इतिहास<sup>२</sup> मे निम्न वृत्तान्त मिलता है— 'रत्नप्रभुसूरि ने यहा के राजा और सारा पजा को जैन बनाया। जैन यतियों ने ओसवालों की उत्पत्ति का

<sup>१</sup> एससियन्ट सिटीज एण्ड टाउन्स ऑफ राजस्थान पृ १८०

<sup>२</sup> जोधपुर राज्य का इतिहास— प्रथम खण्ड त गौरीशंकर हीरानद आड्डा, पृ २८ २९

समय वीर-निर्बाण सबत्<sup>१</sup> ७० (विक्रम सबत् से ४०० और ईस्वी सन् से ४५७ वर्ष पूर्व) और भाटो ने विस २२२ (ईस १६५) दिया है, जो कल्पित है क्योंकि उस समय तक तो ओसिया नगर की स्थापना का भी पता नहीं चलता। ओसवालों की उत्पत्ति का समय विस ११वीं शताब्दी के आसपास माना जा सकता है।<sup>२</sup> महावीर स्वामी के मंदिर के शिलालेख से यह विदित है कि ईसा की आठवीं शताब्दी के अंत में यहां गुर्जर प्रतिहार शासक वत्सराज शासन करता था। अनेकानेक अन्य तथ्यों के आधार पर यह शहर प्राचीन शहर था।

## मंदिरों की शृंखला

ओसिया विभिन्न मंदिरों की एक लम्बी शृंखला के लिए प्रसिद्ध रहा है। इसे राजस्थान का खजुराहो भी कहते हैं। ये मंदिर आकार की दृष्टि से छोट अवश्य हैं, फिन्तु दक्षिण भागत के विशाल मंदिरों से सरचना एवं स्थापत्य-कौशल में किसी भी प्रकार कम नहीं है। ‘ओसिया के मंदिर अपने आप में अद्भुत हैं।’<sup>३</sup> ब्राह्मण एवं जैन समुदाय का यह एक अति श्रद्धास्पद तीर्थ-स्थान है। ब्राह्मण एवं जैन समुदाय के यहां १६ प्रसिद्ध मंदिर हैं, जिनमें से अधिकाश मंदिर झालरापाटन (पाटन, चारावती) में निर्मित मंदिरों के स्थापत्य के अनुरूप हैं। ये मंदिर सातवीं, आठवीं शताब्दी के हैं। प्रत्येक मंदिर की स्थापत्य कला दूसरे मंदिर से भिन्न है। इनके प्रवेश द्वार देखते ही बनते हैं, जो अन्य कलाकृतियों के साथ नवग्रह प्रतिमाओं से भी अलगृत हैं। यहा का सूर्य-मंदिर अपनी विशिष्टता रखता है तथा प्राचीन मंदिरों में यह सबसे आकर्षक है। इसके शिखर एवं स्तम्भों पर उल्कीर्ण सजावट प्रशसनीय है। सूर्य भगवान की अनूठी मूर्ति है। महावीर स्वामी का मंदिर भी अपने किसी का अनूठा मंदिर है। पिपला देवी का भव्य मंदिर है जिसका जगमोहन (सभा

\* वीर निर्बाण सबत् के सम्बन्ध में गौरीशकर हीराजन आङ्गा न अपनी पुस्तक भारतीय प्राचीन लिपिमाला (द्विसंस्करण) में पृ. १६३ पर लिखा है कि जैना के अतिम तीर्थकर महावीर (वीर, वर्दमान) के निर्बाण (मारा) से जा सम्बतु माना जाता है। उसमा वीर निर्बाण सबत् कहत है।

२ राजस्थान धू एजेज, डॉ दशरथ शर्मा पृ. २०९

मठप) बहुत बड़ा है तथा तीस स्तम्भों पर आधारित है। सूर्य मंदिर के अतिरिक्त विष्णु भगवान के मंदिर तथा भगवान सत्यनारायण का मंदिर भी है, जिसका जीर्णोद्धार वि स १९६२ में कगया गया। इसके अतिरिक्त भैरव, चण्डिका, शीतला, क्षेमकरी क्षेत्रपाल आदि की प्रतिमाये भी सच्चियाय मंदिर में हैं।

मुहता नैणसी के अनुसार माता ने राजा उत्पलदेव को तालाब में खजाना बताया था। तालाब की खुदाई में जो खजाना मिला उससे देवी का मंदिर बनाया गया तथा तभी से तालाब का नाम नवलखा तालाब पड़ा, जो ओसिया कस्बे के दक्षिण-पूर्व में है।

मुगलो द्वारा मंदिरों के भव्य-स्थलों एवं मूर्तियों को निर्दयतापूर्वक तोड़ा गया। के सी जैन<sup>१</sup> के अनुसार इस क्षेत्र से गुजरते हुए सन् ११९५ में मुस्लिम सेना ने इस कस्बे का विघ्वस किया। सभवत यह पथ्वीराज तृतीय पर मोहम्मद गौरी के आक्रमण का समय था। मंदिरों के भग्नावशेष इस बात का प्रमाण देते हैं कि यह क्षेत्र मंदिरों की भूखला से परिपूर्ण था।

### चमत्कार

यो तो माता के अनेकानेक चमत्कार हैं तथापि मुहता नैणसी री रुयात<sup>२</sup> भाग १ में स्वप्न में माता द्वारा युद्ध में विजयी होने का जो वृत्तान्त दिया गया है, वह उन्हीं के शब्दों में उद्धृत किया जा रहा है—

वाघ पवार, तिवारी औलादरा साखला<sup>३</sup> हुवा तिण साखलारी दोय ठाकुराई सारीखी हुई तिणरी विगत—

वाघ पवार छहोटण, बाहडमेर छोडनै वाघोरियै आइ ग्हो। पडिहार गेचदैर घेर भुवा सुदर हुती, तिण परसग आयो। वाघोरियारो भाखर<sup>४</sup> दिखायो। इणरी भुवा खरच दै। पछै गैचदनू रजपूते भखायो,<sup>५</sup> कहो— तिणरी इसी दछा दीसै छै<sup>६</sup>, थानू मार धरती औ लेसी<sup>७</sup> तैर गैचद इण ऊपर फौज मेली। वाघनू मारियो। घणा साखला मारिया। मुहतो सुगाणो उबरियो।<sup>८</sup> वैरमी वाघावत पेट

<sup>१</sup> एनसिएट सिटीज एण्ड टाउन ऑफ राजस्थान पृ १४

<sup>२</sup> सम्पादक—बढ़ीप्रसाद साम्राज्या पृ ३२४ २५

(३) साखला वाय जिसकी औलान क साखल हुए २ पहाड ३ यैन्नाया ४ इमकी एसी हालत दीर्घती है ५ तुमझ मार काक तुम्हारी धरती य ल लग ६ बर गया।)

३४०/हमारी कुलनेविया

हुतो<sup>१</sup> सु मुहते सुगणो इणरी मानू लेनै अजमेर गयो। उठै गया पछै वैरसी  
वेगोही जायो<sup>२</sup> मोटो हुवो। अजमेर धणी था तिणनू मु। सुगणो वैरसीनू लेजाय  
मिछियो। धणा दिन चाकरी की। पछै मुजरो हुवो तरै कहो— ‘जाणै सो  
माग’<sup>३</sup> तरै इण कहो— ‘म्हारो वाप गैचद बिना खून<sup>४</sup> मारियो है, तिणरी ऊपर  
करो<sup>५</sup> फौज दो। तरै फौज उणे<sup>६</sup> दी। तरै वैरसी माताजीरी इछना मनमे करी—  
‘म्हारो वापरो वैर वक्ते’<sup>७</sup>। गैचद हाथ आवै तो हू क्वचल्पूजा करनै श्री सचियायजीनू  
माथो चढाऊ।<sup>८</sup> पछै सचियायजी आय सुपनै मे हुकम दियो,  
वासै<sup>९</sup> हाथ दिया तै कहो— काढै, वाँ, काढ़ी टोपी, वैहलै<sup>१०</sup> काढ़ी  
खोली, काळा बच्छ जोतरिया<sup>११</sup> जिदारै<sup>१२</sup> रूप किया साम्हा मिल्सी। औ  
गैचद है, तू मत चूकै कूट मारै।<sup>१३</sup> पछै वैरसी मूधियाड ऊपर फौज लेनै दोडियो।  
साम्हा उण रूप आयो, सु गैचद मारियो। पछै ओसिया जात आयो। आप  
एकत देहरो जड़नै क्वचल्पूजा करणी माडी<sup>१४</sup> तरै<sup>१५</sup> देवीजी हाथ झालियो<sup>१६</sup>  
खण्डो महेधारी सेवा पूजा सो<sup>१७</sup> राजी हुवा तोनै माथो बगसियो, तू सोनारो  
माथो कर चाढ।<sup>१८</sup> आपरे हाथरो सह वैरसीनू दियो, कहो— ‘ओ सख बजायनै  
साखलो कहाय।<sup>१९</sup>

पछै वैरसी आय रुणवाय वसियो। मधियाडरो कोट पडिहारारो उपाडै  
साखलै रुणकोट करायो।<sup>२०</sup>

पुजारी

माताजी की पूजा सेवक ब्राह्मणों द्वारा वी जाती है, जो अपने को शावद्वीपी  
ब्राह्मण बतलाते हैं तथा उनके द्वारा सेवा करने के कारण वे संवक्त कहलाये,  
ऐसी लोक-मान्यता है। सवत् १२३६ के कार्तिक सुदी १ (एकम) के एक  
१ वापा का बटा वैरसी उस समय गर्भ म था २ वहा जान क बाट जल्दी ही वैरसी का  
जन्म हा गया ३ तरी इच्छा हा सा माग ४ अपराध ५ उसक तिए तोहायता करा ६  
उसन ७ तब वैरसी न अपन मन म सचियाय माताजी का ध्यान करक अपनी इच्छा प्रकट की।  
८ मर वाप का बैर विकल ९ पीछ १० बहल के ११ काल बैल तुग तुए ५ जिन्न का।  
१२ बाट म आसिया की यामा करन को आया १३ मनिर का बाट करक एकान्त में कमल  
पूजा करनी शुरू की १४ तब १५ पकड़ा १६ स १७ यह शह बजा और साखला ग्रसिद्ध  
हा १८ पडिहारा क अधीनस्थ मूधियाड गाव का कट गिरवा कर साखलों न उसस रुणवाय

शिलालेख से जो माता के मंदिर के पृष्ठभाग म है, से यह विदित है कि उस समय से ही 'सेवक' माताजी की पूजा करते है।

### मंदिर की व्यवस्था

मंदिरों के जीर्णोद्धार मे माता के भक्त एव पुजारी जी की प्रेरणा प्रमुख रही है और यही कारण है कि मंदिर सुव्यवस्थित हालत में है। जनसहयोग, जिसम ओसिया नगरवासियों का महत्वपूर्ण योगदान है, के आधिक सहयोग से सभी मंदिरों पर ध्वजा, दण्ड स्थापित है तथा नवदुर्गा के तीन मंदिरों म मूर्ति स्थापित की गई है, जहा प्रतिवर्ष वैशाख सुदी ८ मे वैशाख सुदी ११ तक अभिषेक पूजन होता है।

या ता माता के दर्शनार्थ प्रतिदिन भक्त लोग आते है किन्तु चैत्र एव आसोज के नवरात्राओं म यहा विशाल मेला लगता है।

वर्तमान मे सच्चियाय माता के मंदिर की व्यवस्था एक ट्रस्ट द्वारा की जा रही है।

### यात्रियों की सुख-सुविधा

यात्रियों की सुख-सुविधा के लिए ट्रस्ट द्वारा ३० कमरों का निर्माण कराया जा चुका है जहा पानी, विजली की समुचित व्यवस्था है तथा यात्रियों को बिस्तर भी उपलब्ध कराये जाते है। मंदिर प्रागण मे भोजनशाला है, जहा यात्री की माग पर भगवती का प्रसाद (लापसी) बनाया जाता है।

माता के भक्त जात-जड़ले उतारने आते है। शादी के बाद गठजाड़े की जात भी देने आते है। जड़ले एव जात देने प्राय नवरात्रो के समय भक्तजन अधिक आते है।

पारीको के निम्न अवटका की यह कुलदेवी है—

१ वरमणा	जोशी
२ गलवा	जाशी
३ गणहड़ा	जोशी
४ पण्डिता (पिण्डताणा)	जोशी
५ भुम्पुरा	जाशी

६ केशवाणा (किवाण्या)	तिवाडी
७ पाईवाल	तिवाडी
८ सजोगी	तिवाडी
९ नगलाडा (नगलाण्या)	मिश्र (बोहरा)
१० भण्डारी	मिश्र (बोहरा)
११ गोगडा	उपाध्याय
१२ वामण्या (बामणिया) (बमन्या)	व्यास

- लखुक सुन्दरी माता के दर्शनार्थ दिनांक २१ मई १९९९ का गया। साथ थे चि खगन्द शाभित व माहित। चि दीपकराज व सुरन्द्र पारीक।

□□□

## शाकम्भरीः सकरायः समराय माता

पद्मपुराण<sup>१</sup> मे मा भगवती शाकम्भरी का ध्यान निम्न प्रकार दिया गया है—

शूलं पाशकपालचापकुलिशं वाणान् सृणि खेटकं  
शखं चक्रगदाहिखङ्गमभयं खट्वाङ्गदण्डधराम्।  
वर्षाभावशाद्वतान् मुनिगणान् शकेन यारक्षयत।  
त्रैलोक्या जनर्नी महेशदयिता ता स्तौमि शाकम्भरीम्॥

(पद्मपुराण)

जिन्होने अपने हाथो मे क्रमशः शूल, पाश, कपाल, धनुष, वज्र, बाण, अकुश, मूसल, शख, चक्र, गदा, सर्प, तलवार, अभयमुद्रा, खट्वाङ्ग और दण्ड धारण कर रखा है तथा वर्षा के अभाव मे दीर्घकाल तक अकाल पड़ जाने के कारण जिन्होने अपने शरीर से शाक आदि पदार्थों को उत्पन्न करके मतप्राय मुनियो के प्राणो की रक्षा की थी, उन त्रैलोक्य-जननी, भगवान् शकर की प्रिय वल्लभा भगवती शाकम्भरी की मै स्तुति करता हू।

श्री दुर्गा सप्तशती मे माता के स्वरूप का जा वर्णन किया गया है, वह निम्न प्रकार है<sup>२</sup>—

शाकम्भरी-नीलवर्णा-नीलोत्पलविलोचना।	
गम्भीरनाभिस्त्रिवलीविभूषितनूदरी॥	१२॥
सुकर्कशसमोत्तुङ्गवृत्तपीनधनस्तनी।	
मुष्ठि शिलीमुखापूर्णं कमलं कमलालया।	१३॥
पुष्पपल्लवमूलादिफलाद्यं	शाकसञ्चयम्।
काम्यानन्तरसैर्युक्तं	क्षुत्रृणमृत्युभयापहम्॥
कार्मुकं च स्फुरत्कान्ति विभ्रती परमेश्वरी।	१४॥

<sup>१</sup> कल्याण- भगवत लीला अक वर्ष ७२ अक ९ सितम्बर १९९८

<sup>२</sup> श्री दुर्गासप्तशती गीता प्रम गारुडपुर पु २१० ११

शाकम्भरी शताक्षी सा सैव दुर्गा प्रकीर्तिता॥ १५॥  
 विशोका दुष्टदमनी शमनी दुरितापदाम्।  
 उमा गौरी सती चण्डी कालिका सा च पार्वती॥ १६॥  
 शाकम्भरी स्तुवन् ध्यायञ्जपन् सम्पूजयत्रमन्।  
 अक्षयमश्नुते शीघ्रमग्रपानामृत फलम्॥ १७॥

शाकम्भरी देवी के शरीर की काति नीले रंग की है। उसके नेत्र नील कमल के समान हैं, नाभि नीची है तथा विवली से विभूषित उदर (मध्यभाग) सूक्ष्म है॥१२॥ उनके दोनों स्तन अत्यन्त कठोर, सब और से बराबर, ऊचे, गोल और हाथों में बाणों से भरी मुष्ठि, कमल, शाक-समूह तथा प्रकाशमान धनुप धारण करती है। वह शाकसमूह अनन्त मनोवाञ्छित रसों से युक्त तथा क्षुधा, तृप्ता और मृत्यु के भय को नष्ट करने वाला तथा फूल, पल्लव, मूल आदि एक फलों से सम्पन्न है। वे ही शाकम्भरी, शताक्षी तथा दुर्गा कही गयी है॥१३-१५॥ वे ही शोक से रहित, दुष्टों का दमन करने वाली तथा पाप और विपत्ति को शात करने वाली है। उमा गौरी सती, चण्डी, कालिका और पार्वती भी वे ही हैं॥१६॥ जो मनुष्य शाकम्भरी देवी की स्तुति, ध्यान, जप, पूजा और बन्दन करता है, वह शीघ्र ही अन पन एवं अमृतरूप अक्षय फल का भागी होता है॥१७॥

शाकम्भरी पराशक्ति भगवती जगदप्या का ही रूप है।<sup>१</sup> एक बार वर्षा के अभाव में सूखा पड़ गया। पृथ्वी पर एक बूद भी जल नहीं रहा। कुएं, बाबङ्घिया, पोत्तरे और नदिया विल्कुल सूख गई ब्राह्मणों के प्रार्थना करने पर शाक और खाद्य पदार्थ रस वाले फल हाथ में धारण कर करोड़ों सूखों के समान चमकने वाला विग्रह करण रस का अथाह समुद्र था। उनके नेत्रों से गिरत जल द्वारा नो दिन-रात तक अथाह वृद्धि होती रही। भगवती न अनेक प्रकार के शाक तथा स्वादिष्ट फल अपने हाथ से दिय। भाति-भाति के अन उत्पन्न हुए। पशुओं के लिए धास हुआ। अत भगवती का एक नाम शाकम्भरी भी पड़ गया।

<sup>१</sup> यस्याण—संक्षिप्त दवीप्रगवत अक वर्ष ३४ (१९६०) पृ ३१५ १३ का सारांश।

ऐसा होने पर दुर्गम नामक दैत्य अपनी सेना को लेकर अस्त्र-शस्त्र से सुसज्जित होकर युद्ध के लिए चल पड़ा। उसके पास एक अक्षौहिणी सेना थी। देवी ने देवता और ब्राह्मणों की रक्षा के लिए तेजोमय चक्र खड़ा कर दिया। देवी और दैत्य दोनों की लड़ाई ठन गई। देवी के विग्रह से बहुत सी उग्र शक्तिया प्रकट हुई। कालिका, तारिणी, बाला, त्रिपुरा, भैरवी, रमा, बगला, मातृज्ञी, त्रिपुर-सुन्दरी, कामाक्षी, देवी तुलजा, जम्भिनि, मोहिनी, छिन्नमस्ता, गुह्यकाली और दशासहस्रबाहुका आदि नाम वाली बत्तीस शक्तियों के पश्चात् चौसठ और फिर अनगिनत शक्तियों का प्रादुर्भाव हुआ। देवी के बाणों से राक्षस की मृत्यु हो गई और वह देवी के रूप में समा गया।

महाभारत के वनपर्व<sup>१</sup> में भगवती शाकम्भरी की महिमा का गुणगान निम्न प्रकार किया गया है—

शाकम्भरीति विख्याता त्रिपु लोकेषु विश्रुता।  
 दिव्य वर्षसहस्र हि शाकेन किल भारत॥  
 आहार सा कृतिवती मासि मासि नराधिप।  
 ऋषयोऽभ्यागतास्तत्र देव्या भक्तास्तपोधना ॥  
 आतिथ्य च कृत तेषा शाकेन किल भारत।  
 तत शाकम्भरीत्येव नाम तस्या प्रतिष्ठितम्॥  
 शाकम्भरी समासाद्य ब्रह्मचारी समाहित।  
 विरात्रमुषित शाक भक्षयेत्रियत शुचि ॥  
 शाकाहारस्य यत् सम्यग्वर्यद्वाशभि फलम्।  
 तत् फल तस्य भवति देव्याश्छन्देन भारत॥  
 (महा वनपर्व तीर्थ ८४/१४-१८, पद्य आदि २८/१४-१८)

भगवती शाकम्भरी का नाम तीनों लोकों में विख्यात है। उन्होंने हजार दिव्य वर्षों तक महीने के अन्त में एक बार शाक का आहार करके तप किया था और जब देवीभक्त ऋषिगण उनके आश्रम पर आये, तब शाक से ही उनका आतिथ्य किया था। अत एव उनका नाम शाकम्भरी कहा जाता है। शाकम्भरी के पास जाकर ब्रह्मवर्यपूर्वक ध्यानपरायण होकर यदि तीन दिनों तक स्नानादि

से पवित्र रहे एवं शाकाहार करे, तो बारह वर्षों तक शाकाहार करने का जो फल है, वह उसे देवी की कृपा से प्रसाद के प्राप्त हो जाता है।

शाकम्भरी माता के स्थान या तो अनेकानेक स्थानों पर है, किन्तु प्राचीनता की दृष्टि से निम्न स्थान अपना विशिष्ट एवं ऐतिहासिक महत्व रखते हैं—

१ उदयपुरवाटी स्थित सकराय माता।

२ साभर स्थित शाकम्भरी (समराय) माता।

३ बहेट, सहारणपुर (मेरठ) स्थित शाकम्भरी, शताक्षी माता।

शाकम्भरी माता के मंदिर यद्यपि देवी शताब्दी में या इसके पूर्व में निर्मित हुए हैं, तथापि यह अनादि देवी है। श्रीदुर्गा सप्तशती में शाकम्भरी माता की स्तुति मार्कण्डेय पुराण के आधार पर की गई है तथा माता द्वारा राक्षसों के सहार का विपद वर्णन किया गया है। मार्कण्डेय पुराण के ग्यारहवें अध्याय में देवी ने कहा है<sup>१</sup>—

ततोऽहमखिल लोकमात्मत्पदेहसमुद्धवै ।

भरिष्यामि सुरा शाके-रावृष्टे प्राणधारकै ॥ ४८॥

शाकम्भरीति विख्याति तदा भाविष्यायह भुवि ।

तत्रैव च वधिष्यामि दुर्गमाख्य महासुरम् ॥ ४९॥

देवताओं। उस समय मैं अपने शरीर से उत्पन्न हुए शाकों द्वारा समस्त संसार का भरण पोषण करूँगी। जब तक वर्षा नहीं होगी, तब तक वे शाक ही सबके प्राणों की रक्षा करेंगे ॥४८॥ ऐसा करने के कारण पृथ्वी पर 'शाकम्भरी' नाम से मेरी देखाति होगी। उसी अवतार मैं मैं दुर्गम नामक महादेव्य का वध भी करूँगी ॥४९॥

शाकम्भरी माता के तीन प्राचीन मंदिर हैं—

१ सकराय माता (उदयपुरवाटी, जि. झुन्झुनू)

२ शाकम्भरी, समराय (साभर)

३ शाकम्भरी, शताक्षी (सहारणपुर)।

माता के विभिन्न स्थानों में प्रसिद्ध मदिरों की जानकारी के क्रम में सवप्रथम उदयपुरवाटी स्थित सकाय माता का आलेख प्रस्तुत है।

### स्थिति

अगवली पवतमाला की खण्डेला, उदयपुरवाटी, रघुनाथगढ़, सीकर आदि की पर्वतीय उपत्यकाओं के पास प्रसिद्ध लोहागल तीर्थ स्थान के समीप सकाय माता का मदिर अवस्थित है। माता के मदिर के चारों ओर पवतमालाये हैं। यह सम्पूर्ण क्षेत्र धार्मिक भेत्र है जहाँ हिमालयपुत्र लोहागल तीर्थ-स्थान है। इस क्षेत्र का विशद वर्णन महाभारत के सभापर्व तथा बनपर्व पद्मपुराण, वायुपुराण इत्यादि प्राचीन ग्रन्थों में किया गया है। माता के मदिर के चारों ओर जहाँ प्रकृति का निश्चल साग्राज्य है, वहीं चारों ओर बहते झरने कल-कल करती शकरा नदी, आग्र कुज्जा, बनीर व सीताफल के वृक्ष तथा अनेकानेक अन्य फलदार वृक्षों व पुष्पलताओं से आच्छादित क्षेत्र यहाँ के चातावरण को सुवासित करता है—मनोहारी छटा बिखेता है।

सड़क मार्ग से माता के मदिर तक आने का उदयपुर (उदयपुरवाटी) से ही एकमात्र रास्ता है। माता का स्थान सड़क मार्ग से निम्न स्थानों से है—

- (i) खण्डेला
- (ii) सीकर
- (iii) झुन्झुनू
- (iv) लोहागल

यात्रीगण माताजी के दर्शनार्थ गोल्याणा, खण्डेला, पलसाना, राणोली, गोरखा आदि ग्रामों से भी आते हैं, किन्तु इन स्थानों से सीधे आने वाले यात्रियों को पहाड़ी की चढाई करके आना होता है, अतः सुगम रूप से आने के लिए सड़क मार्ग उदयपुरवाटी, जिसे उदयपुर चिराणा भी कहते हैं, से ही है।

### स्थान की प्राचीनता<sup>१</sup>

यह क्षेत्र अत्यन्त प्राचीन है। लोहागल-महात्म्य में इसकी प्राचीनता का विशद वर्णन किया गया है। यहा ना ब्रह्मद-तीर्थ देवतार्थ का

Hinduism Discord Server <https://discord.com/invite/H8RyqfG>  
<sup>१</sup> विस्तृत अध्ययन के लिए लोहागल महात्म्य देखें।

अत्यन्त प्रिय तीर्थ था। कलियुग मे पापप्रबण लोग स्नान करके इस तीर्थ को दूषित न कर दे, इस आशका से देवताओं ने ब्रह्माजी से इस तीर्थ की रक्षा करने की प्रार्थना की। ब्रह्माजी के आदेश से हिमालय ने अपने पुत्र केतु नामक पर्वत को यहा भेजा। केतु ने अपनी आराधना से तीर्थ के अधिदेवता को प्रसन्न किया और उनकी आज्ञा से तीर्थ का आरक्षित कर लिया। इस प्रकार ब्रह्महृद-तीर्थ पर्वत के नीचे लुप्त हो गया किन्तु उसकी सात धाराएं पर्वत के नीचे से प्रवाहित होने लगीं। वे धाराएँ आज भी विद्यमान हैं।

इस क्षेत्र मे सूर्यनारायण ने विष्णु भगवान् की आराधना की, इन्द्र ने यहा तपस्या की, रावण ने वर प्राप्ति हेतु घोर तप किया। परशुरामजी ने पाँपों से मुक्ति पाने हेतु यज्ञ किया तथा महाभारत के युद्ध के पश्चात् पाण्डवों ने महासहार के पाप से मुक्ति पाने हेतु सभी तीर्थों की यात्रा की। कृष्ण भगवान के यह कहने पर कि जहा भी तुम्हारे अस्त्र-शस्त्र गल जावे, वही तुम पाप मुक्त हो जाओगे। लोहार्गत तीर्थ स्थान पर ही भीम की गदा एवं अन्य के शस्त्र गल गये। इस क्षेत्र की प्राचीनता के सम्बन्ध मे अनेकानेक प्राचीन ग्रन्थों एवं पुराणों मे विशद वर्णन प्राप्त है।

### लोहार्गत माहात्म्य

सकराय माता का स्थान लोहार्गत (लोहागढ़) क्षेत्र मे है। लोहार्गत माहात्म्य मे इस क्षेत्र की परिकल्पना का वर्णन किया गया है तथा माता द्वारा मानव मात्र के कल्याणार्थ शाक (भाजी) द्वारा रक्षा की गई जिसका इन्द्र द्वारा स्तुति करने का वर्णन है—

यत्रेन्द्रस्तपसा पूर्वं जगाम स्वपदं द्विजा ॥६॥  
शक्रधारा नरं स्नात्वा स्वर्गलोके महीयते।

तत्र शाकम्भरीं नत्वा सर्वकामफलप्रदाम् ॥७॥

अनावृष्ट्या पुरा शाकं सृष्ट्या सभरिता प्रजा ।  
तेन शाकम्भरीं नामा ख्याता सर्वार्थदायिनी ॥८॥

फिर वहा से तीना लोकों मे प्रसिद्ध, जो शक्रतीर्थ है, वहा जाना चाहिए। हे विश्रो! यह वही स्थान है, जहा पर पहले देवराज इन्द्र ने तपस्या करके

२८नी पदवी मुन प्राप्त की थी ॥६॥ उस शक्रतीर्थ मे स्नान कर समस्त कामनाओं के पूर्ण करने वाली शाकम्भरी देवी का पूजन करने से मनुष्य स्वर्ग लोक मे आनन्द पाता है ॥७॥ यह वही देवी है जिसने पहले किसी समय अनावृष्टि के कारण अमाल पड़ने पर वेवल शाक (भाजी) के द्वारा समस्त प्रजाओं की प्राणरक्षा की थी। इसी से लोक मे उसका अन्वर्थ नाम 'शाकम्भरी' प्रसिद्ध है। वह सब पकार के मनोरथों को प्रदान करने वाली है ॥८॥

लोहागल महात्म्य मे इस क्षेत्र के सूर्यकुण्ड, ब्रह्मकुण्ड, कोह कुण्ड (कुह कुण्ड), नागकुण्ड, खुरकुण्ड तथा गगा, सरस्वती, सध्या, शक्रा, शोभायवती (शोभायवती) नदियों का भी वर्णन आया है।

शक्रधारा नदी के उद्रम स्थल पर माता सकराय का स्थान है। यह स्थान ब्रह्मकुण्ड के दक्षिण की ओर तथा इस स्थान के पश्चिम की ओर कुह कुण्ड भी है।

### नामकरण

माता के नाम के सम्बन्ध मे अनक विद्वानों के अलग-अलग मत है। सभव है— शङ्क नदी के पास होने से इसका नाम शङ्का और बाद म सकराय हो गया हो। शङ्क (इन्द्र) ने यहा तपस्या की थी, अत शङ्क से सकराय हो गया हो।

डॉ बाबूलाल शर्मा<sup>१</sup> के अनुसार— 'प्राचीन काल मे देवी का नाम शकरा था। शकरा से ही बाद म 'शकराइ', 'मकगाइ', 'सकराइ' और 'सकराय' नाम हो गया। मदिर से थोड़ी दूर पर कोह-कुण्ड नामक स्थान के पास 'शकराणक' नाम का गाव था, जिसका उल्लेख हर्षनाथ पर्वत के सम्बद् १०३० के शिलालेख में हुआ है। गाव का यह नाम देवी के शकरा नाम स ही पड़ा था। 'शकराणक' से भी शकरायण, सकरायण और फिर 'ण' के लोप से 'सकराय' नाम बनता है। हिन्दू धर्मकोष<sup>२</sup> के अनुसार— शाकम्भरी दुग्ध का नाम है। इसका शाब्दिक अर्थ है 'शाक से जनता का भरण बरन वाली।'

<sup>१</sup> शाकम्भरी श्री पृ १०

<sup>२</sup> डॉ रामबल्ली पाण्ड्य पृ ६२२

आठवीं शताब्दी से म्यारट्वी शताब्दी विक्रमी तक के यहा पर उपलब्ध तीन शिलालेखों में देवी का शकरा के नाम से ही स्मरण किया गया है। शकरा शब्द का ही प्रचलित रूप सकराय है। इस प्रदेश के सर्वसाधारण जन, परम्परा से इस देवी को इसी नाम से पुकारते आ रहे हैं। किन्तु यहा के आधुनिक सस्कृतज्ञ विद्वानों ने शकरा (सकराय) को शाकम्भरी कहना शुरू कर दिया है, जो असंगत है। शाकम्भरी (साभरि-साभर), अजमेर के प्रतापी चौहान राजाओं की पहली राजधानी थी। वही पर शाकम्भरी देवी का इतिहास-प्रसिद्ध मंदिर है और शाकम्भरी के नाम पर ही उस स्थान का नाम शाकम्भरी (साभर) प्रसिद्ध हुआ था। इसलिए इस सकराय स्थान को शाकम्भरी कहना इतिहास सम्मत नहीं है। इसका सही नाम शकरा या सकराय है।<sup>१</sup>

कल्याण के सक्षिप्त श्रीदेवीभागवत अक<sup>२</sup> में माता के नामों के इतिहास का वर्णन इस प्रकार किया गया है—

प्राचीन समय की बात है— दुर्गम नाम का एक महान दैत्य था। उसकी आकृति अत्यन्त भयकर थी। हिरण्यक्ष के वश में उसका जन्म हुआ था। उस महानीच दानव के पिता राजा रुद्र थे। देवताओं का बल वेद है। वेद के लुम हो जाने पर देवता भी नहीं रहे, इसमें कोई सशय नहीं है। अत पहले वेद को ही नष्ट कर देना चाहिए— यो सोचकर वह दैत्य तपस्या करने के विचार से हिमालय पर्वत पर गया। मन में ब्रह्माजी का ध्यान करके उसने आसन जमा लिया। वह केवल वायु पीकर रहता था। उसने एक हजार वर्षों तक बड़ी बठिन तपस्या की। उसके तेज से देवताओं और दानवों सहित सम्पूर्ण प्राणी सतम हो उठे। तब विकसित कमल के समान सुन्दर मुख से शोभा पाने वाले चतुर्मुख भगवान् ब्रह्मा प्रसन्नतापूर्वक हस पर बैठकर वर देने के लिए दुर्गम के पास पधारे। उस समय दुर्गम समाधि लगाये था। उसकी आर्ख मुदी हुई थी। ब्रह्माजी ने उससे स्पष्ट स्वर में कहा— तुम्हारा कल्याण हो। तुम्हारे मन में जो वर पाने की इच्छा हो, वह माग लो। मैं वरदाताओं का स्वामी हूँ। आज तुम्हारी तपस्या से सतुष्ट हामर मैं यहा आया हूँ।

<sup>१</sup> शावायादी क शिलालेख— ल मुजनसिंह शायावत ५ १० एनसिएन सिटीन एण्ड टाउन्स औक राजस्थान ल कैलाशाच जैन ५ ३१४

<sup>२</sup> कल्याण— साप्तम श्रीनी भावगत अक वर्ष ३४ (११६०) ५ ३१५

राजन्! ब्रह्माजी के मुख से निकली हुई यह वाणी सुनकर दुर्गम सावधान होकर उठ पड़ा। उसने पितामह की पूजा करके यह वर मांगा कि हे सुरेश्वर! मुझे सम्पूर्ण वेद देने की कृपा कीजिए। सब वेद मेरे पास आ जाए। महेश्वर! साथ ही मुझे वह बल दीजिए, जिससे मैं देवताओं को परास्त कर सकूँ।'

दुर्गम की यह बात सुनकर चारों वेदों के परम अधिष्ठाता ब्रह्माजी 'ऐसा ही हो' कहते हुए सत्यलोक मे चले गये। तब से ब्राह्मणों को समस्त वेद विस्मृत हो गये। स्नान, सध्या, होम, श्राद्ध, यज्ञ और जप आदि वैदिक क्रियाएं बन्द हो गयीं। सारे भूमण्डल में भीषण हाहाकार भय गया। ब्राह्मणगण आपस में आश्चर्यपूर्वक कहने लगे— 'यह क्या हो गया? यह क्या हो गया? अब वेद के अभाव में हमें क्या करना चाहिए?'

इस प्रकार सारे समाज में घार अनर्थ उत्पन्न करने वाली अत्यन्त भयकर स्थिति हो गयी। देवताओं को हवि का भाग मिलना बद हो गया। अत निर्जर होते हुए भी वे सजर हो गये— स्वभावत जिनके पास बुद्धापा नहीं आ सकता था, उन्हें अब बुद्धापे ने ग्रस लिया। फिर उस दैत्य ने बल से अमरावती नामक नगरी धेर ली। दुर्गम का शरीर बड़े के समान कठोर था। देवता उसके साथ युद्ध करने में असमर्थ होकर भाग गये। पर्वत की कदराओं और शिखरों पर— जहा कहीं भी स्थान मिला, वही रहकर वे पराशक्ति भगवती जगदम्बा का ध्यान करते हुए समय बिताने लगे। राजन्! अग्रि मे हवन न होने के कारण वर्षा भी बद हो गयी। वर्षा के अभाव में धोर सूखा पड़ गया। पर्वती पर एक बूद भी जल नहीं रहा। कुएं, बाबडिया, पोखर और नदिया बिल्कुल सूखा गयीं। ऐसी अनावृष्टि सी वर्षों तक रही। बहुत-सी प्रजा तथा गाय-भैस आदि पशु प्राणों से हाथ धो बेठे। घर-घर में मनुष्यों की लाशें बिछ गयीं।

इस प्रकार का भीषण अनिष्टप्रद समय उपस्थित होने पर कल्याणस्वरूपिणी भगवती जगदम्बा की उपासना करने के विचार से ब्राह्मण लोग हिमालय पर्वत पर गये। समाधि, ध्यान और पूजा के द्वारा उन्हनि देवी की स्तुति की। वे निराहार रहते थे। मन एकमात्र भगवती में लगा था। देवी के शरणापत्र होकर वे स्तुति करने लगे— 'परमेश्वरी! हम पामर जनों पर दया करो। अम्बिके! हम सब तरह से अप्नाराधी हैं। तथापि हम पर कृपा न करना तुम्ह शोभ नहीं।'

देता। सबके भीतर निवास करने वाली देवेश्वरी। तुम्हारो प्रेरणा के अनुसार ही वह दुष्ट दैत्य सब कुछ करता है अन्यथा, वह कर ही क्या सकता था? महेश्वरी। तुम बारम्बार क्या दरउ रही हो? तुम जेसा चाहो, वैसा ही करने में पूर्ण समर्थ हो। महेशानी। धोर सक्ट उपस्थित है। तुम इससे हमारा उद्धार करो। अम्बिके! जीवन के अभाव में हमारी स्थिति कैसे रह सकती है? अनन्त कोटि ब्रह्माण्ड पर शासन करने वाली महेश्वरी। जगदम्बिके! प्रसन्न हो जाओ, प्रसन हो जाओ। हम तुम्हे प्रणाम करते हैं। कूटस्थरूपा, चिद्रूपा, वेदान्तवद्या तथा भुवनेशी। तुम्हे बारम्बार नमस्कार है। सम्पूर्ण आगम-शास्त्र 'नेति-नेति' वाक्यों से जिनका सकंत करत है, उन सर्वकारणस्वरूपिणी भगवती के हम सम्यक् प्रकार से शरणागत है।'

इस प्रकार ब्राह्मणों के प्रार्थना करने पर भगवती पार्वती ने जो 'भुवनेशी' एवं 'महेश्वरी' नाम से विठ्यात है, अपनी अनन्त आखों से सम्पन्न दिव्यरूप के दर्शन कराये। उनका वह विग्रह कञ्जल के पवत की तुलना कर रहा था। आखे ऐसी थी, मानो नीले कमल हो। कध ऊपर उठ हुए थे। विशाल वक्ष स्थल था। हाथा में बाण, कमल के पुष्प, पल्लव और मूल सुशोभित थे। जिनसे भूख प्यास और बुढ़ापा दूर हो जाते हैं, ऐसे शाक आदि खाद्य पदार्थों को उहाने हाथ में धारण कर रखा था। अनन्त रसवाते फल भी हाथ म थे। महान् धनुष से भुजा सुशोभित थी। सम्पूर्ण सुन्दरता का सारभूत भगवती का वह रूप बड़ा ही कमनीय था। करोडो सूर्यों के समान चमकने वाला वह विग्रह कर्म-रस का अथाह समुद्र था। ऐसी झाकी सामने उपस्थित करने के पश्चात् जगत् की रक्षा में तत्पर रहने वाली करुणार्द्ध-हृदया भगवती अपनी अनन्त आखों से सहस्रों जलधाराएं गिराने लगी। उनके नेत्रों से निकले हुए जल के द्वाग नौ रातों तक त्रिलोकी पर महान् वृष्टि होती रही। सम्पूर्ण पाणियों को दुखी देखकर भगवती की आखों से आसू के रूप में यह जल गिरा था। जल पाने से पाणियों को बड़ी तृप्ति हुई। सम्पूर्ण ओषधिया भी तृप्त हो गयीं। राजन! उस जल से नदी और समुद्र बढ़ गय। जो देवता पहले लुक-छिपकर रहते थे, वे अब बाहर निकल आये। वे देवता और ब्राह्मण मब एक साथ मिलकर भगवती का स्तवन करने लगे—

'वेदान्त के अध्ययन से समव म आन वाली ब्रह्मस्वरूपिणी दवी। तुम्हे बार-बार नमस्कार है। अपनी माया से जगत् को धारण करने वाली तथा भक्ता

के लिए कल्पवृक्ष एवं श्रद्धालु व्यक्तियों के कल्याणार्थ दिव्य विग्रह धारण करने वाली देवी। तुम्ह अनेक प्रणाम हैं। सदा तूम रहने वाली अनुपम रूगो से सुरोभित भुवनेश्वरी। तुम्हे नमस्कार है। देवी! तुमने हमारा सकट दूर करने के लिए सहमता नेत्रा से सम्पन्न अनुपम रूप धारण किया है। अतएव अब तुम 'शताक्षी' इस नाम से विराजने की कृपा करो। माता! भूख से अत्यन्त पीड़ित होने के कारण तुम्हारी विशेष सूति करने में हम असमर्थ हैं। अम्बिके! महेशानी! तुम दुर्गम नामक दैत्य से वेदों को छीन लेने की कृपा करो।'

ब्राह्मणों और देवताओं का यह वचन सुनकर भगवती शिवा ने अनेक प्रकार के शाक तथा स्वादिष्ट फल अपने हाथ से उन्हे खाने के लिए दिये। पाँति-भाति के अन्न सामने उपस्थित कर दिये। पशुओं के खाने योग्य कोमल व अनेक रसों से सम्पन्न नवीन तृण भी उन्हे देने की कृपा की। राजन्! उसी न से भगवती का एक नाम 'शाकम्भरी' भी पड़ गया।

'उदयपुरवाटी स्थित सकराय माताजी के मंदिर में दो मूर्तियां विराजमान हैं। जिनमें एक सकराय माता (ब्रह्माणी जी) है व दूसरी रुद्राणी है जिसे काली माता भी कहत है। काली माता के सम्बन्ध में ऐसी लोकोक्ति है कि ये पास के ही एक कुण्ड में से प्रकट हुई थीं जो काली कुण्ड के नाम से प्रसिद्ध । काली कुण्ड माता के प्रवेश द्वार एवं मध्य द्वार के मध्य में अवस्थित है, जिसे कालान्तर में पहियों से बद कर दिया गया है।

डॉ बाबूलाल शर्मा<sup>१</sup> ने माताओं के विग्रह के सम्बन्ध में जो वर्णन किया है वह दृष्टव्य है। उनके अनुसार वैसे ये दोनों प्रतिमाएं महिपासुरमर्दिनी देवी की हैं। दोनों देविया के ही आठ भुजाएं हैं जिनमें विभिन्न अस्त्र-शस्य धारण किये हुए हैं। देवी सिंह पर आरूढ़ है और महिपासुर का वध कर रही है। दोना प्रतिमाएं लगभग समान आकार-प्रकार की हैं और बड़ी सुन्दर हैं। देवी के मुखों पर सिन्दूर मढ़ित है। दोनों प्रतिमाओं में आधारभूत अतर यही है कि रुद्राणी की प्रतिमा स्थानीय मैड-पत्थर से निर्मित है जबकि ब्रह्माणी अथवा शाकम्भरी की प्रतिमा अपेक्षाकृत प्राचीन है और गुम्राल अर्थात् वि स ४००-५०० के आसपास की प्रतीत होती है जबकि ब्रह्माणी अथवा शाकम्भरी ३-४ ~

प्रतिमा अपेक्षाकृत अर्वाचीन है और वि स ११००-१२०० के आसपास में बनी प्रतीत होती है। इससे प्रकट होता है कि कालीजी के प्रतिमा के अनुक्रम में ही बाद में ब्रह्मणी अथवा शाकम्भरी देवी की प्रतिमा का निर्माण हुआ।<sup>1</sup>

माता के नामों के सम्बन्ध में विद्वान् काई भी मत रखें, किन्तु यह निर्विवाद सत्य है कि आदि शक्ति के अनेक रूप है, भक्त अपनी श्रद्धा एवं मान्यता के आधार पर माता को किसी भी रूप एवं नाम से पूजें, माता उनकी रक्षा अवश्य करती है, मनोकामना पूरी करती है।

दाना देविया निज मंदिर में चादी के सिहासन पर (गर्भगृह में) विराजमान है। गर्भगृह के सामने यात्रियों के दर्शनार्थ एवं पाठ पूजा करने वाले भक्तों, पण्डितों के लिए विशाल सभामंडप है। माता का विशाल उच्च शिखरबद्ध मंदिर दूर तक अपनी निराली शोभा बिखेरता है।

दोनों देवियों के विग्रह समान से है, तथापि सक्राय माता का मुह थोड़ा तिरछा है। दर्शनार्थी भक्त के दाहिने हाथ की ओर सक्राय माता या ब्रह्मणी है तथा दर्शनार्थी भक्त के बाये हाथ की ओर माता काली या रुद्राणी का विग्रह है।

### मंदिर निर्माण

प्राप्त शिलालेखों से यह विदित है कि इस मंदिर के मंडप का निर्माण वि स ६९९ में हुआ तथा ११वीं एवं १२वीं शताब्दियों में जीर्णोद्धार हुआ। डॉ भण्डारकर के अनुसार मंदिर के बाहर की दीवार आठवीं शताब्दी के पूर्व की है। कालान्तर में मंदिर जीर्ण-शीर्ण हो गया और भगवती के भक्त नवलगढ़ निवासी श्री रामगोपाल जी डगायच (खण्डेलवाल) ने वर्तमान नवीन मंदिर का निर्माण कराया। १० वर्ष की कालावधि में (वि स १९७० से वैशाख शुक्ला सप्तमी स १९८०) सवा लाख रुपयों की लागत से नवीन मंदिर का निर्माण हुआ। मंदिर का विशाल शिखरबद्ध है तथा जगमोहन में ३२ स्तम्भ हैं।

यह एक भक्त पर देवी की कृपा ही थी कि सेठ रामगोपाल जी डगायच जब सवत् १९८६ के आश्विन नवरात्रों में देवी के दर्शनार्थ आये तो अष्टमी के दिन माता के मंदिर में भक्ति भाव से भजन करते हुए देह त्याग कर देवी की ज्योति में विलीन हो गये। उनकी अतिम इच्छानुसार उनका दाहसंस्कार

शकरा नदी के तट पर नवमी को किया गया, जहा उनकी स्मृति में उनके बशजों ने चबूतरे का निर्माण कराया है।

## माता के आयुध

दुर्गा सप्तशती में मूर्ति रहस्य बताते हुए माता के हाथों में बाणों से भरी मुष्टि, कमल, शाक समूह, प्रकाशमान धनुष आयुध लिखे हैं परन्तु माता के पुजारी के अनुसार सकराय माता के आयुध, जो मूर्ति ने धारण कर रखे हैं वे निम्न प्रकार हैं— गदा, पद्म, शख, त्रिशूल, खड़ग, कमल का पुष्प, बरद हस्त (अभय देता) और मूसल।

## भोग

माताजी के मंदिर में जो दो मूर्तियां हैं वे सकराय माता व काली माताजी की हैं। चर्तमान में दोनों माताओं को एक ही थाली में शाकाहारी भोग लगाया जाता है। माताजी को सीरा व पुङ्गी अधिक प्रिय हैं अतः प्राय सभी यात्री माताजी के सीरा पुङ्गी का ही भोग लगाते हैं। उनके भोग के सम्बन्ध में ऐसा बताया गया है कि पहले सकराय माता के शाकाहारी तथा काली माता के मंदिर एवं पशुबलि का भोग लगाता था तथा भोग के समय दोनों माताओं की प्रतिमा के बीच में पर्दा लगा दिया जाता था। मंदिर के महत गुलाबनाथ जी के समय की घटना है कि भोग लगाते समय शाकाहारी एवं मासाहारी बर्तन आपस में टकरा गये, फलत सकराय माता को क्रोध हुआ और उसने अपना मुह काली माता की ओर से टेढ़ा (तिरछा) कर लिया, तबसे शाकम्भरी माता का मुह टेढ़ा है। गुलाबनाथ जी को माता की आज्ञा हुई कि भविष्य में दोनों देवियों को शाकाहारी भोग ही लगाया जावे, तदनुसार तबसे ही यह व्यवस्था स्थापित कर दी गई कि भविष्य में दोनों देवियों के शाकाहारी भोग ही लगाया जावे।

## शिलालेख<sup>१</sup>

शकरा (सकराय) माता के मंदिर में सलग्र प्रथम शिलालेख (वि स ७४९) से ज्ञात होता है कि उक्त मंदिर में चण्डिका की मूर्ति विराजमान है। उसके एक पाश्व में गणपति तथा दूसरे पाश्व में धनद (कुबेर) की मूर्तिया

<sup>१</sup> [https://hindupedia.com/m/Discord\\_Server.html](https://hindupedia.com/m/Discord_Server.html)

है। उस चण्डिका को ही शकरा कहा जाता था। पुरातत्वज्ञ डॉ भण्डारकर का भी यही अभिमत रहा है। शम्भा देवी के मंदिर में तीन शिलालेख उत्कीर्ण हैं जो प्राचीनता की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण हैं। उन्हीं को यहाँ उद्धृत किया जा रहा है—

श्री ओङ्गारी ने इस शिलालेख का सम्बन्ध ७४९ विक्रमी पढ़ा था<sup>१</sup> किन्तु इसके विपरीत डॉ डी सी सरकार ने उक्त शिलालेख को वि स ६९९ का माना है। मिति द्वितीय आषाढ़ शुक्ला २ अमित है। उक्त शिलालेख सुन्दर सस्कृत छन्दों में आबद्ध है। शिलालेख का सम्पूर्ण पाठ यिसा होने से पढ़ा नहीं जा सका। महामहोपाध्याय गोरीशम्भु ओङ्गार के एतद्विषयक उल्लेख एवं डॉ दशरथ शर्मा द्वारा उस पर किये गये विवेचन के अनुसार<sup>२</sup> शिलालेख में उत्कीर्ण नाम वाले वैश्य गौष्ठिकों (चदा करके भवन निर्माताओं) ने भगवती शक्रा देवी के मंदिर के सामने अपनी पुण्यवद्धि हेतु देवताओं के मण्डप का निर्माण कराया। वे सभी गौष्ठिक दूसरा और धर्कट गोत्र के वैश्य थे। शिलालेख में उनके नामों का उल्लेख इस क्रम से हुआ है—

- १ द्वासर वशीय यशोवर्धन का पोत तथा श्रेष्ठि राम का पुत्र श्रेष्ठि मण्डन
- २ धर्कट वशीय मण्डन का पौत्र और वर्धन का पुत्र श्रेष्ठि गर्ग
- ३ धर्कट वशीय वणिक भट्टियक के पुत्र गणादित्य, देवल और शिव
- ४ विष्णुवाक् का पुत्र शक्र
- ५ मण्डुवाक् का पुत्र आदित्यवर्धन
- ६ बाद का पुत्र आदित्यनाग
- ७ नदक का पुत्र भद्र
- ८ जउल्ल का पुत्र उद्यातन
- ९ सोधक का पुत्र शक्र

<sup>१</sup> प. ज्ञावरमल्ल शर्मा तथा खण्डला बडा पाना के युवराज कुमार प्रनापमिह के साथ मान्यनीय आङ्गारी न १७ फरवरी १९३५ ई का सक्राय की यात्रा की थी तब उन्हाँन वहाँ पर सलग तीन शिलालेख पढ़ और मातानी के मंदिर में रही वही में उनका आशाय अपने हस्ताख्यों से अक्षित रर्न लिया था।

<sup>२</sup> डा त्वारक शर्मा लख संग्रह प्रथम भाग पृ ९

उपर्युक्त शिलालेख से ज्ञात होता है कि वि स ७४९ अथवा सवत् ६१९ के पूर्व ही शकरा देवी का मंदिर वहां पर विद्यमान था। इस शिलालेख म उल्लिखित नाम वाले वैश्य गोपियों ने उभी मंदिर के सामने देवताओं का पण्डप बनवाया था। अत उक्त शिलालेख से देवी के मंदिर के निमाण काल के समय पर प्रकाश नहीं पड़ता।

उक्त शिलालेख की प्रशस्ति सुललित एव भावपूर्ण सस्कृत छन्दों में रची गई है। प्रथम छन्द गणपति की प्रार्थना का है। पश्चात् नृत्य करती भगवती चण्डिका की स्तुति की गई है। तीसरे छद में धनद कुबेर की प्रशस्ता की गई है। विद्य विनाशक गणपति तो भारतीय हिन्दू समाज में आज भी प्रथम पूज्य देव माने जाते हैं, परन्तु कुबेर पूजा का पचलन आधुनिक काल में नहीं रहा है। आठवीं, नवीं शताब्दी विद्रमी के उपलब्ध शिलालेखों से सिद्ध होता है कि उस काल धनाध्यक्ष कुबेर की पूजा भी प्रचलित थी। बड़ी ताद, एक हाथ में मुद्राओं से भरी थैली और दूसरे हाथ में मध्यभाण्ड लिए उन्हे दिखलाया जाता था, जिसका प्रमाण सकराय माता का यह शिलालेख है।<sup>१</sup>

उपर्युक्त शिलालेख के मगलाचरण में रचित छन्दों के पाठ यहा उद्घृत किये जा रहे हैं।<sup>२</sup>

प्रथम छन्द गणपति की स्तुति में है—

गणद-रदन-दारण-द्रुत-सुमेरु-रेणूदभट,

सुग्राध-मंदिरा-मद-प्रमुदितालि-इश्वृतम्।

अनेक-रण-दुदुभि-विभिन्न-गण्डस्थल,

महागणपतेर्मुख दिशतु भूरि भद्राणि व ॥ १॥

दूसरे छद में नृत्य करती चण्डिका की स्तुति है—

१ दौ शर्मा लखसंग्रह प ८

श्री रामत सारस्वत के मतानुसार— उस काल म गणपति की पूजा के साथ कुबेर पूजा कबल वैश्य समाज म प्रचलित थी। इसनिए उस काल म निर्मित जिन देव पर्माणों में गणपति के साथ कुबेर प्रतिमा स्थापित राई जाती है, उन्हे वैश्य समाज द्वारा निर्मित मानना उपयुक्त होगा।

२ दौ न्याय शर्मा लखसंग्रह प्रथम भाग प ३ ८ स साभार उद्दत।

नृत्यन्त्या स्साङ्गहर चरणतल परिक्षोभितक्षमातलाया  
 प्रभ्रष्टेन्दु प्रभाया निशि विसृत नखद्यातभिन्नाधकारा ।  
 ये लीलोद्वेलिताग्रा विदधति वितज्जाम्पोजपूजा इवाशा—  
 स्ते हस्तास्सम्पद वो ददतु विदलित द्वेयिणश्चण्डिकाया ॥ २॥

भगवती चण्डिका हार पहने नृत्य कर रही है। उनके चरणतल की धमक से पृथ्वी कापती है। मस्तक पर धारण की हुई चन्द्रकला के प्रभ्रष्ट होने से एक बार सर्वत्र अधकार छा जाता है, किन्तु उनके नखों की ज्योति के सामने यह अन्धकार कहा ठहर सकता है? उनकी लीलामयी नृत्य मुद्रा में जब हाथ विकसित कमल का सा रूप धारण करते हैं तो ऐसा प्रतीत होता है कि सभी दिशाएँ प्रफुल्लित कमल लिए हुए माना पूजा कर रही है। भक्त प्रार्थना करता है कि शत्रुओं को विदलित करने वाले यही हाथ आपको सम्पदा प्रदान करे।

तीसरे छन्द में धनद यक्ष (कुबेर) की स्तुति है—

मधुमद-जनुदृष्टि		स्पष्ट-नीलोत्पलाभा-
मुक्तामणि-मयूखै-रजित		पीतवासा ।
जलधर	इव	विद्युच्यक्र-चापानुविद्धो
भवतु धनद नामा वृद्धिदो व सुयक्ष ॥ ३॥		

खण्डेला के अर्द्धनारीश्वर शिव मंदिर के शिलालेख (वि स ७०१) एव सक्राय वाले इस शिलालेख से प्रमाणित होता है कि उस काल शेखावाटी का यह क्षेत्र सास्कृतिक दृष्टि से बड़ा समृद्ध था। सस्कृत वाङ्मय के प्रकाण्ड विद्वान भगवती शारदा की उपासना में लीन रहते हुए इस क्षेत्र की शोभा बढ़ा रहे थे। यहा का धनिक वैश्यवर्ग देवमंदिरों के निर्माण आदि धार्मिक कार्यों म सद्प्रयत्न द्वारा अजित अपन धन का सदुपयोग दिल खोलकर कर रहा था।

उस काल खण्डेला तथा उसके आसपास के क्षेत्र में दूसर तथा धर्कट नाम से प्रसिद्ध वैश्यों का बाहुत्य था। वे प्राय सभी धनाद्य श्रेष्ठ वर्ग की श्रेणी में रहे होंगे। दूसरों के अस्तित्व की जानकारी तो सग्रहवाँ शताँ विक्रमी तक दिल्ली विजेता हमू (हेमचद्राय) दूसर की परम्परा के रूप में विद्यमान है एव उसके पश्चात् काल में तथा वर्तमान में भी दूसर नाम लुप्त नहीं हुआ है। किन्तु धर्कट नाम जनमानस के लिए अटपटा एव अज्ञात-सा है। धर्कट

नाम सभवत कई शताब्दिया पूर्व ही सुप्र हो गया होगा। धक्ट वैश्य कौनसे है? आज यह कोई नहीं जानता। सभव है कि वे खण्डेले के नाम से प्रसिद्धि प्राप्त खण्डेलवाल वैश्य वर्ग मे ही समा गए होंगे। श्री कैलाशचद जैन का अभिमत है कि धर्कट वैश्य जैन और माहेश्वरी दोनों वैश्य समुदायों में पाए जाते हैं। अलबत्ता ओसवालों मे वे नहीं हैं। (Ancient Cities and Towns of Rajasthan p 395 Shri Kailash Chand Jain)

### सकराय माता का द्वितीय शिलालेख (वि स १०५५ माघ शुक्ला ५)

इस शिलालेख के सम्बन्ध मे मान्यनीय ओझाजी की राय इस प्रकार है— ‘इस लेख के बीच का अधिकाश भाग घिस गया है, जिससे पूरा लेख पढ़ने मे नहीं आता है। केवल बच्छराज और उसकी पत्नी दयिका के नाम पढ़े जाते हैं, जिन्होंने शकरा देवी के मंदिर का जीर्णोद्धार कराया। अन्त मे सवत् के स्थान पर ५५ माघ सुदी ५ उत्कीर्ण है। इससे अनुमान होता है कि पहले के दो अक (१) तथा (०) छोड़ दिये गये हैं। ठीक सवत् १०५५ होना चाहिए। यह समय साभर के चौहान राजा विग्रहराज द्वितीय का है। हपनाथ के शिलालेख से ज्ञात होता है कि वत्सराज साभर के राजा सिहराज का छोटा भाई एवं विग्रहराज का काका था।’<sup>१</sup>

डॉ देवदत्त रामकृष्ण भण्डारकर के अनुसार भी यह लेख चौहान राजा विग्रहराज द्वितीय के शासनकाल का है। वे लिखते हैं— ‘बच्छराज की रानी दयिका ने शकरा देवी के मंदिर का जीर्णोद्धार कराया। बच्छराज नि सदेह विग्रहराज का काका वत्सराज है, जिसका पता हर्ष वाले लेख से चलता है। शिलालेख के अत मे काल का उल्लेख ‘सवत्सर ५५ माघ सुदी ५ किया गया है। सचमुच यह कौतुहलजनक है कि वहा सवत्सर का उल्लेख सैकड़े की संख्या को छोड़कर किया गया है। किन्तु हर्ष के शिलालेख से स्पष्ट है कि विग्रहराज विक्रम सवत् १०३० मे विद्यमान था। इसी कारण इस लेख का सवत् १०५५ विक्रमी होना चाहिए।’<sup>२</sup>

<sup>१</sup> सकराय माता के मंदिर की सुरभित यही (Visitors Book) म आझाजी द्वारा लिखित विवरण १७ फरवरी १९३५ई।

<sup>२</sup> अम्बिकायालोंजीकन्न सर्वे आफ इडिया (वर्म्प्टर्न) रिपार्ट सन् १९१० ११ ई डॉ झार भण्डारकर।

डॉ दशाथ शर्मा ने इस लेख का समय वि स ११५५ अनुमानित करके इसे चौहान राजा विग्रहराज तीसरे के शासनकाल का माना है।<sup>१</sup> शिलालेख में उल्लिखित बच्छराज को उसके अधीनस्थ किसी भूभाग का सामन्त माना है।<sup>२</sup> प झावरमल्ल शर्मा ने शेखावाटी के खोह (खुनाथगढ़) गाव में विद्यमान एक कुए के कीर्तिस्तम्भ पर उत्कीर्ण लेख का सवत्सर ११५० विक्रमी पढ़ा है और उसे वहा के चंदेल शासक द्वारा चौहान महाराज पृथ्वीराज प्रथम के शासनकाल में उत्कीर्ण कराया गया माना है।<sup>३</sup> कीर्तिस्तम्भ के उक्त लेख को प्राचीन लिपि विशेषज्ञ विद्वान यदि पुन पढ़कर जाच करे और उक्त पाठ को सही रूप में पढ़ने में सफल हो तो सकराय माता वाले इस शिलालेख के सही सवत् का निर्णय आसानी से हो सकता है।

### सकराय का तीसरा शिलालेख (वि स १०५६ श्रावण बढ़ी १)

भारतीय पुरातत्व के अध्येता विद्वान ओझाजी ने इस लेख के सम्बन्ध में लिखा है— तीसरा लेख सम्बत् १०५६ विक्रमी का है। उसके आरभ के तीन अक्षर दूटे हुए हिस्से में जाते हैं। जिनमें तीसरा अक ५ का होना चाहिए। क्योंकि इसके दायी तरफ की खड़ी लकीर का कुछ अश दिखाई देता है। लेख का आशय इस प्रकार है— सम्बत् (१०५६) ६ श्रावण बढ़ी १ के दिन महाराजाधिराज दुर्लभगज के गज्य में श्री शिवहरी के पुर तथा उसके भतीजे (आतृव्यज) सिद्धराज ने शकरा देवी का मण्डप कराया। काम किया सावट के पुत्र आहिल ने जो देवी के चरणों में नित्य प्रणाम करता है। प्रशस्ति घोदी बहुरूप के पुत्र देवरूप ने।<sup>४</sup>

### सकराय माता परिक्रमा वर्णन

लोहार्गल की परिक्रमा में सकराय माता क्षेत्र की परिक्रमा भी आती है। इस परिक्रमा के करने से मानव मात्र के दैहिक, दैविक, भौतिक ताप नष्ट होते हैं। परिक्रमा के समय रात्रि विश्राम सकराय माता के यहां ही मिया जाता है। शर्वरा नदी (शर्वधारा, सकराय) में स्नान कर मातेश्वरी के मंदिर

<sup>१</sup> चौहान सप्ताह पृथ्वीरान तृतीय और उनका सुग पृ १२ डॉ दशाथ शर्मा।

<sup>२</sup> अलीं चौहान डायनस्टीज पृ ३३ डॉ शर्मा।

<sup>३</sup> चरन श्रावणी २००२ वि शेखावाटी के शिलालेख प झावरमल्ल शर्मा।

<sup>४</sup> मनि री मही म आझाजी द्वारा अक्षित विवरण १३ फरवरी १९३५।

के दर्शन कर यात्री आगे बढ़ते हैं। लोहार्गल क्षेत्र की परिक्रमा पहले जहा २४ कोस थी वही इसकी दूरी अब कम कर दी गई है तथा वर्तमान में यह १२ कोसी परिक्रमा है। तीर्थराज लोहार्गल का वार्षिक मेला या तो भाद्रपद के आरम्भ से ही प्रारम्भ हो जाता है किन्तु विशाल मेला भाद्रपद कृष्णा नवमी से १४-१५ (अमावस्या) तक चलता है और इसी अवधि में परिक्रमा की जाती है। परिक्रमा क्षेत्र का सक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार—<sup>१</sup> (विस्तृत जानकारी के लिए देखिए लोहार्गल महात्म्य)

## परिक्रमा

‘लोहार्गल महात्म्य के अनुसार यहा की परिक्रमा का आरम्भ सूर्य कुण्ड, चित्रवति, ब्रह्म कुण्ड, ज्ञानवापी के क्रमानुसार स्नान-दर्शन प्रार्थना आदि करके चिराना की नलिनी में नहाने के बाद किरोड़ी कर्कोटीकी में प्रवेश कर और वहा से निवृत्त हो पहाड़ी पगड़ी के सहारे अग्रसर हो सकराय माता के स्थान पर पहुंचते हैं। शक्तिधारा का उद्गम स्थान यही है। यहा से जटाशकर, सध्या नदी, कुह कुण्ड, रावणेश्वर, नागकुण्ड, टपकेश्वर, शोभावती नदी, खोह (खुर) कुण्ड आदि पुण्य स्थानों पर स्नानादि कर पुन ज्ञानवापी सूर्य कुण्ड में स्नान कर रघुनाथ जी के बड़े मंदिर से होते हुए प्रसिद्ध बाबा मालकेतु जी के दर्शन कर अपनी मनोकामना पूर्ण करने हेतु प्रार्थना कर यात्रा समाप्त करते हैं।’

## अन्य मंदिर

सकराय माता क्षेत्र में मातेश्वरी के मंदिर के अतिरिक्त अन्य अनेकानेक प्राचीन एवं दर्शनीय धार्मिक स्थान हैं जिनमें से कतिपय का सक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार है—

## जटाशकर मंदिर

माताजी के मंदिर की दाहिनी ओर तथा शक्तिधारा के निकट ही भगवान् आशुतोष शकर भगवान् का अति प्राचीन मंदिर है जिसमें भगवान् शकर की

<sup>१</sup> लोहार्गल तीर्थ का ऐतिहासिक व पौराणिक महत्व तथा लद्वाक महिमा त महन्त लक्ष्मणानन्दचार्य श्री बालानन्दा पीठाधीश व माहन प्रकाश कौशिक।

एक मुखी प्रतिमा है जो सजीव लगती है। भगवान् शकर की यह प्रतिमा गुमकाल की है ऐसा विद्वानों का मत है क्योंकि मूर्ति शित्य गुमकालीन है।

### मदनमोहन जी का मंदिर

माताजी के मंदिर के बाईं ओर मदनमोहन जी का मनमोहक मंदिर है। ऐसा कहा जाता है कि मदनमोहन जी का मंदिर खण्डेला राजा वृन्दावनदास जी द्वारा बनवाया गया था। खण्डेला का इतिहास<sup>१</sup> के अनुसार वृन्दावनदास जी ने ब्राह्मणों से कर लिया था तथा कर वसूली के विरोध में एक ब्राह्मण ने तो अस्त्रघात कर अपने प्राणों की बलि भी दे दी थी। बाद में वृन्दावनदास जी ने अनेकानेक धार्मिक स्थान बनाये, ब्राह्मणों को भूदान दिया उसी प्रसंग में इस मंदिर का निर्माण हुआ। खण्डेला राज्यान्तर्गत धार्मिक स्थल रैवासा के मदनमोहन जी का मंदिर एव सकराय का मंदिर एक समान नक्शे के ही है। वृन्दावनदास जी का शासन काल सबत् १७८८ से १८३४ का है तथा उन्होंने ४६ वर्ष राज्य किया। इस प्रकार उनके द्वारा निर्मित यह मंदिर २२५ वर्ष पूर्व से भी पुराना है। पूर्व में इस मंदिर में शालिग्राम की पूजा होती थी। वर्तमान में यह राधाकृष्ण की प्रतिमाएँ हैं।

### मुनि आश्रम

शक्रधारा कुण्डों के ऊपरी भाग पर एक पहाड़ी ढलान पर मुनि आश्रम है। आश्रम पर जाने के लिए सीढियों का निर्माण कराया गया है। यह स्थान अत्यन्त ही रमणीय है। विभिन्न प्रकार के फूल पौधों से सुवासित यह आश्रम मन को शाति प्रदान करता है। मध्य में एक कुटिया में सदा धूना रहता है।

### वाराही देवी का स्थान

मातेश्वरी के मंदिर के दक्षिण-पूर्व में लगभग ३ किलोमीटर की दूरी पर वाराही देवी का अत्यन्त प्राचीन स्थान है। यहा गोरखनाथजी के अनुयायियों की गदी है।

### कोह कुण्ड

माताजी के मंदिर के पश्चिम में कोह कुण्ड है। इसे केरू कुण्ड एवं खो कुण्ड भी कहते हैं। लोहार्गल महात्म्य में इस कुण्ड का वर्णन आता है।

है जिसके अनुसार लकाधिपति रावण ने यहा तपस्या की थी। बाबूलाल शर्मा के अनुसार रावणेश्वर महादेव का एक मंदिर भी यहा है। 'किसी जमाने में यहा ८४ मंदिर थे पर अब सब नष्ट हो गये हैं। अब केवल गणेशजी, देवीजी व भैरुजी के मंदिर ही शेष हैं।'

## नाग कुण्ड

माता के मंदिर से लगभग ३ कि.मी उत्तर की ओर नाग कुण्ड है। यह कुण्ड प्राकृतिक रूप से बना हुआ है। इस कुण्ड में झरने का पानी गिरता है जो ४०-५० फुट की ऊचाई पर है। बपाकाल में यहा का मनाहारी दृश्य देखने योग्य है। इस कुण्ड का माहात्म्य भी लोहार्गल माहात्म्य में बताया गया है। यहा भैरुजी एवं नाग देवता के मंदिर हैं।

## मंदिर के महत्व

मंदिर के महन्त पद पर धर्माधिकारी के रूप में नाथ सम्प्रदाय के अनुयायी बैठते हैं जिन्दे स्थानीय लोग भोपा भी कहते हैं। ये कण्ठेदन कराकर काना में कुण्डल धारण करते हैं। इस गही पर बैठने वाला महन्त आजीवन द्रव्यचर्य का पालन करने वाला होता है। अब तक के ज्ञात इतिहास में यह जानकारी मिलती है कि इस गही पर यादव जाति के महानुभाव ही आरूढ़ हुए हैं। डॉ बाबूलाल शर्मा<sup>२</sup> के अनुसार शिवनाथजी के शिष्य जिसने धर्माधि नहीं ली वह भगवती की सेवा पूजा करने लगा। 'इस शिष्य परम्परा में हुए मंदिर के सभी महन्तों के नाम तो ज्ञात नहीं हो सके परन्तु मंदिर में उपलब्ध पट्टे-पवानों में महन्त सूरतनाथजी, सरधानाथजी, बालनाथजी, ईसरनाथजी, आसानाथजी, भवानीनाथजी, करणीनाथजी, पीथलनाथजी, धमनाथजी, श्योजीनाथजी, दयानाथजी, पृथ्वीनाथजी, धूर्णीनाथजी, शिवनाथजी (द्वितीय), गुलाबनाथजी, बालकनाथजी और दयानाथजी (द्वितीय) वर्तमान महन्त हैं।

ये सभी महन्त देवी के अनन्य भक्त एवं घमत्कारी हुए हैं। इनके अनेकानेक चमत्कारा की कथाय आज भी बड़ी जीवन्त रूप से आसपास के क्षेत्रों में कही-सुनी जाती है। जिनमें से एक का उल्लेख यहा किया जा रहा है—

सकराय माता के मंदिर के पास हथियाज ग्राम से जालजी भोपा माता की पूजा करने हेतु नित्य आया करते थे। तत्समय नाथ सम्प्रदाय के शिवनाथसिंहजी घूमते हुए इधर आ गये तथा माता के स्थान के पास ही रहने लगे। वे भक्तिभावपूर्वक आध्यात्मिक चित्तन करते तथा अपना धूना भी वहा लगा लिया। कालान्तर में जालजी एवं शिवनाथजी में प्रगाढ़ मित्रता हो गई तथा शिवनाथजी माताजी की सेवा-पूजा करने लग गये। कहते हैं एक रोज जालजी ने शिवनाथजी की परीक्षा लेने हेतु कुछ चमत्कार दिखाने का आग्रह किया। शिवनाथजी के यह कहने पर कि 'जालजी, पहले आप अपना चमत्कार दिखाओ तथा साथ ही उहे अपनी एक छड़ी दी कि जब मैं दूसरे रूप में होऊ, तब पुन इस रूप में लाने हेतु, इस छड़ी का मर दूसर स्वरूप से स्पर्श करा देना, मैं पुन अपने असली रूप में आ जाऊगा, इस वार्तालाप के बाद जालजी ने तत्काल कुत्ते का रूप धारण कर लिया। जालजी के रूप परिवर्तन पर शिवनाथजी ने सिंह का रूप धारण कर लिया तथा विचरण हेतु चले गये। शिवनाथजी का यह रूप देखकर जालजी धबरा गये। सायकाल जब शिवनाथजी के शिष्य, जो सख्या में दम बताये जाते हैं, भिक्षाटन के बाद शिवनाथनी के धूने पर आये और उन्हे नहीं पाया तो जालजी ने सारा कथानक उन्हे (शिष्यों को) बता दिया तथा वे शिवनाथजी की खोज में निकल पड़े। थोड़ी दूर जाने पर ही शिष्यों ने सिंह रूप में शिवनाथजी को देखा तथा उनके द्वारा दी गई छड़ी का स्पर्श कराते ही वे अपने मूल मानव स्वरूप में आ गये। शिवनाथजी ने अपने शिष्यों से कहा कि सिंह रूप में एक गाय के बध का मैं अपराधी हूँ, अत मैं अब जीवित समाधि लू़गा। उनके सभी दस शिष्य उनके साथ जीवित समाधि लेना चाहते थे किन्तु आपने माता की सेवा के लिए एक शिष्य को जीवित समाधि लेने की अनुमति नहीं दी तथा जालजी की उपस्थिति में ही शिवनाथसिंह जी तथा उनके नो शिष्यों ने जीवित ममाधि ले ली।<sup>१</sup> जालजी को अपना एक परम मित्र खोने का हार्दिक पश्चात्ताप था, अत उन्होंने पुन यहा नहीं आने का निश्चय किया और अपने गाव हथियाज चले गये, जहा जाने पर आपको बताया गया कि शिवनाथजी महाराज ने यहा उनकी पत्नी

<sup>१</sup> शिवनाथजी के समाधि स्थलों पर माघ शुक्ला द्वूष का विशेष पूजा की जाती है जब वह अनुमान है कि इसी दिन इहाँने जीवित समाधि ली थी।

ने कहा कि अभी अभी शिवनाथजी आये थे तथा आपको राजपुरा<sup>१</sup> बुलाया है, वहा जाने पर आपको बताया गया कि शिवनाथजी महाराज ने जहा समाधि ले ली है तथा आपको पुष्कर बुलाया है। पुष्कर पहुचने पर जालजी को शिवनाथजी मिले। दोनों मित्र प्रेमपूर्वक मिले तथा शिवनाथजी ने पुष्कर में भी जीवित समाधि ली।

### मेले

माता के दर्शनार्थ यो तो बारह महीनो ही यात्री आते जाते रहते हैं, किन्तु शुक्ल पक्ष में यात्री अधिक आते हैं। चैत्र एवं आसोज के नववरात्रों में यहा देश एवं विदेश के दूरस्थ स्थानों से भक्तजन माता के दर्शनार्थ एवं जात-जड़ले उत्तराने हेतु आते हैं तथा हजारों यात्रियों के आने जाने से मेले का-सा दृश्य होता है।

माता के स्थान पर सहस्रचण्डी यज्ञ, दुर्गा सप्तशती के पाठ एवं अन्य अनुष्ठान होते ही रहते हैं। यह सिद्धपीठ मानी जाती है।

### यात्रियों के लिए सुविधाएं

समराय माता के आने के लिए उदयपुर (उदयपुरवाटी) से सड़क मार्ग है। उदयपुर वाटी से माता के स्थान तक अब पक्की डामर की सड़क है तथा रास्ते में पड़ने वाले सभी सात नालों पर भी पत्थर जमाकर कटाव को रोक दिया गया है। वाहनों के आने-जाने में अब कोई असुविधा नहीं है। उदयपुर (उदयपुरवाटी) से दो बसे नियमित रूप से माता के स्थान से आती व जाती हैं तथा उदयपुर (उदयपुरवाटी) से किराये की जीपे भी मिलती है।

यात्रियों के ठहरने हेतु धर्मप्राण भक्तों की सहायता से यहा अनेकानेक धर्मशालाएं एवं विश्रामगाह हैं, जहा यात्री निशुल्क ठहर सकते हैं। यात्रियों के ओढ़ने-बिछाने हेतु बिस्तर, भोजन बनाने हेतु वर्तन नि शुल्क प्राप्त किये जा सकते हैं तथा भोजन बनाने हेतु सामग्री उचित मूल्य पर मिलती है। भोजन बनाने वाले भी यहा उपलब्ध रहते हैं। अल्पाहार के लिए मंदिर के मुख्य द्वार पर २-३ कैटीन हैं। आयुर्वद विभाग का चिकित्सा उपकेन्द्र भी यहा है। इन सब सुविधाओं का वर्तमान महतजी पूर्ण ध्यान रखते हैं।

<sup>१</sup> गज्रामा जीवित रह शिव्य का गाव बताया जाता है।

## साभर की शाकम्भरी समराय<sup>१</sup>

साभर एक अत्यन्त प्राचीन कस्बा है। पहले यहा का क्षेत्र (सारा पश्चिमी राजस्थान) समुद्र था। वैज्ञानिक जाच में मरुभूमि में ऐसे पदार्थ एवं अवशेष मिले हैं, जो समुद्र के तल पर पाये जाते हैं। पुराणों में जानकारी मिलती है कि प्रथम बार यहा आगम्त्य ऋषि ने अपना कदम रखा, फिर इस पर वस्तिया बरसने लगा।<sup>२</sup> यहा से लगभग ६ कि.मी. दूरी पर बुद्धकालीन ग्राम नलियासर है। साभर में नमक की झील महामाया शाकम्भरी माता के बरदान से सम्बद् ६०८ (सन् ५५१) म हुई। साभर कस्बा चौहान राजपूत वासुदेवजी द्वारा बसाया गया था। बाद में पृथ्वीराज चौहान यहा के शासक हुए। कुलदेवी ने इस वश की सदा आशाय पूर्ण की इसलिए इस देवी का दूसरा नाम आशापूर्णा या आशापूरा विख्यात हो गया। स्थान-स्थान पर चाहमाना ने अपनी कुल देवी के मंदिर बनवाय।<sup>३</sup> साभर के शासक होने से चौहान राजपूतों की उपाधि सम्भरीश्वर या सम्भरीराय थी।

चौहान राजपूतों की भी कुलदेवी शाकम्भरी है जिसे समराय माता भी कहते हैं।

### स्थान

शाकम्भरी माता का मंदिर साभर से २५ किलोमीटर पश्चिम में पहाड़ी श्रेणी की तलहटी में स्थित है। यह मंदिर साभर झील के मध्य एक प्राकृतिक पुल से जुड़ा है। मंदिर के तीन ओर क्षारीय भूमि है जो नावा, गुदा और साभर की झापोक सीमा से लगी हुई है। इसका क्षेत्रफल करीब ६ मील छोड़ा है और औसत २ फीट गहरा है। पहाड़ी के पास यह गहराई तीन फीट तक होती है। इस झील को हम शाकम्भरी देवी के बरदान से सहज ही मान सकते हैं।<sup>४</sup> मंदिर झील के किनारे पहाड़ी की तलहटी के नीचे निर्मित होने से मंदिर को दूर से देखने पर ऐसा प्रतीत होता है मानो पानी में कोई टापू हो। ग्रीष्मकाल

<sup>१</sup> शाकम्भरी माता का पौराणिक इतिहास पूर्व में उदयपुरवारी स्थित सकाराय माता के साथ दिया गया है। यहा साभर में माता के प्रगट होने एवं उसके चमत्कारों का वर्णन दिया गया है।

<sup>२</sup> उत्पल - भी साभर पुस्तकालय - हीरक जगन्नाथ स्मारिका १९९५ पृ २१

<sup>३</sup> चौहानों का बृह्ण इतिहास - ल दवसिंह निर्वाण पृ २६

<sup>४</sup> लावण्य - नागरिक विकास समिति साभर लक, स्मारिका पृ १२

में जब झील मे पानी नही होता मंदिर के सामने जब दृष्टि जाती है तो जहातक नजर जाती है भूमि रजतमयी ही नजर आती है जबकि मानसून काल मे झील का विस्तृत पानी माता के मंदिर का प्रक्षालन करता है।

### माता का स्वरूप

शाकम्भरी माता सोने के मुकुट तथा कानो में कुण्डल व नाक में नथधारण किये हुए है। माता की मुस्कानयुक्त मूर्ति सहज ही ऐसी प्रतीत होती है, मानो प्रत्यक्षत वह भक्ता को आशीर्वाद दे रही हो। माता की गोदी में गणपति एव भैरव विराजमान है। माता की सवारी सिंह पर है। माता के बाई ओर चोसठ यागिनिया भी विराजमान है। इसे सिद्धपीठ मानते है।

माता की वर्तमान मूर्ति पहाड़ी को तराश कर बाद म बनाई गई है। माता की मूल मूर्ति जो प्रकट हुई थी, वह माता के वर्तमान विग्रह के दाहिनी ओर है, जो निज मंदिर में ही पहाड़ी पर उत्कीर्ण है। उनकी गोद मे भी गणेशजी व भैरव है। माता के विग्रह के बाई ओर गुफा है। ऐसा कहा जाता है कि यह गुफा जोबनेर, पुष्कर एव दिल्ली तक गई है।

माता का वर्तमान मंदिर नवनिर्मित है। मंदिर के बाहर एक बड़ा कुण्ड है तथा पुराने मकानात है। जयपुर एव जोधपुर के महाराजाओ द्वारा अपने निवास हेतु भी यहा भवन बनाये गये थे, जो आज भी है।

माताजी के मंदिर तक जाने के लिए ४३ सीढिया है। सीढियों की समाप्ति पर दोनो ओर सिंह की प्रतिमाये है। सामने ही माता की विशाल हसमुख मूर्ति है। छौक मे एक सिंह की प्रतिमा है। निज मंदिर के बाहर बड़ा सभा मण्डप है।

### भोग

माताजी के तामसी भोग नही लगता। मीठा भोग यथा सीरा, पुडी, चूरमा-बाटी, नारियल आदि का भोग लगता है।

### मेले

माताजी के शहा ज्वरामे के अतिरिक्त भारवा लदी छठ का मेला भजा है। इस अवसर पर हजारों की सभ्या मे भक्त माताजी के दर्शनाथ आते है।

Hinduism Discord Server <https://discord.gg/5K2qfHg>

## शाकभूमी माता के प्रगट होने की कथा

माता का मंदिर<sup>१</sup> सिरथला ग्राम की पहाड़ी पर है। यहा वि स ६०८ से पूर्व अम्बिकेश्वर मुनि शक्ति उपासना हेतु माता का गुण-गान करते थे। उनका भोजन कद-मूल-फल था। एक क्विदन्ति है कि एक ब्राह्मण की गाय नित्य प्रति सायकाल मुनि आश्रम मे आती थी तथा मुनि के पात्र मे स्वत ही गाय के थनो से दूध झरकर पात्र भर जाता था। प्रतिदिन गाय के थनो मे दूध कम होने पर ब्राह्मण ने घ्वाले को पूछा। घ्वाले ने इसकी अनभिज्ञता वासुदेन ने ब्राह्मण एव घ्वाले को यह आश्वासन देते हुए विदा किया कि गाय का दूध कौन निकालता है, इसकी वे स्वयं शीघ्र ही जाच करेगे। राजा ने घ्वाले की पगड़ी गाय के सींगो से बाध दी। सायकाल नित्य की भाति गाय मुनि के आश्रम मे गई तथा मुनि के पास जाकर खड़ी हो गई। गाय के थनो से स्वत दूध झरा और मुनि का पात्र दूध से भर गया। राजा ने यह सारी घटना स्वयं अपनी आखा से देखी।

मुनि का ऐसा अद्भुत चमत्कार देखकर राजा वासुदेव को अत्यन्त आश्चर्य हुआ तथा वे मुनि के पास गये और उनका आशीर्वाद माणा तथा निवेदन मिया प्रभु आपकी कृपा से सभी आनन्द है मुझे आप उस मातेश्वरी के दर्शन कराओ जिसकी आप निरन्तर आराधना करते हैं।

मुनि ने कहा है राजन! आप कल मध्यात्रि में यहा (पहाड़ी पर जहा मुनि का आश्रम था) आना। माता की स्तुति करना माता तुम्हे अवश्य दर्शन देगी। राजा ने भक्तिभावपूर्वक माता की प्रार्थना की तब पहाड़ी से अद्विष्टसंयुक्त घोर गर्जना हुई। इस भयकर गर्जना से चारा और सजाटा छा गया। पहाड़ी स्थिति मे मातेश्वरी देख राजा भयभीत हो गया तथा अचेत हो गया। उसी स्थिति मे राजा की ने राजा को दर्शन दिय तथा पहाड़ी मे विलीन हो गई। पहाड़ी से माता की आवाज आई हे नृप तू क्या चाहता है? वर माण। मुनि ने राजा से कहा राजन् माता तुम पर प्रसन्न है जो भी वर माणना चाहो मातेश्वरी से माण ला।

<sup>१</sup> साप्तर की समग्र माता अर्थात् शाकभूमी मरामाण कथा— ल लार्यनारायण द्वारा लिखा गया है।

राजा ने कहा 'ह मातेश्वरी! यदि आपकी मुँड़ पर कृपा ही है तो मेरे राज्य की भूमि रजतयुक्त कर दो। मैं निष्ठाटक होकर गज्य करू, मेरी प्रजा सुखी रहे, मैं निरोग रहू तथा हमेशा आपकी सवा म गू' माता ने राजा की इच्छानुभार 'तथास्तु' कहकर वर दिया। उसी समय एक घोड़ा प्रकट हुआ। मुनि ने कहा राजन, इस घोडे पर बेठकर तुम जितनी दूर तक जा सको जाओ, जितनी दूरी तक तुम जाओगे भूमि रजतमय हो जावेगी, पर ध्यान रखना पीछे मुँड़कर मत देखना। सायकाल तक राजा ने लगभग चौबीस कोस (लगभग ७० कि.मी.) तक घोड़ा दौड़ाया तथा मुनि आश्रम पर आकर रक्का। गजा के पाइ स उत्तरत ही घोड़ा अन्तधान हा गया। मुनि से आशीर्वाद ले गजा अपने महल म गया तथा माता को पहाड़ी की छोटी पर ले जाकर शाकम्भरी के वरदान की सारी बात की, रजतमय भूमि दिखाई तथा कहा मा चांबीस कास म मातेश्वरी की कृपा से भूमि रजतमयी हो गई है।

जहा तक उसकी दृष्टि गई भूमि को रजतयुक्त देख राजा की माता अचेत हो गई तथा होश मे आने पा उसने अपने पुत्र स कहा, पुरु तुम माता से कोई दूसरा वरदान मांग लो। इस रजतभूमि से तो तुम्हारे अनेकानेक दुश्मन हो जायेंगे और तुम्हारा जीवन भी दूधर ही जायेगा। तुम्हारी प्रजा भी तुम्हारे कारण सुखी नही रहेगी।

जननी-माता की आज्ञानुसार राजा वासुदेव पुन देवा की शाण में आया तथा माता स निवदन किया, मातेश्वरी इस धन से तो मेरे अनेक दुश्मन हो जायेंगे, माता ने पुन वरदान दिया जा राजन् रजतमय भूमि कच्ची चादी की हो जायेगी। और तत्क्षण ही भूमि लवणमय हो गई।

राजा मानकराव के समय कल्पन नामक एक कायस्थ आया तथा उसने देखा कि यहा का पानी लवणयुक्त है। उमने गजा मानकदेव से राजकीय फरमान जारी करवाया तथा एक भरण पर दा पाइ का कर लगवाया तथा नमक उत्पादन पा राजा से हिस्सा कर लिया।

नमक उत्पादन के बाद राजा पुन पहाड़ी पर गये। माता की मृत्यु की। एक रात्रि को माता ने राज को स्वप्न दिया कि मे यहा प्रगट होऊँगी, तुम मेरी यहा स्थापना करो। शाकद्वीपी ब्राह्मण मेरी पूजा कर।'

१ माताजी की पूजा हतु माटाजी एव जसजी सबका का पूजा हतु आसिया स लाया गया। आसिया की मुन्द्याय माता की भी शाकद्वीपी सबक पूजा करत है।

मुगल बादशाह गजनी के समय माता की मूर्तियों को तोड़ने हेतु उसकी फौज मंदिर की ओर बढ़ी। मंदिर के बाहर के पीपल के वक्ष को काटने के बाद जब मूर्ति तोड़ने के लिए सेना के सिपाही मंदिर की ओर बढ़े तो जहरीले भवरो ने उन्हे ऐसा काटा कि अनेकानेक की वहाँ मृत्यु हो गई और जो बचे वे अपने प्राण बचाकर भाग गये।

मुगल बादशाह जहांगीर माता के चमत्कार से ऐसा प्रभावित हुआ कि उसने माता के मंदिर के पहाड़ की छोटी पर एक बहुत बड़ी छतरी का निर्माण कराया, जो आज भी मोजूद है तथा माता का मठ बनवाया गया है। माता द्वारा जो चमत्कार हुए उनके सम्बन्ध में ऐसा कहा जाता है कि बादशाह ने माता जी जोत पर एक के बाद एक सात लोहे के तवे रखकर, जोत बुयाने का प्रयत्न किया किन्तु माता की असीम कृपा से सातों तवों में माता की जोत प्रज्ज्वलित हो गई।

### शाकम्भरी (शताक्षी) मंदिर सहारनपुर

शाकम्भरी माता या शताक्षी देवी का सिद्धपीठ सहारनपुर (मेरठ) रेल्वे स्टेशन से लगभग ४० कि.मी. की दूरी पर शिवालिक पर्वत की तलहटी में है। मंदिर से लगभग दो कि.मी. पूर्व ही भूरेदेव (भैरव) का एक छोटा सा मंदिर है। इसे देवी का पहरेदार माना जाता है। यह शक्तिपीठ हरियाणा, हिमाचल, उत्तरप्रदेश के देहरादून की सीमाओं के पास है।

यह स्थित माता शाकम्भरी की मूर्ति स्वयंभू मूर्ति बताई जाती है। जगदुरुक्ष के दाहिनी ओर भीमा देवी और ग्रामरी देवी की तथा बाई और शताक्षी देवी की मूर्ति है। ग्रामरी और शाकम्भरी देवी के मध्य गणेशजी की एक छोटी प्रतिमा है। पास ही दुमान जी की मूर्ति है।

यह शाकम्भरी देवी के प्रगट होने के सम्बन्ध में एक किवदन्ती यह है कि एक व्यक्ति जो गुर्जर जाति का था जन्मान्ध था वह गाय चराता था। एक दिन उसे यह सुनाई पड़ा कि यहाँ में प्रगट होना चाहती हूँ—खाले द्वारा

यह पूछने पर कि आप कौन है, आवाज आई मैं देवी हूँ, यह मेरा स्थान है, तुम मरी पूजा अर्चना करो, तुम्हें नेत्र ज्योति मिल जावेगी। घ्वाले ने देवी की आज्ञानुसार देवी की स्तुति की तथा आर्तभाव से स्तुतिपूर्ण होते ही उसकी नेत्र ज्योति आ गई। यह एक अविश्वसनीय-सा आशीर्वादात्मक चमत्कार था, जो माता की कृपा से जन्मान्ध भक्त को मिला और शीघ्र ही चारों ओर इसका प्रचार हो गया। लोग इस देवी चमत्कार से स्वत ही माता के दर्शनों को आने लगे और लोग माता का दर्शन-पूजन श्रद्धापूर्वक करने लगे जहा माता ने प्रगट होकर अपने भक्त घ्वाले को दर्शन दिय थे।

मंदिर लगभग पाच सो वर्ष पुराना बताया जाता है। माता की मूर्ति के सामने ही घ्वाले भक्त की समाधि है।

माता के भव्य मंदिर पर स्वर्ण-कलश है तथा माता के निज मंदिर मे छत्र झिलमिलाते रहते है। यहा माता के दोनों ओर धूप के अखण्ड दीप जलते रहते है।

शाकम्भरी माता के आसपास चारों दिशाओं में जहा कमलेश्वर महादेव, इन्द्रेश्वर महादेव और वटेश्वर महादेव के मंदिर हैं वही पहाड़ पर और भी कई मंदिर है।

यद्यपि मूर्ति प्राकृत्य के समय यह स्थान बीहड जगल मे था किन्तु आज भगवती कृपा से सभी सुविधाएं है। सहारनपुर से मंदिर तक पक्की सड़क है तथा मोटर-बस जाती है। बिजली-पानी की समुचित व्यवस्था है। यात्रियों की सुविधा हेतु धर्मशाला तथा टैट आदि उपलब्ध है।

नवरात्रों में यहा मेला लगता है तथा दूर-दूर से भक्त यात्री जात-जड़ला उतारने एव मनोकामना-सिद्धि हेतु माता के दरबार में आते है।

पारीका के निम्न अवटकों की यह कुल देवी है—

१ ओडीटा

त्रिपाठी (तिवाडी)

२ रजलाणा (रजलाणिया)

जोशी

३७२/हमारी कुलदेवियाँ

४ सोती

उपाध्याय (पादाया)

५ दहलोत

मिश्र (बोहरा)

६ सुमन्त्या

मिश्र (बोहरा)

रावा की पुस्तकों में पारीकों की माता समराय-समरेश्वरी का स्थान साभर बताया गया है। सकराय ही समराय और शाकम्भरी है।



## सुदर्शना : सुद्रासना माता

सुदर्शना माता भगवान् विष्णु की शक्ति है, उनकी पत्नी है, इन्हे वैष्णवी माता भी कहते हैं। शक्ति के विभिन्न स्वरूपों में सप्तमातृकाओं के ध्यान करने के श्लोक हैं, उनमें माता के स्वरूप एवं आयुध का निम्न प्रकार का वर्णन किया गया है—

वैष्णवी ताक्षर्यगा श्यामा, पङ्गभुजा वनमालिनी ।  
वरदा गदिनी दक्ष विभ्रति च करोऽन्युजम् ।  
शखचक्राभ्याम् वामे सा चेय विलसदभुजा ॥

वनमाला धारण करने वाली एवं छ भुजाओं से सुशोभित वैष्णवी गरुड़ पर आरुढ़ होती है। उनकी अगकाति श्याम है। दाहिने हाथ में वर मुद्रा, गदा और कमल धारण करती है तथा उनकी बायी भुजाएं शख चक्र और अभयमुद्रा से सुशोभित होती है।<sup>१</sup>

शास्त्रकारों का दृढ़ विश्वास है कि परमात्मा को स्वरचित् सृष्टि की मर्यादार्थ युग-युग में अपनी अलौकिक योगमाया का आश्रय लेकर पुरुष-रूप में अवतीर्ण होना पड़ता है। जब व पुण्य-वेष म अवतार लेते हैं, तब जगन् उनकी ब्रह्मा, विष्णु, महेश आदि नामों से स्मृति करता है और जब उनकी माया जगत् में अवतीर्ण होती है, तब उन्हे महाकाली, महालक्ष्मी, सरस्वती कहते हैं।

सत्त्व-प्रधान वैष्णव रूप को महालक्ष्मी कहते हैं, जो जगत् का पालन करती है।

लक्ष्मी की उत्पत्ति के मध्य में यह कथामक आता है कि एक समय देवता और दानवों में सी वर्षों तक घोर युद्ध हुआ। देवताओं का राजा इन्द्र था और दानवों का महिषासुर। पराक्रमी दानवों द्वारा देवताओं वो पराजित

<sup>१</sup> कल्याण शक्ति उपासना अन् वर्ष ६० (१९८०), पृ ३८

कर महिपासुर जब इन्द्र बन बैठा, तब सम्पूर्ण देवगण पद्मयोनि ब्रह्माजी को आगे कर भगवान् विष्णु और शकर के पास गये और उन्हें अपनी सम्पूर्ण विपत्ति गाथा सुनायी। देवताओं की आर्तवाणी सुनकर भगवान् विष्णु तथा शकर कृपित हो गये और उनकी भृकुटी चढ़ गई। उनके शरीर से एक महान् तेज पुङ्ग निकला और वह एक एकत्रित होकर प्रज्वलित पर्वत की तरह सम्पूर्ण दिशाओं को देदीप्यमान करता हुआ नारी शरीर बन गया। उस भगवती को देखकर सब देवता प्रसन्न हुए और उसे अपने-अपने अस्त्र-शस्त्र समर्पण किये। तब प्रसन्न होकर देवी ने अद्भुत किया, जिससे समस्त दिशाएँ गूज उठी, समुद्र उछलने लगा, पृथ्वी कॉप उठी और पर्वत भी डगमगाने लग, देवताओं ने जय-ध्वनि की और मुनिगण स्तुति करने लगे। उस भयकर गर्जना को सुनकर, दानव अपनी सेना को लेकर वहाँ आया और तेज पुङ्ग महालक्ष्मी को उसने देखा। तदन्तर असुरों का देवी के साथ अति भयकर युद्ध हुआ, जिसमें सम्पूर्ण दानव मारे गये। महिपासुर भी अनेक प्रभार की माया करके थक गया और अत म महालक्ष्मी के द्वारा मारा गया। देवताओं ने भगवती की विविध प्रकार से स्तुति की। इस प्रकार महालक्ष्मी ने रूप धारण किया, जिसका स्वरूप और ध्यान इस प्रकार है—

स्वहस्त-कमल में अक्षमाला, परशु, गदा बाण, वज्र, कमल, धनुष, कुण्डिका, शक्ति, खद्ग, चर्म, शख, घण्टा, मधुपात्र, शूल, पाश और सुर्दर्शनचक्र को धारण करने वाली कमल स्थित, महिपासुर-मर्दिनी महालक्ष्मी का हम ध्यान करते हैं।<sup>१</sup>

भगवती महालक्ष्मी मूलत भगवान् विष्णु की अभिन्न शक्ति है। पुराणों के अनुसार पद्मवनवासिनी, सागर-तनया और भृगु की पत्नी रुद्याति वो पुत्री हाने से भार्गवी, जलधिजा इत्यादि नामा से भी अभिहित किया गया है। इनके कई शतनाम तथा सहस्रनाम स्तोत्र उपलब्ध होते हैं। ये वैष्णवी शक्ति है। महाविष्णु की तीला-विलास-सहचरी, देवी कमला की उपासना वस्तुत जगदाधार शक्ति वी ही उपासना है। इनकी कपा के अभाव में जीव में ऐश्वर्य का अभाव हो जाता है विश्वम्भर की इन आदि-शक्ति वी उपासना आगम-निगम सभी

<sup>१</sup> कल्याण देवताक वर्ष ६४ (१९९०) पृ १९६ २०४ क आधार पर।

में समान रूप से प्रचलित है। लक्ष्मी की दृष्टिमात्र से निर्गुण मनुष्य में भी शील, विद्या, विनय, औदार्य, गाम्भीर्य, काति आदि ऐसे समस्त गुण प्राप्त हो जाते हैं, जिससे मनुष्य सम्पूर्ण विश्व का प्रेम तथा उसकी समृद्धि प्राप्त कर लेता है इस प्रकार का व्यक्ति सम्पूर्ण विश्व का आदर एवं श्रद्धा का पात्र बन जाता है—

त्वया विलोकिता सद्य शीलाद्यैर् छिलेगुणैः ।  
कुलैश्चर्येश्च युज्यन्ते पुरुषा निर्गुणा अपि।  
(विष्णुपुराण—१/९/१३०)

विष्णुपत्नी रूप की सर्व मान्यता है। ये सुवर्ण-वणा चतुर्भुजा अनिन्द्य सोन्दर्य से सम्पन्न है। सवा-भरण-भूषित कमल के आसन पर स्थित हो अपने कृपा कटाक्ष से भक्तों की समस्त कामनाओं की पूर्ति करती है।<sup>१</sup>

### सुदर्शना (सुद्रासना)<sup>२</sup>

सुदर्शना माता का स्थानीय नाम सुरजल माता है। सुदर्शन माता का मंदिर ग्राम सुदर्शन में होने से नाम सुदर्शना पड़ा। सुदर्शन माता का अपभ्रंश नाम सुद्रासना भी है। ग्रामों के नाम माताओं से व माताओं के नाम ग्रामों से भी प्रचलित हो गये हैं।

गाँव के बुजुर्ग बताते हैं कि सन् १४०० ई. में इस गाँव पर चदलबशी राजपूतों का अधिकार था। इसके बाद रायमखानी नवाब अलावदी खाँ के पुत्र मलू खाँ ने इस गाँव को आबाद किया। इन्हीं के बशज मलवान कायमखानी हुए। उसी वक्त गाँव की उत्तर दिशा में राकुर दातार सब्दल खाँ ने एक हजार बीघा गाँवर जमीन छोड़ी थी।<sup>३</sup>

१. कल्याण (द्वारका) वर्ष ६४ (१९९०) पृ २२७ २९ क आधार पर।

२. दिनांक २१-६ १९९९ का माताजी क नैनीर्थ गय, साथ म चि शमित व माहित भी थ। कायमसर म श्री भवरलाल जी पुराहित राधाश्यामजी पुराटित तथा अरविन्द जी पुराहित (आठडिया) से सम्पर्क किया। व हमें माता क स्थान पर ल गय।

मुगलकाल मे जब मूर्ति भजन का दौर चला तब इस मंदिर की मूर्तियों का ही नहीं मंदिर को भी मुगलों द्वारा तहस-नहस किया गया। खडित मूर्तिया अभी भी यत्र-तत्र पड़ी मिलती है। कुछ मूर्तिया को नवनिर्मित स्थान (मंदिर की चाहर दीवारी के अदर) पर चुनाई कर सुरक्षित रखने का प्रयास किया गया है।

यह मंदिर एक टीले पर अवस्थित है। यहाँ उत्खनन में पुरावतत्व महत्व की बहुत-सी चीजें मिली हैं। जैन धर्म का यह प्रमुख स्थान रहा है।

सुदर्शन (सुरजल) माता का मंदिर ग्राम सुद्रासन के उत्तर में गाँव से लगभग ५०० गज की दूरी पर एक विशाल ओरन (माताजी के नाम से छोड़ी गई जमीन जिसका क्षेत्रफल ११६० बीघा है) मे पहाड़ी की टेकड़ी (टीले) पर अवस्थित है जहाँ माताजी निज मंदिर मे विराजमान है। इस मंदिर के बारे मे यह कहा जाता है कि यह बहुत प्राचीन मंदिर है तथा पाण्डवों के समय भी यह मंदिर विद्यमान था। कहते हैं कि यह मंदिर जमीन से स्वतं निकला हुआ है। ग्राम सुदर्शन मे खुदाई म अभी भी प्राचीन अवशेष, मूर्तियाँ, पुराने मकानों के अवशेष मिलते हैं। बौद्ध एवं जैन धर्म की मूर्तियाँ एवं मकाना पत्थर की मूर्तियाँ निकली हैं।

इस मंदिर की मूल मूर्तियों को मुगल शासकों द्वारा तोड़ दिया गया था। वर्तमान मे माताजी के मंदिर मे पुनः स्थापित दुर्गा माता की तीन बड़ी मूर्तियाँ एवं उनके दोना और तीन-तीन दुर्गा माता की मूर्तियाँ स्थापित की गई हैं। इस प्रकार यहाँ इस मंदिर में दुर्गा माता की नौ मूर्तियाँ हैं। इन मूर्तियों की स्थापना सुनार जाति के एक भक्त गैदीलालजी सोनी, ग्राम धनकोली द्वारा कराई गई है, जिन्हे माताजी ने चमत्कार देकर मंदिर के जीर्णोद्धार हेतु आदेश दिया था। मंदिर मे स्थापित मूर्तियों के अस्त्र-शस्त्र व वाहन जगदम्भा दुर्गा के अस्त्र शस्त्र व वाहन के अनुरूप हैं। माताजी का निजमंदिर सुन्दर है तथा प्राचीन स्थापत्य कला का अद्भुत नमूना है। इसका गुम्बद पाचीन है, जिसका जीर्णोद्धार संवत् २०१५ में पुजारी सुखानाथजी के समय मे कराया गया।

<sup>१</sup> इस माता के दर्शनार्थ निवारक २१८ १९९९ का गया। साथ म वि शास्त्रिय व माहित तिवाड़ी भी थे। लखक न वहाँ अध्ययन एवं अन्वयण किया इसके आधार पर माता का वृत्तात प्रस्तुत है।

यहा सूर्य भगवान् का भी एक अति प्राचीन मंदिर था जिसके अब अवशेष मात्र ही रह गये हैं।

मंदिर के पास ही एक प्राचीन बावड़ी है जो काफी गहरी है। बावड़ी के तल में कुएं तक जाने के लिए सीढ़िया बनी हुई है। वर्तमान में यहा कुएं में ठ्यूब वैल लगा हुआ है। मंदिर में शिलालेख भी है जो खण्डित है।

दोनों नवरात्रों यथा चैत एवं आसोज के नवरात्रों में यहा मेला लगता है। विशेष रौनक अष्टमी एवं नवमी को हाती है। नवरात्रा में दूर-दूर के यात्री यहा जात देने व जड़ला उतारने को आते हैं।

यहा के पुजारी जी एवं ग्राम के व्यक्तियों ने माता का एक चमत्कार सुनाया। माताजी के ओरण की जमीन सुरक्षित है, इस पर लगे पेढ़ों की टहनियों को कोई नहीं तोड़ता। एक जाट जो कि काफी समद्ध था, उसने माताजी की जमीन पर अतिक्रमण किया। फलत न केवल उसकी समद्धि गई अपितु वह भी अनेकानेक कष्ट भोग कर मरा। उसके लड़कों ने माताजी से अपनी समद्धि हेतु प्रार्थना की तथा उनके पिता ने जितनी जमीन पर अतिक्रमण किया था, उतनी ही और जमीन अपनी ओर से माताजी के ओरन मे भेंट की। कहते हैं बेटों द्वारा प्रायश्चित्त करने पर उम जाट परिवार पर माताजी की कपाढ़ृष्टि हो गई तथा उस परिवार की समृद्धि पुन लौट आई और आज वह जाट परिवार बहुत सम्पन्न परिवार है।

माता के 'सुदर्शन' नाम से इस गाव का नाम सुदर्शन पड़ा।

ग्राम सुदर्शन कायमसर डीडवाना से पूर्व की ओर लगभग ३० कि.मी एवं सीकर से पश्चिम की ओर लगभग ६० कि.मी की दूरी पर अवस्थित है। मंदिर के चारों ओर पेड़-पोधे हैं, जिससे यहा का प्राकृतिक वातावरण सोदय से परिपूर्ण है। ऐसा कहा जाता है कि इस ग्राम में ओलावृष्टि से फलसों को हानि नहीं होती है।

वर्तमान में इस मंदिर के पुजारी नाथ जाति के हैं, जो मंदिर परिसर में सपरिवार रहते हैं। यह परिवार गत तीन पीढ़ियों से यहा रहता है। इस परिवार को मंदिर की पूजा-अर्धना के लिए गाव बाले लाये थे। इनके पूर्व थोड़े-थोड़े समय के लिए यहा पुजारी रहे हैं। वर्तमान में रामेश्वरसाथजी पुजारी है।

पुरातत्त्व विभाग वाले इस मंदिर को १३००-१४०० वर्ष पुराना मानते हैं।

मंदिर में सभा मण्डप है। गुम्बद पुराना है, परिक्रमा में पत्थर पर उत्कीर्ण अनेकानेक मूर्तियाँ हैं। परिक्रमा में (मंदिर की मूर्तियों के पीछे मध्य में) महिषासुरमर्दिनी की मूर्ति है। परिक्रमा के बाये भाग के मध्य में गणेशजी व दाहिने भाग के मध्य में विष्णु भगवान् की मूर्ति है। परिक्रमा की इन तीनों मूर्तियों के दोनों ओर तथा ऊपर नीचे भी अनेक मूर्तियाँ उत्कीर्ण हैं। इनमें से अधिकाश मूर्तियाँ खण्डित हैं। इस मंदिर की परिक्रमा में उत्कीर्ण मूर्तियाँ एवं पाढ़ा माता (मकराणा) के मंदिर में उत्कीर्ण मूर्तियाँ एवं गुम्बद एक जैसे ही हैं, यदि कोई अतर है तो वह यह कि वहाँ परिक्रमा की दाई ओर मध्य में गणेशजी है तथा बाई ओर पीछे नटराज की मूर्ति है तथा बाई ओर (उत्तर दिशा) में महिषासुर-मर्दिनी की मूर्ति है। परिक्रमा की शेष मूर्तियाँ सुदर्शना माता के समान हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि ये दानों ही मंदिर (सुदर्शना माता एवं पाढ़ा माता) का एक ही समय में बनाये गये थे। सुदर्शना माता के मंदिर में मूल मूर्ति महिषासुर मर्दिनी की थी।

गर्भगृह के बाहर १६ खम्भों के सभा मण्डप में (पाढ़ा माता के सभा मण्डप में भी १६ खम्भे हैं)। दाहिनी ओर शिवालय है तथा शिव-पचायत है। ये शिव मूर्तियाँ मंदिर में लगभग १०० वर्ष पूर्व के समय की बताई गई, जो सगमरमर पत्थर की है। पास में ही माता से भनोती चाहने वालों द्वारा नारियल रखे गये हैं।

यात्रियों के रात्रि-विश्राम हेतु अग्रवाल समाज द्वारा चार क्मरा का निर्माण कराया गया है।

पहले यहा जोजरी नाम की नदी थी, उसकी चपेट में यह गाव आ गया था। मंदिर ऊपर पहाड़ की टेकड़ी पर होने के कारण बचा रहा।

ऐसा कहा जाता है कि मुगल शासक शेरशाह था। उसने मारवाड़ के शासक मालदेव राजा पर आङ्गमण किया था। उस समय मूर्तियाँ खण्डित की गई एवं बाद में औरंगजेब के शासन काल में भी मूर्तियाँ खण्डित की गईं।

माता का पहले सुरजल नाम था। माता के नाम से ही ग्राम का नाम सुरजल हुआ।

दिनांक २२ ६ १८ को जब हम आगे जाने का रास्ता मालूम कर रहे थे, श्री भवरु खा जी डीडवाना में मिल गये। उन्हनि बताया कि सुद्रासन का पुराना नाम सुरजल नगरी था। माताजी का पहला पुजारी एक मुसलमान था, जिनका नाम श्री सफदल खा था जो कायमखानिया में मलबान जाति का दाता (प्रवर्तक) था। वह माताजी की पूजा करता था। इस नगरी में सोना बहुत था। सोने के लालच में विदासर ठाकुर ने गाव पर कब्जा करना चाहा। सफदल खा जी, जो माता का अनन्य भक्त व चमत्कारी था। भक्त पुजारी की परीक्षा लेने हेतु विदासर ठाकुर ने पहले अपना एक दूत भेजा जो माता के पुजारी मफदल खा जी के पास आया। सफलद खा जी माताजी की पूजा चढ़ा पहनकर व सिर पर तिवाल रख कर करते थे। विदासर के ठाकुर के दूत ने सोना मांगा। कहते हैं माता प्रगट हुई और सोने की मूदडी (अगूठी) फकी। दूसरी बात फिर विदासर ठाकुर ने दूत भेजा। दूत ने खाने में गवार की फली व सिंडा मांगा। मंदिर के पीछे जहा यादी हाथ मुह धोते थे दूत को गवार की छोटी फली व सिंडा मिला। ये सब चमत्कार सुनने के बाद ठाकुर ने तीसरी बार अपना दूत भेजा, उसने आकर सफदल खा जी से कहा मुझे तुम्हारी सुरजल माता के दर्शन करावा। प्रात एवं सायकाल माता की पूजन करने वाले सफदल खा ने स्वयं ने भी प्रत्यक्ष में माता के दर्शन नहीं किये थे, अब उसके सामने धर्मसंकट पैदा हो गया। उसने माता को असत्य होने से बचाने के लिए यह निश्चय किया कि वह अपने प्राण त्याग देंगा, क्योंकि माता के दर्शन ठाकुर के दूत को कराय नहीं जा सकते। और दूत का दर्शन नहीं करने पर भक्ति पुजारी की भक्ति पर आच आवे, अतः सफदल खा जी के लिए एक मात्र रास्ता प्राण त्याग का ही था। जब वह खड़ग से आत्महत्या बर रहा था, माता प्रगट हुई और कहा 'तू अपनी जान क्या दे रहा हे? तू क्या चाहता है, सफदल खा ने कहा मैंने माता के कभी भी दर्शन नहीं किये फिर ठाकुर के दूत का माता के दर्शन कैसे कराऊ? माता ने कहा कल शनिश्चर बार है। ठाकुर के दूत को कल सुधह मंदिर के सामने भेज देवा मैं उसका नजर आ जाऊँगी। प्रात काल द्वंद्व मंदिर के सामने आगा,

ता वह देखता है कि माता शेर की सवारी पर मंदिर के बाहर आ रही है। दृढ़ बेहोश हो गया और बाद में वह माता का भक्त बन गया। बाद में उसने माता के मंदिर में ही जीवित समाधि ले ली। एक रात्रि को स्वप्न में माता ने सफदल खा जी को दर्शन दिये और कहा 'बेटे तुम मेरे लिए जगह छोड़कर इस दुनिया को छोड़ दो तेरी नगरी की रक्षा मैं करूँगी। सफदर खा जी जागीरदार थे, उन्हाने पूछा— ह माता, तेरे लिए कितनी जगह छाँड़ ? मेरे पास तो बहुत जमीन है', तब माता ने कहा 'तेरे रसाले में एक टांग दूटी हुई घोड़ी है उसको सुबह रसाले के दरवाजे पर छोड़ देना, वह खुद खड़ी होकर धूमेगी, जितनी जमीन पर धूम कर वह आवे, वह जमीन मेरी हृद में छोड़ देना।' घोड़ी ११६० बीघा जमीन में धूम कर आई जो जमीन आज भी ११६० बीघा माता के ओसन में है। माता के ओरन की जमीन को जिस किसी ने भी दबाने की कोशिश की माता ने उसे तत्काल पर्चा दिया।

एक बार यहा बारिश नहीं हुई। एक बालक प्रण लेकर माता के समक्ष बैठा मिँ जब तक वर्षा नहीं होगी, वह अन्न जल ग्रहण नहीं करेगा। करुणामयी माता की कृपा से तीन दिन बाद वर्षा हो गई, माता ने अपने भक्त की लाज रखी।

ऐसा कहा जाता है कि गाव में जब कभी भी चोर आते थे, माता के मंदिर से आवाज आती थी, चोर आ गये, चोर आ गये और इस प्रकार ग्राम चोरा से मुक्त रहा।

### माता के अन्य मंदिर<sup>१</sup>

- १ महालक्ष्मी माता का एक मंदिर ग्राम पल्लू (जि चूल) में भी है। विस्तृत विवरण धतुमुखी माता के विवरण में देख।
- २ कुशीनगर (गोरखपुर) से लगभग १० कि.मी अग्रिकोण में कुलकुला स्थान है। यहाँ एक छोटी नदी कुल्या है, जिसके तट पर देवी स्थान होने से इसे कुलकुल्या देवी कहते हैं। (शास्त्र में भगवती का एक नाम कुरकुल्ला भी आता है, सभव है, उसी का नाम बिगड़कर कुलकुल्या हो गया हो।)

<sup>१</sup> कल्याण तीर्थीक वर्ष ३१ (१९५७) का जापार पर।

इस माता का स्वरूप वैष्णवी देवी का है। अत उनकी पूजा सात्त्विक विधि से होती है। यहा रामनवमी के अवसर पर मेला भरता है। यात्री इस मेले में दूर-दूर से भगवान् की आराधना करने आते हैं।

- ३ सिहपुरी (उज्जेन) में वैष्णवी देवी व महालक्ष्मी के मंदिर हैं।
- ४ ओकारेश्वर यात्रा क्रम मे- कुबेर भण्डारी से लगभग ४-५ कि.मी की दूरी पर नर्मदा के दक्षिण तट पर 'सात माता' स्थान है, जहाँ अन्य माताओं के साथ-साथ वैष्णवी माता का भी मंदिर है।
- ५ गोवा प्रदेश के शिरोग्राम मे लयराई देवी का स्थान अत्यन्त प्रसिद्ध है। ये वैष्णवी देवी हैं। इनका इधर इतना सम्मान है कि इस गाव मे कोई भी घोड़े पर चढ़कर नहीं निकलता।

वैशाख शुक्ला पचमी को यहा बड़ा मेला लगता है। पचमी की रात्रि मे गाव के बाहर एक बट-बक्ष के नीचे लकड़िया का ढेर एकत्र करके उसमे अग्नि प्रज्ञचित्त की जाती है। कई घटों मे जब लकड़िया जल जाती है, लपट तथा धुआ नहीं रहता, तब अगारो के ऊपर से नगे पाँव, वे सब लोग चलते हैं, जो उस दिन देवी की पूजा के लिए व्रत किय रहते हैं। ऐसे लोगों की सख्त्या कई सौ होती है। किसी का न तो पैर जलता है न कोई कष्ट होता है। यह अद्भुत दृश्य देखने दूर-दूर के विधर्मी लोग भी आते हैं।

- ६ रामेश्वरम् मंदिर\* की पछिमा में कुण्डों के समीप अनेकानेक मंदिरों व देव-विग्रह के साथ साथ महालक्ष्मी का मंदिर भी है।
- ७ देवी भागवत ७/८५-८४, मत्स्य पुराण १३/२६-५६ के अनुसार देवी के १०८ दिव्य शक्ति स्थानों में कोल्हापुर में महालक्ष्मी का मंदिर है। यह महिषमदिनी का स्थान है। इस लोग अम्बाजी का मंदिर भी उहते हैं। मंदिर बहुत बड़ा है। उसका प्रधान भाग नीले पत्थरों का बना है। यह राज-महल के उजानाघर के पीछे स्थित है। कोल्हापुर- सागली-मीरज-कोल्हापुर लाइन पर मीरज से ३६ मील दूर है। यहाँ देवी के तीन नेत्र गिरे थे।

८ श्री शैल स्थान पर देवी की ग्रीवा गिरी थी। यहाँ की शक्ति का नाम महालक्ष्मी है— यह स्थान हबड़ा-क्यूल लाइन के नलहाटी स्टेशन से लगभग ३ कि.मी नैऋत्यकोण में एक टीले पर स्थित है।

सुदर्शना पारीको के निम्न अवटको की कुलदेवी है—

- |             |        |
|-------------|--------|
| १ मलवड      | जोशी   |
| २ वागुण्डचा | जोशी   |
| ३ मलवड      | तिवाडी |



## सुरसा : सुरसाय-सरस्वती माता

‘मुरसा’ शब्द से तात्पर्य है, ‘शोभना रसोय स्या’, सुखेन रस्यते, सुस्खादु रसयुक्ते। तदनुसार सुरसा शब्द के अनेकानेक शाब्दिक अर्थ है, यथा—

१ तुलसी

२ किसी किमी के मत मे यह दुर्गा का नाम भी है।<sup>१</sup>

३ सुरसा कश्यप की पुत्री नाग माता का नाम है। वात्मीकि रामायण (सुन्दर काण्ड, सर्ग १) राक्षस का रूप धारे इस देवी का उल्लेख हनुमानजी के सागरोल्लंघन के सदर्भ मे हुआ है—

ततो देगा सुगन्धर्वा सिद्धाश्च परमर्पय ।  
अद्वयन सूर्यसङ्काशा सुरसा नागमातरम् ॥  
(वा रा स का सर्ग १)

एव विचार्य नागाना मातर सुरसाभिधानाम् ।  
अद्रवीददेवतावृन्द कीतुहलसमन्वित ॥  
(आध्यात्म रामायण ६/१/८२४)

४ महाभारत मे अप्सराविशेष के अर्थ में इस शब्द का प्रयोग हुआ है। (म भा — १/१२२/६०)

इसी प्रकार सुरसाय शब्द का सदर्भों के साथ अलग-अलग अर्थ होता है—

१ सुरसाय— (मुरस्खामिनी का राजस्थानी भाषारूप)।

२ शब्द सरस्वती का ग्रामीण अचल मे विकृत प्रयोग होते हाते सुरसाय हो गया। अवधी भाषा मे सरसई हो गया सरसइ ब्रह्म विचार प्रचारा। (गो तु दा ) जैसे गावो मे किसी का नाम सरस्वती होने पर उसे सुरसती कहने लग गये।

परा, दुग्धा, सरस्वती—विष्णु और शिव आदि की शक्ति है। अत भक्तों द्वारा देवी के इन तीनों रूपों की ही पूजा की जाती है।

सुरसाय का एक शाब्दिक ‘सुग्रस्हायक’ भी है कि जो देवताओं की सहायता करे। इस सर्वभूमि महिषासुर के वध हेतु जिन-जिन दैवी शक्तियों ने अपना योगदान दिया उनमें महासरस्वती देवी का अमित योगदान था। मार्कण्डेय पुराण के सावर्णिक मन्त्रन्तर की कथा के पाचवे अध्याय में<sup>१</sup> देवताओं द्वारा देवी की स्तुति की गई है। मार्कण्डेय पुराण के उत्तर चरित्र में महासरस्वती की प्रसन्नता के लिए इस देवी का ध्यान किया गया है।

### महासरस्वती की उत्पत्ति

बादेवता भगवती सरस्वती समस्त ज्ञान-विज्ञान, विद्या, कला, बुद्धि, मेधा, धारणाशक्ति, तर्कशक्ति और पत्यभिज्ञा की प्रतिनिधि-स्वरूपा वाणी की ब्रह्मस्वरूपा, परमा ज्यातिरूपा सनातनी सर्वविद्याधिदेवी, ज्ञानाधिदेवी और अधिष्ठात्री शक्ति है। याज्ञवल्क्य ऋषि ने जगज्जननी सरस्वती की नष्ट-स्मृति, हततज विद्याहीन और दुखित मानवों को ज्ञान, स्मृति, विद्या, प्रतिष्ठा, काव्य प्रणयनशक्ति ग्रथकर्त्तव्यशक्ति, सत्सभा में विचार क्षमता और प्रतिभा की देने वाली शक्ति के रूप में स्तुति की है। अपने मूल स्थान अमृतमय प्रकाशपुजा में निवसित यह देवी अपने उपासकों के लिए निरन्तर पचास अक्षरों के रूप में ज्ञानामत की धारा प्रवाहित करती रहती है।

शब्द ब्रह्म<sup>२</sup> शब्द से व्यपदिष्ट ज्ञानात्मिका शक्ति भगवती शारदा साक्षात् ब्रह्मस्वरूपिणी ही है और ये महालक्ष्मी, महाकाली और महाशक्त्यात्मिका महामाया आदि शक्तियों से भिन्न नहीं है। समस्त विश्व का दैनन्दिन व्यापार वाणी के व्यवहार पर ही आधृत है।<sup>३</sup> आचार्य व्याडि ने श्री<sup>४</sup> शब्द के अन्तर्गत लक्ष्मी, सरस्वती, बुद्धि को समाहित किया है। पुराणकारा ने सरस्वती के निम्नाकृति वाग्ह नामा—भारती, सरस्वती, शारदा, हसवाहिनी, जगती, वागीश्वरी, कुमुदी, ब्रह्मचारिणी, बुधमाता, वरदायिनी, चन्द्रमानि और भुवनश्वरी को दिवस

<sup>१</sup> कल्याण—मार्कण्डेय ब्रह्मयुगानाम, वर्ष २१ (१९४७) पृ २०५ कल्याण—सक्षिप्त देवी भागवत  
अम १८ वर्ष ४४ (१९६०) पृ ५८२

<sup>२</sup> एवं स्तुति—सम्मतर्त्त्व—श्रीमती शारदा पारीक—सहायक निश्चाक माध्यमिक शिखा घाँड़  
राज अजमरा) पृ २५

की तीनों सधियों में स्मरण करते रहने का निर्देश दिया है, जिससे वह ब्रह्मस्वरूपा सरस्वती उनकी रसना पर सदैव विराजमान रहे।<sup>१</sup> यथा—

प्रथम भारती नाथ, द्वितीय च सरस्वती।  
 तृतीय शारदादेवी, चतुर्थ हस्याहिनी॥  
 पचम जगती ख्याता पष्टु वागीश्वरी।  
 सप्तम कुमुदी प्रोक्ता अष्टम ब्रह्मचारिणी॥  
 नवम वृथमाता च दशम वरदायिनी।  
 एकादश चन्द्रकान्तिर्द्वादश भुवनेश्वरी॥  
 द्वादशीतानि नामानि त्रिस्त्रिय च पठेत्।  
 विश्वस्त्वे विश्वालाक्षि विद्या देहि, नमोऽस्तु ते॥

विभिन्न शास्त्रों, पुराणों और ग्रन्थों में भगवती सरस्वती के ध्यान से सम्बद्ध जो स्तुतियाँ प्राप्त होती हैं, उन सबमें प्राय एक से ही स्वरूप की वदना की गयी है। उनके अनुसार सरस्वती हस अथवा शुभ्रकमल पर आरूढ अथवा आसीन वताई गयी है। उनका वर्ण पूर्णिमा के चन्द्रमा, चन्द्रहार अथवा कुन्दकुसुम (मुक्तापुष्प) के समान उज्ज्वल गोर वर्णित है। उनके अग-प्रत्यग कर्पूर, कुन्द पुष्प के समान कान्तिवाले हैं। उनका मुख-मण्डल द्वाधिदब महादेव के अद्वाहास के समान प्रफुल्ल ओर बाणी मदस्मिनि (मुस्कान) से अलकृत किया गया है। सम्पूर्ण ज्ञान से परिपूर्ण उमग और उत्तास म उल्लसित रहने वाली माँ सरस्वती के कर-कमला मे वीणा, पुस्तक, अमृतकलश, अक्षमाला और कही-कही पद्मपुष्प सुशोभित है। दिव्य आभणों से विभूषित वह देवी सब की सभी प्रभार की मनोकामनाओं की पूर्ति करने वाली कही गई है, अतः नमस्कारपूर्वक उनका मानसिक ध्यान करने का निर्देश दिया गया है।

देवी के ध्यान से सम्बन्धित कतिपय शास्त्रों स्तुतियाँ यहाँ उदृत की जा रही हैं—

स्त्रिय चन्द्रन कुन्देन्दु कुमुदाप्योज सरिश्वा।  
 वणाधिदवी या तत्यै चाक्षरायै नमोनम ॥।  
 विसर्ग विन्दु मात्रासु यदधिष्ठानमेव च।

तदधिष्ठातृदेवी या तस्मै वाण्ये नमो नम ॥  
 यथा विना सख्यावान् सख्या कर्तुं न शक्यते ।  
 कालसख्यास्वरूपा वा त्रिस्मै देव्ये नमो नम ॥  
 व्याख्यास्वरूपा या देवी व्याख्याधिष्ठातृ-देवता ।  
 ध्रूतिशक्तिज्ञनशक्तिरुद्धिशक्ति-स्वरूपिणी ।  
 प्रतिभा कल्पनाशक्तिर्या च तस्मै नमो नम ॥

— X —

शुभा स्वच्छविलेपमात्यवसना शीताशुखण्डोज्ज्वला ।  
 व्याख्यामक्षगुण सुधाद्वयकलस विद्याश्च हस्ताम्बुजे ।  
 विभ्राणा कमलासना कुचनता वाग्देवता सस्मिता ।  
 वन्दे वाग्विभवप्रदा त्रिनयना सौभाग्यसम्पत्करीम् ॥

— X —

तरुणशकलमिन्दो विभ्रती शुभकान्ति  
 कुचभरनमिताङ्गी-सत्रियणाभिताङ्गे ।  
 निजकरकपलोदचल्लेखनी पुस्तकश्री ।  
 सकल विभवसिद्धये पातु वाग्देवता न ॥

— X —

आसीना कमले करैजपटी पदाद्रूय-पुस्तक  
 विभ्राणा तरुणेन्दु-बद्धमुकुटा-मुकेन्दु कुन्दप्रभा ।  
 भालोन्मीलितलोचना कुचभरक्रान्ता भवद्भूतये ।  
 भूयाद्वाग्धिदेवता मुनिगणैरासेव्यमानानिशम् ॥

— X —

मुक्ताहारावदाता शिरसि शशिकलालङ्घता व्युभि स्वै  
 व्याख्यावर्णाक्षमाला मणिमयकलश पुस्तकश्चोद्दृहन्तीम् ।  
 आपीनोत्तुङ्गवक्षोरुहभरविलसन्मध्यदेशामधीशा ।  
 वाचामीडे चिराय त्रिभुवनमिता पुण्डरीके निष्यणाम् ॥

— X —

हसान्दा हरहसित-हारेन्दु कुन्दावदाता,  
वाणी मन्दस्मिततरभुखी मीलिघद्वेन्दुरेखा।  
विद्या-वीणामृतमयघटाक्षसजा दीप-हस्ता,  
शुभ्रावजवस्था भवदधिमतप्राप्तये भारती स्थात्॥

— X —

वाणी पूर्णनिशाकरोज्ज्वलभुखी कर्पूरकुन्दप्रभा।  
चन्द्राद्वाङ्गितमस्तका निजकरै सम्बिश्चतीमादरात्॥  
वीणामक्षगुण सुधाव्यकलस विद्या च तुङ्गस्तर्नी।  
दिव्यराभरणीविभूषिततनु हसाधिरुढा भजे॥

— X —

यथा तु देवि भगवान् ब्रह्मा लोकपितामह ।  
त्वा परित्यज्य नो तिष्ठत् तथा भव चरप्रदा ॥  
वेदशास्त्राणि सर्वाणि नृत्यगीतादिक च यत्।  
लक्ष्मी मेधा वरा रिषिणीरी तुष्टि प्रभा मति ॥  
एताभि पाहि तनुभिरष्टाभिर्मी सरस्वति।

कल्याण<sup>१</sup> म महासरस्वती की उत्पत्ति का कथानक इस प्रकार दिया गया है—

पूर्वकाल में जब शुभ्र और निशुभ्र न इन्द्रादि देवताओं के सम्पूर्ण अधिकार छीन लिये तथा वे स्वयं ही यज्ञभोक्ता बन बैठे, तब अपने अधिकारों को पुन ग्रास करने के लिए देवताओं ने हिमालय पर जाकर देवी भगवती की अनेक प्रकार से स्तुति की। उस समय पतितपावनी भगवती पार्वती आयी और उनके शरीर से शिवा प्रगट हुई। सरस्वती देवी पार्वती के शरीर-ओप से निकली थी, इसलिए उनका नाम कौशिकी नाम प्रसिद्ध हुआ। कौशिकी के निम्न जाने के बाद पार्वती का शरीर काला पड़ गया, इसलिए उन्हे कालिका कहते हैं। तदन्तर भगवती कौशिकी परम सुन्दर रूप धारण कर बढ़ी हुई थी कि उन्ह चण्ड-मुण्ड नामक शुभ्र-निशुभ्र के दता न देखा। उन्हने जाकर शुभ्र-निशुभ्र से कहा कि 'हे दामवपति! हिमालय पर एक अति लावण्यमयी परम मनोहरा रमणी बैठी है। वे सा मनोज रूप आज तक मिसी न नहीं देखा। आपके पास ऐसवत हाथी, पारिजात तरु उच्चैश्रवा अश्व, ब्रह्मा का विमान, कुबेर का

Hinduism Discord Server <https://discord.gg/2KXHJUe>

खजाना, बरुण का सुवर्णवर्षा छप तथा अन्य विविध रत्न विद्यमान है, पर ऐसा म्हीरत्ल नहीं है, अत आप उसे ग्रहण कीजिए।' दूता की वाणी सुनकर शुभ्म-निशुभ्म ने अपने सुग्रीव नामक दूत को उस देवी को प्रसन्न करके अपने पास लाने को कहा। दूत ने जाकर देवी को शुभ्म-निशुभ्म का आदेश सुनाया और उनके ऐश्वर्य की बहुत प्रशस्ता की। देवी ने कहा कि तुम जो कुछ कहते हो सो सब सत्य है, परन्तु मैंने पहले एक प्रतिज्ञा कर ती थी, कि—

यो मा जयति सग्रामे यो मे दर्पं व्यपोहति।  
यो मे प्रतिबला लोके स मे भर्ता भविष्यति॥

(श्री दुर्गासमशती ५।१२०)

'जो मुझे सग्राम मे जीतकर मर दप को चूण करेगा, वहा मेरा पति होगा।' अत तुम अपने स्वामी को जाकर मेरी प्रतिज्ञा सुना दो कि मुझे युद्ध मे जीतकर मेरा पाणिग्रहण कर ले। दूत ने देवी को बहुत समझाया, परन्तु देवी ने नहीं माना। तब कुपित होकर दूत ने सम्पूर्ण वृत्तान्त शुभ्म-निशुभ्म को जाकर सुनाया। जिससे कुपित होकर उन्होंने अपने सेनापति धूमलोचन को देवी के साथ युद्ध करने के लिए भेजा। परन्तु देवी न थाड ही समय म उसे सना सहित मार डाला। इसी प्रकार चण्ड और मुण्ड वो भी देवी ने मार डाला। तब कुद्द होकर उन्होंने अपनी समस्त सेना लेकर देवी को चारों ओर से घेर लिया। भगवती ने घण्टाध्वनि की, जिससे सम्पूर्ण दिशाएं गूँज उठी। इसी समय ब्रह्मा, विष्णु, महेश, कातिकेय और इन्द्रादि के शरीरों से शक्तियाँ निकलकर चण्डिका के पास आयी। वे देविया जिसकी शक्ति थी, तत्त्व शक्ति के अनुरूप स्वरूप, भूषण और बाहन से युक्त थी। उन शक्तिया के मध्य में स्वयं महादेव जी आये और देवी से बाले कि मुझे प्रसन्न करने के लिए सम्पूर्ण दानवों का सहार कीजिए।' उसी समय देवी के शरीर से अति भीषण चण्डिका-शक्ति प्रगट हुई और शिवजी से बाली कि हे भगवन्। आप हमारे दूत बनकर दानवों के पास जाइये और उन्हें कह दीजिए कि यदि तुम जीना चाहते हो तो तैलोम्य का राज्य इन्द्र को समर्पित कर पाताल लोक को चले जाओ।' शिवजी ने शुभ्म-निशुभ्म को देवी की आज्ञा सुनायी, पर वे बलगर्भित दानव कब मानने वाल थ। निदान भयमर युद्ध छिड गया और अस्त्र-शस्त्रा के

प्रहार होने लगे। शक्तियों द्वारा आहत होकर दानव सेना गिरने लगी। तब कुद्द होकर रक्तबीज युद्धभूमि मे आया। इस दानव के रक्त से उत्पन्न दानव समूह से सम्पूर्ण युद्ध स्थल भर गया, जिससे देवगण काप उठे। तब चण्डिका ने काली से कहा कि 'तुम अपना मुख फैलाकर इसके शरीर से निकले हुए रक्त का पान करो, जब यह क्षीणरक्त होगा तब मारा जायेगा।' फिर देवी ने रक्तबीज पर शूलप्रहार किया। उससे जो रक्त निकला, उसे काली पीती गई। क्षीणरक्त हात ही देवी के प्रहार से वह धराशायी हो गया। तत्पश्चात् शुभ्म और निशुभ्म भी युद्धभूमि में मारे गये। देवगण हर्षित होकर जयध्वनि करने लगे। महासरस्वति ने जो रूप धारण किया, उसका स्वरूप और ध्यान इस प्रकार है—

घण्टाशूलहलानि शहुमुसले चक्र धनु सायक  
हस्ताब्जैर्दधर्ती घनान्तविलसच्छीताशुतुल्यप्रभाम् ।  
गौरीदेहसमुद्भवा त्रिजगतामाधारभूता महा-  
पूर्वामित्र सम्ब्यतीमनुभजे शुभ्मादिदैत्यमदिनीम् ॥

'स्वहस्तकमल में घण्टा, त्रिशूल, हल, शख, मूसल, चक्र, धनुष और बाण को धारण करने वाली, गौरी देह से उत्पन्न, शरद ऋतु के शोभा-सम्पन्न चन्द्रमा के समान कातिवाली, तीनों लोकों की आधारभूता, शुभ्मादि दैत्यमर्दिनी महासरस्वती को हम नमस्कार करते हैं।'

देवतागण महासरस्वती की स्तुति करने लगे— 'ह देवि! आप अनन्त पराप्रमशाली शक्ति है, ससार की आदिकारण महामाया आप ही है। आपके द्वारा समस्त ससार मोहित हो रहा है। आप ही प्रसन्न होने पर मुक्ति की दाता है। हे देवि! सम्पूर्ण विद्याएँ आपके ही भेद है, सम्पूर्ण स्त्रियाँ आपका ही स्वरूप है। आपके द्वारा समस्त ससार व्याप्त है। कौनसी ऐसी विशेषता है कि जिससे हम आपकी स्तुति न करें। हे देवि! आप प्रसन्न हों और शत्रुओं के भय से सर्वदा हमारी रक्षा कर। आप समस्त ससार के पापों का और उत्पात के परिणामस्वरूप उपसर्गों का नाश कर दीजिए।' देवताओं की स्तुति सुनकर भगवती प्रसन्न होकर कहने लगी— 'हे देवगण! तुम्हारी की हुई स्तुति के द्वारा एकाग्रचित होकर जो मेरा स्तवन करेगा, उससी समस्त बाधाएँ मै अवश्य नष्ट कर दूँगी।' यह कहकर देवगण के देखते-देखते ही भगवती अन्तर्धान हो गयी।

जैसाकि प्रारम्भ में ही 'सुरसा' शब्द के शास्त्रात्मक अर्थों पर प्रकाश डालते समय उसका प्रमुख प्रचलित अर्थ 'नाग माता' बताया गया है— (नागाना सर्पणा माता)। पुराणों के अनुसार नाग माता दक्ष की कन्या और कश्यप की पत्नी थी। रामायण ३/२०/२९ के अनुसार उसका नाम कहु था— यथा—

'रेहिण्या ज़िरे गावो गन्धव्यां वाजिनस्तथा।'

'सुरसाऽजनयनगान् राम! कदृशं पत्रगान्।'

इस कहु का एक पर्याय नाम 'मनसा देवी' भी है। उसका विशेषण नाम विषहरी है। वह कश्यप की पुत्री भी कही गयी है। वह आस्तीक मुनि की माता, वासुकी की बहिन, जरत्कारु मुनि की पत्नी के रूप में पुराण प्रसिद्ध है। उनके नाम की व्युत्पत्ति के विषय में ब्रह्मवैवर्त पुराण के प्रकृतिखण्ड-नारायण नारदीय मनसोपाख्यान के पञ्चवत्वारिंशत् अध्याय में विस्तार से प्रकाश डाला गया है। कश्यप की मानसी कन्या होने से वह मनसा देवी कही गई। वह लोक में जगद्गौरी के नाम से विख्यात और पूजित है। शिवजी की शिष्या होने के कारण उनके शैवी नाम से भी कहा गया है। जन्मेजय के नागयज्ञ में उसने नागों की रक्षा की। अत नागश्वरी कहाती है—

नागाना प्राणरक्षिणी यज्ञे जन्मेजयम्य च।

नागेश्वरीति विख्याता सा नागभगिनीति च।

वह विषहरी, सिद्धयोगिनी के नाम से भी विरथात है। उसके बारह नामों का पाठ करने से नागा के दशन का भय नहीं रहता। धन्वन्तरि के दर्प का भजन करने वाली इस देवी का विस्तार से वर्णन उक्त ब्रह्मवैवर्त पुराण के प्रकृति खण्ड म ४५ से ७९ अध्याय तक उपलब्ध है।

### माता के स्थान

१ सुरसा (सुरसाय) माता का स्थान सुदर्शना माता का स्थान ही बताया गया है।<sup>१</sup> सुद्रासना-कायमसर में सुरजल माता का मंदिर है। मंदिर अति प्राचीन है। पुरानी मूर्तिया मुगलकाल में तोड़ दी गई थी जो मंदिर की दीवारों एवं चारदीवारी में सुगक्षा की टृष्णि से चुना ही गई है। वर्तमान में इस मंदिर में दुर्गा की नौ मूर्तियाँ प्रतिष्ठापित हैं।

<sup>१</sup> यह स्थान ग्राम सुरामना कायमसर जि नागौर में है। स्थान का विस्तृत विवरण सुन्दरना माता के बृत्तान्त में वर्णित है।

सुरमा सुरसाय माता का भी यही स्थान बताया गया<sup>१</sup> सुरसा, सुरसाय का एक अर्ध देवताओं की सहायता करना भी होता है। सुरसाय का ही नाम विंगाड़कर अव्युत्पन्न लिखने वालों ने सुरजल लिख दिया हो।

अब तक की प्राप्त जानकारी के आधार पर इस स्थान की पुरानी मूर्तियों खंडित कर देने के कारण एवं तत् सम्बन्धित ऐतिहासिक साक्ष्यों के नष्ट हो जाने के कारण रावों से प्राप्त जानकारी को आधार माने जाने पर सुरसा माता का यह स्थान माना जाना उपयुक्त प्रतीत होता है।

आमेर (जयपुर) का मशा माता मंदिर श्री नदकिशोरजी पारीक नागरिक<sup>२</sup> ने आमेर स्थित मशा माता का जो वर्णन किया है, वह निम्न प्रकार है—

जयपुर से आमेर वाले वाली सड़क पर, चार भील चार फलांग पर घाटी दरवाजे से आमेर की पुरानी नगरी में प्रवेश करने पर दरवाजे से थोड़ी दूर बार्यों ओर एक सड़क धूमकर मशा देवी के मंदिर तक जाती है जो जयगढ़ के दुग के दक्षिण छोर, वियजगढ़ी के नीचे एक लघु किन्तु दशानीय मंदिर है, जिसे 'देवी खाल' ही कहा जाता है।

आमेर में पहले मीणा का गज्य था। यह मंदिर उत्कीर्ण स्वयंभू है, किसी की तरामी और स्थापित की हुई नहीं है। मूर्ति के नेत्र, भौंहे, ललाट, मुख आदि अपने आप ही इस स्वयंभू मूर्ति में आभासित हैं। ललाट पर सर्प का फन व मूँछ भी देखने में आत है। वास्तव में मशा देवी को सर्पों की देवी भी माना जाता है। 'देवी भागवत्' के ४८ से स्कन्ध में इसका वर्णन है। मशा माता जगत्कारु ऋषि की पली थी। जब यह ऋषि पुष्करारण्य में गए तो उन्होंने इस स्थान पर पङ्कव लिया था। वही मशा माता का मंदिर बना हुआ है।

यद्यपि मंदिर का भी जीर्णोद्धार हो गया है और मकानात भी नए बन गए हैं, तथापि 'देवी खोल' की प्राचीनता सुपमा-सम्पन्न यह स्थल तपोवन की तरह ही है, जहां किसी सिद्ध महात्मा अडानन्द न कभी तपस्या की थी।

<sup>१</sup> सुरसा माता का स्थान सुन्दरना ग्राम में हान का उल्लाघ पारीक शामिर (बैंगलाट) में है। ग्राम सुन्दरना में नवाराजा की प्रतिमाएँ कुछ समय पूर्व ही प्रतिष्ठापित हुई हैं। घृत सभव है मुनांग द्वारा मंदिर का व्यस्त करन एवं मूर्तिभजन के पूर्व यहा मुगसाय सुरसा साम्यती माता की प्रतिमा रही थी। मंदिर परिसर में यहंडित मूर्तियों का सुरामा भी दृष्टि से दीवार में चुनवा लिया गया है।

इस महात्मा बी समाधि देवी खोल के छोर पर आज भी विद्यमान है और यहा दो विशाल वट-वृक्षों के नीचे सिद्धेश्वर महादेव का मंदिर है। वट-वक्षों में से एक दूसरे की जटाओं से बना हुआ है और अतीव प्राचीन है।<sup>१</sup>

पहले यहा पशुबलि हाती थी किन्तु अब पशुबलि एवं मादिरापान निषिद्ध है।

मनशा देवी का एक अन्य मंदिर राजस्थान के अलवर ज़िले में सरिस्का अभयारण्य में भर्तृहरि की गुफा के पास स्थित है। समीप ही हनुमानजी का भी प्रसिद्ध मंदिर है।

हरिद्वार का मशादेवी का मंदिर मशा देवी का एक मंदिर हरिद्वार में शिवालिक पर्वत की छोटी पर है। इस मंदिर की मान्यता जग-प्रसिद्ध है। अपनी मनोकामना सिद्धि हेतु भक्त मंदिर के पास स्थित एक वक्ष पर मोती बाधते हैं। मंदिर तक पैदल जाने वालों को लगभग एक कि मी चढ़ाई चढ़नी होती है। मंदिर तक जाने हेतु टूलिया (रोप-वे) भी है, जिसमें बैठकर भक्त माता के मंदिर तक दर्शनार्थ जा सकते हैं।

**विन्ध्याचल-** उत्तर रेल्वे के मिर्जापुर स्टेशन से ६ कि मी दूर विन्ध्याचल स्टेशन है। यहाँ गगा तट के पास तीन मंदिर हैं। १ विन्ध्यवासिनी (कौशिकी देवी) २ महाकाली ३ अष्टभुजा। इन तीनों की यात्रा 'त्रिकोण यात्रा' कही जाती है।

**अष्टभुजा-** इन अष्टभुजा देवी को कुछ लोग महासरस्वती भी कहते हैं। विन्ध्यवासिनी को लोग महालक्ष्मी मान लेते हैं। और इस प्रकार 'त्रिकोण यात्रा' को महालक्ष्मी, महाकाली, महासरस्वती की यात्रा कहते हैं।

**उज्जैन-** यहाँ कार्तिक चौक में महासरस्वती का मंदिर है।

पारीकों के निम्न अवटका बी कुलदेवी सुरसा अथवा सुरसाय (सुरसाराय) है—

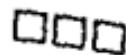
१ जहेला	जोशी
२ जावल्या (जावला)*	उपाध्याय
३ दुलीचा	उपाध्याय

\*पारीक जाति के सुरसा मातृका के पूजक उत्तर अवटकों में जावल्या

(जावल्या) उपाध्यायों को प्राप्त विद्याप्रवीण<sup>१</sup> की उपाधि से सिंह होता है कि सरस्वती ही सुरसा नाम से उनकी कुल देवी है।<sup>२</sup> जहेला जोशी और दुलीचा उपाध्यायों की भी कुल देवी सरस्वती ही होनी चाहिए। यह भी सम्भव है कि आमेर या अलवर के समीप नागा (मीणो= मेनाको) के क्षेत्र में अवस्थित होने से जहेला और दुलीचा अवटकों ने नागमाता सुरसा को अपनी कुल देवी के रूप में स्वीकार कर लिया हो।

<sup>१</sup> पारीक महापुरुष— ले गुनाथ प्रसाद तिवाड़ी पृ २२४

<sup>२</sup> श्री वृजमाहन जावलिया।





मन्था भाता का मन्दिर - आमेर

## आरती

जै अम्बे गौरी, मैया जै मगल मूर्ति, मैया जै आनन्द करणी।  
 तुमको निशा दिन ध्यावत, हरि ब्रह्मा शिव री॥ जै॥  
 माग सिद्धू विराजत टीको मृग-मद को।  
 उज्ज्वल से दोउ नैना, चन्द्र बदन नीको॥ जै॥  
 कमल समान कलेवर रक्ताम्बर राजे।  
 रक्त पुष्प गल माला, कण्ठन पर साजे॥ जै॥  
 केहरि वाहन राजत खड्ग खपरधारी।  
 सुर नर मुनि जन सेवत, तिनके दुखहारी॥ जै॥  
 कानन कुण्डल शोभित नासाग्रे मोती।  
 कोटिक चन्द्र दिवाकर, राजत सम ज्योति॥ जै॥  
 शुभ्र निशुभ्र विडारे महिपासुर घाती।  
 धूम्र विलोचन नैना, निशदिन मदमाती॥ जै॥  
 चण्ड मुण्ड महोर, शोणित बीज हरे।  
 मधु कैटभ दोउ मारे, सुर भयहीन कर॥ जै॥  
 ब्रह्माणी रुद्राणी, तुम कमला रानी।  
 आगम-निगम बखानी, तुम शिव पटरानी॥ जै॥  
 चौसठ योगिनी गावत नृत्य करत भैरू।  
 बाजत ताल मृदगा, और बाजत डमरू॥ जै॥  
 तुम ही जग की माता, तुम ही हो भरता।  
 भक्तन की दुख हरता, सुख सप्ति करता॥ जै॥  
 भुजा धार अति शोभित खड्ग खपरधारी।  
 मनवाछित फल पावत, सेवत नर नारी॥ जै॥  
 कच्चन थाल विराजत अगर कपूर बाती।  
 श्रीमाल-केतु मे राजत, कोटि रुल ज्योति॥ जै॥  
 भजत भोलानन्द स्वामी, सुख सप्ति पाव॥ जै॥

करुणावतार सदा वसन्त हृदयारविन्दे भव भवानी आरती सप्तारसार भुजगोन्धारम्।  
भव भवानी सहित नमामि॥

मगल' की सेवा सुन मेरी देवा हाथ जोड़ तेरे द्वार खड़े,  
पान-सुपारी ध्वजा-नारियल ले ज्वाला तेरी भेट धेर।  
सुन जगदम्बे कर न विलम्बे सतन के भडार भेर।  
सतन प्रतिपाली सदा खुशाली जै काली कल्याण करे॥ १॥

बुद्ध' विधाता तू जगमाता मेरा कारज सिद्ध करे।  
चरण-कमल का लिया शरण तुम्हारी आन पेर।  
जब-जब भीर पढ़े भक्ति पर तब-तब आय सहाय करे।  
सतन प्रतिपाली सदा खुशाली जै काली कल्याण करे॥ २॥

गुरु' वार ते सब जग मोहो तरणी रूप अनूप धेर।  
माता होकर पुत्र खिलावै कही भार्या भोग करे।  
शुक्र सुखदाई, सदा सहाई सत खड़े जयकार करे।  
सतन प्रतिपाली सदा खुशाली जै काली कल्याण करे॥ ३॥

ब्रह्मा-विष्णु-महेश फल लिये भट देने तब द्वार खड।  
अटल सिहासन बैठी माता सिर सान का छ्य धर।  
वार शनिश्चर कुकुम वरणी, जब उकर पर हुकुम करे।  
सतन प्रतिपाली सदा खुशाली जै काली कल्याण करे॥ ४॥

खद खपर बैश्यल हाथ लिय रक्तबीज कूँ भस्म करे।  
शुभ्म निशुभ्म दणहि म मारे महियासुर को पकड़ लते।  
आदित वारी आदि भवानी जन अपने का कट करे।  
सतन प्रतिपाली सदा खुशाली जै काली कल्याण करे॥ ५॥

कुपित हाय कर दानव मार चण्ड-मुण्ड सब चूर करे।  
जब तुम देखा दया-रूप हा पल म सकट दूर करे।  
सौम्य स्वभाव धरधा मरी माता जन की अर्ज कबूल करे।  
सतन प्रतिपाली सदा खुशाली जै काली कल्याण कर॥ ६॥

सात बार बी महिमा बर्नी सब गुण कौन बछान करे।  
सिहीठ पर चढ़ी भवानी अटल भवन म राज्य कर।  
दर्शन पाव मगल गावे सिध-साधन तर भेट करे।  
सतन प्रतिपाली सदा खुशाली जै काली कल्याण करे॥ ७॥

ब्रह्मा देव पढ़े तर द्वारे शिवाकर हरि ध्यान करे।  
इन्द्र वृष्ण तेरी करे आरती चंचर कुबेर डुलाय करे।  
जय भवानी जय मातु भवानी अचल भवन म राज्य करे।  
सतन प्रतिपाली सदा खुशाली जै काली कल्याण करे॥ ८॥

## संदर्भ ग्रन्थ-सूची

अखण्ड राष्ट्र ज्योति पत्रिका  
अनन्दाकल्प

अली चौहान डाइनेस्टीज, ले डॉ शर्मा  
आर्कियोलोजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया (वेस्टर्न) रिपोर्ट, सन् १९१०-११, डॉ

आध्यात्म रामायण  
आवरा माता, ले रुडमल सत्सगी

उत्पल- श्री साभर पुस्तकालय हीरक जयन्ती स्मारिका  
ऐनसिएन्ट सिटीज एण्ड टाउन्स ऑफ राजस्थान, ले के सी जैन

कैटेलॉग ऑफ हिस्टोरिकल डाक्यूमेन्ट्स इन कपड़द्वारा ऑफ जयपुर, सम्पा  
गोपाल नारायण बटुरा, चन्द्रमणि सिंह

कन्याकुमारी, ले वी मीणा  
कन्याकुमारी- सुचीन्द्रम  
करणी कथामृत, ले शार्दूलसिंह कविया

तीर्थक

देवताक

(सक्षिप्त) ब्रह्मवैवर्तपुराणाङ्क  
भगवतलीला अङ्क

देवता अङ्क

(सक्षिप्त) देवी भागवताङ्क

(सक्षिप्त) मार्कण्डेय-ब्रह्मपुराणाङ्क

वामन पुराण

शक्ति अक

शक्ति-उपासना अक

शिव पुराण

स्कन्द पुराण

सकीताङ्क

३९८/हमारी कुलदेवियाँ

कालिका पुराण

खाटू के श्याम बाबा का इतिहास, ले प झाबरमल्ल शर्मा, प श्यामसुदर  
शमा

खण्डेले का इतिहास, ले प सूर्यनारायण शर्मा

जीण अमृत-वर्षा

(श्री) जीण पूजन-स्तुति-भजन-इतिहास, ले रुडमल सत्सगी  
चौहाना का वृहत् इतिहास, ले देवीसिंह निर्वाण

चौहान सम्राट् पृथ्वीराज तृतीय और उनका युग, ले डॉ दशरथ शर्मा  
जोधपुर राज्य का इतिहास, भाग १, ले डॉ गौरीशक्ति हीराचंद ओझा  
तन्त्र-चूडामणि

तीर्थ गुरु पुष्करराज, ले अमरनाथ पाठक

त्रिपुर रहस्य

(डॉ) दशरथ शर्मा के लेख संग्रह भाग १

दी हिस्ट्री ऑफ इण्डिया, भाग ७, ले सर एच एम इलियट, सम्पा प्रो  
जॉन डाउसन

(श्री) दुर्गा समशती

देव स्तुति, समलकर्तु- श्रीमती शारदा पारीक

धर्मशास्त्र का इतिहास, ले म म डॉ पाण्डुरंग वामन काणे

नवदुर्गा

पारीक गौरव (त्रैमासिक), गोहाटी, सम्पा दिनेश पारीक

पारीक जाति का इतिहास, ले रघुनाथ प्रसाद तिवाड़ी उमा'

पारीक प्रबोध, ले हमचन्द शास्त्री

पारीक परिचय, ले एस एल शर्मा

पारीक परिचय, ले भवरलाल पारीक

पारीक मासिक, बैगलोर, सम्पा सत्यनारायण जोशी

पारीक महापुरुष, ले रघुनाथ प्रसाद तिवाड़ी उमा'

पारीक वश परिचय, ले प श्रीपति शास्त्री

पारीक वश-गोप-शाखा-प्रवर-बोधिनी, ले वासुदेव उडीदवाल

पारीक्ष ब्राह्मणोत्पत्ति, ले नारायण कठवड व्यास

पारीक्ष सहिता, ले पश्चकुशाचार्य

पश्चिमी भारत की यात्रा, ले कर्नल जेम्स टॉड, अनु गोपाल नारायण बहुरा  
बाल्मिकि रामायण

भवगती श्री आवडजी, ले मूलसिंह भाटी

**भानुप्रकाश**

भारत के दुर्ग, ले दीनानाथ दुबे  
प्राचीन भारतीय लिपिमाला, ले गो ही ओझा

भीलवाड़ा दशन

मरु भारती

महाभारत

मुँहता नैणसी री ख्यात, सम्पा बद्रीप्रसाद साकरिया

राजस्थान जिला गजेटियर, सीकर, सम्पा सावित्री गुप्ता

राजस्थान थू एजेज, ले डॉ दशाथ शर्मा

राजस्थान पत्रिका (दैनिक), जयपुर

राव-भाटो की पोथियाँ

राष्ट्रदूत (दैनिक), जयपुर

(श्री) ललिता सहस्रनाम स्तोत्रगृ, भू गोपाल नारायण बहुरा

लावण्य-नागरिक विकास समिति, साभर लेक, स्मारिका

लोक-पूज्य देवियाँ, ले डॉ भवरसिंह सामोर

लोहार्गल का ऐतिहासिक व पौराणिक महत्व तथा रद्राक्ष महिमा, ले महन्त

लक्ष्मणचार्य, मोहन प्रकाश कौशिक

लोहार्गल महात्म्य, ले रामनरेश मिश्र

वरदा श्रावणी, २००२ वि , शेखावाटी के शिलालेख, प झाबरमल्ल शर्मा

विष्णु पुराण

स्टोरियो डे मोगोर अर्थात् मुगल इण्डिया, ले निकालो मानूची, अनु सम्पा

विलियम इरविन

सकराय माता की विजिटर्स बुक

(श्री) सकराय माताजी का वृत्तान्त, ले बाबूलाल शर्मा

शाकमभीश्वी, ले डॉ बाबूलाल शर्मा

शेखावाटी का इतिहास, ले रतनलाल मिश्र

शेखावाटी के शिलालेख, ले सुखनसिंह शेखावत

(श्री) सच्चियाय माता मदिर वी पावन तीर्थ-स्थली

साभर की सम्प्राय माता, अर्थात् शाकमभी महामाया कथा, ले लक्ष्मीनारायण

सिरोही राज्य का इतिहास, ले डॉ गौ ही ओझा

हलायुध कोष

हिन्दुत्व, ले रामदास गौड

हिन्दू धर्म कोप, ले डॉ राजबलि पाण्डेय





## COLLECTION OF VARIOUS

- > HINDUISM SCRIPTURES
- > HINDU COMICS
- > AYURVEDA
- > MAGZINES

FIND ALL AT [HTTPS://DSC.GG/DHARMA](https://dsc.gg/dharma)

Made with



Animoto/Shazli

Editor of  
Hinduism  
Scriptures

KAPWING



## COLLECTION OF VARIOUS

- > HINDUISM SCRIPTURES
- > HINDU COMICS
- > AYURVEDA
- > MAGZINES

FIND ALL AT [HTTPS://DSC.GG/DHARMA](https://dsc.gg/dharma)

Made with



Animoto/Shazli

Editor of  
Hinduism  
Scriptures

KAPWING

